CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

16.4

3025

3039

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्राप्ति-संख्या

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जीवराज जैन ग्रन्थमाला पुष्प (४ अ)

ग्रन्थमाला-संपादक

डॉ. आदिनाथ उपाध्ये * डॉ. हीरालाल जैन

श्री-त्रिविक्रम-विरचित

प्राकृतशब्दानुशासन

हिन्दी अनुवाद

३०३९

हिन्दी अनुवादक

डॉ. केशव वामन आपटे, एम्. ए., पीएच्. डी.

संस्कृत अर्धमागधीके प्राध्यापक, विलिंग्डन् कॉलेज,

सांगली

प्रकाशक

लालचंद हिराचंदजी

जैन संस्कृति संरक्षक संघ, सोलापूर

वि. स. २०३०] वी. नि. सं. २४९९ [इ. स. १९७३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रथम आवृत्ति

प्रती १०००

मूल्य प्रत्येक प्रति रु. १२ (पोस्टेज अलाहिदा)

श्री जीवराज जैन ग्रंथमालाका परिचय

सोलापूर निवासी स्व. ब्र. जीवराज गौतमचंद दोशी कई वर्षोंसे संसारसे उदासीन होकर धर्मकार्यमें अपनी वृत्ति लगा रहे थे। सन १९४० में उनकी यह प्रबल इच्छा हो उठी कि अपनी न्यायोपार्जित संपत्तिका उपयोग विशेषरूपसे धर्म और समाजके कार्यमें करें। तदनुसार उन्होंने समस्त देशका परिभ्रमण कर जैन विद्वानोंसे साक्षात् और लिखित संमतियां इस बातकी संग्रह कीं कि कौनसे कार्यमें संपत्तिका विनियोग किया जाय। स्फुट मतसंचय कर लेनेके पश्चात् सन १९४१ में ग्रीष्मकालमें ब्रम्हचारीजीने तीर्थक्षेत्र श्रीगजपंथाजी (नासिक) के शीतल वातावरणमें विद्वानोंकी समाज एकत्र की और ऊहापोहपूर्वक निर्णयके लिये उक्त विषय प्रस्तुत किया गया।

विद्वान्‌संमेलनके फलस्वरूप ब्रम्हचारीजीने जैन संस्कृति तथा साहित्यके समस्त अंगोंके संरक्षण, उद्धार और प्रचारके हेतुसे 'जैन संस्कृति संरक्षक संघ' की स्थापना की। और उसके लिये रु. ३०००० के दानकी घोषणा कर दी। उनकी परिग्रहनिवृत्ति बढती गई और सन १९४४ में उन्होने लगभग दो लाख की अपनी संपूर्ण संपत्ति संघको ट्रस्ट रूपसे अर्पण कर दी। इसतरह आपने अपने सर्वस्वका त्याग कर दिनांक १६-१-१९५७ को अत्यन्त सावधानी और समाधानसे समाधिमरणकी आराधना की।

इसी संघके अंतर्गत 'जीवराज जैन ग्रंथमाला' का संचालन हो रहा है। प्रस्तुत ग्रंथ इसी ग्रंथमालाका पुष्प है।

प्रकाशक :
लालचंद हीराचंद
अध्यक्ष
जैन संस्कृति संरक्षक संघ,
सोलापूर.

मुद्रक :
सौ. शैलजा बर्वे,
वेद-विद्या मुद्रणालय,
४१ बुधवार पेठ,
पुणें २.

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

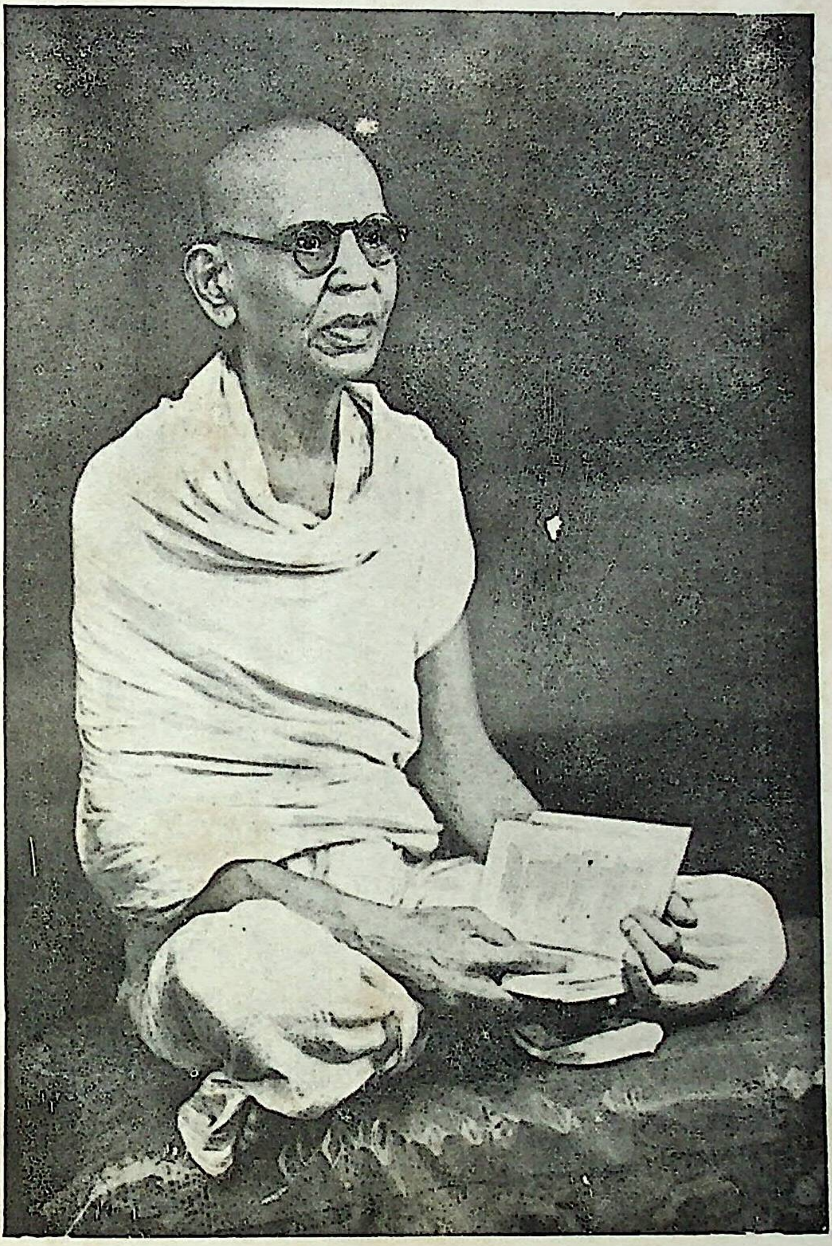

स्व. ब्र. जीवराज गौतमचंद दोशी

स्व. ता. १६-१-५७ पौष शु. १५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषयानुक्रमणिका

१	प्रधान संपादकीय	१–२
२	प्रस्तावना	३–६
३	मूलसूत्र तथा हिन्दी अनुवाद	१–३०८
४	सूत्र–सूची (अकारानुक्रमसे)	३०९–३२७
५	टिप्पणियाँ	३२८–३४०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रधान संपादकीय

दक्षिण भारतमें प्राकृत-व्याकरणोंके अध्ययनका एक नया युग त्रिविक्रमका प्राकृत-व्याकरण सूचित करता है। इस व्याकरणपर सिंहराज, लक्ष्मीधर तथा अप्पय्य दीक्षित जैसे पंडितोंने टीकाएँ लिखी हैं। इस व्याकरणका चिकित्सापूर्ण संपादन डॉ. पी. एल्. वैद्यजीने किया है। आप भारतमें गत चालीस बरसोंसे अधिक समय प्राकृत अध्ययनके अग्रणी रहे हैं। आप प्राकृत और अपभ्रंश रचनाओंके संपादन कार्यके सचमुच पथिकृत् हैं। खिस्ताब्द १९५४ में, इस ग्रंथमालामें जब डॉ. वैद्यजीद्वारा संपादित त्रिविक्रमके व्याकरणका संस्करण प्रकाशित हुआ, तब स्व. ब्रह्मचारी गौतमजीने कामना प्रदर्शित की थी कि इसका हिंदीमेंभी अनुवाद प्रकाशित हो। इस संबंधमें प्रधान संपादकोंने अपनी टिप्पणीमें इस प्रकारका अभिवचनभी दिया था—'इस संपादित ग्रंथका पूरक ग्रंथके रूपमें हिंदी अनुवाद प्रकाशित करनेका आयोजन किया जा रहा है'। परंतु कुछ अनिवार्य कारणोंसे इस हिंदी अनुवादका प्रकाशन होनेमें लगभग बीस बरसोंका काल बीत गया है।

यहाँ प्रस्तुत किया गया त्रिविक्रम व्याकरणका हिंदी अनुवाद मेरे मित्र डॉ. के. वा. आपटे, संस्कृत–अर्धमागधीके प्राध्यापक, विलिंग्डन महाविद्यालय, सांगली, महोदयजीने किया है। मैं उनका अत्यंत कृतज्ञ हूँ। इस अनुवादका आधार डॉ. वैद्यजीसंपादित मूल ग्रंथ है; प्रस्तुत अनुवाद उसका पूरक ग्रंथ है। यह दिखाई देगा कि इस ग्रंथमें सूत्र यथा-मूल दिए हैं; और उदाहरणोंके साथ वृत्तिका हिंदी अनुवाद प्रस्तुत किया है। पाद-टिप्पणी तथा अन्य चिकित्सापूर्ण सामग्रीके लिये पाठकगण इस मालामें प्रकाशित डॉ. वैद्यजीका मूल संपादित ग्रंथ देखें। डॉ. वैद्यजीके ग्रंथमेंसे सब सामग्री इस पूरक ग्रंथमें देना आवश्यक नहीं था। किंतु प्रस्तुत हिंदी अनुवाद स्वतंत्र रूपसेभी उपयुक्त होनेके लिए इसमें हिंदीमें संक्षिप्त प्रस्तावना तथा अंतमें अकारानुक्रमसे सूत्रोंकी सूची दी गयी है। इस ग्रंथमें और एक विशेषता यह है कि कुछ आवश्यक व्याकरणीय टिप्पणियाँ अंतमें दी गई हैं।

त्रिविक्रमके प्राकृत व्याकरणका सुव्यवस्थित अनुवाद डॉ. के. वा. आपटेजीने प्रस्तुत किया है; अतः हम उनके आभारी हैं। मेरा यह विश्वास है कि यह हिंदी अनुवाद हिंदी जाननेवाले पाठकोंमें त्रिविक्रमके व्याकरणको औरही लोकप्रिय करेगा।

इस ग्रंथके बारेमें विशेष रस लेनेके कारण हमारे अध्यक्षमहोदय श्रीमान् लालचंद हिराचंदजीको हम धन्यवाद देते हैं। इस ग्रंथमालाके प्रकाशनकार्यमें श्रीमान् वालचंद देवचंदजी हमारी सर्वतोपरी सक्रिय सहायता कर रहे हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इस निवेदनके लिखते समयही मुझे शोकसंदेश मिला कि इस ग्रंथमालाके मेरे सह-संपादक डॉ. हिरालाल जैनजीका देहान्त हुआ। उनके रूपमें यह ग्रंथमाला ऐसे उपकारकर्ताको खो बैठीं है कि जिन्होंने गत ३० वर्षोंतक उसकी सामान्य नीतिको रूप दिया था। जहाँतक मेरा संबंध है मेरे लिए तो उनका अभाव अपूरणीय है। शोकाकुल हृदयसे मैं अकेलाही इस निवेदनपर हस्ताक्षर कर रहा हूँ।

२७-३-१९७३ **आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये**

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रस्तावना

त्रिविक्रम

प्रस्तुत व्याकरणका रचयिता त्रिविक्रम माना जाता है। सामान्यतया प्राचीन भारतीय ग्रंथकारोंके बारेमें अधिकृत ज्यादा जानकारी विशेष उपलब्ध नहीं होती। बिल्कुल थोडे ग्रंथकारोंने अपने बारेमें स्वयं जानकारी प्रस्तुत की है। ऐसे थोडे लोगोंमेंसे एक है त्रिविक्रम। प्रस्तुत व्याकरणके प्रारंभ तथा अंतमें प्रास्ताविक तथा उपसंहारपरक कुछ श्लोक हैं। ये उपसंहारपरक श्लोक इस व्याकरणकी कुछ पांडुलिपियोंमें नहीं मिलते हैं। फिरभी डॉ. प. ल. वैद्यजीके मतानुसार, यह निश्चित रूपसे कहा जा सकता है कि ये श्लोक त्रिविक्रमकेही हैं। इन श्लोकोंमेंसे प्राप्त जानकारीको आगेके अनुसार कहा जा सकता है।

त्रिविक्रमका जन्म बाग नामक व्यक्तिके सत् परिवारमें हुआ था। उसके पितामहका नाम था आदित्यवर्मन्। उसके मातापिताके नाम क्रमशः लक्ष्मी तथा मल्लिनाथ थे। उसके भाईका नाम था भाम (पाठभेदसे–सोम, राम, वाम, चाम) जो सदाचार और ज्ञानके बारेमें बडा प्रसिद्ध था। दिखाई देता है कि अर्हन्नंदिके पास त्रिविक्रमका अध्ययन हुआ था। अर्हन्नंदि जैन धर्मग्रंथोंपर प्रभुत्व रखनेवाला तथा तीनों विद्याओंका ज्ञाता मुनि था (प्रास्ताविक २–३)। त्रिविक्रम अपने आपको सुकवि कहलाता है (प्रास्ताविक ३)। इस प्रकार त्रिविक्रम अपने बारेमें जानकारी देता है।

त्रिविक्रमके धर्म, स्थान तथा समयके बारेमें डॉ. प. ल. वैद्यजीने इसप्रकार अनुमान किये हैं:—

त्रिविक्रमका धर्म

यह निश्चित रूपसे कहा जा सकता है कि त्रिविक्रम जैन धर्मका अनुयायी था। प्रास्ताविकके पहलेही श्लोकसे यह बात स्पष्ट होती है जिसमें वीर याने महावीरको वंदन किया गया है। उसी प्रकार प्रास्ताविकके चौथे श्लोकके वीरसेन तथा जिनसेनके उल्लेखोंसे त्रिविक्रमका उनके बारेमें आदरभाव सूचित होता है, तथा यह भी मालूम होता है कि वह जैनोंके दिगंबरपंथका अनुयायी था। प्रास्ताविकके ग्यारहवें श्लोकमें हेमचंद्रका उल्लेख मिलता है जिससे ज्ञात होता है कि त्रिविक्रम पंथीय पूर्वग्रहोंसे परे आसानीसे पहुँच सकता था।

त्रिविक्रमका स्थान

त्रिविक्रम भारतके किस प्रदेशका निवासी था यह बतानेके लिए निश्चित सामग्री उपलब्ध नहीं है। फिरभी, उसका जैन दिगंबर पंथ, उसके पिता, भाई तथा गुरुके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नाम, और सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह कि उसके प्राकृत व्याकरणकी लोकप्रियता और उसके व्याकरणकी पांडुलिपियोंका प्राप्तिस्थान, इन बातोंसे यह स्पष्ट होता है त्रिविक्रम दाक्षिणात्य (दाक्षिण भारतीय) था–संभवतः कर्नाटकसे संबंध रखनेवाला आंध्रनिवासी था। इसके बारेमें समर्थक प्रमाण यह दिया जा सकता है कि 'दोडि सायंभोजनम्' जैसे कुछ शब्दोंका अंतर्भाव त्रिविक्रम देश्य शब्दोंमें करता है जबकि ये शब्द हेमचंद्रकी देशीनाममालामें मिलते नहीं पर द्राविडी भाषाओंमें मिलते हैं।

त्रिविक्रमका समय

वीरसेन तथा जिनसेन इन दोनोंका उल्लेख त्रिविक्रम करता है। ये दोनों ई. स. की नवीं शतीके मध्यके थे। हेमचंद्रकाभी उल्लेख त्रिविक्रम करता है। हेमचंद्रकी मृत्यु ई. स. ११७२ में हुई। इससे यह दिखाई देता है कि बारहवीं शतीके अंतिम चरणके बाद, पर हेमचंद्रके बाद अधिक समयसे नहीं, त्रिविक्रम हो गया। त्रिविक्रमके व्याकरणके बादके सिंहराजकृत प्राकृतरूपावतार, लक्ष्मीधरकृत षड्भाषाचंद्रिका तथा अप्पय्य दीक्षितकृत प्राकृत-मणिदीप ये ग्रंथ उपलब्ध हैं। अप्पय्य दीक्षितकी मृत्यु उम्रके ७२ वें सालमें–ई. स. १६२६ में–हुई थी। अप्पय्यके ग्रंथमें लक्ष्मीधरका उल्लेख विशेषरूपसे मिलता है। अतएव लक्ष्मी-धरका समय साधारणतया ई. स. १४७५ – ई. स. १५२५ के बीचका हो सकता है। यद्यपि लक्ष्मीधर या अप्पय्यके द्वारा सिंहराजका उल्लेख हुआ नहीं, फिरभी वह उनके पूर्व या उनका ज्येष्ठ समकालीन रहा होगा; उसका समय पंद्रहवीं शतीका पूर्वार्ध होगा। इसलिए तेरहवीं शतीके उत्तरार्धको त्रिविक्रमके समयके रूपमें माना जा सकता है। डॉ. आ. ने. उपाध्येजीके मतानुसार, ई. स. १२३६ के बाद जल्दही त्रिविक्रमद्वारा अपना प्राकृत व्याकरण रचा गया।

त्रिविक्रमके ग्रंथ

कुछ लोगोंका मत ऐसा है कि त्रिविक्रमके प्राकृत व्याकरणमेंसे सूत्रभाग वाल्मीकिका है और उसका टीकाभाग त्रिविक्रमद्वारा रचित है। पर डॉ. प. ल. वैद्यजी तथा अन्य पंडित इस मतको नहीं मान्य करते। उनके अनुसार सूत्र तथा टीका ये दोनों भाग त्रिविक्रमकेही रचे हुए हैं।

प्राकृत व्याकरणकी अपनी टीकाके बारेमें त्रिविक्रम प्रास्ताविकके श्लोकोंमें कहता है:–इस (प्राकृत व्याकरण –) विषयपर अभ्यासकोंको अधिकार प्राप्त हो इसी हेतुसे यह टीका मैंने रची है। परंपरागत पद्धतिके अनुसार यह टीका है। (इस टीकामें) यद्यपि बहुत कम शब्दोंका प्रयोग है तो भी वे दर्पणके समान काम देंगे; इस प्रकार इस टीकाकी श्रेष्ठता है। त्रिविक्रम आगे कहता है :– प्राकृत रूपोंकी चर्चा करते समय जिस पारंपरिक पद्धतिका अवलंबन हेमचंद्रतकके पूर्व आचार्योंद्वारा किया गया था उसी पद्धतिका प्रयोग मैंने इस व्याकरणमें किया है (श्लोक ९–११)।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उपसंहारके पहले श्लोकमें अपने प्राकृत-व्याकरणके बारेमें त्रिविक्रम कहता है:- अपने प्रयोजनकी सिद्धिके लिए (अर्थसिद्धयै) मंत्रके समान इस त्रिविक्रमरचित प्राकृत व्याकरणका जप किया जाय।

उपसंहारके दूसरे तथा तीसरे श्लोकोंमें अपने काव्यके बारेमें त्रिविक्रम कहता है:- त्रिविक्रमके काव्यको पढकर रसिकों तथा नैयायिकोंको आनंद मिलता है कारण पदोंका माधुर्य अंदर प्रवेश करके कानोंको पुष्ट करता है, प्रत्येक शब्दका नया अर्थ उचित शब्दके प्रयोग करनेवाले मनुष्यको तुष्ट करता है, और मानो (इस काव्य-) कृतिकी श्रेष्ठतासे, रस संपूर्ण भुवनको व्याप्त करता है। अपनी कल्पना व्यक्त कर सकनेवाले भलेही सभी हों, पर अपनी तथा दूसरोंकी कल्पना उचित शब्दोंमें व्यक्त करनेवाला त्रिविक्रम एकही (= एकमेव, अद्वितीय) है। इससे यह दिखाई देता है कि त्रिविक्रमने एक या अनेक काव्योंकी रचना की थी; पर ये काव्यरचनाएँ अभी तो उपलब्ध नहीं हैं, इसलिए उपर्युक्त त्रिविक्रमके कथनकी सत्यताकी जाँचपडताल नहीं की जा सकती।

त्रिविक्रमका प्राकृतविषयक मत

प्राकृत (= माहाराष्ट्री प्राकृत, मुख्य प्राकृत) और आर्ष (श्वेतांबरपंथी जैनियोंके आगमोंकी) अर्धमागधी, इन दोनोंमें थोडासा भेद हेमचंद्र दिखाता है। तो त्रिविक्रम प्रास्ताविकके सातवें श्लोकमें आर्षका उल्लेख करके कहता है कि आर्ष तथा देश्य ये दोनों भाषाके रूढ रूप हैं और ये दोनों विलकुल स्वतंत्र हैं और इस कारण उन्हें व्याकरणकी आवश्यकता नहीं, उनके बारेमें जानकारी केवल परंपराद्वाराही प्राप्त की जा सकती है। इसके विपरीत, उन प्राकृत भाषाओंकोही व्याकरणके नियम लागू पडते हैं जिनमेंसे शब्दोंकी जडसे खोज सिद्ध और साध्यमान संस्कृततक की जा सकती है। और ऐसे शब्दोंकीही चर्चा त्रिविक्रमके प्राकृत व्याकरणमें है।

* * *

हिंदी अनुवादकी पद्धति

त्रिविक्रमरचित प्राकृत व्याकरणका मूलग्रंथ डॉ. प. ल. वैद्यजीने संपादित किया है। उसका हिंदी अनुवाद करनेका कार्य डॉ. आ. ने. उपाध्येजीकी सूचनानुसार मैंने स्वीकृत किया। वह कार्य संपूर्ण होकर आज प्रकाशमें आ रहा है, यह तो बडे आनंदकी बात है।

इस अनुवादको पढते समय निम्नलिखित मुद्दे यादमें रखे जायँ:—(१) मूलग्रंथकी छापेकी गलतियोंको तत्रतत्र सुधारकर ग्रंथके मूल रूपको लेकर, यह अनुवाद किया गया है। (२) अनुवादमें मूल सूत्रोंका स्वतंत्र रूपसे भाषांतर नहीं दिया गया है क्योंकि मूलसूत्रोंका अर्थ वृत्तिमें आताही है; इसलिए केवल वृत्तिका अनुवादही दिया है। कहींकहीं ऐसा हुआ है कि मूल सूत्रमें आये हुए शब्दोंकी सूचियाँ वृत्तिमें नहीं आयी हैं; उन्हें

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनुवाद करते समय कोष्टकमें रखा गया है । (३) क्वचित् वृत्तिमें (प्राकृत शब्दोंके) मूल संस्कृत शब्द नहीं दिये गए हैं; ऐसे शब्द अनुवादमें कोष्टकमें दे दिये हैं । (४) मूलमें न होनेवाले परंतु अर्थके स्पष्ट होनेके लिए आवश्यक शब्द अनुवादमें कोष्टकमें रखे गए हैं । (५) अपभ्रंश श्लोकोंकी संस्कृत छायाके अनंतर तुरंत उसका अनुवाद दिया है । (६) अपभ्रंश श्लोकके प्रथम आनेपर उसका अनुवाद वहींपर दिया गया है; पर उसी श्लोकके फिरसे आगे आनेपर, उसका अनुवाद पुनः नहीं दिया है । (७) कुछ शब्दोंके आगे (=) इस चिन्हको रखकर उन शब्दोंका स्पष्टीकरण दिया गया है । (८) भाषांतरमें आवश्यक स्थलोंपर अगले पिछले सूत्रोंके संदर्भ प्रस्तुत किये हैं । (९) अनुवादमें क्वचित् फूटनोट्स दिये हैं । (१०) प्रत्येक सूत्रके अनुवादके अनंतर सूत्रोंके क्रमांक मूलानुसार दे दिये हैं ।

मूलमेंसे पारिभाषिक शब्दोंका संक्षिप्त स्पष्टीकरण अंतकी टिप्पणियोंमें किया है । यहाँपरभी जिस शब्दपर पहलेही टिप्पणी दे दी गई है उसपर उसके फिरसे आनेपर पुनः टिप्पणी नहीं दी गयी है ।

आभारप्रदर्शन

गु. डॉ. उपाध्येजीका मैं इसलिए आभारी हूँ कि उन्होंने मुझे इस अनुवादको प्रस्तुत करनेका अवसर दे दिया । मेरे इस अनुवादमेंसे हिंदी भाषाका सुधार और जाँच कार्य हमारे विलिंग्डन महाविद्यालयके हिंदीके प्राध्यापक अ. अ. दातारजी तथा प्रा. सु. ल. जोशीजीने बडी आस्थापूर्वक किया है जिसके लिए मैं उनकाभी अत्यंत आभारी हूँ । सूत्रसूचीके कार्यमें सहायता करनेवाले मेरे पुत्र यशवंतकाभी मैं आभारी हूँ ।

विलिंग्डन महाविद्यालय, सांगली.

के. वा. आपटे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री

त्रिविक्रमदेव - विरचित

प्राकृतशब्दानुशासन

(मूलसूत्र व स्वोपज्ञवृत्ति)

हिन्दी अनुवाद

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

॥ श्रीः ॥

श्रीत्रिविक्रमदेवविरचितं

प्राकृतशब्दानुशासनम्

(हिन्दी अनुवाद)

श्री (महा) वीर रूप पूर्वगिरिसे उदित हुए, सब (वस्तुओं) को प्रकाशित करनेवाले, दिव्य ध्वनिरूप सूर्यको मैं अक्षरोंकी पद्धति (मार्ग) की प्राप्तिके लिये वंदन करता हूँ ॥ १ ॥

अर्हनंदि जो कि त्रैविद्यमुनि तथा जिनागमके स्वामी थे, उनके पदकमलोंमें भ्रमर (के समान), श्रीबाणके शोभन कुलरूप कमलको सूर्य (के समान) आदित्यवर्माका पोता, श्रीमल्लिनाथका पुत्र, लक्ष्मी (माता) के गर्भरूप अमृतसागरमें चंद्रमा (के समान जन्म लेनेवाला), आचार और विद्याका स्थान होनेवाले भामका भाई, प्रकृतिसेही निपुण, ऐसा त्रिविक्रम (नामक) सुकवि, श्रीवीरसेनार्य और जिनसेनार्य आदिके वचन-रूप समुद्रके व्वारसे कुछ प्राकृतशब्दरूप रत्न सुकृति (= शोभन ग्रंथ या तज्ज्ञ) के भूषणके लिये संगृहीत करता है ॥ २-४ ॥

बहुत अर्थसे संपन्न, सुलभरूपसे जिसका उच्चारण किया जाता है, और जो साहित्यका जीवन है ऐसा जो शब्द वह प्राकृत (शब्द) ही है, ऐसा सूत्रानुसारी (विद्वान) लोगोंका मत है ॥ ५ ॥

यह प्राकृत (शब्द) तत्सम, देश्य और तद्भव एवं तीन प्रकारका है। तत्सम यानी संस्कृतसम (प्राकृतशब्द), संस्कृत (व्याकरण) के लक्षणों-सेही जानना है ॥ ६ ॥

देश्य और आर्ष (प्राकृत) रूढ तथा बहुशः स्वतंत्ररूप होनेसे, उन्हें लक्षणोंकी अपेक्षा नहीं है; उसका बोध संप्रदाय (परंपरा) ही कर सकता है ॥ ७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकृतिभूत ऐसे साध्यमान और सिद्ध संस्कृतसे जो होगा वह इस प्राकृतका लक्षण, हम लक्ष्यके अनुसार (यहाँ) कहते हैं ॥ ८ ॥

निजी सूत्रोंके मार्गको अनुसरण करनेकी इच्छा रखनेवालोंको प्राकृत-शब्दोंकी अर्थसहित प्राप्ति होनेके लिये तथा यथार्थ सिद्धिके लिये, त्रिविक्रमसे (यह) वृत्ति (टीका) आगमक्रमसे की जाती है ॥ ९ ॥

तद्भव, तत्सम और देश्य (एवं त्रिविध) प्राकृतरूप देखनेवाले विद्वानोंको जो आयनेके समान है, ऐसी यह त्रिविक्रमरचित वृत्ति भूतलपर विजयी है ॥ १० ॥

हेमचंद्रार्यतक प्राचीन वैयाकरणोंने प्राकृतरूपोंका जैसा विवरण किया है उन सबका वैसाही प्रतिबिंब यहाँ (इस ग्रंथमें) पडा है ॥ ११ ॥

सिद्धिर्लोकाच्च ॥ १ ॥

यहाँ प्रस्तुत (की जानेवाली) सिद्धि प्राकृत शब्दोंके संबंधमें ली गई है। और वह सिद्धि लोगोंसे होती है। क्यों कि (यस्मात्) ऋवर्ण, लृवर्ण, ऐकार, औकार, असंयुक्त ङकार तथा ञकार, श् और ष्, तथा द्विवचन, इत्यादिसे रहित, ऐसा शब्दोंका उच्चार लोगोंके व्यवहारसे जाना जाता है; तथा देशी शब्दभी (लोकव्यवहारसे उपलब्ध होते हैं); इसलिये (तस्मात्) ‘लोगोंसे सिद्धि’ ऐसा जाना जाय। और (सूत्रमेंसे) चकार (और) के कारण, (इस ग्रंथमें) आगे कहे जानेवाले और अनैकान्तिक (अनिश्चित) लक्षणोंसे (प्राकृतशब्दविषयक सिद्धि होती है, ऐसा जानें) ॥ १ ॥

अनुक्तमन्यशब्दानुशासनवत् ॥ २ ॥

यहाँ (इस ग्रन्थमें) स्वरादि संज्ञा और संधि, इत्यादि कार्यके बारेमें जो नहीं कहा गया है, वह अन्य व्याकरणोंमें बताये गए कार्यके अनुसारही (होता है, ऐसा) मानना है। (अर्थात्) कौमार, जैनेन्द्र,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पाणिनीय इत्यादि व्याकरणोंमें जैसा (कार्य) कहा गया है, उसी प्रकार यहाँभी है, ऐसा समझ लेना है ।। २ ।।

संज्ञा प्रत्याहारमयी वा ।। ३ ।।

यहाँ अर्थात् इस प्राकृत व्याकरणमें, प्रत्याहार जिसका स्वरूप है ऐसी संज्ञा व्यवहृत की गयी है । (सूत्रमें) 'वा' ऐसा कहा जानेसे, आगे कहे जानेवाले भागोंसे भी (संज्ञा जाननी है) । (सूत्रमें) फिर 'प्रत्याहार' शब्दका जो ग्रहण (निर्देश) है वह यह दिखानेके लिये है कि सामान्यतः या बहुधा (भूयः) प्रयोग (व्यवहार) होता है । उदा०—स्वर अच् । ए ओ एङ् । ऐ औ ऐच् । व्यञ्जन हल् । स्वादि सुप् । त्यादि तिङ् । इत्यादि ।। ३ ।।

सुप्स्वादिरन्त्यहला ।। ४ ।।

सुप् में यानी सु, इत्यादि विभक्तियोंमें आदि वर्ण अथवा वचन अन्त्य व्यंजनके साथ इत्-संज्ञक होता है । उदा०—सु औ जस्, सुस् । अम् औट् शस्, अस् । इसी प्रकारः—टास्, ङेस्, ङसिस्, ङम्, ङिप् । पंचमी (विभक्ति)के बारेमें, ङस् ऐसा कहनेके बदले ङसिस् ऐसे कहनेका कारण षष्ठी एकवचन ङस्से उसकी भ्रान्ति न हो ।। ४ ।।

हो ह्रस्वः ।। ५ ।।

एक मात्रा होनेवाला जो वर्ण ह्रस्व ऐसा प्रसिद्ध है उसकी ह ऐसी संज्ञा (इस ग्रंथमें प्रयुक्त की गयी है) ।। ५ ।।

दिर्दीर्घः ।। ६ ।।

दो मात्राएँ होनेवाला, दीर्घ ऐसा रूढिमें प्रचलित, जो वर्ण, उसकी दि ऐसी संज्ञा (इस ग्रंथमें प्रयुक्त की गयी है) ।। ६ ।।

शषसाः शुः ।। ७ ।।

श्, ष्, और स् ये वर्ण शु-संज्ञावाले होते हैं ।। ७ ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सः समासः ॥ ८ ॥

समास 'स' संज्ञावाला होता है ॥ ८ ॥

आदिः खुः ॥ ९ ॥

(शब्दमें) आदि (प्रथम) रहनेवाला वर्ण खु-संज्ञक होता है ॥ ९ ॥

गो गणपरः ॥ १० ॥

(इस सूत्रमें १.१.९ से) आदिः पद (अध्याहृत) है। (शब्दोंके) गणोंमें प्रधान होनेवाला जो शब्द आदि होता है, वह ग-संज्ञक होता है। उदा०—गुणादिः, इत्यादिमें ' गुणग ' इत्यादि शब्द (उपयोगमें लाये जाएंगे) ॥ १० ॥

द्वितीयः फुः ॥११॥

शब्दका द्वितीय वर्ण फु-संज्ञक होता है ॥ ११ ॥

संयुक्तं स्तु ॥ १२ ॥

जो व्यंजनसे युक्त अर्थात् संयुक्त है, उसको स्तु ऐसी संज्ञा होती है ॥ १२ ॥

तु विकल्पे ॥ १३ ॥

विकल्प अथवा विभाषा दिखानेके लिए, 'वा' शब्दके समान 'तु' शब्दभी उपयोगमें लाया गया है ॥ १३ ॥

प्रायो लिति न विकल्पः ॥ १४ ॥

कुछ कार्योंके लिए जो (वर्ण) सूत्रमें कहा जाता है, (परंतु) प्रयोगमें मात्र (उपयोगमें लाया हुआ) दिखाई नहीं देता, वह इत् (वर्ण है)। उसीकोही अन्य व्याकरणोंमें अनुबंध यह संज्ञा है। (सूत्रमेंसे) 'लित् यानी जिसमें लकार इत् है, ऐसा। लित् का कार्य होते (समय) प्रायः विकल्प नहीं होता ॥ १४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शिति दीर्घः ॥ १५ ॥

(शित् अर्थात् जिसमें श् अनुबंध (=इत्) है, वह।) शानुबंधका कार्य होते समय, (जिसके बारेमें शित् है, उसके पीछे रहनेवाला) पूर्व स्वर दीर्घ होता है। उदा.–'शि श्लुङ् नपुनरि तु' (१·१·२८) यह सूत्र। इस स्थानपर, 'नपुनः' शब्दमें, अन्त्य व्यंजनके बारेमें जब शानुबंध ऐसे इकार और लोप होते हैं, तब (उसके) पूर्व स्वर दीर्घ होता है। उदा.–णउणाइ, णउणा ॥ १५ ॥

सानुनासिकोच्चारं ङित् ॥ १६ ॥

(जहाँ) ङकार-अनुबंध ऐसा कार्य होता है, (वहाँ) सानुनासिक उच्चार होता है। उदा.–'कामुकयमुनाचामुण्डातिमुक्तके मो ङ्लुङ्' (१·३·११) इस सूत्रमें – काउँओ। जउँणा। यहाँ मकारका ङानुबंध लोप जब होता है, तब शेष स्वरका उच्चारण सानुनासिक होता है ॥ १६ ॥

बहुलम् ॥ १७ ॥

(यह अधिकारसूत्र है।) इस शास्त्रके परिसमाप्तितक इस सूत्रका अधिकार है। (इसका अर्थ यह है)–प्राकृतमें जो लक्षण कहा जाता है, वह बहुलत्वसे (यानी प्रायः, सामान्यतया) होता है, ऐसा समझना है। और इसलिए क्वचित् नियमोंकी योग्य प्रकारसे कार्यप्रवृत्ति, क्वचित् उसका अभाव (अप्रवृत्ति), क्वचित् विकल्प, क्वचित् कुछ औरही हो जाता है। और वह (हम) योग्य स्थानपर दिखायेंगे ॥ १७ ॥

दिहौ मिथः से ॥१८॥

(सूत्रमेंसे) से अर्थात् स में यानी समासमें, (पहले पद के अन्त्य स्वरका) मिथः यानी परस्परमें ऱ्हस्व और दीर्घ बहुलत्वसे होता है। उसमें ऱ्हस्व का दीर्घ होना-अन्तर्वेदिः अन्तावेई। सप्तविंशतिः सत्तावीसा। क्वचित् विकल्प होता है। वारिमती वारीमई वारिमई। पतिगृहम् पईहरं पइहरं। युवतिजनः जुवईजणो जुवइजणो। वेणुवनम् वेणूवणं वेणुवणं। दीर्घका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ह्रस्व होना—णिअम्बसिलखलिअवीइमालस्स, नितम्बशिलास्खलितवीचिमालस्य। यमुनातटम् जउँणअडं जउँणाअडं। नदीस्रोतः णइसोत्तं णईसोत्तं। गौरीगृहम् गोरिघरं गोरीघरं। वधूमुखम् वहुमुहं वहूमुहं ॥१८॥

सन्धिस्त्वपदे ॥ १९ ॥

संस्कृतमें कहीं हुई सर्व संधियाँ प्राकृतमें विकल्पसे होती हैं। अपदे यानी एकही पदमें (संधि) नहीं होतीं। (सूत्रमें) 'तु' शब्द विकल्प दिखानेके लिए है। उदा.—व्यासर्षिः वासेसी वासइसी। विषमातपः विसमाअवो विसमआअवो। कवीश्वरः कईसरो कइईसरो। स्वादूदकम् साऊअअं साउउअअं। एकही पदमें नहीं होती, ऐसा क्यों कहा है? (कारण एकही पदके दो स्वरोंमें प्रायः संधि नहीं होती।) उदा.—मुद्धाए मुद्धाइ मुग्धायाः। वच्छाओ वच्छाउ वृक्षात्। महइ महति (यानी) पूजन करता है, ऐसा अर्थ। (तथापि) बहुलका अधिकार होनेसे, क्वचित् एकही पदमेंभी (संधि होती है। उदा.)—करिष्यति काही काहिइ। द्वितीयः बीओ बिइओ ॥ १९ ॥

न यण् ॥ २० ॥

(इस सूत्रमें १·१·१९ से) संधिः पदकी अनुवृत्ति है। 'इको यणचि' (पा. ६·१·७७) सूत्रके अनुसार संस्कृतमें जो यणादेश संधि कही गयी है, वह प्राकृतमें नहीं होती। यानी इ-वर्णका यत्व और उ-वर्णका वत्व नहीं होता, ऐसा अर्थ (होता है)। यण् प्रत्याहारसे यद्यपि य्, व्, र् और ल् वर्णोंका ग्रहण होता है, तथापि प्राकृतमें ऋ-वर्ण और ऌ-वर्ण इनका उपयोग न होनेसे, यत्व और वत्व इनकाही यह निषेध है। उदा.—नखप्रभावल्यरुणः णहप्पहावलिअरुणो। सन्ध्यावध्ववगूढः संझावहुअवऊढो। (सूत्रमें) यण् ऐसा क्यों कहा है? (कारण जहाँ यण् आदेश होता है, वहीं यह निषेध है, अन्यत्र नहीं, यह दिखानेके लिए।) उदा. गूढोदरतामरसानुसारिणी गूढोअरतामरसाणुसारिणी ॥ २० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एङः ॥ २१ ॥

(इस सूत्रमें १·१·२० से) न शब्दकी अनुवृत्ति है। एङ् यानी ए (एत्) और ओ (ओत्) ये स्वर। ए और ओ इनकी संस्कृतमें कही हुई संधि प्राकृतमें नहीं होती। उदा.—देवीए आसणं। पंचालादो आगओ। देवो अहिणंदणो। अहो अच्छरिअं, इत्यादि (उदाहरण) संस्कृत जैसे हैं॥ २१ ॥

शेषेऽच्यचः ॥ २२ ॥

(स्वरसे) संयुक्त रहनेवाले व्यंजनके लोप होनेपर जो स्वर शेष रहता है, उसको शेष कहा है। यह शेष स्वर आगे रहे तो उससे अन्य (पिछले या अगले) स्वरकी संधि नहीं होती। उदा.—गगन एव गन्धकुटीं कुर्वन्ति, गअणे च्चिअ गंधउडिं कुणन्ति। फणामणिप्रदीपाः, फणामणिप्पईवा। ज्योत्स्नापूरितकोशः, जोण्हाऊरिअकोसो। बहुलका अधिकार होनेसे, क्वचित् विकल्पसे संधि होती है। उदा.—कुम्भकारः कुम्भआरो कुम्भारो। सुपुरुषः सुउरिसो सूरिसो। क्वचित् संधिही होती है। उदा.—शातवाहनः सालाहणो। चक्रवाकः चक्काओ। प्रायोग्रहण होनेसे, (इन शब्दोंमें) व का लोप न हुआ तो, सालवाहणो और चक्कवाओ, ऐसे रूप होते हैं; किंतु व् का लोप होनेपर, संधि होती ही है॥ २२ ॥

तिङः ॥ २३ ॥

(इस सूत्रमें १·१·२२ से) अचः और अचि इन पदोंकी अनुवृत्ति है। तिङ यानी धातुको लगनेवाले तिप्, इत्यादि प्रत्यय। तिङ्से संबंध रखनेवाले स्वर की, आगे स्वर रहे तो, संधि नहीं होती। उदा.—भवतीह होइ इह। पिबतूदकं पिबउ उदअं॥ २३ ॥

लोपः ॥ २४ ॥

स्वर के आगे स्वर रहे तो बहुलत्वसे लोप होता है। उदा.—त्रिदशेशः तिअसीसो। निश्वासोच्छ्वासौ णीसासूसासा॥ २४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्त्यहलोऽश्रदुदी ॥ २५ ॥

(इस सूत्रमें १.१.२४ से) लोपः पदकी अनुवृत्ति है। शब्दोंमें अन्त्य हल् का यानी व्यंजनका लोप होता है। (सूत्रमेंसे) अश्रदुदी यानी श्रत् इस अव्यय तथा उत् इस उपसर्ग को छोडकर। उदा.—यावत् जाव। यशस् जसो। तमस् तमो। जन्मन् जम्मो। (सूत्रमें) श्रत् और उत् को छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण इन शब्दोंमें अन्त्य व्यंजनका लोप नहीं होता। उदा.)—श्रद्धा सध्दा। श्रद्दधाति सद्दहइ। श्रद्धानम् सद्दहणं। उद्गतम् उग्गअं। उन्नतम् उण्णअं। किंतु समासमें, वाक्यविभक्ति-की अपेक्षासे (पहले पदका अन्त्य व्यंजन) कभी अन्त्य माना जाता है, तो कभी अनन्त्य माना जाता है; इसलिए दोनोंभी (यानी कभी उसका लोप तो कभी उसका वर्णान्तर) हो जाते हैं। उदा.—सद्भिक्षुः सब्भिक्खू सभिक्खू। सज्जनः सज्जणो सजणो। एतद्गुणाः एअग्गुणा एअगुणा। तद्गुणाः तग्गुणा तगुणा ॥ २५ ॥

निर्दुरि वा ॥ २६ ॥

निस् और दुस् इन उपसर्गोंमें, अन्त्य व्यंजनका विकल्पसे लोप होता है। उदा.—निःसहम् णिस्सहं णिसहं। निर्घोषः णिग्घोसो णिघोसो। दुःसहः दुस्सहो दूसहो। दुःखितः दुक्खिओ दुहिओ। दुर्भगः दुब्भओ दूहवो ॥ २६ ॥

अन्तरि च नाचि ॥ २७ ॥

अन्तर् शब्दमें, तथा (सूत्रमेंसे) चकारसे निर् और दुर् इन शब्दोंमें, अन्त्य व्यंजनका, आगे स्वर रहे तो, लोप नहीं होता। उदा.—अन्तरंगो। णिरवसेसं। दुरुत्तरं। दुरवगाहं। क्वचित् 'अन्ताउवरि' ऐसा भी (वर्णान्तर) दिखाई देता है ॥ २७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शि श्लुङ्‌ नपुनरि तु ॥ २८ ॥

'नपुनर्' शब्दमें, अन्त्य व्यंजनके शानुबंध इकार और लोप विकल्पसे होते हैं। श इत् होनेसे, पिछला (पूर्व) स्वर दीर्घ होता है। उदा.—णउणाइ णउणा। विकल्पपक्षमें णउण। पुनर शब्दमेंभी पुणाइ ऐसा (वर्णान्तर) दिखाई देता है॥ २८ ॥

अविद्युति स्त्रियामाल्‌ ॥ २९ ॥

स्त्रीलिंगमें रहनेवाले (शब्दोंके) अन्त्य व्यंजनका आ होता है। (सूत्रमेंसे आल् शब्दमें) ल् अनुबंध होनेके कारण, (यह वर्णान्तर) नित्य होता है। अविद्युति यानी विद्युत् शब्दको छोडकर (अन्य स्त्रीलिंगी शब्दोंमें अन्त्य व्यंजनका आकार हो जाता है)। (शब्दोंमें अन्त्य व्यंजनका) लोप होता है (देखिए :—१·१·२५), इस नियमका प्रस्तुत नियम अपवाद है। उदा.—सरित् सरिआ। प्रतिपद् पडिवआ। संपद् संपआ। बहुल (१.१.१७) का अधिकार होनेके कारण, (इस आ के स्थानपर) ईषत्-स्पृष्ट—यश्रुतिभी होती है। उदा.—सरिया। पडिवया। संपया। (सूत्रमें) विद्युत् शब्दको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण विद्युत् शब्दमें अन्त्य व्यंजनका आकार नहीं होता।) उदा.—विज्जू। विज्जुला ॥२९॥

रो रा ॥ ३० ॥

स्त्रीलिंगमें रहनेवाले (शब्दोंके) अन्त्य रेफ (र) को रा ऐसा आदेश होता है। उदा.—गिर् गिरा। पुर् पुरा। धुर् धुरा॥ ३० ॥

हः क्षुत्ककुभि ॥ ३१ ॥

क्षुध् और ककुभ् इन शब्दोंमें अन्त्य व्यंजनका हकार होता है। उदा.—छुहा। कउहा ॥ ३१ ॥

धनुषि वा ॥ ३२ ॥

(इस सूत्रमें १.१.३१ से) हः पदकी अनुवृत्ति है। धनुस् शब्दमें अन्त्य व्यंजनका ह विकल्पसे होता है। उदा.—धणुहं धणू॥ ३२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सशाशिषि ॥ ३३ ॥

(इस सूत्रमें १.१.३२ से) वा शब्दकी अनुवृत्ति है। आशिष् शब्दमें अन्त्य व्यंजनको सश् ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। (सूत्रके सश् में) श् इत् होनेके कारण, पूर्व (पिछला) स्वर दीर्घ होता है। उदा.–आसीसा आसी ॥ ३३ ॥

स आयुरप्सरसोः ॥ ३४ ॥

(इस सूत्रमें १.१.३२ से) वा शब्दकी अनुवृत्ति है। आयुर्, अप्सरस् इन शब्दोंमें अन्त्य व्यंजनका सकार विकल्पसे होता है। उदा.–दीहाउसो दीहाऊ। अच्छरसा अच्छरा ॥ ३४ ॥

दिक्प्रावृषि ॥ ३५ ॥

(इस सूत्रमें १.१.३४ से) सः पद (अध्याहृत) है। दिक्, प्रावृष् इन शब्दोंमें अन्त्य व्यंजनका स होता है। (१.१.३४ से) यह सूत्र पृथक् कहे जानेसे, (यह स) नित्य होता है। उदा.–दिसा। पाउसो ॥ ३५ ॥

शरदामत् ॥ ३६ ॥

शरद् प्रकारके शब्दोंके अन्त्य व्यंजनका अ होता है। उदा.—शरद् सरओ। भिषक् भिसओ ॥ ३६ ॥

तु सक्खिणभवन्तजम्मणमहन्ताः ॥ ३७ ॥

जिनमें अन्त्य व्यंजनोंको कहे हुए आदेश हो गये हैं, ऐसे साक्षिन्, इत्यादि (साक्षिन्, भवत्, जन्मन्, महत्) शब्द निपात (के रूपमें) विकल्पसे आते हैं। उदा.—सक्खिणो सक्खी। भवन्तो भवं। जम्मणं जम्मो। महन्तो महं ॥ ३७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यत्तत्सम्यग्विष्वक्पृथको मल् ॥ ३८ ॥

यद्, इत्यादि (यद्, तद्, सम्यक्, विष्वक्, पृथक्) अव्ययोंके अन्त्य हल् (व्यंजन) का मकार होता है। (सूत्रके मल्में) ल् इत् होनेके कारण, (यह मकार) नित्य होता है। उदा.—यत् जं। तत् तं। सम्यक् सम्मं। विष्वक् वीसुं। पृथक् पिहं ॥ ३८ ॥

मोऽचि वा ॥ ३९ ॥

(इस सूत्रमें) मः पद (अध्याहृत) है। अन्त्य मकारका, स्वर आगे हो तो, मकार विकल्पसे होता है। (शब्दोंके अन्त्य व्यंजनका) लोप होता है (१.१.२५) इस नियमका प्रस्तुत नियम अपवाद है। उदा.—उसहमजिअं च वन्दे। वन्दे उसहं अजिअं ॥ ३९ ॥

बिन्दुल् ॥ ४० ॥

शब्दोंके अन्त्य मकारका बिंदु (अनुस्वार) होता है। (सूत्रके बिंदुल्में) ल् इत् होनेसे, (यह अनुस्वार) नित्य होता है। उदा.—फलं। वच्छं। सव्वं। गिरिं। वहुं ॥ ४० ॥

हलि ङञणनाम् ॥ ४१ ॥

(अब) म शब्दकी निवृत्ति हुई है। ङ, ञ, ण और न इन केआगे हल (व्यंजन) हो तो उनका बिंदु (अनुस्वार) हो जाता है। उदा.–ङ का (अनुस्वार)–पङ्क्तिः पंती। पराङ्मुखः परंमुहो। ञ का (अनुस्वार)–कञ्चुकः कंचुओ। लाञ्छनम् लंछणं। ण का (अनुस्वार)–षण्मुखः छंमुहो। उत्कण्ठा उक्कंठा। न का (अनुस्वार)–सन्ध्या संझा। विन्ध्यः विंझो ॥ ४१ ॥

स्वरेभ्यो वक्रादौ ॥ ४२ ॥

वक्र, इत्यादि शब्दोंमें, प्रथम, (द्वितीय), इत्यादि स्वरोंके आगे, (वाङ्मयमें जैसा) दिखाई देता है वैसा, बिंदु (अनुस्वार) आता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उदा.-वंकं वक्रम्। कुंमलं कुड्मलम्। बुंधणं बुध्नम्। पुंछं पुच्छम्। मुंढा मूर्धा। गुंछं गुच्छम्। कंकोडो कर्कोटः। गिंठी गृष्टिः। दंसणं दर्शनम्। फंसो स्पर्शः। अंसू अश्रु। मंसू श्मश्रु। तंसं त्र्यश्रम्। मंजारो मार्जारः। विंछिओ वृश्चिकः। इन शब्दोंमें पहले स्वरके आगे अनुस्वार आया है। मणंसिणी मनस्विनी। मणंसिला मनःशिला। वअंसो वयस्यः। पंसत्थं पार्श्वस्थम्। पडिंसुआ प्रतिश्रुत्। इन शब्दोंमें दूसरे स्वरके आगे अनुस्वार आया है। उअरिं उपरि। अणिउंतअं अतिमुक्तकम्। इन शब्दोंमें तीसरे स्वरके बाद अनुस्वार आया है। क्वचित् वृत्त-पूरणके लिए भी अनुस्वार आता है। उदा.-देवंणाअसुवत्तं देवनागसुवक्त्रम्। और क्वचित् गिट्ठी, मज्जारो, मणसिला, मणोसिला, ऐसेभी रूप दिखाई देते हैं॥ ४२॥

क्त्वासुपोस्तु सुणात्॥ ४३॥

क्त्वा-प्रत्यय और सुप् (प्रत्यय) इनसे संबंधित रहनेवाले जो सुकार और णकार, उनके आगे बिंदु (अनुस्वार) विकल्पसे आता है। उदा.-सुकारके आगे अनुस्वार-वच्छेसुं वच्छेसु। अम्हेसुं अम्हेसु। तुम्हेसुं तुम्हेसु। क्त्वा प्रत्ययके णकारके आगे अनुस्वार-काऊणं काऊण। काउआणं काउआण। सुप् से संबंधित रहनेवाले णकारके आगे अनुस्वार-वच्छेणं वच्छेण। वच्छाणं वच्छाण। ममाणं ममाण। तुम्हाणं तुम्हाण। अम्हाणं अम्हाण। सुकार और णकार इनके आगे, ऐसा क्यों कहा है? (कारण सुकार और णकार न होते तो विकल्पसे अनुस्वार नहीं आता। उदा.)—करिअ। अग्गिणो॥ ४३॥

लुङ् मांसादौ॥ ४४॥

(इस सूत्रमें) वा शब्द (अध्याहृत) है। बिन्दु (१.१.४०) पदका अधिकार हैही। (उस बिन्दु शब्दमें) बिन्दुका (बिन्दोः) ऐसा षष्ठयन्त परिणाम होता है (यानी यहाँ बिंदुका ऐसा षष्ठयन्त रूप लेना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है।) मांस इत्यादि शब्दोंमें बिंदु (अनुस्वार) का लोप विकल्पसे होता है। उदा.—मासं मंसं। मासलं मंसलं। पासू पंसू। कासं कंसं। कह कहं। इआणि इआणिं। दाणि दाणिं। कि करेमि किं करेमि। समुहं संमुहं। नूण नूणं। एव एवं॥ ४४॥

संस्कृतसंस्कारे॥ ४५॥

(इस सूत्रमें १.१.४४ से) लुक् पद (अध्याहृत) है। संस्कृत और संस्कार शब्दोंमें बिंदु (अनुस्वार) का लोप होता है। यह सूत्र (१.१.४४ से) पृथक् कहा जानेके कारण, (अनुस्वारका लोप) नित्य होता है। उदा.—सक्कअं सक्कारो॥ ४५॥

डे तु किंशुके॥ ४६॥

किंशुक शब्दमें बिंदु (अनुस्वार) का एकार-जिसमें ड् अनुबंध है-विकल्पसे होता है। उदा.—केसुओ किंसुओ॥ ४६॥

वर्गेऽन्त्यः॥ ४७॥

(इस सूत्रमें १.१.४६ से) तु शब्दकी अनुवृत्ति है। बिंदुके आगे वर्गीय व्यंजन हो तो उस वर्गकाही संनिध (रहनेवाला) अन्त्य व्यंजन विकल्पसे होता है। उदा.—पङ्को पंको। अङ्गणं अंगणं। लञ्छणं लंछणं। सञ्झा संझा। कण्टओ कंटओ। मण्डणं मंडणं। अन्तरं अंतरं। पन्थो पंथो। छन्दो छंदो। बन्धू बंधू। कम्पइ कंपइ। आरम्भो आरंभो। (सूत्रमें) वर्गीय व्यंजन, ऐसा क्यों कहा है? (कारण वर्गीय व्यंजन न हो तो केवल अनुस्वार ही होगा।) उदा.—संसओ। (वर्गीय व्यंजन आगे हो तो अनुस्वारका उस वर्गका अन्त्य व्यंजन) नित्य होता है, ऐसा कोई लोग मानते हैं॥ ४७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विंशतिषु त्या श्लोपल् ॥ ४८ ॥

विंशति प्रकारके शब्दोंमें 'ति' अवयवके साथ बिंदुका लोप होता है। (सूत्रके श्लोपल् में) श् इत् होनेसे, पूर्व स्वर दीर्घ होता है। (तथा श्लोपल् में) ल् इत् होनेके कारण, (यहाँका कार्य) नित्य हो जाता है। उदा.–वीसा विंशतिः। तीसा त्रिंशत्। तेवीसा त्रयोविंशतिः। तेत्तीसा त्रयस्त्रिंशत्। दाढा दंष्ट्रा। सीहो सिंहः। (सिंह शब्दके) सिंह तथा सिंघ ऐसेभी रूप दिखाई देते हैं। संज्ञाओंमें (सिंह शब्द होनेपर) सिंहदन्तो। सिंहराओ ॥ ४८ ॥

स्नमदामशिरोनभो नरि ॥ ४९ ॥

स्नंयानी सकारान्त और नकारान्त शब्द; ऐसे शब्दोंके रूप नरि अर्थात् पुल्लिंगमें प्रयुक्त करें। (सूत्रमें) 'अदामशिरोनभः' का यह अभिप्राय है– दामन्, शिरस्, और नभस् शब्दोंको छोडकर। उदा.-सान्त (सकारान्त)- जसो यशः। तमो तमः। उरो उरः। तेओ तेजः। पओ पयः। नान्त (नकारान्त)-जम्मो जन्म। कम्मो कर्म। वम्मो वर्म। (सूत्रमें) दामन्, शिरस् और नभस् शब्दोंको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण ये शब्द नपुंसकलिंगमेंही प्रयुक्त किये जाते हैं।) उदा.-दामं। सिरं। णहं। और (सदस्, इत्यादि शब्दोंके बारेमें) सदस् सअं। वयस् वअं। सुमनस् सुमणं। शर्म सम्मं। (इत्यादि रूप) दिखाई देते हैं, वे बहुलके अधिकारसे होते हैं॥ ४९ ॥

शरत्प्रावृट् ॥ ५० ॥

(इस सूत्रमें १·१·४९ से) नरि पदकी अनुवृत्ति है। शरत् और प्रावृष् शब्द पुल्लिंगमें प्रयुक्त करें। उदा.-सरओ। पाउसो ॥ ५० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अक्ष्यर्थकुलाद्या वा ॥ ५१ ॥

(इस सूत्रमें १.१.४९ से) नरि पद (अध्याहृत) है। अक्षि (और अक्षिके) पर्यायवाचक शब्द, तथा कुल, इत्यादि शब्द पुल्लिंगमें विकल्पसे प्रयुक्त करें। उदा.-अक्षि और उस अर्थके शब्द-एस अच्छी। णच्चाविआइँ तेणम्ह अच्छीइं, नर्तिते तेनास्माकमक्षिणी। (अक्षि शब्द) अंजल्यादि-गणमें कहा गया है, इसलिए वह स्त्रीलिंगमेंभी प्रयुक्त किया जाता है। उदा.–एसा अच्छी। चक्खू चक्खूइं। नअणा नअणाइं। लोअणा लोअणाइं। कुलादि शब्द–कुलो कुलं। वअणो वअणं। माहप्पो माहप्पं। दुक्खो दुक्खं। भाअणो भाअणं। विज्जुला विज्जुलाइं। छंदो छंदं। कुलादि (गणमें आगे कहे गये शब्द होते हैं) कुल, वचन, माहात्म्य, दुःख, भाजन, विद्युत्, छंदस्, इत्यादि। नेत्ता नेत्ताइं, कमला कमलाइं, इत्यादि (रूप) संस्कृत जैसे–ही हैं॥५१॥

क्लीबे गुणगाः ॥ ५२ ॥

(इस सूत्रमें १.१.५१ से) वा शब्दकी अनुवृत्ति है। गुण, इत्यादि शब्द नपुंसकलिंगमें विकल्पसे प्रयुक्त करें। उदा.–गुणाइं गुणा। देवाइं देवा। मंडलग्गं मंडलग्गो। खग्गं खग्गो। बिंदूइं बिंदुणो। कररुहं कररुहो। रुक्खाइं रुक्खा। गुणादि (गणमें आगे कहे गए शब्द आते हैं)—गुण, देव, मण्डलाग्र, खड्ग, बिंदु, कररुह, वृक्ष, इत्यादि ॥५२॥

स्त्रियामिमाञ्जलिगाः ॥ ५३ ॥

इमा से अन्त होनेवाले शब्द और अंजलि, इत्यादि शब्द स्त्रीलिंगमें विकल्पसे प्रयुक्त करें। उदा.–एसा गरिमा एस गरिमो। एसा महिमा एस महिमो। एसा णिल्लज्जिमा एस णिल्लज्जिमो। एसा धुत्तिमा एस धुत्तिमो। अंजलि, इत्यादि शब्द–एसा अंजली एस अंजली। बलीए बलिणा। णिहीए णिहिणा। रस्सीए रस्सिणा। पण्हा पण्हो। अच्छीए

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अच्छिणा। गंठीए गंठिणा। कुच्छीए कुच्छिणा। चोरिआ चोरिअं। विहीए विहिणा। पिट्ठी पिट्ठं। पृष्ठ शब्दमें (ऋ स्वरका) इ किया जानेपरही वह केवल स्त्रीलिंगमें प्रयुक्त किया जाता है, ऐसा कोई कहते हैं। अंजल्यादि (गणमें होनेवाले शब्द ऐसे हैं)-अंजलि, बलि, निधि, रश्मि, प्रश्न, अक्षि, ग्रन्थि, कुक्षि, चौर्य, विधि, पृष्ठ, इत्यादि। 'इमन्' ऐसा यहाँ जो नियमन है (तंत्रेण), उस (कारण) से (भाववाचक संज्ञा सिद्ध करनेका जो 'त्व' प्रत्यय है उस) त्व (प्रत्यय) का आदेश, डित् इमा ऐसा आदेश, और पृथु, इत्यादि शब्दोंको लगनेवाला इमनिच् प्रत्यय, इनका संग्रह यहाँ होता है। त्व (प्रत्यय) का आदेश लगकर सिद्ध होनेवाले शब्द स्त्रीलिंगमेंही प्रयुक्त होते हैं, ऐसा कोई मानते हैं॥ ५३॥

— प्रथम अध्याय प्रथम पाद समाप्त —

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

द्वितीयः पादः

निष्प्रती ओत्परी माल्यस्थोर्वा ॥ १ ॥

निर् और प्रति ये दो उपसर्ग; उनके आगे माल्य शब्द तथा स्था धातु आगे हों तो उनके यथाक्रम ओ और परि ऐसे दो रूप विकल्पसे होते हैं। उदा.—ओमल्लं णिम्मल्लं निर्माल्यम्। ओमाळयं वहइ। परिट्ठा पइट्ठा प्रतिष्ठा। परिट्ठिअं पइट्ठिअं प्रतिष्ठितम् ॥ १ ॥

आदेः ॥ २ ॥

(सूत्रमेंसे) आदेः (पहले वर्णका) पदका अधिकार 'अस्तोरखोरचः' (१.३.७) इस सूत्रके पूर्वसूत्रतक अविशेषतः है, ऐसा जानें ॥२॥

लुगव्ययत्यदाद्यात्तदचः ॥ ३ ॥

अव्यय और त्यत्, इत्यादि सर्वनाम इनके आगे (स्वरादि) अव्यय और त्यत्, इत्यादि सर्वनाम जब आते हैं, तब तदचः (अर्थात् आगे आनेवाले) अव्यय तथा सर्वनाम इनमेंसे आद्य अच् (स्वर) का विकल्पसे (बहुलं) लोप होता है। उदा.—अम्हे एत्थ अम्हेत्थ, वयमत्र। जइ इमा जइमा, यदीमाः। जइ अहं जइहं, यद्यहम् ॥३॥

वालाब्वरण्ये ॥ ४ ॥

(इस सूत्रमें १.२.३ से) लुक् शब्दकी अनुवृत्ति है। अलाबु तथा अरण्य इनमें आद्य (स्वर) का लोप विकल्पसे होता है। उदा.—लाऊ अलाऊ। रण्णं अरण्णं ॥ ४ ॥

अपेः पदात् ॥ ५ ॥

(इस सूत्रमें १.२.४ से) वा शब्द (अध्याहृत) है। किसी भी पदके आगे आनेवाले अपि उपसर्गके आद्य (स्वर) का लोप विकल्पसे होता हैं। उदा.—किं पि किमवि। तं पि तमवि। केण वि केणावि। कहं पि कहमवि। पदके (आगे आनेवाले), ऐसा क्यों कहा हैं? (कारण पदके आगे अपि न हो तो आद्य स्वरका विकल्पसे लोप नहीं होता।) उदा.—अवि णाम ॥ ५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इतेः ॥ ६ ॥

(इस सूत्रमें १.२.५ से) 'पदात्' पद (अध्याहृत) है। पदके आगे होनेवाले इति शब्दके आद्य (स्वर) का लोप होता है। यह नियम पृथक् रूपसे कहा है, इसलिए (यहाँका वर्णान्तर) नित्य होता है। उदा.— किंमिति किं ति। यदिति जं ति। तदिति तं ति। युक्तमिति जुत्तं ति। पदके आगे (होनेपरही इति के आद्य स्वरका लोप होता है, अन्यथा नहीं।), उदा.—इअ विंझगुहाणिलआए, इति विन्ध्यगुहानिलयायाः ॥ ६ ॥

तोऽचः ॥ ७ ॥

(सूत्रमेंसे) अचः यानी स्वरात्। स्वरके आगे होनेवाले इति शब्दके आद्य इकारका तकार होता है। उदा.—तह त्ति तथेति। झत्ति झटिति। पिओ त्ति प्रिय इति। स्वरके आगे होनेवाले, ऐसा क्यों कहा है? (कारण स्वरके आगे इति न हो तो यह वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.—किं ति ॥ ७ ॥

शोर्लुप्तयवरशोर्दिः ॥८॥

(सूत्रमेंसे) शोः यानी शु के अर्थात् श्, ष्, स् इन वर्णोंके। (सूत्रके) लुप्तयवरशोः का अभिप्राय है—लुप्त हुए य्, व्, र्, श्, ष् और स् इनके। आदि स्वरका दि यानी दीर्घ होता है। (अर्थ यह हुआ—) (व्यंजनोंके) संयोगमें पहले या अनन्तर (उपर्यधो वा) रहनेवाले य्, व्, र्, श्, ष, स् इनका लोप होनेपर, जो श्, ष्, स् अवशिष्ट रहते हैं, उनके आद्य स्वरका दीर्घ (स्वर) होता है, यह अर्थ है। उदा.—श् से संयुक्त रहनेवाले य् का लोप होनेपर—कश्यपः कासवो। आवश्यकम् आवासयं। पश्यति पासइ। (श् से संयुक्त रहनेवाले) व् का लोप होनेपर—अश्वः आसो। विश्वासः वीसासो। विश्वसिति वीससइ। (श् से संयुक्त रहनेवाले) र् का लोप होनेपर—विश्रामः वीसामो। विश्राम्यति वीसामइ। मिश्रम् मीसं। संस्पर्शः संफासो। (श् से संयुक्त रहनेवाले) श् का लोप होनेपर—दुश्शासनः दूसासणो। मनश्शिला मणासिला। (ष् से संयुक्त रहनेवाले) य् का लोप होनेपर-शिष्यः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सीसो। पुष्यः पूसो। मनुष्यः मणूसो। (ष् से संयुक्त रहनेवाले) व् का लोप होनेपर-विष्वाणः वीसाणो। विष्वक् वीसुं। (ष् से संयुक्त रहनेवाले) र् का लोप होनेपर-कर्षकः कासओ। वर्षा वासा। (ष् से संयुक्त रहनेबाले) ष् का लोप होनेपर—निष्षिक्तः णीसित्तो। स् से संयुक्त रहनेवाले य् का लोप होनेपर—सस्यम् सासं। कस्यचित् कासइ। (स् से संयुक्त रहनेवाले) व् का लोप होनेपर—विकस्वरः वीआसरो। निस्स्वः णीसो। (स् से संयुक्त रहनेवाले) र् का लोप होनेपर—उस्रः ऊसो। विस्रम्भः वीसंभो। (स् से संयुक्त रहनेवाले) स् का लोप होनेपर—निस्सहः णीसहो। बहुलके अधिकारसे, व का लोप होनेपर क्वचित् अन्य (दूसरे) ही आद्य स्वरका दीर्घ होता है। उदा.—जिह्वा जीहा। यहाँ 'दीर्घान्न' (१.४.८७) ऐसा प्रतिषेध होनेसे, 'शेषादेशस्याह्वोऽचोऽखोः' (१.४.८६) सूत्रमें कहा गया द्वित्व नहीं होता ॥ ८ ॥

हे दक्षिणेऽस्य ॥ ९ ॥

(इस सूत्रमें १.२.८ से) दिः पदकी अनुवृत्ति है। दक्षिण शब्दमें, क्ष का हे यानी हकार होनेपर, अ का अर्थात् अ-वर्णका दीर्घ होता है। उदा.—दाहिणो। हकार होनेपर, ऐसा क्यों कहा है। (कारण यदि क्ष का हकार न हो तो यह वर्णान्तर नही होता।) उदा.—दक्खिणो ॥ ९ ॥

तु समृद्ध्यादौ ॥ १० ॥

(इस सूत्रमें १.२.९ से) अस्य पदकी अनुवृत्ति है। समृद्धि, इत्यादि शब्दोंमें आद्य अ-वर्णका दीर्घ विकल्पसे होता है। उदा.—सामिद्धी समिद्धी समृद्धिः। पाडिसिद्धी पडिसिद्धी प्रतिसिद्धिः। सारिच्छो सरिच्छो सदृक्षः। माणंसी मणंसी मनस्वी। पासुत्तो पसुत्तो प्रसुप्तः। पाडिप्फद्धी पडिप्फद्धी प्रतिस्पर्धी। पाडिवआ पडिवआ प्रतिपद्। पावासू पवासू प्रवासी। आहिआई अहिआई अभिजातिः। पाअडं पअडं प्रकटम्। पाअअं पअअं प्रकृतम्। पासिद्धी पसिद्धी प्रसिद्धिः। पारकेरं परकेरं पारकं,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परक्कं, परकीयम्। चाउरंतं चउरंतं चतुरन्तम्। आफंसो अफंसो अस्पर्शः। पावअणं पवअणं प्रवचनम्। पारोहो परोहो प्ररोहः। इत्यादि ॥ १० ॥

स्वप्नादाविल् ॥ ११ ॥

स्वप्न, इत्यादि शब्दोंमें आद्य अ-वर्णका इ होता है। (सूत्रके इल् में) ल् इत् होनेके कारण, (यह इकार) नित्य होता है। उदा.—सिविणो सिमिणो स्वप्नः। विअणं व्यजनम्। विलिअं व्यलीकम्। किविणो कृपणः। मिइंगो मृदङ्गः। ईसि ईषत्। वेडिसो वेतसः। दिण्णं दत्तम्। उत्तिमो उत्तमः। मिरिअं मरिचम्। बहुलका अधिकार होनेसे, दत्त शब्दमें ण्णत्व नहीं हुआ तो इ नहीं होता। उदा.—दत्तं ॥ ११ ॥

पक्वाङ्गारललाटे तु ॥ १२ ॥

पक्व, अङ्गार, ललाट इन शब्दोंमें आद्य अ का इ विकल्पसे होता है। उदा.—पिक्कं पक्कं। इंगारो अंगारो। णिडालं णडालं ॥ १२ ॥

सप्तपर्णे फोः ॥ १३ ॥

सप्तपर्ण शब्दमें फुका यानी द्वितीय (अ-वर्ण) का इत्व विकल्पसे होता है। उदा.—छत्तिवण्णो छत्तवण्णो ॥ १३ ॥

मध्यमकतमे च ॥ १४ ॥

(सूत्र १.२.१३ से) फोः पदकी अनुवृत्ति इस (१.२.१४) सूत्रमें है, यह दिखानेका काम इस सूत्रका चकार करता है। मध्यम और कतम शब्दोंके द्वितीय अच् का (=स्वरका) इत्व होता है। (१.२.१२-१३ से) यह नियम पृथक् कहा जानेसे, (यहाँका वर्णान्तर) नित्य होता है। उदा.-मज्झिमो। कइमो ॥ १४ ॥

हरे त्वी ॥ १५ ॥

'हर' शब्दके आद्य अच् (स्वर) का ईत्व विकल्पसे होता है। हीरो। हरो ॥ १५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उल्ल् ध्वनिगवयविष्वचो वः ॥ १६ ॥

ध्वनि, गवय, विष्वक् शब्दोंमें, वकारसे संबंधित (होनेवाले) अ-वर्णका उत्व लित् (नित्य) होता है। उदा.—झुणी। गउओ। वीसुं॥ १६ ॥

ज्ञो णोऽभिज्ञादौ ॥ १७ ॥

(इस सूत्रमें) उत्वं पदकी अनुवृत्ति है। अभिज्ञ, इत्यादि शब्दोंमें ज्ञकारको आदेशके रूपमें आनेवाले ण से संबंधित (रहनेवाले) अ-वर्णका उ होता है। उदा.—अहिण्णु अभिज्ञः। सव्वण्णू सर्वज्ञः। आगमण्णू आगमज्ञः। कअण्णू कृतज्ञः। (ज्ञ को) ण (आदेश) होनेपर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण यदि ण आदेश न हो तो यहाँका वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.—अहिज्जो अभिज्ञः। अभिज्ञः, इत्यादि शब्दोंमें, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्य शब्दोंमें ज्ञ को ण आदेश होनेपरभी अ का उ नहीं होता।) उदा.—पण्णो प्राज्ञः। अहिण्णा अभिज्ञा। जिन शब्दोंमें ज्ञ को ण आदेश होकर, उससे संबंधित (होनेवाले) अ का उ हुआ दिखाई देता है, वे अभिज्ञ, इत्यादि शब्द होते हैं॥ १७ ॥

स्तावकसास्ने ॥ १८ ॥

स्तावक और सास्ना शब्दोंके आद्य अ-वर्ण का उ होता है। उदा.-थुवओ। सुण्हा ॥ १८ ॥

चण्डखण्डिते णा वा ॥ १९ ॥

चण्ड और खण्डित शब्दोंमें, णकारके साथ आद्य अवर्णका उ विकल्पसे होता है। उदा.—चुडं चण्डं। खुडिओ खंडिओ ॥ १९ ॥

प्रथमे प्थोः ॥ २० ॥

प्रथम शब्दमें, पकार और थकार इनसे संबंधित (रहनेवाले) अ-वर्णका, (दोनोंका) एकसाथ (युगपद्) और क्रमसे, उ विकल्पसे होता है। उदा. पुढुमं पढुमं पुढमं पढमं॥ २० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आर्यायां र्यः श्वश्र्वामूल् ॥ २१ ॥

श्वश्रू (सास) वाचक आर्या शब्दमें, र्यकारसे संबंधित (होनेवाले) अ-वर्णका लित् (नित्य) ऊ होता है। उदा.—अज्जू। श्वश्रूवाचक (आर्या शब्दमें), ऐसा क्यों कहा है? (कारण श्वश्रू अर्थ नहीं होता तो यह वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.—अज्जा (यानी) माता ॥२१॥

आसारे तु ॥ २२ ॥

आसार शब्दमें आद्य अ-वर्णका ऊत्व विकल्पसे होता है। उदा.—ऊसारो आसारो ॥ २२ ॥

तोऽन्तर्येल् ॥ २३ ॥

अन्तर् शब्दमें तकारसे संबंधित (रहनेवाले) अ-वर्णका लित् (नित्य) ए होता है। उदा.—अन्तःपुरम् अंतेउरं। अन्तश्चारी अंतेआरी। क्वचित् (ऐसा ए) नहीं होता। उदा.—अन्तर्गतम् अंतग्गअं। अंतोवीसंभणिवेसिआण, अन्तर्विश्रम्भनिवेशितानाम् ॥ २३ ॥

पारावते तु फोः ॥ २४ ॥

पारावत शब्दमें फु का यानी द्वितीय (अ-वर्ण) का ए विकल्पसे होता है। उदा.-पारेवओ पारावओ ॥ २४ ॥

उत्करवल्लीद्वारमात्रचः ॥ २५ ॥

उत्कर, वल्ली, द्वार शब्दोंमें (और) मात्रच् प्रत्ययमें आद्य अ-वर्णका ए विकल्पसे होता है। उदा.-उक्केरो उक्करो। वेल्ली वल्ली। देरं दारं। विकल्पपक्षमें दुआरं। मात्रच् प्रत्ययमें- एत्तिअमेत्तं एत्तिअमत्तं एतावन्मात्रम्। बहुलका अधिकार होनेसे, मात्र शब्दमें भी (आद्य अ-वर्णका ए होता है।) उदा.—भोअणमेत्तं भोजनमात्रम् ॥ २५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शय्यादौ ॥ २६ ॥

शय्या इत्यादि शब्दोंमें आद्य अ-वर्णका ए होता है। (१.२.२४-२५ से) यह नियम पृथक् कहा जानेसे, (यहाँका वर्णान्तर) नित्य होता है। उदा.—सेज्जा शय्या। एत्थ अत्र। गेज्झं ग्राह्यम्। गेंदुअं कन्दुकम् ॥ २६ ॥

त्वार्द्रे उदोत् ॥ २७ ॥

आर्द्र शब्दमें आद्य अ-वर्णके उ और ओ विकल्पसे होते हैं। उदा.-उल्लं ओल्लं। विकल्पपक्षमें—अल्लं अद्दं। बाहसलिलप्पवहेण ओल्लेइ, बाष्प-सलिलप्रवाहेणार्द्रयति ॥ २७ ॥

स्वपि ॥ २८ ॥

(इस सूत्रमें १.२.२७ से) उदोत् शब्दकी अनुवृत्ति है। स्वप् (स्वपि) धातुके आद्य अ-वर्णके उ और ओ होते हैं। (१.२.२७ से) यह नियम पृथक् कहा जानेसे, (यहाँका वर्णान्तर) नित्य होता है। उदा.—सुवइ सोवइ ॥ २८ ॥

ओदाल्यां पङ्क्तौ ॥ २९ ॥

पङ्क्तौ यानी पंक्तिवाचक आली शब्दमें आद्य अ-वर्णका ओ होत है। उदा.—ओली। पंक्तिवाचक (आली शब्दमें), ऐसा क्यों कहा है? (कारण आली पंक्तिवाचक न हो तो यह वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.—आली (यानी) सखी ॥ २९ ॥

फोः परस्परनमस्कारे ॥ ३० ॥

(इस सूत्रमें १.२.२९ से) ओत् शब्दकी अनुवृत्ति है। परस्पर और नमस्कार शब्दोंमें फु यानी द्वितीय (अ-वर्ण) का ओ होता है। उदा.-परोप्परं। णमोक्कारो ॥ ३० ॥

पद्मे मि ॥ ३१ ॥

पद्म शब्दमें आद्य अ-वर्णका, मकार आगे होनेपर, ओ होता है। उदा.—पोम्मं। (सूत्रमें) मि (मकार आगे होनेपर), ऐसा क्यों कहा है? (कारण आगे मकार न हो तो यह वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.-पदुमं ॥ ३१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्वपौं ।। ३२ ।।

अर्पौं यानी अर्पयति धातुमें आद्य अ का ओ विकल्पसे होता है। उदा.–ओप्पेइ अप्पेइ । ओप्पिअं अप्पिअं ।। ३२ ।।

ईल् खल्वाटस्त्यानयोरातः ।। ३३ ।।

खल्वाट और स्त्यान शब्दोंके आद्य आकारका लित् (नित्य) ई होता है। उदा.–खल्लीडो । ठीणं । संखाअं यह रूप मात्र 'स्त्यः समः खा' (२.४.१२४) सूत्रसे ख आदेश होकर, क्त-प्रत्यय लगनेपर, सिद्ध हुआ है ।। ३३ ।।

इत्तु सदादौ ।।३४।।

(इस सूत्रमें १.२.३३ से) आतः पदकी अनुवृत्ति है। सदा इत्यादि शब्दोंमें आद्य आकारका इ विकल्पसे होता है। उदा.–सइ सआ सदा। कुप्पिसो कुप्पासो कूर्पासः। णिसिअरो णिसाअरो निशाकरः। इत्यादि ।। ३४ ।।

आचार्ये चो ह्रश्च ।। ३५ ।।

आचार्य शब्दमें चकारसे संबंधित (रहनेवाले) आ का ह यानी ऱ्हस्व होता है। (सूत्रमें) चकार होनेसे, (इस आ का) इ भी होता है। उदा.–आअरिओ आइरिओ ।। ३५ ।।

श्यामाके मः ।। ३६ ।।

(इस सूत्रमें १.२.३५ से) हः पदकी अनुवृत्ति है। श्यामाक शब्दमें मकारसे युक्त (रहनेवाले) आ का ह यानी ऱ्हस्व होता है। उदा.–सामओ ।। ३६ ।।

न वाव्ययोत्खातादौ ।। ३७ ।।

अव्ययोंमें तथा उत्खात, इत्यादि शब्दोंमें, आद्य आ का ऱ्हस्व विकल्पसे नहीं होता। उदा.–अव्ययोंमें–जह जहा यथा। तह तहा तथा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अहव अहवा अथवा। व वा। ह हा। इत्यादि। उत्खात, इत्यादि शब्दोंमें-उक्खअं उक्खाअं उत्खातम्। कुमरो कुमारो कुमारः। खइरं खाइरं खादिरम्। वलआ बलाआ बलाका। पअअं पाअअं प्राकृतम्। चमरो चामरो चामरः। कलओ कालाओ कलादः (यानी) स्वर्णकार (सोनार)। हलिओ हालिओ हालिकः (अर्थात्) कृषीवलः (किसान)। णराओ नाराओ नाराचः। तलविंटं तालविंटं तालवृन्तम्। ठविओ ठाविओ स्थापितः। पट्ठविओ पट्ठाविओ प्रस्थापितः। संठविओ संठाविओ संस्थापितः। इत्यादि। ब्राह्मण और पूर्वाह्ण शब्दोंमेंभी (यह नियम लगता है), ऐसा कोई कहते हैं। उदा.-बम्हणो बाम्हणो। पुव्वण्हो पुव्वाण्हो ॥ ३७ ॥

घञि वा ॥ ३८ ॥

घञ् प्रत्ययके कारण आनेवाला जो वृद्धिरूप आकार, वह जब आद्य होता है तब उसका ह्रस्व विकल्पसे होता है। (इस सूत्रमें) पुनः 'वा' शब्दका ग्रहण किये जानेसे, अगले सूत्रमें (१.२.३९ में) विकल्प नहीं होता। उदा.-पवहो पवाहो प्रवाहः। पहरो पहारो प्रहारः। पअरो पआरो प्रकारः या प्रचारः। पत्थओ पत्थाओ प्रस्तावः। क्वचित (इस प्रकारका ह्रस्व) नहीं होता। उदा.-रागः राओ। भागः भाओ॥ ३८ ॥

स्वरस्य बिन्द्वमि ॥ ३९ ॥

बिंदु (अनुस्वार) और अम् यानी द्वितीया एकवचन (प्रत्यय) आगे होनेपर, (पिछले) स्वरका ह्रस्व होता है। उदा.-अनुस्वार आगे होनेपर-मांसम् मंसं। मांसलम् मंसलं। पांसुः पंसू। कांस्यम् कंसं। वांशिकः वंसिओ। काञ्चनम् कंचणं। लाञ्छनम् लछणं। द्वितीया एकवचन (प्रत्यय) आगे होनेपर-गंगं। मालं। नइं। वहुं ॥ ३९ ॥

संयोगे ॥ ४० ॥

(व्यंजनोंका) संयोग (संयुक्त व्यंजन) आगे होनेपर, (उसके) पूर्व (पिछला) (दीर्घ) स्वर ह्रस्व होता है। उदा.-आ (का ह्रस्व)—आम्रम्

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अंबं। ताम्रम् तंबं। विरहाग्निः विरहग्गी। अमात्यः अमच्चो। काव्यम् कव्वं। ई (का ह्रस्व)-मुनीन्द्रः मुणिंदो। तीर्थम् तित्थं। शीघ्रम् सिग्धं। ऊ (का ह्रस्व)–चूर्णम् चुण्णं। सूत्रम् सुत्तं। पूर्वम् पुव्वं। ए (का ह्रस्व)-नरेन्द्रः णरिन्दो। म्लेच्छः मिलिच्छो। ऐ (का ह्रस्व)–दृष्टैकस्तनपट्टम् दिट्ठोक्कत्यणवट्टं। ओ (का ह्रस्व)–अधरोष्ठः अहरुट्ठो। नीलोत्पलम् णीलुप्पलं। ए और ओ के बारेमें (यह जानें कि) क्वचित् वे स्वरूपसेही (स्वतःही) ह्रस्व होते हैं। उदा.–एकः ऍक्को। नेत्रम् णॅत्तं। ग्राह्यम् गॅज्झं। स्तोकम् थॉक्कं। तुण्डम् तॉण्डं। इत्यादि॥ ४० ॥

त्वेदितः ॥४१॥

(इस सूत्रमें १.२.४० से) 'संयोगे' पदकी अनुवृत्ति है। आगे (व्यंजनोंका) संयोग (संयुक्त व्यंजन) होने पर, आद्य इकारका ए विकल्पसे होता है। उदा.-पेण्डं पिण्डं। धम्मेल्लं धम्मिल्लं। सेन्दूरं सिन्दूरं सिन्दूरम्। बेल्लं बिल्लं बिल्वम्। वेण्हू विण्हू विष्णुः। क्वचित् (इस प्रकार ए) नहीं होता। उदा.–चिन्ता॥ ४१ ॥

मिरायां लित् ॥ ४२ ॥

(इस सूत्रमें १.२.४१ से) इतः और एत् पदोंकी अनुवृत्ति है। मिरा शब्दमें इ का लित् (नित्य) ए होता है। उदा.–मेरा (यानी) सीमा ॥ ४२ ॥

मूषिकविभीतकहरिद्रापथिपृथिवीप्रतिश्रुत्यत् ॥४३॥

मूषिक, इत्यादि शब्दोंमें आद्य इकारको अकार आदेश होता है। मूषिकः मूसओ। विभीतकः वहेडओ। हरिद्रा हलद्दी। पथि पहो। पथ शब्द अकारान्त रहनेपरभी, पथि शब्दका अन्य रूप न हो, इसलिए यह नियम कहा है। पृथिवी पुहवी पुढवी। प्रतिश्रुत् पडंसुआ (यानी) प्रतिध्वनि॥ ४३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रस्तित्तिरौ ॥ ४४ ॥

(इस सूत्रमें १.२.४३ से) अत् शब्दकी अनुवृत्ति है। तित्तिरि शब्दमें र् से संबंधित (रहनेवाले) इकारका अ होता है। उदा.- तित्तिरो ॥ ४४ ॥

इतौ तो वाक्यादौ ॥ ४५ ॥

वाक्यके प्रारंभमें रहनेवाले इति शब्दमें तकारसे संबंधित (होनेवाले) इ का अ हो जाता है। उदा.—इअ विअसिअकुसुमसरो, इति विकसित-कुसुमशरः। वाक्यके प्रारंभमें, ऐसा क्यों कहा है? (कारण वाक्यके प्रारंभमें इति न हो तो यह वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.—पिओ त्ति ॥ ४५ ॥

वेङ्गुदशिथिलयोः ॥ ४६ ॥

इङ्गुद और शिथिल शब्दोंमें आद्य इ का अ विकल्पसे होता है। उदा.—अंगुअं इंगुअं। सढिलं सिढिलं। पसढिलं पसिढिलं। णिम्भाअं, णिम्मिअं, ये रूप मात्र निर्मातृ और निर्मित शब्दोंसे होंगे ॥ ४६ ॥

उ युधिष्ठिरे ॥ ४७ ॥

(इस सूत्रमें १.२.४६ से) वा शब्दकी अनुवृत्ति है। युधिष्ठिर शब्दमें आद्य इ का उ विकल्पसे होता है। उदा.—जुहुट्ठिलो जुहिट्ठिलो ॥ ४७ ॥

द्विनीक्षुप्रवासिषु ॥ ४८ ॥

(इस सूत्रमें) उत्व शब्दकी अनुवृत्ति है। द्वि शब्दमें, नि इस उपसर्गमें, तथा इक्षु और प्रवासिन् शब्दोंमें आद्य इ का उ होता है। (१.२.४७ से) यह नियम पृथक् कहा जानेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.-द्विमात्रः दुमत्तो। द्विजातिः दुआई। द्विविधः दुविहो। द्विरेफः दुरेहो। द्विवचनम् दुवअणं, दुहा वि सो सुरवहूसत्थो, द्विधापि स सुरवधूसार्थः। बहुलका अधिकार होनेसे, क्वचित् विकल्प होता है। उदा.-दुउणो विउणो द्विगुणः। दुइओ विइओ द्वितीयः। क्वचित् (उ) नहीं होता। उदा.—द्विजः दिओ! द्विरदः दिरओ। द्विधागतः दिहागओ। क्वचित् (इ का) ओ भी होता है। द्विवचनम् दोवअणं। निः (उपसर्ग) में—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णुमज्जइ निमज्जइ। णुमंतो निमन्त्रः। क्वचित् (नि में उ) नहीं होता। उदा.-निपतति णिवडइ। इक्षुः उच्छू। प्रवासी पवासू॥ ४८॥

तु निर्झरद्विधाकृञोरोन्ना॥ ४९॥

निर्झर शब्दमें तथा द्विधाकृ शब्दमें, आद्य इ का (निर्झर शब्दमें मात्र नकार के साथ) ओ विकल्पसे होता है। उदा.—ओज्झरो णिज्झरो निर्झरः। दोहाकिज्जइ दुहाकिज्जइ द्विधाक्रियते। दोहाइअं दुहाइअं द्विधाकृतम्।-(द्विधा-) कृ (कृञ्), ऐसा क्यों कहा है? (कारण द्विधा के आगे कृ न हो तो यह वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.—दिहागअं द्विधागतम्॥ ४९॥

ईतः काश्मीरहरीतक्योर्लालौ॥ ५०॥

काश्मीर और हरीतकी शब्दोंमें ईकारके यथाक्रम आ और अ लित् (नित्य) होते हैं। उदा.-कम्हारो। हरडई॥ ५०॥

गभीरग इत्॥ ५१॥

(इस सूत्रमें १.२.५० से) ईतः पदकी अनुवृत्ति है। गभीर, इत्यादि शब्दोंमें आद्य ईकारका इ होता है। उदा.-गहिरो गभीरः। सिरिसो शिरीषः। आणिअं आनीतम्। स्त्रीलिंगके रूपोंमें ईकारभी (वाङ्मयमें) दिखाई देता है। उदा.-आणीदा भुअणब्भुएक्कजणणी, आनीता भुवनाद्भुतैकजननी। गहिअं गृहीतम्। विलिअं व्रीडितम्। विइओ द्वितीयः। पइविअं प्रदीपितम्। तइओ तृतीयः। जिअओ जीवन्। ओसिअन्तो अवसीदन्। पसिअ प्रसीद। वम्मिओ वल्मीकः। इत्यादि। तआणिं रूप मात्र तदानीम् शब्दमें 'स्वरस्य बिन्दुमि' (१.२.३९) सूत्रके अनुसार (ई का) ह्रस्व होकर सिद्ध हुआ है॥ ५१॥

वा पानीयगे॥ ५२॥

पानीय, इत्यादि शब्दोंमें आद्य ईकारका इ विकल्पसे होता है। उदा.-पाणिअं पाणीअं पानीयम्। अलिअं अलीअं अलीकम्। करिसं करीसं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

करीषम् । उत्तणिअं उत्तणीअं उपनीतम् । जिअइ जीअइ जीवति । इत्यादि ॥ ५२ ॥

उल् जीर्णे ॥ ५३ ॥

जीर्ण शब्दमें ई का उ होता है। (सूत्रके उल् में) ल् इत् होनेसे, (यहाँ) विकल्प नहीं होता। उदा.-जुण्णं। क्वचित् (उ) नहीं होता। उदा.-जिण्णे भोअणमत्ते, जीर्णे भोजनमात्रे ॥ ५३ ॥

तीर्थे ह्यूल् ॥५४॥

तीर्थ शब्दमें, (आगे) हि यानी हकार होनेपर, ई का ऊ होता है। उदा.—तूहं। ह होनेपर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण आगे ह न हो तो यह वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.—तित्थं ॥ ५४ ॥

विहीनहीने वा ॥ ५५ ॥

विहीन और हींन शब्दोंमें ई का ऊ विकल्पसे होता है। उदा.—विहूणं विहीणं। हूणं हीणं। (विहीन और हीन) इनमेंही, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्यत्र ऐसा नहीं होता।) उदा.-पहीणजरमरणा ॥ ५५ ॥

एल् पीठनीडकीदृशपीयूषविभीतकेदृशापीडे ॥ ५६ ॥

पीठ, इत्यादि शब्दोंमें आद्य ई का ए होता है। (सूत्रके एल् में) ल् इत् होनेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.—पेढं। नेडं। केरिसो। पेऊसं। वहेडओ। एरिसो। आमेलो। बहुलका अधिकार होनेसे, पीठ और नीड शब्दोंमें विकल्प होता है। उदा.—पीढं नीडं ॥ ५६ ॥

त्वदुत उपरिगुरुके ॥ ५७ ॥

उपरि और गुरुक शब्दोंमें आद्य उकारका अ विकल्पसे होता है। उदा.-अवरि उवरि। गरुओ गुरुओ। (गुरुक शब्दमें) क—प्रत्यय का ग्रहण होनेसे, गुरु शब्दमें (यह वर्णान्तर) नहीं होता। उदा.-गुरू ॥५७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मुकुलादौ ॥ ५८ ॥

(इस सूत्रमें १.२.५७ से) उतः और अत् पदोंकी अनुवृत्ति है। मुकुल, इत्यादि शब्दोंमें आद्य उकारका अ होता है। यह नियम (१.२.५७ से) पृथक् कहा जानेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.—मउलं मुकुलम्। मउडं मुकुटम्। यद्यपि मकुटम् शब्द संस्कृतमें है, तथापि यह नियम मुकुट शब्दके अन्य रूपोंके निवृत्तिके लिए है। मउरं मुकुरम्। अगरू अगुरुः। गलोई गुडूची। गरूई गुर्वी। जहुट्ठिलो युधिष्ठिरः। सोअमल्लं सौकुमार्यम्। इत्यादि। बहुलका अधिकार होनेसे, क्वचित् (उ का) आ होता है। उदा.—विद्रुतः विद्दाओ ॥ ५८ ॥

रो भ्रुकुटिपुरुषयोरित् ॥ ५९ ॥

(भ्रुकुटि और पुरुष) इन शब्दोंमें रेफसे संबंधित (रहनेवाले) उकारका इ होता है। उदा.-भिउडी। पुरिसो। पउरिसं पौरुषम् ॥५९॥

क्षुत ईत् ॥ ६० ॥

क्षुत् शब्दमें उ का ई होता है। उदा.-छीअं ॥ ६० ॥

दो दो ऽनुत्साहोत्सन्न ऊच्छसि ॥ ६१ ॥

उत्साह और उत्सन्न शब्दोंको छोडकर, उत् उपसर्गके आगे शकार और सकार होनेपर, उत् उपसर्गका दा यानी दकारके साथ ऊ होता है। उदा.-उच्छ्वासः ऊसासो। उच्छ्वसिति ऊससइ। उच्छुकः (अर्थात्) उद्गताः शुकाः यस्मिन् सः (जिसमेंसे तोते उड गये हैं वह) ऊसुओ। उत्सुकः ऊसुओ। उत्सवः ऊसओ। उत्सरति ऊसरइ। उत्सिक्तः ऊसित्तो। उत्साह और उत्सन्न शब्दोंको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण इन शब्दोंमें यह वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.-उच्छाहो। उच्छण्णो ॥६१॥

दुरो रलुकि तु ॥ ६२ ॥

(इस सूत्रमें १.२.६१ से) ऊत् शब्दकी अनुवृत्ति है। दुर् उपसर्गके बारेमें, र-लुकि यानी रेफ का लोप होनेपर, आद्य उ का ऊ विकल्पसे होता

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है। उदा.–दूसहो दुसहो दुःसहः। दूहओ दुहओ दुर्भगः। रेफ का लोप होनेपर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण रेफ का लोप न हो तो यह वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.--दुस्सहो विरहो ॥ ६२ ॥

सुभगमुसलयोः ॥ ६३ ॥

(इस सूत्रमें १.२.६१ से) ऊत् शब्दकी अनुवृत्ति है। सुभग और मूसल शब्दोंमें उ का ऊ विकल्पसे होता है। उदा.-सूहओ सुहओ सुभगः। मूसलं मुसलं मुसलम् ॥ ६३ ॥

ह्रस्वौत्कुतूहले ॥ ६४ ॥

कुतूहल शब्दमें आद्य उ का ओ होता है, और उस (ओ) के सांनिध्यसे (तूमेंसे) ऊ का ऱ्हस्व होता है। उदा.–कोउहलं कुऊहलं कोउहल्लं कुतूहलम् ॥ ६४ ॥

स्तौ ॥ ६५ ॥

(इस सूत्रमें १.२.६४ से) ओत् शब्दकी अनुवृत्ति है। स्तु यानी संयुक्त व्यंजन आगे होनेपर, आद्य उ का ओ होता है। उदा.–तुण्डम् तोण्डं। पुष्करम् पोक्खरं। कुट्टिमम् कोट्टिमं। पुस्तकम् पोत्थअं। मुस्ता मोत्था। मुद्गरः मोग्गरो। पुद्गलः पोग्गलो। कुन्दम् कोन्दं। व्युत्क्रान्तम् वोक्कन्तं ॥ ६५ ॥

सूक्ष्मे ऽद्वोतः ॥ ६६ ॥

सूक्ष्म शब्दमें ऊ का अ विकल्पसे होता है। उदा.–सण्हं सुण्हं ॥ ६६ ॥

अल् दुकूले ॥ ६७ ॥

(इस सूत्रमें १.२.६६ से) ऊतः पदकी अनुवृत्ति है। दुकूल शब्दमें ऊ को अल् ऐसा आदेश होता है। अल् में लकार अनुबंध (इत्) नहीं है। उदा.-दुअल्लं दुऊलं ॥ ६७ ॥

ईदुद्व्यूढे ॥ ६८ ॥

उद्व्यूढ शब्दमें ऊ का ई विकल्पसे होता है। उदा.–उव्वीढं उव्वूढं ॥ ६८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उल् कण्डूयहनूमद्वातूले ॥ ६९ ॥

कण्डूयति धातुमें, तथा हनुमत् और वातूल शब्दोंमें आद्य ऊका लित् (नित्य) उ होता है। उदा.–कंडुअइ। हणुमंतो। वाउलो ॥ ६९ ॥

वा मधूके ॥ ७० ॥

मधूक शब्दमें ऊ का उ विकल्पसे होता है। उदा.–महुअं महूअं ॥७०॥

इदेन्नूपुरे ॥ ७१ ॥

(इस सूत्रमें १.२.७० से) वा शब्दकी अनुवृत्ति है। नूपुर शब्दमें ऊ के इ और ए विकल्पसे होते हैं। उदा.–णिउरं णेउरं णूउरं ॥ ७१ ॥

ओल् स्थूणातूणमूल्यतूणीरकूर्परगुडूचीकूष्माण्डीताम्बूलीषु ॥ ७२ ॥

(स्थूणा, तूण, मूल्य, तूणीर, कूर्पर, गुडूची, कूष्माण्डी, ताम्बूली) इन शब्दोंमें ऊ का लित् (नित्य) ओ होता है। उदा.– थोणा। तोणं। मोल्लं। तोणीरं। कोप्परं। गलोई। कोहंडी। तम्बोली। बहुलका अधिकार होनेसे, स्थूणा और तूण शब्दोंमें विकल्पसे (ओ) होता है। उदा.–थूणा। तूणं ॥ ७२ ॥

ऋतोऽत् ॥ ७३ ॥

आद्य ऋकारका अ होता है। उदा.–घृतम् घअं। तृणम् तणं। कृतम् कअं। वृषभः वसहो। मृगः मओ ॥ ७३ ॥

आद्वा मृदुत्वमृदुककृशासु ॥ ७४ ॥

(इस सूत्रमें १.२.७३ से) ऋतः पदकी अनुवृत्ति है। (मृदुत्व, मृदुक, कृशा) इन शब्दोंमें आद्य ऋकारका आ विकल्पसे होता है। उदा.–माउत्तं मउत्तं। माउअं मउअं। कासा कसा ॥ ७४ ॥

इल् कृपगे ॥ ७५ ॥

कृप इत्यादि शब्दोंमें आद्य ऋ का इ होता है। (सूत्रके इल् में) ल् इत् होनेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.–किवो कृपः। णिवो नृपः। किवा कृपा। किवणो कृपणः। किवाणो कृपाणः। किसो कृशः। किसाणू कृशानुः। किई कृतिः। विसो वृषः। मूषिओ मूसिकः (?)। किसरो कृसरः (यानी) एक विशिष्ट विलेप। किच्छं कृच्छ्रम्। किसओ कृषकः। तिसिओ तृषितः। इसी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ऋषिः। धिई धृतिः। विंछिओ विंछुओ वृश्चिकः। विंत्तं वृत्तम्। वित्ती वृत्तिः। पिच्छी पृथ्वी। किच्चा कृत्या। घुसिणं घुसृणम्। घिणा घृणा। इद्धी ऋद्धिः। समिद्धी समृद्धिः। गिद्धी गृद्धिः। विद्धकई वृद्धकपिः। छिहा स्पृहा। बिसी वृसी। हिअअं हृदयम्। उक्किट्ठं उत्कृष्टम्। मिट्ठं मृष्टम्, रसके बारेमें (यह रूप होता है) अन्यत्र—मट्ठं। दिट्ठं दृष्टम्। विइण्हो वितृष्णः। सइ सकृत्। दिट्ठी दृष्टिः। गिट्ठी गृष्टिः। सिट्ठी सृष्टिः। सिआलो शृगालः। वाहित्तं व्याहृतम्। बिंहिअं बृंहितम्। तिप्पं तृप्रम्। सिट्ठं सृष्टम्। सिंगारो शृंगारः। भिंगो भृंगः। भिऊ भृगुः। भिंगारो भृंगारः। इत्यादि ॥ ७५ ॥

शृङ्गमृगाङ्कमृत्युधृष्टमसृणेषु वा ॥ ७६ ॥

शृङ्ग, इत्यादि शब्दोंमें ऋ का इ विकल्पसे होता है। उदा.—सिंगं संगं। मिअंको मअंको। मिच्चू मच्चू। धिट्ठो धट्ठो। मसिणं मसणं ॥ ७६ ॥

पृष्ठे ऽनुत्तरपदे ॥ ७७ ॥

पृष्ठ शब्द (समासमें) उत्तरपद न हो तो उसमें ऋ का इ विकल्पसे होता है। उदा.—पिट्ठं पट्ठं। उत्तरपद न हो, ऐसा क्यों कहा है? (कारण पृष्ठ शब्द उत्तरपद हो तो यह वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.—महिवट्ठं महीपृष्ठम् ॥ ७७ ॥

उद् वृषभे वृः ॥ ७८ ॥

वृषभ शब्दमें वृ इस (अक्षर) का उ विकल्पसे होता है। उदा.—उसहो वसहो ॥ ७८ ॥

वृन्दारकनिवृत्तयोः ॥ ७९ ॥

(इस सूत्रमें १.२.७८ से) उत् शब्दकी अनुवृत्ति है। (वृन्दारक और निवृत्त) इन शब्दोंमें ऋ का उ विकल्पसे होता है। उदा.—वुंदारओ वंदारओ। णिउत्तं णिअत्तं ॥ ७९ ॥

ऋतुगे ॥ ८० ॥

ऋतु इत्यादि शब्दोंमें आद्य ऋ का उ होता है। यह नियम (१.२.७८-७९ से) पृथक् कहा जानेसे, (यहाँका वर्णान्तर) नित्य होता है। उदा.—उउ ऋतुः। उसहो वृषभः। पाहुडं प्राभृतम्। पहुडि प्रभृति। भुई भृतिः। णिहुअं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निभृतम्। परहुअं परभृतम्। विउअं विवृतम्। संवुअं संवृतम्। णिउअं निर्वृतम्। णिव्वुई निर्वृतिः। णिउत्ती निवृत्तिः। पउत्ती प्रवृत्तिः। पाउसो प्रावृट्। वुत्तन्तो वृत्तान्तः। वुन्दं वृन्दम्। वुंदावणं वृन्दावनम्। पुहई पृथिवी। वुड्ढो वृद्धः। उज्जू ऋजुः। मुणालं मृणालम्। पुट्ठो पृष्टः। पउट्ठो प्रवृष्टः। वुट्ठी वृष्टिः। परामुट्ठो परामृष्टः। भाउओ भ्रातृकः। पिउओ पितृकः। जामाउओ जामातृकः। माउआ मातृका। इत्यादि ॥ ८० ॥

गौणान्त्यस्य ॥ ८१ ॥

(समासमें) गौण पदका जो अन्त्य ऋ, उसका उ होता है। उदा.–माउ-मंडलं मातृमण्डलम्। माउहरं मातृगृहम्। पिउहरं पितृगृहम्। माउसिआ माउच्छा मातृष्वसा। पिउसिआ पिउच्छा पितृष्वसा। पिउवणं पितृवनम्। पिउवई पितृपतिः ॥ ८१ ॥

इदुन्मातुः ॥ ८२ ॥

(समासमें) गौण होनेवाले मातृशब्दमें ऋ के इ और उ होते हैं। उदा.-माइहरं माउहरं मातृगृहम्। क्वचित् (मातृ शब्द) गौण न हो तो भी (ऋ के इ और उ होते है।) उदा.–माईणं माऊणं मातृणाम् ॥ ८२ ॥

वृष्टिपृथङ्मृदङ्गनप्तृकवृष्टे ॥ ८३ ॥

(इस सूत्रमें १.२.८२ से) इत् और उत् शब्दोंकी अनुवृत्ति है। वृष्टि, इत्यादि शब्दोंमें ऋ के इ और उ होते है। उदा.-विट्ठी वुट्ठो वृष्टः। पिहं पुहं पृथक्। मिअंगो मुअंगो मृदङ्गः। णत्तिओ णत्तुओ नप्तृकः। विट्ठी वुट्ठो वृष्टिः ॥ ८३ ॥

तु बृहस्पतौ ॥ ८४ ॥

बृहस्पति शब्दमें ऋ के इ तथा उ विकल्पसे होते है। उदा.–बिहप्फई बुहप्फई बहप्फई ॥ ८४ ॥

उदूदोल् मृषि ॥ ८५ ॥

मृषा शब्दमें ऋ के उ, ओ और ऊ होते है। (सूत्रके उदूदोल् में) ल् इत् होनेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.–मुसा मूसा मोसा। मुसावाओ मोसावाओ मृषावादः ॥ ८५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वृन्त इदेङ् ॥ ८६ ॥

वृन्त शब्दमें ऋ के इदेङ् विकल्पसे होते हैं। ए, ओ यानी एङ्; इदेङ् यानी इत् और एङ्। (ऋ के) इ, ए, ओ होते हैं, यह अर्थ (निष्पन्न होता है)। उदा.- विंटं वेंटं वोंटं ॥ ८६ ॥

ढिराद्दते ॥ ८७ ॥

आदृत शब्दमें ऋ को ढि ऐसा आदेश होता है। उदा.-आढिओ ॥ ८७ ॥

दृप्तेऽरि प्ता ॥ ८८ ॥

दृप्त शब्दमें पकार और तकार के साथ ऋ को अरि ऐसा आदेश होता है। उदा.-दरिओ। दरिअसीहेण ॥ ८८ ॥

केवलस्य रिः ॥ ८९ ॥

केवल यानी व्यंजनसे संयुक्त न रहनेवाले ऋ को रि ऐसा आदेश होता है। उदा.-रिद्धी ऋद्धिः। रिच्छो ऋक्षः ॥ ८९ ॥

दृशयक्सक्विपि ॥ ९० ॥

अक्, क्स, क्विप्, ये प्रत्यय अन्तमें होनेवाले दृश् (दृशि) धातुमें ऋ का रि होता है। उदा.-अक् प्रत्यय होनेपर-सरिसो सदृशः। क्स प्रत्यय होनेपर-सरिच्छो सदृक्षः। क्विप् प्रत्यय होनेपर-सरी सदृक्। सरिवण्णो सरिरूवो। इसी प्रकारसे-एआरिसो। भवारिसो। जारिसो। तारिसो। केरिसो। एरिसो। तुम्हारिसो। अक् और क्स इनसे (यहाँ) साहचर्य होनेसे, 'त्यदादि' (सूत्र)ने कहा हुआ क्विप् (प्रत्यय) यहाँ लिया जाता है ॥ ९० ॥

ऋतुऋजुऋणऋषिऋषभे वा ॥ ९१ ॥

(ऋतु, ऋजु, ऋण, ऋषि, ऋषभ) इन शब्दोंमें ऋ का रि विकल्पसे होता है। उदा.-रिऊ उऊ। रिज्जू उज्जू। रिणं अणं। रिसी इसी। रिसहो उसहो ॥ ९१ ॥

क्लृप्त इलिः ॥ ९२ ॥

क्लृप्त इस शब्दमें आद्य अच् (स्वर) को इलि ऐसा आदेश होता है। उदा.-किलित्तं। किलित्तकुसुमोवआरेसु, क्लृप्तकुसुमोपचारेषु ॥ ९२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चपेटाकेसरदेवरसैन्यवेदनास्वेचस्त्वित् ॥ ९३ ॥

(चपेटा, केसर, देवर, सैन्य, वेदना) इन शब्दोंमें एचः अर्थात् संध्यक्षरोंका (संयुक्त स्वरोंका) इ विकल्पसे होता है। उदा.–चविडा चवेडा चपेटा। किसरं केसरं केसरम्। दिअरो देअरो देवरः। सिन्नं सेन्नं (सैन्य शब्द)। दैत्यादि गणमें होनेसे, सइन्नं (रूप भी होता है।) सैन्यम्। विअणा वेअणा वेदना। महिला, महेला, ये रूप तत्समही हैं ॥ ९३ ॥

सैन्धवशनैश्चरे ॥ ९४ ॥

(इस सूत्रमें १.२.९३ से) एचः पदकी अनुवृत्ति है। सैन्धव और शनैश्चर शब्दोंमें आद्य एच् (संयुक्त स्वर) का इ होता है। यह नियम (१.२.९३ से) पृथक् कहा जानेसे, (यहाँ का वर्णान्तर) नित्य होता है। उदा.—सिंधवं। सणिच्छरो ॥ ९४ ॥

त्वत्सरोरुहमनोहरप्रकोष्ठातोद्यान्योन्ये वश्च क्तोः ॥ ९५ ॥

(सरोरुह, मनोहर, प्रकोष्ठ, आतोद्य, अन्योन्य) इन शब्दोंमें एच् (संयुक्त स्वर) का अ विकल्पसे होता है, और उसके सांनिध्यसे जहाँ शक्य होगा वहाँ (यथासंभवम्) ककार तथा तकार इनको वकार आदेश होता है। उदा.–सररुहं सरोरुहं। मणहरं मणोहरं। पवट्ठो पओट्ठो। आवज्जं आओज्जं। अण्णण्णं अण्णोण्णं। सिरवेअणा और सिरोवेअणा ये शब्द शिरोवेदना शब्दके साध्यमान और सिद्ध अवस्थाओंसे होते हैं ॥ ९५ ॥

कौक्षेयक उत् ॥ ९६ ॥

कौक्षेयक शब्दमें आद्य एच् (संयुक्त स्वर) का उ विकल्पसे होता है। उदा.—कुच्छेअअं कोच्छेअअं ॥ ९६ ॥

शौण्डगेषु ॥ ९७ ॥

शौण्ड, इत्यादि शब्दोंमें आद्य एच् (संयुक्त स्वर) का उ होता है। यह नियम (१.२.९६ से) पृथक् कहा जानेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.—सुंडो शौण्डः। सुद्धोअणी शौद्धोदनिः। मुंजाअणो मौञ्जायनः। सुंदेरं सुंदरिअं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सौन्दर्यम्। सुगन्धत्तणं सौगन्ध्यम्। दुवारिओ दौवारिकः। सुवण्णिओ सौवर्णिकः। पुलोमी पौलोमी। इत्यादि॥ ९७॥

गव्यउदाईत्॥ ९८॥

गो शब्दमें एच् (संयुक्त स्वर) को अउ और आई ऐसे ये आदेश होते हैं। उदा.—गउओ हरस्स। एसा गाई॥ ९८॥

ऊ स्तेने वा॥ ९९॥

स्तेन शब्दमें संध्यक्षरका ऊ विकल्पसे होता है। उदा.—थूणो थेणो॥ ९९॥

सोच्छ्वासे॥ १००॥

सोच्छ्वास शब्दमें एच् (संयुक्त स्वर) का ऊ होता है। यह नियम (१.२.९९ से) पृथक् कहा जानेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.-सूसासो॥ १००॥

ऐच एङ्॥ १०१॥

ऐच् यानी ऐकार और औकार; उनके एङ् यानी एकार और ओकार यथाक्रम होते हैं। उदा.–ऐ (का ए)-शैलः सेलो। त्रैलोक्यम् तेल्लोक्कं। ऐरावणः एरावणो। कैलासः केलासो। वैद्यः वेज्जो। कैटभः केढवो। वैधव्यम् वेहव्वं। औ (का ओ)-कौमुदी कोमुई। यौवनम् जोव्वणं। कौस्तुभः कोत्थुहो। कौशाम्बी कोसम्बी। क्रौञ्चः कोंचो। कौशिकः कोसिओ॥ १०१॥

अइ तु वैरादौ॥ १०२॥

(इस सूत्रमें १.२.१०१ से) ऐचः पदकी अनुवृत्ति है। वैर, इत्यादि शब्दोंमें आद्य ऐच् को अइ ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.—वैरम् वइरं वेरं। वैशंपायनः वइसंपाअणो वेसंपाअणो। वैशिकम् वइसिअं वेसिअं। वैश्रवणः वइसवणो वेसवणो। चैत्रः चइत्तो चेत्तो। कैलासः कइलासो केलासो। वैतालिकः वइआलिओ वेआलिओ। कैरवम् कइरवं केरवं। दैवम् दइवं देवं। इत्यादि॥ १०२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दैत्यादौ ॥ १०३ ॥

दैत्य, इत्यादि शब्दोंमें ऐच् को अइ ऐसा आदेश होता है। यह नियम (१.२.१०२ से) पृथक् कहा जानेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.–दइच्चो दैत्यः। दइण्णं दैन्यम्। दइवअं दैवतम्। कइअवं कैतवम्। वइअब्भो वैदर्भः। वइसाहो वैशाखः। अइसरिअं ऐश्वर्यम्। वइअणणो वैजननः। भइरवो भैरवः। वइएसो वैदेशः। वइसाणरो वैश्वानरः। वइदेहो वैदेहः। वइसालो वैशालः। सइरं स्वैरम्। चइत्तं चेत्तं। चैत्य शब्दमें विश्लेष होनेपर (ऐ को अइ आदेश नहीं होता।) उदा.—चेइअं ॥ १०३ ॥

नाव्यावः ॥ १०४ ॥

नौ शब्दमें ऐच् को आव ऐसा आदेश हो जाता है। उदा.—णावा ॥ १०४ ॥

गौरव आत् ॥ १०५ ॥

गौरव शब्दमें ऐच् का आ हो जाता है। उदा.—गारवं ॥ १०५ ॥

पौरगे चाउत् ॥ १०६ ॥

पौर, इत्यादि शब्दोंमें, तथा (सूत्रमेंसे) चकारसे गौरव शब्दमें, ऐच् को अउ ऐसा आदेश होता है। उदा.—पउरो पौरः। सउरो सौरः। मउली मौलिः। कउरवो कौरवः। गउडो गौडः। कउलो कौलः। कउसलं कौशलम्। पउरिसं पौरुषम्। कउच्छेअअं कौक्षेयकम्। सउहं सौधम्। मउणं मौनम्। गउरवं गौरवम् ॥ १०६ ॥

उच्चैर्नीचैसोरअः ॥ १०७ ॥

उच्चैः और नीचैः शब्दोंमें ऐच् को अअ ऐसा आदेश होता है। उदा.–उच्चअं। णीचअं। उच्च और नीच शब्दोंको क-प्रत्यय लगनेपरभी (उच्चअं और नीचअं ये रूप) यद्यपि सिद्ध होते है, तथापि उच्चैः और नीचैः शब्दोंके अन्य रूपोंकी निवृत्ति हो, इसलिए उनके बारेमें यहाँ विधान किया गया है ॥ १०७ ॥

ई धैर्ये ॥ १०८ ॥

धैर्य शब्दमें ऐच् का ई होता है। उदा.–धीरं। धीरं हरइ विसाओ, धैर्यं हरति विषादः ॥ १०८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वा पुआय्याद्याः ।। १०९ ।।

स्वर इत्यादि आदेश विशेषोंसे युक्त ऐसे पुआई इत्यादि शब्द विकल्पसे निपातके रूपमें आते है। उदा.-(१) पुआई (यानी) पिशाच और उन्मत्त। (२) ऊणंदिअं आनन्दित। (३) टोंबरो तुम्बुरु। (४) माहिवाओ माघमासका वात। (५) सइकोडी शतकोटि। (६) माइन्दो माकन्द यानी आम्रवृक्ष। (७) ओन्दुरो उन्दुरू यानी चुहा। (८) अलिआ आली यानी सखी। (९) तणसोल्लं तृणशूलम् [यानी] मल्लिका, ऐसा अर्थ। (१०) रिट्ठो अरिष्टः [यानी] दैत्य या कौआ। (११) हुलिअं लघु [यानी] शीघ्र, ऐसा अर्थ। (१२) किरो किरिः [यानी] वराह, ऐसा अर्थ। (१३) वामरोरो वामलूरः [यानी] वल्मीक यानी वामी। (१४) वन्द्रं वृन्दम् यानी समूह। (१५) हेरिम्बो हेरम्ब यानी गणेश। (१६) चिक्कं स्तोक यानी स्वल्प। (१७) चलणाओहो चरणायुध यानी कुक्कुट। (१८) पुआइणिआ पिशाचिनी। (१९) मूसलं मांसल। (२०) महालवक्खो महालयपक्ष। (२१) चंचरिओ चञ्चरीक यानी भँवरा ॥ १०९ ॥

— द्वितीय अध्याय द्वितीय पाद समाप्त —

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तृतीयः पादः

एत् साज्झला त्रयोदशगे ऽचः ॥ १ ॥

(इस सूत्रमें) आदेः पदकी अनुवृत्ति है। त्रयोदश इत्यादि शब्दोंमें आद्य स्वरका, साज्झला यानी अगला स्वर और व्यंजन इनके साथ, ए होता है। उदा.–तेरह त्रयोदश। थेरो स्थविरः (यानी) बूढा या ब्रह्मदेव। एक्कारो अयस्कारः। वेइल्लं विचकिलम्। मुद्धविअइल्लपसूणपुंजा यह भी दिखाई देता है तेवीसा त्रयोविंशतिः। तेत्तीसा त्रयस्त्रिंशत्। इत्यादि ॥ १ ॥

कदले तु ॥ २ ॥

(इस सूत्रमें १.३.१ से) एत् साज्झला पदोंकी अनुवृत्ति है। कदल शब्दमें आद्य स्वरका, अगला स्वर और व्यंजन इनके साथ, ए विकल्पसे होता है। उदा.–केलं कअलं। केली कअली ॥ २ ॥

कर्णिकारे फोः ॥ ३ ॥

कर्णिकार शब्दमें फु का यानी द्वितीय स्वरका, अगला स्वर और व्यंजन इनके साथ, ए विकल्पसे होता है। उदा.–कण्णेरो कण्णिआरो ॥ ३ ॥

नवमालिकाबदरनवफलिकापूगफलपूतर ओल् ॥ ४ ॥

(नवमालिका, बदर, नवफलिका, पूगफल, पूतर) इन शब्दोंमें आद्य स्वरका, अगला स्वर तथा व्यंजन इनके साथ, ओ होता है। (सूत्रमेंसे ओल् में) ल् इत् होनेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.–णोमालिआ नवमालिका। बोरं बदरम्। णोहलिआ नवफलिका। पोफलं पूगफलम्। पोरो पूतरः (यानी) अधम या जलजन्तु ॥ ४ ॥

तु मयूरचतुर्थचतुर्वारचतुर्दशचतुर्गुणमयूखोलूखलसुकुमारोदूखल-लवणकुतूहले ॥ ५ ॥

मयूर, इत्यादि शब्दोंमें आद्य स्वरका, अगला स्वर और व्यंजन इनके साथ, ओ विकल्पसे होता है। उदा.–मोरो मऊरो मयूरः। चोत्थो चउत्थो चतुर्थः। चोव्वारो चउव्वारो चतुर्वारः। चोद्दह चउद्दह चतुर्दश। चोद्दही चउद्दही चतुर्दशी। चोग्गुणो चउग्गुणो चतुर्गुणः। मोहो मऊहो मयूखः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ओहलं उल्हलं उलूखलम् । सोमालो सुउमालो सुकुमारः । ओहलो उऊहलो उदूखलः । लोणं लअणं लवणम् । कोहलं कुऊहलं कुतूहलम् । कोई कहते हैं कि मोर शब्द संस्कृतमें भी है, पर वह अप्रसिद्ध है ॥ ५ ॥

निषण्ण उमः ॥ ६ ॥

निषण्ण शब्दमें आद्य स्वरको, अगले स्वर और व्यंजन इनके साथ, उम ऐसा आदेश विकल्पसे होता है । उदा.–णुमण्णो णिसण्णो ॥ ६ ॥

अस्तोरखोरचः ॥ ७ ॥

यह अधिकारसूत्र है । इसका अधिकार 'शोः सल्' (१.३.८७) सूत्रतक है । यहाँसे आगे जो कुछ हम अनुक्रमसे कहेंगे, वह अस्तोः यानी असंयुक्त, अखोः यानी अनादि, (और) स्वरके आगे रहनेवाले वर्णका होता है, ऐसा समझना है ॥ ७ ॥

प्रायो लुक् कगचजतदपयवाम् ॥ ८ ॥

असंयुक्त, अनादि रहनेवाले, स्वरके आगे होनेवाले, क, ग, च, ज, त, द, प, य, व इन (व्यंजनों) का प्रायः लोप होता है । उदा.—क (का लोप)–लोकः लोओ । शकटः सअडो । तीर्थकरः तित्थअरो । ग (का लोप)-नगरम् णअरं । नगः णओ । मृगाङ्कः मिअंको । च (का लोप)–शची सई । कचग्रहः कअग्गहो । ज (का लोप)—गजः गओ । रजतम् रअअं । प्रजापतिः पआवई । त (का लोप)—स्तुतः सुओ । यतिः जई । रतिः रई । रसातलम् रसाअलं । द (का लोप)–नदी णई । मदनः मअणो । गदा गआ । प (का लोप)–रिपुः रिऊ । विपुलम् विउलं । सुपुरुषः सुउरिसो । य (का लोप)–जयः जओ । वियोगः विओओ । नयनम् णअणं । व (का लोप)–लावण्यम् लाअण्णं । वडवानलः वडआणलो । यहाँ व का ग्रहण किए जानेसे, बकारका भी ग्रहण होता है । (इसलिए ब का भी लोप होता है ।) उदा.–विबुधः विउहो । प्रायोग्रहणसे क्वचित् (क इत्यादि का लोप) नहीं होता । उदा.–सुकुसुमं । पआगजलं । सुगओ । अगरू । सचावं । विजणं । सुतारं । विदुरो । सपावं । समवाओ । देवो । दाणवो । (ये व्यंजन) असंयुक्त (अस्तोः) होनेपरही (ऐसा लोप होता है, संयुक्त होनेपर नहीं ।) उदा.–अक्को । सग्गो । चच्चा । अज्जुणो । धुत्तो । उद्दामो । विप्पो । सव्वं । (ये व्यंजन) अनादि (अखोः) होनेपरही (ऐसा लोप होता है, आदि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

होनेपर नहीं।) उदा.–कुलं। गंगा। चरो। जडो। तमो। दआ। परो। वरो। (ये व्यंजन) स्वर के आगे होनेपरही (ऐसा लोप होता है। इन व्यंजनोंके पूर्व स्वर न हो तो ऐसा लोप नहीं होता।) उदा.–संकरो। संगमो। कंचणं। वंचणा। धणंजओ। अंतरं। चंदणं। कंपो। सअंवरो। पर समासमें वाक्यविभक्तिकी अपेक्षासे 'पद भिन्न है', ऐसी विवक्षा होती है। इसलिए वहाँ (वाङमयमें) जैसा दिखाई देगा वैसा दोनोंभी (लोप और लोपका अभाव) होते हैं। उदा.–सुहकरो सुहअरो सुखकरः। आअमिओ आगमिओ आगमिकः। जलअरो जलचरो जलचरः। सुअणो सुजणो सुजनः। बहुअरो बहुतरो बहुतरः। सुहओ सुहदो शुभदः या सुखदः। इत्यादि। बहुलका अधिकार होनेसे, क्वचित् आद्य (व्यंजन) का भी (लोप) होता है। उदा.–चिह्नं इण्हं। स पुनः सो उणो। न पुनः ण उणो। स च सो अ। क्वचित् च का ज होता है। उदा.–पिशाची पिसाजी॥८॥

नात्पः ॥ ९ ॥

आत् यानी अ-वर्णके आगे, अनादि पः यानी पकारका लोप नहीं होता। उदा.–सवहो शपथः। सावो शापः। अ-वर्णके आगे, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अ-वर्णको छोडकर अन्य स्वरोंके आगे प होनेपर, उसका लोप होता है।) उदा.–विउलो विपुलः। अनादि (पकारका), ऐसा क्यों कहा है? (कारण प आदि हो तो यह वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.–परउट्ठो परपुष्टः ॥ ९ ॥

यश्रुतिरः ॥ १० ॥

(इस सूत्रमें १.३.९ से) आत् शब्दकी अनुवृत्ति है। 'प्रायो लुक्कगचज' (१.३.८) इत्यादि सूत्रसे लोप होनेपर, जो अ-वर्ण अवशिष्ट रहता है वह, अ-वर्णके आगे होनेपर, लघु प्रयत्नसे उच्चारित यकारके समान सुनाई देता है। उदा.–शकटम् सयडं। आकरः आयरो। प्रकारः पयारो। आकाशः आयासो। नगरम् णयरं। सागरः सायरो। वचनम् वयणं। आचारः आयारो। रजतम् रययं। भाजनम् भायणं। प्रजापतिः पयावई। कृतम् कयं। पातालम् पायालं। पदम् पयं। गदा गया। नादवती णायवई। नयनम् णयणं। जाया जाया। लावण्यम् लायण्णं। अ-वर्ण ऐसा क्यों कहा है? (कारण अ-वर्ण न हो तो यश्रुति नहीं होती।) उदा.–सउणो शकुनः। पउणो प्रगुणः। पउरं प्रचुरम्। राईवं राजीवम्। रई रतिः। साऊ स्वादुः। वाऊ वायुः। कई कपिः या कविः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अ-वर्णके (आगे होनेपरही य-श्रुति होती है, अन्यथा नहीं।) उदा.-विअडं विकटम्। देअरो देवरः। क्वचित् (अ-वर्णके आगे न होतेभी यश्रुति) होती है। उदा.—पियइ पिबति ॥ १० ॥

कामुकयमुनाचामुण्डातिमुक्तके मोऽनुक् ॥ ११ ॥

कामुक, इत्यादि शब्दोंमें मकारका लोप होता है। (सूत्रके ङ्लुक् में) ङ् अनुबंध (इत्) होनेसे, शेष स्वरका उच्चार सानुनासिक होता है। उदा.—कामुकः काउँओ। यमुना जउँणा। चामुण्डा चाउँण्डा। अतिमुक्तकम् अइउँतअं। क्वचित् अइमुत्तअं, अइमुंतअं येभी रूप दिखाई देते हैं ॥ ११ ॥

खो ऽपुष्पकुब्जकर्परकीले कोः ॥ १२ ॥

'उकार अनुबंधसे स्ववर्गीय व्यंजनोंका ग्रहण होता है', यह अन्य व्याकरणोंसे सिद्ध हुआ है। जैसे—कु अर्थात् क-वर्ग। चुः यानी च-वर्ग। इसी प्रकार—टु (=ट-वर्ग), तु (=त वर्ग), पु (=प-वर्ग)। कुब्ज शब्द पुष्प-वाचक न हो, तो उस शब्दमें, तथा कर्पर और कील शब्दोंमें, कोः यानी क-वर्ग-का ख होता है। उदा.—खुज्जो। किंतु (कुब्जका) पुष्प अर्थ होनेपर—बंधेउं कुज्जपसूणं। खप्परं। खलिओ ॥ १२ ॥

छागशृङ्खलकिराते लकचाः ॥ १३ ॥

(इस सूत्रमें १.३.१२ से) कोः पदकी अनुवृत्ति है। छाग, शृंखल, किरात शब्दोंमें क-वर्गके ल, क, च ऐसे [विकार] यथाक्रम होते हैं। उदा.—छागः छालो। छागी छाली। शृंखलम् संकलं। किरातः चिलाओ—यह (शब्द) पुलिंद अर्थके पर्यायके रूपमें (यहाँ लिया है);, स्वेच्छासे रूप धारण करनेवाला (शंकर), यह (किरातका) अर्थ होनेपर, यहाँका वर्णान्तर नहीं होता। उदा.—नमिमो हरकिराअं ॥ १३ ॥

वैकादौ गः ॥ १४ ॥

एक इत्यादि शब्दोंमें कु [क वर्ग] का गकार विकल्पसे होता है। उदा.—एगो। विकल्पपक्षमें—एक्को एओ। आगरिसो आअरिसो आकर्षः। लोगो लोओ लोकः। असुगो असुओ असुकः। तित्थगरो तित्थअरो तीर्थंकरः। उज्जो-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अगरो उज्जोअअरो उद्योतकरः। सावगो सावओ श्रावकः। अमुगो अमुओ अमुकः। आगारो आआरो आकारः। इत्यादि ॥ १४ ॥

खोः कन्दुकमरकतमदकले ॥ १५ ॥

(कन्दुक, मरकत, मदकल) इन शब्दोंमें खु यानी आद्य क-वर्गका ग होता है। यह नियम (१.३.१४ से) पृथक् कहा जानेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.–गंदुओ कन्दुकः। मरगअं मरकतम्। मदगलो मदकलः ॥ १५ ॥

पुन्नागभागिनीचन्द्रिकासु मः ॥ १६ ॥

(पुन्नाग, भागिनी, चन्द्रिका) इन शब्दोंमें कु (कवर्ग) का म होता है। उदा.–पुण्णामो। भामिणी। चंदिमा ॥ १६ ॥

शीकरे तु भहौ ॥ १७ ॥

शीकर शब्दमें क-वर्गके भकार और हकार विकल्पसे होते हैं। उदा.—सीहरो सीभरो सीअरो ॥ १७ ॥

उत्वे दुर्भगसुभगे वः ॥ १८ ॥

(दुर्भग और सुभग) इन शब्दोंमें उ का ऊ होनेपर, कु (क वर्ग) का वकार होता है। उदा.–दूहवो। सूहवो। (उ का) ऊ होनेपर, ऐसा क्यों कहा है? (उ का ऊ न हो तो यह वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.–दुहओ सुहओ ॥ १८ ॥

निकषस्फटिकचिकुरे हः ॥ १९ ॥

(निकष, स्फटिक, चिकुर) इन शब्दोंमें क-वर्गका ह होता है। उदा.–णिहसो। फलिहो। चिहुरो। चिहुर ऐसा शब्द संस्कृतमेंभी है, ऐसा भृंगाचार्यका कथन है ॥ १९ ॥

खघथधभाम् ॥ २० ॥

[इस सूत्रमें १.३.१९ से] हः पदकी अनुवृत्ति है। असंयुक्त, अनादि रहनेवाले और स्वरके आगे आनेवाले ख, घ, थ, ध, भ इन (व्यंजनों) का प्रायः हकार होता है। उदा.–ख (का ह)–शाखा साहा। मुखम् मुहं। लिखति लिहइ। घ [का ह]–मेघः मेहो। जघनम् जहणं। श्लाघते सलाहइ। थ (का ह)—नाथः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णाहो। रथः रहो। मिथुनम् मिहुणं। कथयति कहेइ। ध (का ह)—साधुः साहू। सुधा सुहा। बाधते बाहइ। भ (का ह)—शुभम् सुहं। स्वभावः सहावो। स्तनभरः थणहरो। शोभते सोहइ। (ये व्यंजन) अस्तु अर्थात् असंयुक्त होनेपरही (यह वर्णविकार होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.—सौख्यम् सोक्खं। आख्याति अक्खइ। अर्घः अग्घो। कत्थइ कथ्यते। गृद्धः गिद्धो। उद्धरति उद्धरइ। दर्भः दब्भो। लभ्यते लब्भइ। (ये व्यंजन) अखु यानी अनादि रहनेपरही (यह वर्णान्तर होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.—खगो। घंटा। थणो। धणं। भरो। (ये व्यंजन) स्वरके आगे होनेपरही (यह वर्णान्तर होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.—संखो। संघो। कंथा। बंधो। रंभा। (यह वर्णान्तर) प्रायः हीं (होता है। इसलिए क्वचित् इन व्यंजनोंका हकार नहीं होता।) उदा.—सरिसवखलो सर्षपखलः। पलअघणो प्रलयघनः। अथिरो अस्थिरः [१]। जिणधम्मो जिनधर्मः। पणट्ठभवो प्रनष्टभवः ॥ २० ॥

धः पृथकि तु ॥ २१ ॥

पृथक् शब्दमें थ का धकार विकल्पसे होता है। उदा.—पुधं पिधं पुहं पिहं ॥ २१ ॥

चोः खचितपिशाचयोः सल्लौ ॥ २२ ॥

(इस सूत्रमें १.३.२१से) तु शब्दकी अनुवृत्ति है। खचित और पिशाच शब्दोंमें चु के यानी च-वर्गके यथाक्रम सकार और द्विरुक्त लकार (=ल्ल) विकल्पसे होते हैं। उदा.—खसिओ खइओ। पिसल्लो पिसाओ। (पिशाचके) स्त्रीलिंगके रूपमें क्वचित् ज भी होता है। उद.—पिसाजी ॥ २२ ॥

झो जटिले ॥ २३ ॥

(इस सूत्रमें १.३.२२ से) चोः पदकी अनुवृत्ति है। जटिल शब्दमें च-वर्गका झ विकल्पसे होता है। उदा.—झडिलो जडिलो ॥ २३ ॥

टोर्बडिशादौ लः ॥ २४ ॥

बडिश, इत्यादि शब्दोंमें ट-वर्गका ल विकल्पसे होता है। उदा.—बलिसं बडिसं। गुलो गुडो। णलं णडं। चविलो चविडो। आमेलो आमेडो। णाली णाडी। वेळू वेणू। दालिमं दाडिमं। फालेइ फाडेइ। (बडिश, इत्यादि शब्द

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ऐसे हैं।) बडिश, गुड, नड, चपेटा, आपीड, नाडी, वेणु, दाडिम, पाटि।— पाटि अर्थात् पाटयति ऐसा प्रेरणार्थक प्रत्ययान्त (णिजन्त) पट् धातु यहाँ लिया है ॥ २४ ॥

स्फटिके ॥ २५ ॥

(इस सूत्रमें १.३.२४ से) टोः पदकी अनुवृत्ति है। स्फटिक शब्दमें टु का यानी ट-वर्गका ल होता है। यह नियम (१.३.२४ से) पृथक् कहा जानेसे, (यहाँका वर्णान्तर) नित्य होता है। उदा.—फलिओ ॥ २५ ॥

लरङ्कोठे ॥ २६ ॥

अंकोठ शब्दमें ट-वर्गका ल होता है। (सूत्रके लर्में) र् इत् होनेसे, (ल का) द्वित्व होता है। उदा.—अंकोल्लं ॥ २६ ॥

ढः कैटभशकटसटे ॥ २७ ॥

कैटभ, शकट, सटा शब्दोंमें टु (ट-वर्ग) का ढकार होता है। उदा.— केढवो। सअढो। सढा ॥ २७ ॥

ठः ॥ २८ ॥

असंयुक्त, अनादि रहनेवाले और स्वरके आगे होनेवाले ठकारका ढ होता है। उदा.—मठः मढो। कमठः कमढो। शठः सढो। कुठारः कुढारो। असंयुक्त होनेपरही (यह वर्णान्तर होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.—चिट्ठइ। अनादि रहनेपरही (यह वर्णान्तर होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.—ठाइ। स्वरके आगे होनेपरही (यह वर्णान्तर होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.—कंठो ॥ २८ ॥

पिठरे हस्तु रश्च डः ॥ २९ ॥

(इस सूत्रमें १.३.२८ से) ठः पदकी अनुवृत्ति है। पिठर शब्दमें ठ का ह विकल्पसे होता है, और उनके सांनिध्यसे र का ढ होता है। उदा.— पिहढो पिढरो पिठरः ॥ २९ ॥

लल्डोऽनुड्डगे ॥ ३० ॥

असंयुक्त (अस्तोः), अनादि (अखो): और स्वरके आगे होनेवाले डकारका, उड्डु, इत्यादि शब्दोंको छोडकर, लकार होता है। (सूत्रके लल् में)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ल् इत् होनेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.—वडवामुखम् वलआमुहं। गरुडः गरुलो। तडागस् तलाअं। क्रीडति कीलइ। असंयुक्त होनेपरही (यह वर्णान्तर होता है, अन्यथा नहीं।)उदा.—कुड्डं कुड्यम्। अनादि रहनेपरही (यह वर्णांतर होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.—डमरुओ डमरुकः। स्वरके आगे होनेपरही (यह वर्णान्तर होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.—तोंडं तुण्डम्। उडु, इत्यादि शब्दोंको छोडकर (अनुड्वगे), ऐसा क्यों कहा है? (कारण उडु, इत्यादि शब्दोंमें यह वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.—उडु। निबिडं। गउडो। नाडी। पीडिअं। नीडं। इत्यादि॥ ३०॥

टो डः॥ ३१॥

असंयुक्त (अस्तोः), अनादि (अखोः), स्वरके आगे रहनेवाले टकारका ड होता है। उदा.-भटः भडो। नटः णडो। घटः घडो। घटते घडइ। असंयुक्त होनेपरही (यह वर्णान्तर होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.-खट्टंगं खट्वाङ्गम्। अनादि रहनेपरही (यह वर्णान्तर होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.—टक्को (इस नामका देश)। स्वरके आगे रहनेपरही (यह वर्णान्तर होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.—घंटा। क्वचित् (ऐसा वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.-अटति अटइ॥ ३१॥

वेतस इति तोः॥ ३२॥

(इस सूत्रमें १.३.३१ से) डः पदकी अनुवृत्ति है। वेतस शब्दमें, (तमेंसे) अ का इ होनेपर, तु का यानी त-वर्गका ड होता है। उदा.-वेडिसो। (अ का) इ होनेपर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण इ न हो तो यह वर्णान्तर नहीं होता)। उदा.-वेअसो। अतएव ऐसा विधान होनेसे, स्वप्न, इत्यादि शब्दसमूहमें आनेवाले वेतस शब्दमें (देखिए १.२.११) अ का इ विकल्पसे होता है, ऐसा जानना है॥ ३२॥

प्रतिगेऽप्रतीपगे॥ ३३॥

(इस सूत्रमें १.३.३२ से) तोः पदकी अनुवृत्ति है। प्रति, इत्यादि शब्दोंमें तु का यानी त-वर्गका, प्रतीप, इत्यादि शब्दोंको छोडकर, ड होता

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है। उदा.-प्रतिपन्नम् पडिवण्णं। प्रतिभासः पडिहासो। प्रतिहारः पडिहारो। प्रतिस्पर्धी पाडिप्फद्धी। प्रतिनिवृत्तम् पडिणिअत्तं। प्रतिकरोति पडिकरेइ। प्रतिपत् पडिवआ। प्रतिश्रुत् पडंसुआ। प्रतिमा पडिमा। प्रभृति पहुडि। मृतकम् मडअं। भिन्दिपालः भिण्डिवालो। पताका पडाआ। प्राभृतम् पाहुडं। विभीतकः बहेडओ। व्यापृतः वावडो। कन्दरिका कण्डरिआ (यानी) औषधविशेष। हरीतकी हरडई। इत्यादि। प्रतीप, इत्यादि शब्दोंको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण इन शब्दोंमें यह वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.-प्रतीपम् पईवं। प्रतिज्ञा पइण्णा। संप्रति संपइ। प्रतिसमयम् पइसमअं। प्रतिष्ठा पइट्ठा। प्रतिष्ठानम् पइट्ठाणं। इत्यादि ॥ ३३ ॥

दंशदहोः ॥ ३४ ॥

दंशति और दहति धातुओंमें त-वर्गका ड होता है। उदा.-डंसइ। डहइ ॥ ३४ ॥

दम्भदरदर्भगर्दभदष्टदशनदग्धदाहदोहददोलादण्डकदने तु ॥ ३५ ॥

दम्भ, इत्यादि शब्दोंमें त-वर्गका ड विकल्पसे होता है। उदा.-डम्भो दंभो। डरो दरो। डब्भो दब्भो। गड्डहो गद्दहो। डट्ठो दट्ठो। डसणं दसणं। डड्ढो दड्ढो। डाहो दाहो। डोहलं दोहलं। डोला दोला। डंडो दंडो। कडणं कदणं। भीति अर्थ होनेपरही, दर-शब्दमें (द का ड होता है), अन्यत्र (द वैसाही रहता है।) उदा.—दरदलिअं। दोहद शब्दमें, दम्भ, इत्यादिके साहचर्यसे आद्य (द) काही (ड होता है।) ॥ ३५ ॥

तुच्छे चच्छौ ॥ ३६ ॥

तुच्छ शब्दमें त-वर्गके चकार और छकार विकल्पसे होते हैं। उदा.-चुच्छं छुच्छं ॥ ३६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

टल् त्रसरवृन्ततूवरतगरे ॥ ३७ ॥

(त्रसर, वृन्त, तूबर, तगर) इन शब्दोंमें त-वर्गका टकार होता है। (सूत्रके टल् में) ल् इत् होनेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.—टसरो। वेण्टं। तालवेण्टं। टूबरो तूबरः (यानी) शृंगरहित बैल या श्मश्रुरहित पुरुष। टगरो तगरः (अर्थात्) औषधिविशेष अथवा वृक्षविशेष ॥ ३७ ॥

हः कातरककुदवितस्तिमातुलिङ्गे ॥ ३८ ॥

(कातर, ककुद, वितस्ति, मातुलिंग) इन शब्दोंमें त-वर्गका ह होता है। उदा.—काहलो। कउहं। विहत्थी। माहुलिंगं। किंतु मातुलुंग शब्दका (वर्णान्तर) माउलुंगं (ऐसा होता है) ॥ ३८ ॥

तु वसतिभरते ॥ ३९ ॥

(वसति और भरत) इन शब्दोंमें त-वर्गका ह विकल्पसे होता है। उदा.—वसही वसई। भरहो भरओ ॥ ३९ ॥

लः पलितनिम्बकदम्बे ॥ ४० ॥

(पलित, निम्ब, कदम्ब) इन शब्दोंमें त-वर्गका ल विकल्पसे होता है। उदा.—पलिलं पलिअं। लिम्बो णिम्बो। कलंबो कअंबो ॥ ४० ॥

दोहदप्रदीपशातवाहनातस्याम् ॥ ४१ ॥

दोहद, प्र (उपसर्ग) पूर्वक दीप्यति धातु, शातवाहन और अतसी इन शब्दोंमें त-वर्गका ल होता है। यह नियम (१.३.४० से) पृथक् कहा जानेसे, (यह वर्णान्तर) नित्य होता है। उदा.-दोहलो। पलीवेइ। पलित्तं। सालवाहणो सालाहणो। अलसी ॥ ४१ ॥

रल् सप्तत्यादौ ॥ ४२ ॥

सप्तति, इत्यादि शब्दोंमें त-वर्गका र होता है। (सूत्रके रल् में) ल् इत् होनेसे, (यह र) नित्य होता है। उदा.—सप्ततिः सत्तरी। सप्तदश सत्तरह। एकादश एआरह। द्वादश बारह। त्रयोदश तेरह। पञ्चदश पण्णरह। अष्टादश अट्ठारह। गद्गदम् गग्गरं। इत्यादि ॥ ४२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अद्रुमे कदल्याम् ॥ ४३ ॥

वृक्ष अर्थ न होनेपर, कदली शब्दमें तु (त-वर्ग) का र होता है। उदा.–करली। वृक्ष अर्थ न होनेपर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण वृक्ष अर्थ होनेपर, र नहीं होता।) उदा.–कअली केली ॥ ४३ ॥

कदर्थिते खोर्वः ॥ ४४ ॥

कदर्थित शब्दमें खु यानी आद्य (ऐसे) त-वर्गका व होता है। उदा.–कवट्टिओ ॥ ४४ ॥

पीते ले वा ॥ ४५ ॥

(इस सूत्रमें १.३.४४ से) वः पद (अध्याहृत) है। पीत शब्दमें स्वार्थिक (स्वार्थे) लकार आनेपर, तु (त-वर्ग) का वकार होता है। उदा.–पीवलं पीअलं। स्वार्थिक लकार आनेपर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण स्वार्थे लकार न आवे तो यह वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.–पीओ ॥ ४५ ॥

डो दीपि ॥ ४६ ॥

दीप्यति धातुमें त-वर्गका डकार विकल्पसे होता है। उदा.-डिप्पइ दिप्पइ ॥ ४६ ॥

ढः पृथिव्यौषधनिशीथे ॥ ४७ ॥

(पृथिवी, औषध, निशीथ) इन शब्दोंमें त-वर्गका ढ विकल्पसे होता है। उदा.– पुढवी पुहवी। ओसढं ओसहं। णिसीढो णिसीहो ॥ ४७ ॥

प्रथमशिथिलमेथिशिथिरनिषधेषु ॥ ४८ ॥

(इस सूत्रमें १.३.४७ से) ढः पद (अध्याहृत) है। प्रथम, इत्यादि शब्दोंमें तु (त-वर्ग) का ढ होता है। (१.३.४७ से) यह नियम पृथक् कहा जानेसे, (यह ढ) नित्य होता है। उदा.–पढमं पुढमं। सिढिलं सढिलं। मेढी। सिढिरो। णिसढो ॥ ४८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णर्दिना रुदिते ॥ ४९ ॥

रुदित शब्दमें, दि अवयवके साथ त-वर्गका ण होता है। (सूत्रके णर् में) र् इत् होनेसे, (ण का) द्वित्व होता है। उदा.—रुण्णं। इसी स्थानपर कोई वैयाकरण 'ऋत्वादिषु तो दः' इस (नियम) का प्रारंभ करते हैं; किंतु यह नियम शौरसेनी और मागधी भाषाओंके संबंधमेंही दिखाई देता है; इसलिए यहाँ वह नियम नहीं कहा गया है। प्राकृतमें मात्र—ऋतुः उऊ। रजतम् रअअं। एतत् एअं। गतः गओ। आगतः आगओ। सांप्रतम् संपअं। यतः जओ। ततः तओ। कृतम् कअं। हतम् हअं। हताशः हआसो। श्रुतः सुओ। सुकृती सुकिई। निर्वृतिः णिव्वुई। तातः ताओ। कातरः काअरो। द्वितीयः दुईओ, इत्यादि प्रयोग होते हैं। क्वचित् (भिन्न विकार उपलब्ध होते हैं तो वे) 'तद्व्यत्ययश्च' (३.४.६९) सूत्रानुसार सिद्ध होते हैं ॥ ४९ ॥

णो वातिमुक्तके ॥ ५० ॥

अतिमुक्तक शब्दमें त-वर्गका ण विकल्पसे होता है। उदा.—अणिउँत्तअं अइउँत्तअं अइमुत्तअं ॥ ५० ॥

गर्भिते ॥ ५१ ॥

(इस सूत्रमें १.३.५० से) णः पदकी अनुवृत्ति है। गर्भित शब्दमें त-वर्गका ण होता है। (१.३.५० से) यह नियम पृथक् कहा जानेसे, (यह ण) नित्य होता है। उदा.—गब्भिणो ॥ ५१ ॥

नः ॥ ५२ ॥

असंयुक्त (अस्तोः), अनादि (अखोः), स्वरके आगे आनेवाले नकारका णकार होता है। उदा.-कनकम् कणअं। धनम् धणं। मानयति माणइ ॥ ५२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आदेस्तु ॥ ५३ ॥

(इस सूत्रमें १.३.५२ से) नः पदकी अनुवृत्ति है। शब्दोंके आद्य नकारका ण विकल्पसे होता है। उदा.-नदी णई नई। नयति णेइ नेइ। (आद्य न) असंयुक्त होनेपरही (यह वर्णविकार होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.-न्यायः नाओ ॥ ५३ ॥

नापिते ण्हः ॥ ५४ ॥

नापित शब्दमें नकारको ण्ह ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–ण्हाविओ णाविओ नाविओ ॥ ५४ ॥

पो वः ॥ ५५ ॥

असंयुक्त, अनादि, स्वरके आगे होनेवाले पकारका वकार प्रायः होता है। उदा.-शपथः सवहो। शापः सावो। उपसर्गः उवसग्गो। प्रदीपः पईवो। पापम् पावं। उपमा उवमा। कपिलः कविलो। कुणपम् कुणवं। कलापः कलावो। कपालम् कवालं। महीपालः महीवालो। गोपायति गोवाअइ। तपति तवइ। असंयुक्त होनेपरही (यह वर्णान्तर होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.-विप्रः विप्पो। अनादि रहनेपरही (यह वर्णान्तर होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.-पडइ पतति। पढइ पठति। स्वरके आगे होनेपरही (यह वर्णान्तर होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.-कंपइ कम्पते। (पकारका वकार) प्रायःही होता है (इसलिए कभी होता भी नहीं।) उदा.-कपिः कई। रिपुः रिऊ। इसलिए पकारका लोप और वकार इन दोनोंका संभव जहाँ है वहाँ जिसके करनेसे श्रुतिसुख होगा, वह (वर्णविकार) करे ॥ ५५ ॥

फः पाटिपरिघपरिखापरुषपनसपारिभद्रेषु ॥ ५६ ॥

(इस सूत्रमें १.३.५५ से) पः पदकी अनुवृत्ति है। प्रेरणार्थक प्रत्ययान्त (णिजन्त) पट् (पटि) धातुमें, तथा परिघ, इत्यादि शब्दोंमें, प-का फ होता है। उदा.–पाटयति फालेइ फाडेइ। परिघः फलिहो। परिखा फलिहा। परुषः फरुसो। पनसः फणसो। फनस शब्द संस्कृतमेंभी है, ऐसा कोई कहते हैं। पारिभद्रः फालिहद्दो ॥ ५६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नीपापीडे मो वा ॥ ५७ ॥

नीप और आपीड शब्दोंमें प का म विकल्पसे होता है। उदा.- नीमो नीवो । आमेडो आवेडो ॥ ५७ ॥

रल् पापर्द्धौं ॥ ५८ ॥

पापर्द्धि शब्दमें प का र होता है। (सूत्रके रल् में) ल् इत् होनेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.-पारद्धी पापर्द्धिः (यानी) मृगया ।।५८ ।।

प्रभूते वः ।। ५९ ।।

प्रभूत शब्दमें प का व होता है। उदा.—वहुत्तं ।। ५९ ।।

फस्य भहौ वा ॥ ६० ॥

असंयुक्त (अस्तोः), अनादि (अखोः), स्वरके आगे होनेवाले फकारके, वाङ्मयमें जैसा दिखाई देगा वैसा, व्यवस्थित विभाषासे, भकार और हकार होते हैं। उदा.—क्वचित् (फ का) भ होता है।—रेफः रेभो। शिफा सिभा। क्वचित् (फ का) ह होता है—मोत्ताहलं मुक्ताफलम्। क्वचित् (फ के भकार और हकार) दोनों होते हैं—सफलम् सहलं सभलं। शेफालिका सेहालिआ सेभालिआ। शफरी सहरी सभरी। गुम्फति गुभइ गुहइ। (फ) असंयुक्त होनेपरही (यह वर्णविकार होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.-पुप्फं पुष्पम्। (फ) अनादि रहनेपरही (यह वर्णविकार होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.-फणी। (फ) स्वरके आगे होनेपरही (यह वर्णान्तर होता है, अन्यथा नहीं।) उदा.—गुम्फइ। (फ के ये विकार) प्रायःही होते हैं। (इसलिए क्वचित् नहीं होते।) उदा.—कसणफणी कृष्णफणी ॥ ६० ॥

बो वः ।। ६१ ।।

असंयुक्त, अनादि, स्वरके आगे होनेवाले बकारका व होता है। उदा.—शबलः सवलो। अलाबुः अलावू ॥ ६१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ङ्वयौ कबन्धे ॥ ६२ ॥

कबन्ध शब्दमें बकारके वकार और यकार होते हैं। (सूत्रके ङ्वयौ-में) ङ् इत् होनेसे, वकारका उच्चार सानुनासिक होता है। उदा.–कबन्धः कवँधो कयंधो ॥ ६२ ॥

बिसिन्यां भः ॥ ६३ ॥

बिसिनी शब्दमें ब का भ होता है। उदा.–भिसिणी ॥ ६३ ॥

वो भस्य कैटभे ॥ ६४ ॥

कैटभ शब्दमें भ का व होता है। उदा.–कइढवो ॥ ६४ ॥

त्वभिमन्यौ मः ॥ ६५ ॥

(इस सूत्रमें १.३.६४ से) वः पदकी अनुवृत्ति है। अभिमन्यु शब्दमें म का व विकल्पसे होता है। उदा.–अहिवण्णू अहिमण्णू ॥ ६५ ॥

मन्मथे ॥ ६६ ॥

(इस सूत्रमें १.३.६५ से) मः पदकी अनुवृत्ति है। मन्मथ शब्दमें आद्य म का व होता है। यह नियम (१.३.६५ से) पृथक् कहा जानेसे (यहाँका व) नित्य होता है। उदा.-वम्महो ॥ ६६ ॥

तु ढो विषमे ॥ ६७ ॥

विषम शब्दमें म का ढ विकल्पसे होता है। उदा.–विसढो विसमो ॥ ६७ ॥

यो जर्तीयानीयोत्तरीयकृत्येषु ॥ ६८ ॥

(इस सूत्रमें १.३.६७ से) तु पदकी अनुवृत्ति है। तीय और अनीय इन प्रत्ययोंमें, उत्तरीय शब्दमें, और कृत् ऐसे कहे हुए य प्रत्ययमें, यकारका जकार होता है। (सूत्रमेंसे जर्में) र् इत् होनेसे, (ज् का) द्वित्व होता है। उदा.–तीय प्रत्ययमें–द्वितीयः विइज्जो विइओ। तृतीयः तइज्जो तइओ। अनीय प्रत्ययमें–करणीयम् करणिज्जं करणीअं। विस्मय-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नीयम् विम्हअणिज्जं विम्हअणीअं। यापनीयम् जावणिज्जं जावणीअं। (उत्तरीय शब्दमें)—उत्तरीयम् उत्तरिज्जं उत्तरीअं। कृत् प्रत्ययमें—पेया पेज्जा पेआ। मेयम् मेज्जं मेअं ॥ ६८ ॥

इन्मयटि ॥ ६९ ॥

(इस सूत्रमें १.३.६८ से) यः पदकी अनुवृत्ति है। मयट् प्रत्ययमें य का इकार विकल्पसे होता है। उदा.—विषमयः विसमइओ विसमओ ॥ ६९ ॥

छायायां होऽकान्तौ ॥ ७० ॥

जब कान्ति यह अर्थ नहीं होता, तब छाया शब्दमें य का ह विकल्पसे होता है। उदा.-वच्छस्स छाहा वच्छस्स छाआ। पुद्गलका पर्याय। सच्छाहं सच्छाअं। जब कान्ति यह अर्थ नहीं होता, ऐसा क्यों कहा है? (कारण कान्ति अर्थ होनेपर, यहाँका वर्णविकार नहीं होता।) उदा.— मुहच्छाआ (यानी) मुहकी कान्ति ऐसा अर्थ ॥ ७० ॥

यष्ट्यां लल् ॥ ७१ ॥

यष्टि शब्दमें य का ल होता है। (सूत्रके लल् में) ल् इत् होनेसे यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.—लट्ठी यष्टिः। वेलुलट्ठी वेणुयष्टिः। चूअलट्ठी चूतयष्टिः। महुलट्ठी मधुयष्टिः ॥ ७१ ॥

कतिपये वहशौ ॥ ७२ ॥

कतिपय शब्दमें य के व और ह होते हैं। (सूत्रके हश् में) श् इत् होनेसे, ह होते समय पूर्व स्वर दीर्घ होता है। उदा.—कइअवं कइवाहं ॥ ७२ ॥

अर्थपरे तु युष्मदि ॥ ७३ ॥

युष्मत् शब्द जब (मूल यानी तु, तुम इस) अर्थमें (अर्थपरे) होता है तब य का तकार होता है। उदा.-तुम्हच्चिअं यौष्माकम्। तुम्हकेरो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

युष्मदीयः। (मूल) अर्थमें होनेपर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण ऐसा नहीं हो तो यहाँका वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.–जुम्हदम्हप्पअरणं, युष्मदस्मत्-प्रकरणम् ॥ ७३ ॥

आदेर्जः ॥ ७४ ॥

पदमें आद्य य का ज होता है। उदा.–यशः जसो। यमः जमो। युवतिः जुवई। याति जाइ। (पदमें) आद्य य का, ऐसा क्यों कहा है? (कारण य आद्य न होनेपर ज नहीं होता।) उदा.-अवअवो। विणओ। बहुलका अधिकार होनेसे, पीछे (पूर्व) उपसर्ग रहनेसे अनादि होनेवाले य-कामी ज होता है। उदा.-संजोओ संयोगः। संजमो संयमः। अपजसो अपयशः। (पीछे उपसर्गके होते हुए भी, अनादि य का ज) क्वचित् नहीं होता। उदा.–प्रयोगः पओओ ॥ ७४ ॥

भ्यौ बृहस्पतौ तु बहोः ॥ ७५ ॥

बृहस्पति शब्दमें बकार और हकार इनके अनुक्रमसे भकार और यकार विकल्पसे होते हैं। उदा.-भयप्पई बहप्पई ॥ ७५ ॥

रो डा पर्याणे ॥ ७६ ॥

पर्याण शब्दमें रेफका डा ऐसा आदेश होता है। उदा.-पडाआणं पल्लाणं ॥ ७६ ॥

लो जठरवठरनिष्ठुरे ॥ ७७ ॥

(इस सूत्रमें १.३.७६ से) रः पद (अध्याहृत) है। जठर, इत्यादि शब्दोंमें र का ल विकल्पसे होता है। उदा.-जठरम जढलं जढरं। वठरः वढलो वढरः। निष्ठुरः णिट्ठुलो णिट्ठुरो। भ्रमरका पर्याय भसल शब्द संस्कृत जैसेही है ॥ ७७ ॥

हरिद्रादौ ॥ ७८ ॥

हरिद्रा, इत्यादि शब्दोंमें र का ल होता है। यह नियम (१.३.७७ से) पृथक् कहा जानेसे, (यह ल) नित्य होता है। उदा.–हलद्दी हरिद्रा ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इंगालो अंगारः । चलणो चरणः । जहुट्ठिलो युधिष्ठिरः । सउमालो सुकुमारः । सिढिलो शिथिरः । सक्कालो सत्कारः । मुहलो मुखरः । वलुणो वरुणः । चिलाओ किरातः । लुग्गो रुग्णः । अवद्दालं अपद्वारम् । कलुणो करुणः । दलिद्दो दरिद्रः । फलिहो परिघः । फलिहा परिखा । दलिद्दाइ दरिद्राति । मच्छलो मत्सरः । संवच्छलो संवत्सरः । फालिहद्दं पारिभद्रम् । दालिद्दं दारिद्र्यम् । काहलो कातरः । इत्यादि । बहुलका अधिकार होनेसे, (अंगार शब्दमें अ का) इ होनेपरही (र का ल होता है); इतरत्र मात्र—अंगारो । चरण शब्द पाँव अर्थमें होनेपरही (र का ल होता है); इतरत्र चरणकरणं । किरात शब्दमें (क का च होकर) चकारके सान्निध्य होनेपरही (र का ल होता है); इतरत्र—नमिमो हरकिराअं ॥ ७८ ॥

किरिवेरे डः ॥ ७९ ॥

(किरि और वेर) इन शब्दोंमें रेफका ड होता है। उदा.—किडी किरिः (यानी) वराह, गर्त, चूहा या गंधर्व। वेडो वेरः (यानी) भीरु, शरभ, करभ, मंडूक या दुंदुभि ॥ ७९ ॥

खोः करवीरे णः ॥ ८० ॥

करवीर शब्दमें खु अर्थात् आद्य रेफका ण होता है। उदा.—कणवीरो ॥ ८० ॥

लो ललाटे च ॥ ८१ ॥

(इस सूत्रमें १.३.८० से) णः पदकी अनुवृत्ति है। ललाट शब्दमें आद्य लकारका ण होता है। सूत्रमेंसे च (चकार) यह खोः (इस १.३. ८० मेंसे) पदकी अनुवृत्ति दिखानेके लिए है। उदा.—णिडालं णडालं ॥ ८१ ॥

लोहललाङ्गललाङ्गूले वा ॥ ८२ ॥

(लोहल, लाङ्गल और लाङ्गूल) इन शब्दोंमें आद्य लकारका ण विकल्पसे होता है। उदा.-णोहलो लोहलो । लोहल (यानी) शबरविशेष । णंगलं लंगलं। णंगूलं लंगूलं ॥ ८२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्थूले रलुतश्चौत् ॥ ८३ ॥

स्थूल शब्दमें ल का लित् (=नित्य) र होता है, और उसके सांनिध्यसे ऊ का ओ होता है। उदा.-थोरो। किंतु थूलहद्दो शब्द मात्र हरिद्रादि शब्दोंकी (१.३.८८ देखो) तरह स्थूर शब्दमें र का ल होकर होगा ॥ ८३ ॥

बो मः शबरे ॥ ८४ ॥

शबर शब्दमें ब का म होता है। उदा॰-समरो ॥ ८४ ॥

नीवीस्वप्ने वा ॥ ८५ ॥

(नीवी आर स्वप्न) इन शब्दोंमें व का म विकल्पसे होता है। उदा.-नीमी नीवी। सिमिणो सिविणो ॥ ८५ ॥

हस्य घो बिन्दोः ॥ ८६ ॥

अनुस्वार (=बिंदु) के आगे होनेवाले ह का घ विकल्पसे होता है। उदा॰-संघारो संहारो संहारः। सिंघो सिंहो सिंहः। क्वचित् अनुस्वारके आगे न होनेपरभी (ह का घ होता है।) उदा.-दाघो दाहः ॥ ८६ ॥

शोः सल् ॥ ८७ ॥

अस्तोरखोरचः (१.३.७) सूत्रकी (यहाँ) निवृत्ति हो गई। शु यानी श, ष और स इन वर्णोंका सकार होता है। (सूत्रके सल् में) ल् इत् होनेसे, (यह स) नित्य होता है। उदा.-श (का स)-शब्दः सद्दो। कुशः कुसो। नृशंसः णिसंसो। वंशः वंसो। अश्वः आसो। श्मश्रूः मंसू। श्यामा सामा। दश दस। शोभते सोहइ। ष (का स)-षण्डः संडो। निकषः णिहसो। कषायः कसाओ। विष्वक् वीसुं। वर्षः वासो। तुष्यति तूसइ। शेषः सेसो ॥ ८७ ॥

प्रत्यूषदिवसदशपाषाणे तु हः ॥ ८८ ॥

(इस सूत्रमें १.३.८७ से) शोः पदकी अनुवृत्ति है। प्रत्यूष, इत्यादि शब्दोंमें श, ष, स का ह विकल्पसे होता है। उदा.-पच्चूहो पच्चूसो (प्रत्यूष)।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दिअहो दिअसो (दिवस)। दह दस (दश)। दहमुहो दसमुहो (दशमुख)। दहबलो दसबलो (दशबल)। दहरओ दसरहो (दशरथ)। एआरह एआरस (एकादश)। बारह बारस (द्वादश)। तेरह तेरस (त्रयोदश)। पाहाणो पासाणो (पाषाण) ।। ८८ ।।

स्नुषायां ण्हः फोः ।। ८९ ।।

स्नुषा शब्दमें फोः यानी द्वितीय (ऐसे) शु का ण्ह ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–सुण्हा सुसा स्नुषा ।। ८९ ।।

छल् षट्शमीसुधाशावसप्तपर्णे ।। ९०।।

(षट्, शमी, सुधा, शाव, सप्तपर्ण) इन शब्दोंमें श, ष, स का लित् (=नित्य) छ होता है। उदा.–छट्ठी षष्ठी। छप्पओ षट्पदः। छम्मुहो षण्मुखः। छमी शमी। छुहा सुधा। छावो शावः। छत्तिवण्णो सप्तपर्णः ।। ९० ।।

सिरायां वा ।। ९१ ।।

सिरा शब्दमें शु का छ विकल्पसे होता है। उदा.-छिरा सिरा ।।९१ ।।

लुक्पादपीठपादपतनदुर्गादेव्युदुम्बरेऽचान्तर्दः ।। ९२ ।।

पादपीठ, इत्यादि शब्दोंमें (दो स्वरोंके) बीच होनेवाले दकारका, (उससे संयुक्त रहनेवाले) स्वरके साथ, विकल्पसे लोप होता है। उदा.–पावीढं पाअवीढं पादपीठम्। पावडणं पाअवडणं पादपतनम्। दुग्गावी दुग्गाएवी दुर्गादेवी। उंबरो उउंबरो उदुम्बरः। (दो स्वरोंके) बीच होनेवाले, ऐसा क्यों कहा है? (कारण दुर्गादेवी शब्दमेंसे आद्य (दकार) में (विकल्पसे लोप) न हो ।। ९२ ।।

व्याकरणप्राकारागते कगोः ।। ९३ ।।

(इस सूत्रमें १.३.९२ से) लुग् पदकी अनुवृत्ति है। (१.३.९१ सूत्रमेंसे) वा शब्द और (१.३.९२ मेंसे) अचा पद यहाँ (अध्याहृत) हैंही। व्याकरण, इत्यादि शब्दोंमें ककार और गकार इनका, (उनसे संयुक्त

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रहनेवाले) स्वरके साथ, विकल्पसे लोप होता है। उदा.–वारणं वाअरणं (व्याकरण)। पारो पाआरो (प्राकार)। आओ आअओ (आगत) ॥ ९३ ॥

एवमेवदेवकुलप्रावारकयावज्जीवितावटावर्तमानतावति वः ॥ ९४ ॥

एवमेव, इत्यादि शब्दोंमें (दो स्वरोंके) बीच रहनेवाले वकारका, (उससे संयुक्त रहनेवाले) स्वरके साथ, विकल्पसे लोप होता है। उदा.-एमेअ एअमेअ (एवमेव)। देउलं देवउलं (देवकुल)। पारओ पावारओ (प्रावारक)। जा जाव (यावत्)। जीअं जीविअं (जीवित)। अडो अवडो (अवट)। अत्तमाणं आवत्तमाणं (आवर्तमान)। ता ताव (तावत्)। (वकार) दो स्वरोंके बीचमें होनेपरही (उसका विकल्पसे लोप होता है, अन्यथा नहीं। इसलिए) एवमेव शब्दमें अन्त्य वकारका (विकल्पसे लोप) नहीं होगा ॥ ९४ ॥

ज्योर्दनुजवधराजकुलभाजनकालायसकिसलयहृदयेषु ॥ ९५ ॥

दनुजवध, इत्यादि शब्दोंमें ज्योः यानी जकार और यकार इनका, (उनसे संयुक्त रहनेवाले) स्वरके साथ, विकल्पसे लोप होता है। उदा.–दणुवहो दणुअवहो दनुजवधः। राउलं राअउलं राजकुलम्। भाणं भाअणं भाजनम्। कालासं कालाअसं कालायसम्। किसलं किसलअं किसलयम्। हिअं हिअअं हृदयम्। महण्णवसमा सहिआ जाला ते सहिअएहिं घेप्पंति, महार्णवसमाः सहृदया यदा ते सहृदयैर्गृह्यन्ते ॥ ९५ ॥

अपतौ घरो गृहस्य ॥ ९६ ॥

पति शब्द आगे न होनेपर, गृह शब्दको घर ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–घरो गृहम्। घरसामी गृहस्वामी। राअघरं राजगृहम्। पति शब्द (आगे) न होनेपर, ऐसा क्यों कहा है ?(कारण पति शब्द आगे हो तो गृहको घर ऐसा आदेश नहीं होता।) उदा.-गहवई गृहपतिः॥९६॥

स्त्रीभगिनीदुहितृवनितानामित्थीबहिणीधूआविलआः ॥ ९७ ॥

स्त्री, इत्यादि शब्दोंको इत्थी, इत्यादि आदेश यथाक्रम विकल्पसे होते हैं। उदा.-इत्थी थी स्त्री। बहिणी भइणी भगिनी। धूआ दुहिआ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दुहिता। विलआ वणिआ वनिता। कोई कहते हैं कि विलया शब्द संस्कृतमेंभी है ॥ ९७ ॥

उभयाधसोरवहहेट्ठौ ॥ ९८ ॥

उभय और अधस् इनको यथाक्रम अवह, हेट्ठ ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-अवहं। कोई लोगोंके मतानुसार, उहअं ऐसाभी (वर्णान्तर) होता है। हेट्ठं अह। हेट्ठमग्गो अहमग्गो अधोमार्गः ॥ ९८ ॥

मलिनधृतिपूर्ववैडूर्याणां मइलदिहिपुरिमवेरुलिआः ॥ ९९ ॥

मलिन, इत्यादि शब्दोंको यथाक्रम मइल, इत्यादि आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.—मइलं मलिणं मलिनम्। दिही धिई धृतिः। पुरिमं पुव्वं पूर्वम्। वेरुलिअं वेडुज्जं वैडूर्यम् ॥ ९९ ॥

स्मरकट्वोरीसरकारौ ॥ १०० ॥

स्मर और कटु शब्दोंको यथाक्रम ईसर और कार ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.—ईसरो सरो स्मरः। कारं कडू कटुः॥ १०० ॥

बाहिंबाहिरौ बहिसः ॥ १०१ ॥

बहिः शब्दको बाहिं और बाहिर ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-बाहिं बाहिरं। बाहिरब्भंतरकिरिआरोहो, बाह्याभ्यन्तरक्रियारोधः ॥ १०१ ॥

कूरो गौणेषदः ॥ १०२ ॥

(समासमें) गौण (पद) होनेवाले ईषत् शब्दको कूर ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.—चिंच व्व कूरपिक्का, चिञ्चेवेषत्पक्का। विकल्प-पक्षमें—ईसि ॥ १०२ ॥

एण्हिं एत्ताहे इदानीमः ॥ १०३ ॥

इदानीम्‌को एण्हिं और एत्ताहे ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.—एण्हिं एत्ताहे इआणिं। विकल्पपक्षमें—दाणिं ॥ १०३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तिर्यक्पदातिशुक्तेस्तिरिच्छिपाइक्कसिप्पी ।। १०४ ।।

तिर्यक्, इत्यादि शब्दोंको तिरिच्छि, इत्यादि आदेश होते हैं। उदा.-तिरिच्छि पेच्छइ, तिर्यक् पश्यति। पाइक्को पआई पदातिः। सिप्पी सुत्ती शुक्तिः ।। १०४ ।।

गोणाद्याः ।। १०५ ।।

जिनके बारेमें प्रकृति, प्रत्यय, लोप, आगम और वर्णविकार नहीं कहे हैं, ऐसे गोण, इत्यादि शब्द बहुलत्वसे निपातके रूपमें आते हैं। उदा.-(१) गोणो गौ या गाय।-यहाँ (गो के आगे) स्वार्थे ण आया है। (२) गोला गोदा।-गोदा यानी गोदावरी। यहाँ द का ल हुआ है। कोई कहते हैं, गोला शब्द संस्कृतमेंभी है। (३) ओसायणं आपोशन या आचमन। (यहाँ) आपः शब्दको ओसा ऐसा आदेश, फिर सकारके आगे यकारका आगम (हुए हैं)। (अथवा)-नीहार अर्थमें ओसा यह देश्य शब्द है; उसका कण यानी ओसायण। (४) वणाई वनराजि। यहाँ रेफका लोप हुआ है। (५) तल्लं तल्लडं तल्प शय्या।-यहाँ ल का द्वित्व, प का लोप अथवा स्वार्थे ड (आये हैं)। (ल का द्वित्व) न होनेपर, तलं। (६) थोवो (७) थेवो थोक्को स्तोक या स्वल्प। यहाँ क का व और / अथवा ओ का ए, (और) सेवादिपाठमें होनेसे द्वित्व (हुए हैं)। (८) विरुअं विरुद्ध। यहाँ संयुक्त व्यंजनका लोप हुआ है। (९) आओ आप या जल। शरदादि-पाठमें होनेसे, अन्त्य व्यंजनका अ और दीर्घ स्वर (हुए हैं)। (१०) गोसो गोसर्गः प्रत्यूष या प्रभात। यहाँ र्ग का लोप हुआ है। (११) वोसिरणं व्युत्सर्जन या छोडना। यहाँ व्युत् का वो, सृजति ऐसा मानकर ज का र, और (सृमें) समेंसे ऋ का इ (हुए हैं)। (१२) धिरत्थु धिगस्तु या धिक्कार हो। यहाँ ग का र हुआ है। (१३) पत्थेवाअं पाथेयं। यहाँ था-का द्वित्व और वकारका आगम (हुए हैं)। (१४) वेलंबो (१५) वडंबो विडम्बना।--यहाँ इ का ए, ड का ल और नकारका लोप हुए हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(१६) बुलबुलो बुद्बुद । यहाँ दकारका ल और दो संयुक्त व्यंजनोंके बीचमें उ ऐसे वर्णविकार हुए हैं। (१७) करिल्लं करीर या बाँस। यहाँ र का ल्ल हुआ है। (१८) ऊआ यूका। यहाँ आद्य य का लोप हुआ है। (१९) दोग्गं युग्म या जोडी। यहाँ यु का दो हुआ है। (२०) धणिआ धन्या (यानी) प्रियतमा। यहाँ यकारके पूर्वमें इ आया है। (२१) णिव्वहणं उव्दहनं (यानी) विवाह। यहाँ उकारका णि हुआ है। (२२) मुव्वहइ उद्वहति व्याह करता है। यहाँ उकारका मु हुआ है। (२३) छिच्छि धिक् धिक्। यहाँ ध का छ हुआ है। (२४) वाडी वृतिः। यहाँ ऋ का आ और तकारका ड हुए हैं। (२५) गहिल्लो ग्रहिल या पिशाचग्रस्त। यहाँ ल का द्वित्व हुआ है। (२६) गोणिक्को गोनीकः (यानी) गवां अनीकः (यानी) गौओंका समूह। यहाँ क का द्वित्व हुआ है। (२७) अइरजुवई अचिरयुवति। अपूर्वा ऐसा अर्थ। (२८) अणरहू नववधू। यहाँ नकार और वकार इनके (अनुक्रमसे) अ और ण, तथा वका र हुए हैं। (२९) अमआ असुर। यहाँ सुकार और रेफ इनके म और य हुए हैं। (३०) पण्णवण्णा (३१) पञ्चावण्णा पञ्चपञ्चाशत् या पचपन। यहाँ आद्य संयुक्त व्यंजनका ण, प का व, चाशत्का णा, हुए हैं। (पंचावण्णामें) द्वितीय अ का आ, चाशत्का णा हुए हैं। (३२) गामहणं ग्रामस्थान। यहाँ स्थाकारका ह हुआ है। (३३) तेवण्णा त्रिपञ्चाशत् या तिरपन। यहाँ इ का ए, चाशत्का ण हुए हैं। (३४) घुसिमं घुसृण या केसर। यहाँ ण का म, ऋकारका इ हुए हैं। (३५) छट्टा छटा। यहाँ टकारका ट्ट हुआ है। (३६) बइल्लो बलीवर्द या बैल। यहाँ द का ल और लीव का इ हुए हैं। (३७) पाउरणं (३८) पंगुरणं प्रावरण। यहाँ द्वितीय अ का उ हुआ है और व को गु ऐसा आदेश हुआ है। (३९) लक्कुडो लगुड या लकडी। यहाँ गकारका क्क हुआ है। (४०) आसंघो आस्था। यहाँ स्थाकारका संघ हुआ है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(४१) छेणो स्तेन या चोर। यहाँ स्त का छ हुआ है। (४२) दोसिणी ज्योत्स्ना या चन्द्रिका। यहाँ ज्यो का दो हुआ है और न के पूर्वमें इ आया है। (४३) हिज्जो ह्यः या कल। यहाँ यकारका इज्ज हुआ है। (४४) कक्खडो कर्कश। यहाँ क और श इनके ख और ड हुए हैं। (४५) तेआलीसा त्रिचत्वारिंशत् या तैंतालीस। यहाँ इ का ए, च और त्व इनका आ, र का ल, हुए हैं; और विंशत्यादिपाठमें होनेसे, अनुस्वारका लोप हुआ है। (४६) कत्तं कलत्र या पत्नी। यहाँ स्वरके साथ ल् का लोप हुआ है। (४७) कलबू अलाबू। यहाँ अकारका क और आकारका अकार हुए हैं। (४८) नलिअं। (४९) निहेलणं निलय यानी घर। यहाँ इ और अ इनका (स्थान-) व्यत्यय, और य का ण हो गये, और ल के पूर्वमें हे आया है। (५०) णिक्कडो निश्चय। यहाँ श्च और य इनके क और ड हुए हैं। (५१) णिक्कडो निश्चल। यहाँ च और ल इनके क और ड हुए हैं। (५२) णिरासो नृशंस यानी क्रूर। यहाँ शंकारका रा हुआ है। (५३) णिप्फंसो निस्त्रिंश या खड्ग। यहाँ स्त्रिकारका फ हुआ है। (५४) विहुंडुओ विधुंतुद यानी राहु। यहाँ त का ड हुआ है। (५५) वहिओ मथित। यहाँ म का व हुआ है। (५६) खड्डं खेल। यहाँ ल का ड्ड हुआ है। (५७) कोलीरं कुरुविन्द (यानी) एक प्रकारका पद्मराग। यहाँ (दो) उकारोंका ओ और ई, र का ल, तथा बिन्दुका र, हुए हैं। (५८) विसग्गो व्युत्सर्ग या छोडना। यहाँ व्युद् का वि हुआ है। (५९) संघयणं संहनन। यहाँ ह का घ, और आद्य न का य हुए हैं। (६०) घायणो गायन। यहाँ ग का घ हुआ है। (६१) ढेक्कुणो मत्कुण। यहाँ म और त् इनका ढे हुआ है। (६२) ककुडं ककुद। यहाँ द का ड हुआ है। (६३) सेवालं जम्बाल या सेवाल। यहाँ ज और म् इनका से हुआ है। (६४) खुड्डओ क्षुल्लक या क्षुद्र। यहाँ ल का ड हुआ है। (६५) वड्ढुअरो बृहत्तर या बडा। यहाँ बृहत् का वड्ढु हुआ है। (६६) अत्थक्कं अकाण्ड यानी यकायक। यहाँ का और ण्ड इनके त्थ और क्क हुए हैं। (६७) आणुअं आनन या मुख। यहाँ आद्य अ का उ और द्वितीय न् का लोप हुए हैं। (६८) संगोलं संघात या समूह। यहाँ घा और त इनका गोल हुआ है। (६९) सामरी (७०) सामली शाल्मलि एक

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वृक्षविशेष। यहाँ ल का लोप, और द्वित्वका अभाव हैं। (७१) हिमोरं हिमोदर। यहाँ द का लोप हुआ है। (७२) अब्बा अम्बा या माँ। यहाँ अनुस्वारका लोप, और ब का द्वित्व हैं। (७३) सिप्पी सूची। यहाँ ऊ का इ और च का द्विरुक्त प (प्प) हुए हैं। (७४) बम्हो वाणी या सरस्वती। यहाँ ण का म्ह हुआ है। (७५) जच्छन्दो स्वच्छन्द। यहाँ स्व का ज हो गया है। (७६) तलारो तलवरः (यानी) पुराध्यक्ष। यहाँ व का लोप हुआ है। (७७) कुड्डं कुतुक या कुतूहल। यहाँ त का लोप हुआ और क का द्विरुक्त ड (=ड्ड) हो गया है। (७८) सीसक्कं शिरःपत्र। यहाँ पत्रका क्क हुआ है। (७९) जम्बालं शैवाल। यहाँ शै का जम् हो गया है। (८०) अणुदिवं दिनमुख यानी प्रभात। अनु (यानी) अनंतर (नंतर दिवा यानी दिन)। यहाँ न का व हुआ है। (८१) सत्थरो संस्तर या शय्या। यहाँ अनुस्वारका लोप हुआ है। (८२) विड्डरं विस्तार। यहाँ स्तकारका ड्ड हो गया है। (८३) वीली वीची और (८४) वीबी (यानी लहर)। यहाँ च का ल और च का ब हुआ है। (८५) डंभिओ दाम्भिक। यहाँ द का ड हुआ है। (८६) कडप्पो कलाप (यानी) समूह। यहाँ ल का ड हुआ और प का द्वित्व हो गया है। (८७) दूसलो दुर्भग यानी अभागी। यहाँ भ और ग इनके स और ल हो गये हैं। (८८) गल्लं गण्ड यानी कपोल। यहाँ ड का ल्ल हुआ है। (८९) पडिसिद्धी प्रतिस्पर्धा। यहाँ स्प का सि हुआ और आ का ई हो गया है। (९०) वढो वट। यहाँ ट का ढ हुआ है। (९१) डोअणो (९२) डोअलो (९३) डोलो लोचन। यहाँ ल का ड, ल और न इनके ड और ल होकर, स्वरके साथ च का लोप हो गया है। (९४) कत्थइ क्वचित्। यहाँ चि का थ हुआ है। (९५) डेड्डुरो दर्दुर यानी दादुर। यहाँ अ का ए हुआ और दोनों दकारोंका ड हो गया है। (९६) छिल्लं छिद्र। यहाँ द्र का ल्ल हो गया है। (९७) मंजरो (९८) वंजरो मार्जार। यहाँ विकल्पसे म का व हो गया है; वक्रादिपाठमें होनेसे, अनुस्वार आ गया, और आ का ह्रस्व (यानी अ) हो गया। (९९) गहरो गृध्र। यहाँ र के पूर्वमें अ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आया है। (१००) उरओ। (१०१) अज्जमो ऋजु या सरल। यहाँ ज का र, ऋकार और उकार इनका अ हुए और स्वार्थे म आया है। (१०२) साइआ सारिआ शारिका। यहाँ रि का लोप हुआ और अन्त्य आ का इआ हो गया है। (१०३) अरणी सरणि यानी पद्धति। यहाँ स का लोप हुआ है। (१०४) तणेसी तृणराशि। यहाँ पूर्व स्वरके साथ राकारका ए हो गया है। (१०५) दुग्गं दुःख। यहाँ संयुक्त व्यंजनका ग हुआ। (१०६) चउक्कं चतुष्पथ। यहाँ पथ का क हो गया। (१०७) कलेरं कराल यानी जटिल। यहाँ र और ल इनका (स्थान-) व्यत्यय हुआ और आ का ए हो गया। और (१०८) कक्कालं कंकाल यानी हड्डियोंका जाल। इत्यादि ॥ १०९ ॥

— प्रथम अध्याय तृतीय पाद समाप्त —

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चतुर्थः पादः

स्तोः ॥ १ ॥

(स्तोः) यह अधिकार है। 'ईल् ज्यायाम्' (१.४.११०) सूत्रतक इसका अधिकार है। समझना है कि यहाँसे आगे जो कुछ अनुक्रमसे कहा जायेगा, वह स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका होता है ॥ १ ॥

वा रक्ते गः ॥ २ ॥

रक्तमें स्तुको यानी संयुक्त व्यंजनको ग ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–रग्गो रत्तो ॥ २ ॥

शुल्के ङ्गः ॥ ३ ॥

शुल्कमें संयुक्त व्यंजनको ङ्ग ऐसा आदेश विकल्पसे हो जाता है। उदा.-सुंगं सुक्कं ॥ ३ ॥

कः शक्तमुक्तदष्टमृदुत्वरुग्णेषु ॥ ४ ॥

(शक्त, मुक्त, दष्ट, मृदुत्व, रुग्ण) इन शब्दोंमें स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका ककार विकल्पसे होता है। उदा.–सक्को सत्तो (शक्त)। मुक्को मुत्तो (मुक्त)। डक्को दट्ठो (दष्ट)। माउक्कं मउक्कं माउत्तणं (मृदुत्व)। लुक्को लुग्गो (रुग्ण) ॥ ४ ॥

क्ष्वेडकगे खल् ॥ ५ ॥

क्ष्वेडक, इत्यादिमें संयुक्त व्यंजनका खकार होता है। (सूत्रके खल्में) ल् इत् होनेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.–क्ष्वेडकः खेडओ। क्ष्वेडक शब्द विष का पर्यायी शब्द है। स्फोटकः खोडओ। स्फोटिका खोडिआ ॥ ५ ॥

ष्कस्कोर्नाम्नि ॥ ६ ॥

(इस सूत्रमें) ख पदकी अनुवृत्ति है। संज्ञामें (होनेवाले) ष्क और स्क इनका ख हो जाता है। उदा.–पुष्करम् पोक्खरं। पुष्करिणी पोक्खरिणी। निष्कम् णिक्खं। स्कन्धः खंधो। स्कन्धावारः खंधावारो। अवस्कन्दः अवक्खंदो। (सूत्रमें) संज्ञामें (होनेवाले), ऐसा क्यों कहा है? (कारण संज्ञाको छोडकर अन्य शब्दोंमें ऐसा वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.–दुक्करं दुष्करम्। णिक्कंपं निष्कम्पम्। णमोक्कारो नमस्कारः। सक्कअं संस्कृतम्। सक्कारो संस्कारः ॥ ६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वृक्ष रुर्वृक्षे ॥ ७ ॥

वृक्ष शब्दमें संयुक्त व्यंजनका ख होता है, और उसके सांनिध्यसे वृकारका रु हो जाता है। उदा.-रुक्खो। यह शब्द स्पृहादि-गणमें होनेसे, क्ष का छ होनेपर, वच्छो (ऐसा वर्णान्तर हो जायेगा) ॥ ७ ॥

क्षः ॥ ८ ॥

क्षकारका ख होता है। उदा.-लक्षणम् लक्खणं। क्षयः खओ। विचक्षणः विअक्खणो। बहुलका अधिकार होनेसे, क्वचित् (क्ष के) च्छ और झ भी हो जाते हैं। उदा.-खीणं झीणं क्षीणम्। छिज्जइ झिज्जइ क्षीयते ॥८॥

स्थाणावहरे ॥ ९ ॥

स्थाणुका अर्थ शंकर ऐसा न होनेपर, स्थाणु शब्दमें स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका ख होता है; यदि शंकर अर्थ अभिप्रेत हो, तो ख नहीं होता। उदा.-खाणू। शंकर अर्थ न होनेपर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण शंकर अर्थ होनेपर ख नहीं होता।) उदा.-थाणू ॥ ९ ॥

स्कन्दतीक्ष्णशुष्के तु खोः ॥ १० ॥

(स्कन्द, तीक्ष्ण, शुष्क) इन शब्दोंमें खु का यानी आद्य संयुक्त व्यंजनका ख विकल्पसे होता है। उदा.-खंदो कंदो। तिक्खं तिण्हं। सुक्खं सुक्कं ॥१०॥

स्तम्भे ॥ ११ ॥

(इस सूत्रमें १.४.१० से) खोः और तु पदोंकी अनुवृत्ति है। स्तम्भमें खु का यानी आद्य संयुक्त व्यंजनका खकार विकल्पसे होता है। उदा.-खंभो थंभो। (यह स्तंभ) काष्ठ, इत्यादिका है। यह नियम(१.४.१० से) पृथक कहा है; कारण इसका उपयोग अगले सूत्रमें करना है ॥ ११ ॥

थलस्पन्दे ॥ १२ ॥

स्पंदका अभाव इस अर्थमें स्तम्भ शब्द होनेपर, आद्य संयुक्त व्यंजनका लित् (=नित्य) थ होता है। उदा.—थंभो। थंभिज्जइ ॥ १२ ॥

स्त्यानचतुर्थे च तु ठः ॥ १३ ॥

स्त्यान और चतुर्थ शब्दोंमें, (तथा) सूत्रमेंसे चकारके कारण स्पंदका अभाव इस अर्थमें होनेवाले स्तम्भ शब्दमें, (संयुक्त व्यंजनका) ठ विकल्पसे होता है। उदा.—ठीणं थीणं। चउट्ठो चउत्थो। ठंभो ठंभिज्जइ ॥ १३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ष्टः ॥ १४ ॥

(इस सूत्रमें १.४.१३ से) ठः पदकी अनुवृत्ति है। ष्ट का ठ होता है। यह नियम (१.४.१३ से) पृथक् कहा जानेसे, (यह ठ) नित्य होता है। उदा.- दृष्टिः दिट्ठी। मुष्टिः मुट्ठी। यष्टिः लट्ठी। सौराष्ट्रम् सोरट्ठं ॥ १४ ॥

विसंस्थुलास्थ्यधनार्थे ॥ १५ ॥

विसंस्थुल और अस्थि शब्दोंमें, तथा धन अर्थ न होनेवाले अर्थ शब्दमें, संयुक्त व्यंजनका ठ होता है। उदा.-विसंठुलं विसंस्थुलम्। अट्ठी अस्थि। अट्ठो अर्थः (यानी) प्रयोजन। धन अर्थ न होनेवाला अर्थ शब्द, ऐसा क्यों कहा है? (कारण.धनवाचक अर्थ शब्दमें ठ नहीं होता।) उदा.-अत्थो॥ १५॥

चः कृत्तिचत्वरे ॥ १६ ॥

कृत्ति और चत्वर शब्दोंमें संयुक्त व्यंजनका च होता है। उदा.—किच्ची कृत्तिः। चच्चरं चत्वरम् ॥ १६ ॥

त्योऽचैत्ये ॥ १७ ॥

चैत्य शब्दको छोडकर, (अन्य शब्दोंमें) त्य का च होता है। उदा.- सत्यम् सच्चं। प्रत्ययः पच्चओ। अमात्यः अमच्चो। चैत्य शब्दको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण चैत्य शब्दमें त्य का च नहीं होता।) उदा.— चइत्तं ॥ १७ ॥

श्चेर्वृश्चिके ञ्चुर्वा ॥ १८ ॥

वृश्चिक शब्दमें श्चि को ञ्चु ऐसा आदेश हो जाता है। उदा.-विञ्चुओ विच्छुओ ॥ १८ ॥

उत्सवर्क्षोत्सुकसामर्थ्ये छो वा॥ १९ ॥

(उत्सव, ऋक्ष, उत्सुक, सामर्थ्य) इन शब्दोंमें त्सु का यानी संयुक्त व्यंजनका छ विकल्पसे होता है। (इस सूत्रमें) पुनः 'वा' ऐसा कहा जानेसे, अगले सूत्रोंमें विकल्प नहीं होता। उदा.-उच्छओ ऊसओ। रिच्छो रिक्खो। उच्छुओ ऊसुओ। सामच्छं सामत्थं ॥ १९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

क्षमायां कौ ॥ २० ॥

(इस सूत्रमें १.४.१९ से) छः पदकी अनुवृत्ति है। कु यानी पृथिवी; तद्वाचक होनेवाले क्षमा शब्दमें स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका छ होता है। उदा.–छमा। व्याकरणके नियमानुसार होनेवाले (लाक्षणिक) (क्षमा का क्षमा होनेपर) वहाँ भी छ हो जाता है। उदा.–छमा। पृथिवीवाचक (क्षमा शब्द), ऐसा क्यों कहा है? (कारण क्षमा शब्दका पृथिवी अर्थ न होनेपर, छ नहीं होता।) उदा.—खमा, क्षमा (यानी) क्षांति ॥ २० ॥

क्षण उत्सवे ॥ २१ ॥

उत्सव वाचक क्षण शब्दमें संयुक्त व्यंजनका छ होता है। उदा.–छणो। उत्सववाचक (क्षण शब्द), ऐसा क्यों कहा है? (कारण उत्सववाचक क्षण शब्द न होनेपर, छ नहीं होता।) उदा.–खणो ॥ २१ ॥

स्पृहादौ ॥ २२ ॥

स्पृहा, इत्यादि शब्दोंमें स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका छ होता है। उदा.- स्पृहा छिहा। क्षुरः छुरो। क्षीरम् छीरं। वृक्षः वच्छो। क्षेत्रम् छेत्तं। वक्षः वच्छो। कुक्षिः कुच्छी। क्षुतम् छुअं। क्षतम् छअं। क्षुण्णम् छुण्णं। कक्ष्या कच्छा। कक्षः कच्छो। मक्षिका मच्छिआ। क्षारम् छारं। इक्षुः उच्छू। सदक्षः सारच्छो। अक्षि अच्छी। स्थगितः छइओ। दृक्षः दच्छो। कौक्षेयकम् कुच्छेअअं। उक्षा उच्छा। सादृश्यम् सारिच्छं। क्षुधा छुहा। लक्ष्मीः लच्छी। लक्ष्म लच्छं। इत्यादि ॥ २२ ॥

थ्यश्चत्सप्सामनिश्चले ॥ २३ ॥

(सूत्रमेंसे) अनिश्चले यानी निश्चल शब्दको छोडकर, थ्य, श्च, त्स और प्स इनका छ होता है। उदा.—थ्य (का छ)–पथ्यः पच्छो। मिथ्या मिच्छा। श्च (का छ)–पश्चिमम् पच्छिमं। आश्चर्यम् अच्छेरं। पश्चात् पच्छा। त्स (का छ)- उत्साहः उच्छाहो। मत्सरः मच्छरो। संवत्सरः संवच्छलो। चिकित्सति चिइच्छइ। प्स (का छ)–अप्सरसः अच्छरा। लिप्सते लिच्छइ। जुगुप्सति जुउच्छइ। निश्चल शब्दको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण निश्चल शब्दमें श्च का छ नहीं होता।) उदा.–णिच्चलो ॥ २३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

द्यय्यर्यां जः ॥ २४ ॥

(द्य, य्य और र्य) इनका जकार होता है। उदा.–द्य (का ज)–मद्यम् मज्जं। अवद्यम् अवज्जं। आतोद्यम् आओज्जं। द्युतिः जुई। द्योतः जोओ। य्य (का ज)—शय्या सेज्जा। जय्यः जज्जो। क्षय्यः खज्जो। र्य (का ज)–कार्यम् कज्जं। पर्यायः पज्जाओ। पर्याप्तम् पज्जत्तं ॥ २४ ॥

त्वभिमन्यौ जञौ ॥ २५ ॥

अभिमन्यु शब्दमें स्तु के यानी संयुक्त व्यंजनके जर् और ज ऐसे ये (विकार) विकल्पसे होते हैं। (जर में) र् इत् होनेसे, (ज का) द्वित्व होता है। उदा.—अहिमज्जू अहिमजू। विकल्पपक्षमें–अहिवण्णू अहिमण्णू ॥ २५ ॥

ध्यह्योर्झल् ॥ २६ ॥

ध्य और ह्य इनका झ होता है। (झल् में, ल् इत् होनेसे,(यह झ) नित्य होता है। उदा.–ध्य (का झ)–ध्यानम् झाणं। अध्ययनम् अज्झयणं। सन्ध्या संझा। विन्ध्यः विंझो। उपाध्यायः उवज्झाओ। ह्य (का झ)–सह्यः सज्झो। गुह्यम् गुज्झं। ग्राह्यम् गेज्झं। नह्यते णज्झइ ॥ २६ ॥

साध्वसे ॥ २७ ॥

साध्वसमें स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका झ होता है। उदा.–सज्झसं ॥ २७ ॥

ध्वजे वा ॥ २८ ॥

ध्वजमें स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका झ विकल्पसे होता है। उदा.–झओ धओ ध्वजः ॥ २८ ॥

इन्धौ ॥ २९ ॥

प्रदीप्त होना इस अर्थमें होनेवाले इन्धू (इन्धी) धातुमें स्तु को यानी संयुक्त व्यंजनको झ ऐसा आदेश होता है। उदा.–समिध्यति समिज्झइ॥ २९॥

र्तस्याधूर्तादौ टः ॥ ३० ॥

अधूर्तादौ यानी धूर्त, इत्यादि शब्दोंको छोडकर, (अन्य शब्दोंमें) र्त का ट्ट हो जाता है। उदा.–कैवर्तः केवट्टो। वर्तिः वट्टी। वर्तुलम् वट्टुलं। संवर्तितः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संवट्टिओ। प्रवर्तते पअट्टइ। नर्तयति णट्टइ। सूत्रमें धूर्त, इत्यादि शब्दोंको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण धूर्त, इत्यादि शब्दोंमें र्त का ट्ट नहीं होता।) उदा.–धूर्तः धुत्तो। वार्ता वत्ता। आर्तिः अत्ती। संवर्तनम् संवत्तणं। विवर्तनम् विवत्तणं। प्रवर्तनम् पवत्तणं। आवर्तनम् आवत्तणं। मुहूर्तः मुहुत्तो। मूर्तः मुत्तो। आवर्तकः आवत्तओ। संवर्तकः संवत्तओ। वार्तिकः वत्तिओ। वर्तिका वत्तिआ। प्रवर्तकः पवत्तओ। मूर्तिः मुत्ती। उत्कीर्तितः उक्कित्तिओ। निवर्तकः णिवत्तओ। निर्वर्तकः णिव्वत्तिओ। कीर्तिः कित्ती। कार्तिकः कत्तिओ। बहुलका अधिकार होनेसे, (कभी कभी र्त का ट्ट हो जाता है।) उदा.–वार्ता वट्टा॥ ३०॥

प्रवृत्तसंदष्टमृत्तिवृत्तेष्टापत्तनकदर्थितोष्ट्रे॥ ३१॥

(प्रवृत्त, संदष्ट, मृत्ति, वृत्त, इष्टा, पत्तन, कदर्थित और उष्ट्र) इन शब्दोंमें स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका ट होता है। उदा.–प्रवृत्तः पवट्टो। संदष्टः संदट्टो। मृत्तिः मट्टी। वृत्तम् वट्टं। इष्टा इट्टा। पत्तनं पट्टणं। कदर्थितः कवट्टिओ। उष्ट्रः उट्टो। किंतु संदष्ट और उष्ट्र शब्दोंमें होनेवाला ट (संयुक्त व्यंजनके होनेवाले) ठ का अपवाद है॥ ३१॥

वा न्तन्धौ मन्युचिह्नयोः॥ ३२॥

(मन्यु और चिह्न) इन शब्दोंमें संयुक्त व्यंजनको यथाक्रम न्त और न्ध ऐसे ये आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.–मन्तू मण्णू। इन्धं चिण्हं॥ ३२॥

डल्फोर्मर्दितविच्छर्दच्छर्दिकपर्दवितर्दिगर्तसंमर्दे॥ ३३॥

(मर्दित, विच्छर्द, छर्दि, कपर्द, वितर्दि, गर्त, संमर्द) इन शब्दोंमें फोः यानी द्वितीय संयुक्त व्यंजनका लित् (=नित्य) ड होता है। उदा.–मर्दितः मड्डिओ। विच्छर्दः विच्छड्डो। छर्दिः छड्डी। कपर्दः कवड्डो। वितर्दिः विअड्डी। गर्तः गड्डो। संमर्दः संमड्डो॥ ३३॥

ढोऽर्धर्द्धिश्रद्धामूर्ध्नि तु॥ ३४॥

(इस सूत्रमें १.४.३३ से) फोः पदकी अनुवृत्ति है। (अर्ध, ऋद्धि, श्रद्धा, मूर्धन्) इन शब्दोंमें द्वितीय स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका ढ विकल्पसे होता

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है। उदा.—अर्धम् अड्ढं अद्धं। ऋद्धिः इड्ढी इद्धी। श्रद्धा सड्ढा सद्धा। मूर्धा मुड्ढा मुद्धा ॥ ३४ ॥

दग्धविदग्धवृद्धिदंष्ट्रावृद्धे ॥ ३५ ॥

(दग्ध, विदग्ध, वृद्धि, दंष्ट्रा, वृद्ध) इन शब्दोंमें संयुक्त व्यंजनका ढ होता है। (यह सूत्र १.४.३४ से) पृथक् कहा जानेसे, (यहाँका वर्णांन्तर) नित्य होता है। उदा.—दग्धः दड्ढो। विदग्धः विअड्ढो। वृद्धिः वुड्ढी। दंष्ट्रा दाढा। वृद्धः वुड्ढो। क्वचित् (ढ) नहीं होता। उदा.—विद्धकइणिरूविअं, वृद्धकविनिरूपितम् ॥ ३५ ॥

पञ्चदशदत्तपञ्चाशति णः ॥ ३६ ॥

(पञ्चदश, दत्त, पञ्चाशत्) इन शब्दोंमें स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका ण होता है। उदा.—पञ्चदश पण्णरह। दत्तम् दिण्णं। पञ्चाशत् पण्णासा ॥ ३६ ॥

ज्ञम्नोः ॥ ३७ ॥

ज्ञ और म्न इनमें (संयुक्त व्यंजनका) ण होता है। उदा.—ज्ञानम् णाणं। संज्ञा संणा। विज्ञानम् विण्णाणं। निम्नस् णिण्णं। प्रद्युम्नः पज्जुण्णो ॥ ३७ ॥

स्तवे थो वा ॥ ३८ ॥

स्तव शब्दमें संयुक्त व्यंजनका थ विकल्पसे होता है। उदा.—थवो तवो ॥ ३८ ॥

रो हश्चोत्साहे ॥ ३९ ॥

(इस सूत्रमें १.४.३८ से) थः और वा ये शब्द (अध्याहृत) हैं। उत्साह शब्दमें संयुक्त व्यंजनका थ विकल्पसे होता है और उसके सानिध्यसे ह का रेफ होता है। उदा.—उत्थारो उच्छाहो ॥ ३९ ॥

स्तः ॥ ४० ॥

स्त का थकार हो जाता है। उदा.—हस्तः हत्थो। स्तुतिः थुई। स्तोकम् थोअं। प्रस्तरः पत्थरो। स्वस्ति सत्थि ॥ ४० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पर्यस्ते टश्च ॥ ४१ ॥

पर्यस्तमें स्त का ट होता है। (सूत्रमेंसे) चकारके कारण, थ भी हो जाता है। उदा.–पल्लट्टो पल्लत्थो ॥ ४१ ॥

वात्मभस्मनि पः ॥ ४२ ॥

आत्मन् और भस्मन् इन शब्दोंमें स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका प विकल्पसे होता है। उदा.–अप्पा अप्पाणो। अत्ता अत्ताणो। भप्पो भस्सो ॥ ४२ ॥

ड्मक्मोः ॥ ४३ ॥

ड्म और क्म इनका प होता है। उदा.–कुड्मलम् कुप्पलं। रुक्मिणी रुप्पिणी। (क्म का) क्वचित् म भी हो जाता है। उदा.–रुक्मी रुम्मी रुप्पी ॥ ४३ ॥

ष्पस्पोः फः ॥ ४४ ॥

ष्प और स्प इनका फ होता है। उदा.–ष्प (का फ)–पुष्पम् पुप्फं। शष्पम् सप्फं। निष्पावः णिप्फावो। निष्पेषः णिप्फेसो। स्प (का फ)–स्पन्दनम् फंदणं। प्रतिस्पर्धी पडिप्फद्धी ॥ ४४ ॥

भीष्मे ॥ ४५ ॥

(इस सूत्रमें १.४.४४ से) फः पदकी अनुवृत्ति है। भीष्ममें स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका फ होता है। उदा.–भिप्फो ॥ ४५ ॥

श्लेष्मबृहस्पतौ तु फोः ॥ ४६ ॥

(श्लेष्म और बृहस्पति) इनमें फु का यानी द्वितीय संयुक्त व्यंजनका फ विकल्पसे होता है। उदा.–सेप्फो सेम्हो। बिहप्फई बहप्पई ॥ ४६ ॥

ग्मो मः ॥ ४७ ॥

ग्म का म विकल्पसे होता है। उदा.–युग्मम् जुम्मं जुग्गं। तिग्मम् तिग्गं तिम्मं ॥ ४७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

न्मः ॥ ४८ ॥

न्म का म होता है। (यह सूत्र १.४.४७ से) पृथक् कहा जानेसे, (यहाँका म) नित्य होता है। उदा.–जन्म जम्मो। मन्मथः वम्महो। मन्मनः मम्मणो ॥ ४८ ॥

ताम्राम्रयोर्म्बः ॥ ४९ ॥

(ताम्र और आम्र) इनमें संयुक्त व्यंजनका मकारसे आक्रांत ऐसा बकार (=म्ब) होता है। उदा.–ताम्रम् तम्बं। आम्रम् अम्बं। तम्बिरं, अम्बिरं ये शब्द देश्य हैं ॥ ४९ ॥

ऊर्ध्वे भो वा ॥ ५० ॥

ऊर्ध्व शब्दमें स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका भ विकल्पसे होता है। उदा.–उब्भं उद्धं ॥ ५० ॥

ह्वः ॥ ५१ ॥

(इस सूत्रमें १.४.५० से) भो वा पदोंकी अनुवृत्ति है। ह्व का भ विकल्पसे होता है। उदा.–जिह्वा जिब्भा जीहा ॥ ५१ ॥

भश्च विह्वले ॥ ५२ ॥

विह्वल शब्दमें संयुक्त व्यंजनमेंसे वकारका भ विकल्पसे होता है। उदा.-विब्भलो विहलो ॥ ५२ ॥

काश्मीरे म्भः ॥ ५३ ॥

काश्मीरमें संयुक्त व्यंजनको म्भ ऐसा आदेश होता है। उदा.—कम्भारं कम्हारं ॥ ५३ ॥

लो वार्द्रे ॥ ५४ ॥

आर्द्र शब्दमें स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका ल विकल्पसे होता है। इस सूत्रमें पुनः 'वा' शब्द कहा जानेसे, अगले सूत्रमें विकल्प नहीं आता। उदा.–अल्लं उल्लं ओल्लं। अद्दं उद्दं ओद्दं ॥ ५४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

र्यः सौकुमार्यपर्यस्तपर्याणे ॥ ५५ ॥

(सौकुमार्य, पर्यस्त, पर्याण) इन शब्दोंमें र्य का ल्ल होता है। उदा.-सौकुमार्यम् सोअमल्लं। पर्यस्तम् पल्लट्टं। पर्याणम् पल्लाणं। पल्लंको यह वर्णान्तर मात्र पल्यंक शब्दका है॥ ९९ ॥

अररीअरिज्जमाश्चर्ये ॥ ५६ ॥

(इस सूत्रमें १.४.९९ से) र्यः पदकी अनुवृत्ति है। आश्चर्य शब्दमें र्य को अर, रीअ, रिज्ज ऐसे तीन आदेश होते हैं। उदा.-अच्छअरं अच्छरीअं अच्छरिज्जं ॥ ५६ ॥

डेरो ब्रह्मचर्यसौन्दर्ये च ॥ ५७ ॥

ब्रह्मचर्य और सौन्दर्य शब्दोंमें, तथा (सूत्रमेंसे) चकारके कारण आश्चर्य शब्दमें,र्य को डित् एर ऐसा आदेश होता है। उदा.-बम्हचेरं। सुंदेरं। अच्छेरं। यहाँ (प्रत्ययमेंसे) डित्वके कारण टि का लोप हुआ है। (ये शब्द) चौर्यसम (देखिए १.४.१००) होनेसे, (स्वरभक्ति होकर अगले रूप भी सिद्ध होते हैं।) उदा.-बम्हचरिअं। सुंदरिअं। अच्छरिअं ॥ ५७ ॥

वा पर्यन्ते ॥ ५८ ॥

पर्यन्त शब्दमें र्य को डित् एर (डेर) (ऐसा आदेश) विकल्पसे होता है। उदा.-पेरन्तो पज्जन्तो ॥ ९८ ॥

धैर्ये रः ॥ ५९ ॥

(इस सूत्र १.४.९८ से) वा पदकी अनुवृत्ति है। धैर्य शब्दमें य का र विकल्पसे होता है। उदा.-धीरं धिज्जं ॥ ५९ ॥

तूर्यदशार्हशौण्डीर्ये ॥ ६० ॥

(तूर्य, दशार्ह, शौण्डीर्य) इन शब्दोंमें स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका र होता है। यह नियम (१.४.९९ से) पृथक् कहा जानेसे, (यहाँका र) नित्य होता है। उदा.-तूरं। दसारो। सोण्डीरं ॥ ६० ॥

बाष्पे होऽश्रुणि॥ ६१ ॥

अश्रुवाचक बाष्प शब्दमें स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका ह होता है। उदा.-बाहो (यानी) नेत्रजल (अश्रु)। अश्रुवाचक (बाष्प शब्दमें), ऐसा क्यों

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कहा है? (कारण बाष्प शब्द अश्रुवाचक न होनेपर, ह नहीं होता।) उदा.–बप्फो (यानी) ऊष्मा ॥ ६१ ॥

कार्षापणे ॥ ६२ ॥

कार्षापण शब्दमें संयुक्त व्यंजनका ह होता है। उदा.—काहावणो। कहावणो इस रूपमें, 'संयोगे' (१.२.४०) इस सूत्रानुसार पहले ऱ्हस्व हो गया और पीछे आदेश आया; अथवा–कहावणो शब्द कर्षापण शब्दसे साधा गया है ॥ ६२ ॥

न वा तीर्थदुःखदक्षिणदीर्घे ॥ ६३ ॥

(तीर्थ, दुःख, दक्षिण, दीर्घ) इन शब्दोंमें संयुक्त व्यंजनका ह विकल्पसे नहीं होता। उदा.–तूहं तित्थं। दुहं दुक्खं। दुहिओ दुक्खिओ। दाहिणो दक्खिणो। दीहो दीहरो दिग्घो ॥ ६३ ॥

कूष्माण्ड्यां ण्डश्च तु लः ॥ ६४ ॥

कूष्माण्डी शब्दमें पहले संयुक्त व्यंजनका हकार होता है। (और) ण्ड-का ल विकल्पसे होता है। उदा.–कोहली कोहण्डी। कोहली इस रूपमें, 'संयोगे' (१.२.४०) सूत्रानुसार प्रथम ऱ्हस्व हो गया और बादमें ल हुआ ॥ ६४ ॥

त्वथ्वद्वध्वां क्वचिच्चछजझाः ॥ ६५ ॥

त्व, थ्व, द्व और ध्व इनके यथाक्रम च, छ, ज, झ ऐसे क्वचित् (वाङ्मयीन) प्रयोगानुसार विकार होते हैं। उदा.–त्व का च–भुक्त्वा भोच्चा। ज्ञात्वा णच्चा। श्रुत्वा सोच्चा। थ्व का छ–पृथ्वी पिच्छी। द्व का ज–विद्वान् विज्जं। ध्व का झ–ध्वनिः झुणी। बुद्ध्वा बुज्झा। सअलपिच्छीविज्जं, सकल-पृथ्वीविद्वान् ॥ ६५ ॥

ह्लो ल्हः ॥ ६६ ॥

ह्लकारका लकारसे आक्रांत ऐसा हकार (=ल्ह) होता है। उदा.–कह्लारम् कल्हारं। प्रह्लादः पल्हादो ॥ ६६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्मष्मस्मह्मामस्मररश्मौ म्हः ॥ ६७ ॥

स्मर और रश्मि शब्दोंको छोडकर, (अन्य शब्दोंमें) श्म, ष्म, स्म और ह्म इनको म्ह ऐसा आदेश होता है। उदा.-काश्मीरः कम्हारो। ग्रीष्मः गिम्हो। ऊष्मा उम्हा। विस्मयः विम्हओ। अस्मादृशः अम्हारिसो। ब्रह्मा बम्हा। ब्रह्मणः बम्हाणो। ब्रह्मचर्यम बम्हचेरं। स्मर और रश्मि शब्दोंको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण उनमें स्म और श्म इनका म्ह नहीं होता।) उदा.-स्मरः सरो। रश्मिः रस्सी ॥ ६७ ॥

पक्ष्मणि ॥ ६८ ॥

(इस सूत्रमें १.४.६७ से) म्हः पदकी अनुवृत्ति है। पक्ष्मन् शब्दमें क्ष्म को यानी संयुक्त व्यंजनको म्ह ऐसा आदेश होता है। उदा.-पक्ष्माणि पम्हाइं। पम्हललोअणो पक्ष्मललोचनः ॥ ६८ ॥

श्नष्णस्नह्नह्णक्ष्णां ण्हः ॥ ६९ ॥

(श्न, ष्ण, स्न, ह्न, ह्ण और क्ष्ण) इनको ण्ह ऐसा आदेश होता है। उदा.-श्न (का ण्ह)-प्रश्नः पण्हो। शिश्नः सिण्हो। ष्ण (का ण्ह)-विष्णुः विण्हू। जिष्णुः जिण्हू। कृष्णः किण्हो। उष्णीषम् उण्हीसं। स्न (का ण्ह)-स्नातः ण्हाओ। प्रस्नवः पण्हओ। ज्योत्स्ना जोण्हा। ह्न (का ण्ह)—जह्नुः जण्हू। ह्ण (का ण्ह)—पूर्वाह्णः पुव्वण्हो। अपराह्णः अवरण्हो। क्ष्ण (का ण्ह)—श्लक्ष्णम् सण्हं। तीक्ष्णम् तिण्हं ॥ ६९ ॥

सूक्ष्मे ॥ ७० ॥

सूक्ष्म शब्दमें संयुक्त व्यंजनका ण्ह होता है। उदा.-सुण्हं। सण्हं ॥ ७० ॥

आश्लिष्टे लधौ॥ ७१ ॥

आश्लिष्ट शब्दमें संयुक्त व्यंजनोंके अनुक्रमसे ल और ध होते हैं। उदा.-आलिद्धो ॥ ७१ ॥

ठढौ स्तब्धे ॥ ७२ ॥

स्तब्ध शब्दमें संयुक्त व्यजनोंके अनुक्रमसे ठ और ढ होते हैं। उदा.—ठड्ढो ॥ ७२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तो ढो स्त्वारब्धे तु ॥ ७३ ॥

आरब्ध शब्दमें स्तु का यानी संयुक्त व्यंजनका तकार विकल्पसे होता है और उसके सांनिध्यसे र का ढ हो जाता है। उदा.—आढत्तो आरद्धो ॥ ७३ ॥

सो बृहस्पतिवनस्पत्योः ॥ ७४ ॥

(बृहस्पति और वनस्पति) इनमें संयुक्त व्यंजनका सकार विकल्पसे होता हैं। उदा.—बहस्सई बहप्फई। बिहस्सई बिहप्फई। वणस्सई वणप्फई ॥ ७४॥

शोर्लुक्खोः स्तम्बसमस्तनिःस्पृहपरस्परश्मशानश्मश्रौ ॥ ७५ ॥

स्तम्ब, इत्यादि शब्दोंमें संयुक्त व्यंजनमें खु यानी आद्य स्थानमें रहनेवाले जो शु यानी श्, ष् और स्, उनका लोप होता है। उदा.—तम्बो (स्तम्ब)। समत्तो (समस्त)। निप्पिहो (निस्पृह)। परोप्परं (परस्पर)। मसाणं (श्मशान)। मंसू (श्मश्रू)॥ ७५ ॥

श्चस्य हरिश्चन्द्रे ॥ ७६ ॥

हरिश्चन्द्र शब्दमें श्च का लोप होता है। उदा.-हरिअंदो ॥ ७६ ॥

कगटडतदपᳲकᳲपशोरुपर्यद्रे ॥ ७७ ॥

अद्रे यानी द्र इस संयुक्त व्यंजनको छोडकर, संयुक्त व्यंजनमें पहले स्थानमें रहनेवाले (उपरिस्थित) क्, ग्, ट्, ड्, त्, द्, प्, जिव्हामूलीय, उपध्मानीय, और शु (=श्, ष्, स्), इनका लोप होता है। उदा.—क् (का लोप)—मुक्तम् मुत्तं। सिक्थम् सित्थं। ग् (का लोप)—दुग्धम् दुद्धं। मुग्धम् मुद्धा। ट् (का लोप)-षट्पदः छप्पओ। कट्फलम् कप्फलं। ड् (का लोप)—खड्गः खग्गो। षड्जः सज्जो। त् (का लोप)—उत्पलम् उप्पलं। उत्पातः उप्पाओ। द् (का लोप)—मद्गुः मग्गू। मुद्गरः मोग्गरो। उद्विग्नः उव्विग्गो। प् (का लोप)—सुप्तः सुत्तो। गुप्तः गुत्तो। ᳲ क् (का लोप)—दुःखम् दुक्खं। ᳲ प् (का लोप)—अन्तःपातः अन्तप्पाओ। श् (का लोप)—निश्चलः निच्चलो। श्लक्ष्णं लण्हं। श्च्योतति चुअइ। ष् (का लोप)—गोष्ठी गोट्ठी। षष्ठः छट्ठो। स् (का लोप)—स्खलितः खलिओ। स्नेहः णेहो। द्र इस संयुक्त व्यंजनको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण द्रमें द का लोप नहीं होता।) उदा.—समुद्रो। चन्द्रो। भद्रं। —'धात्रीद्रे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रस्तु' (१.४.८०) सूत्रानुसार, विकल्पसे रेफका लोप प्राप्त होनेपर, उस समय होनेवाला दकारका लोप न हो, इसलिए इस (१.४.७७) सूत्रमें 'अद्रे' ऐसा निषेध कहा गया है ॥ ७७ ॥

लवरामधश्च ॥ ७८ ॥

संयुक्त व्यंजनमें (प्रथम स्थान छोडकर) अनन्तर स्थानमें रहनेवाले (अधो वर्तमानानाम्), और (सूत्रमेंसे) चकारके कारण प्रथम स्थानमें होनेवाले, ल्, व् और र् इनका लोप होता है। उदा.—अनंतर रहनेपर—ल् (का लोप)—श्लक्ष्णम् सण्हं। विक्लवः विक्कओ। व् (का लोप)—पक्वः पक्को। विध्वस्तः विद्धत्थो। र् (का लोप)—चक्रम् चक्कं। ग्रहः गहो। रात्रिः रत्ती। प्रथम स्थानमें होनेपर—ल् (का लोप)—उल्का उक्का। वल्कलम् वक्कलं। व् (का लोप)—शब्दः सद्दो। अब्दः अद्दो। लुब्धकः लुद्धओ। र् (का लोप)-अर्कः अक्को। तर्कः तक्को ॥ ७८ ॥

मनयाम् ॥ ७९ ॥

संयुक्त व्यंजनमें (प्रथम स्थानको छोडकर) अनन्तर स्थानमें रहनेवाले म्, न् और य् इनका लोप होता है। उदा.—म् (का लोप)—युग्मम् जुग्गं। रश्मिः रस्सी। स्मरः सरो। न् (का लोप)—नग्नः नग्गो। लग्नः लग्गो। य् (का लोप)—श्यामा सामा। कुड्यं कुड्डं। यहाँ द्वितीय, कल्मष, माल्य, इत्यादि शब्दोंमें, इन तीन सूत्रोंमेंसे (१.४.७७-७९) नियम यदि लागू हों, तो जैसा वाङ्मयमें दिखाई देगा वैसा लोप हो जाता है। उदा.-द्वितीयः बिइओ। द्विगुणः बिउणो। द्वादश बारह। द्वाविंशतिः बावीसा। द्वात्रिंशत् बत्तीसा। कल्मषम् कम्मसं। शुल्बम् सुब्बं। क्वचित् अनन्तर रहनेवाले (वर्णों) का लोप हो जाता है। उदा.—द्विपः दिवो। द्वीपः दीवो। द्विजातिः दुआई। काव्यम् कव्वं। दिव्यम् दिव्वं। माल्यम् मल्लं। कुल्या कुल्ला। क्वचित् पर्यायसे (लोप हो जाता है।) उदा.—उद्विग्नः उद्दिग्गो उव्विण्णो। किंतु रेफका सर्वत्र (लोप हो जाता है।) उदा.-सव्वं। वक्कं। चक्कं। 'सर्वत्र

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ल्वरामचन्द्रे' (हेम. २.७९), ऐसा कोई कहते हैं। किंतु वह (कहना) अयोग्य है। (उसका कारण)–चंदो, चन्द्रो ऐसे उदाहरण उन्होंने स्वयंही दिए हैं; और उसी तरहके प्रयोग (वाङ्मयमेंभी) दिखाई देते हैं। इसलिए अगले सूत्रमें (१.४.८०) कहा गया विकल्पका स्वीकार करना चाहिए ॥ ७९ ॥

धात्रीद्रे रस्तु ॥ ८० ॥

धात्री शब्दमें और द्र शब्दमें रेफ का लोप विकल्पसे होता है। उदा.–धात्री धत्ती धारी। र् का लोप होनेसे पहले (होनेवाले धत्ती) इस ऱ्हस्व (रूप) से धाई शब्द (सिद्ध हुआ है।) द्र (में विकल्पसे)–चन्दो चन्द्रो। मन्दो मन्द्रो। रुद्दो रुद्रो। भद्दं भद्रं। समुद्दो समुद्रो। 'ह्रदे दहयोः' (१.४.११५) सूत्रानुसार, ह्रद शब्दमें द् और ह् इनकी स्थिति-परिवृत्ति होकर, द्रह रूप सिद्ध होता है; और वहीं दहो (ऐसा भी रूप हो जाता है।) कुछ लोगोंके मतानुसार, द्र में र् का लोप नहीं होता। द्रह शब्द संस्कृतमेंभी है, ऐसा कोई कहते हैं। तरुण पुरुष, इत्यादि अर्थमें होनेवाले वोद्रह, इत्यादि शब्द नित्य रेफसे संयुक्त हैं और वे देशीही होते हैं। उदा.-सिक्खन्तु वोद्रहीओ। वोद्रहद्रहम्मि पडिआ। शिक्षन्तु तरुण्यः। (युवतियोंको सीखने दो।) तरुणह्रदे पतिता (तारुण्यरूप तालाबमें गिर गई) ॥ ८० ॥

ह्रस्य मध्याह्ने ॥ ८१ ॥

मध्याह्न शब्दमें ह का लोप विकल्पसे होता है। उदा.-मज्झण्णो मज्झण्हो ॥ ८१ ॥

ज्ञो ञोऽविज्ञाने ॥ ८२ ॥

ज्ञकारसे संबंधित रहनेवाले अकारका लोप विकल्पसे होता है; किन्तु अविज्ञाने यानी विज्ञान शब्दमें (ऐसा लोप) नहीं होता। उदा.–ज्ञानम् जाणं णाणं। सर्वज्ञः सव्वञ्जो सव्वण्णो। आत्मज्ञः अप्पज्जो अप्पण्णो।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दैवज्ञः दइवज्जो दइवण्णो। इंगितज्ञः इंगिअज्जो इंगिअण्णो। अभिज्ञः अहिज्जो अहिण्णो। मनोज्ञः मणोज्जो मणोण्णो। प्रज्ञा पञ्जा पण्णा। आज्ञा अज्जा अण्णा। संज्ञा सज्जा सण्णा। विज्ञानमें नहीं होता, ऐसा क्यों कहा है? (कारण विज्ञान शब्दमें ञकारका लोप विकल्पसे नहीं होता।) उदा.— विणाणं॥ ८२॥

द्वोर्द्वारे॥ ८३॥

द्वार शब्दमें दकार और वकार इनका पर्यायसे लोप विकल्पसे होता है। उदा.-वारं दारं। विकल्पपक्षमें—दुवारं॥ ८३॥

रात्रौ॥ ८४॥

रात्रि शब्दमें संयुक्त व्यंजनका लोप विकल्पसे होता है। उदा.- राई रत्ती॥ ८४॥

रितो द्वित्वल्॥ ८५॥

रेफ अनुबंध होनेवाला जो व्यंजन आदेशके रूपमें आता है, उसका लित् (=नित्य) द्वित्व होता है। उदा.-अंकोल्लो अङ्कोलः। रुण्णं रुदितम्। करणिज्जं करणीयम्॥ ८५॥

शेषादेशस्याहोऽचोऽखोः॥ ८६॥

(इस सूत्रमें) द्वित्व पद (अध्याहृत) है। संयुक्त व्यंजनमेंसे किसीभी एक व्यंजनका लोप होनेपर जो (व्यंजन) शेष रहता है, वह शेष (व्यंजन) उसका, तथा हकार और रेफ इनसे रहित ऐसा जो संयुक्त व्यंजनका आदेश उसका, वह स्वरके आगे होकर, अखु यानी अनादि होनेपर, लित् (=नित्य) द्वित्व होता है। उदा.—शेष (का द्वित्व)—समस्तः समत्तो। निस्पृहः णिप्पिहो। भुक्तम् भुत्तं। दुग्धम् दुद्धं। षट्पदः छप्पओ। खड्गः खग्गो। उत्पलं उप्पलं। मुद्गरः मुग्गरो। प्राप्तः पत्तो। दुर्गम् दुग्गं। दुःखम् दुक्खं। अन्तःपातः अंतप्पाओ। निश्चलः णिच्चलो। दुष्करम् दुक्करं। विप्लवः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विण्णओ। पक्वम् पक्कं। धूर्तः धुत्तो। रात्रिः रत्ती। युक्तम् जुत्तं। युग्मम् जुग्गं। रश्मिः रस्सी। नग्नः नग्गो। काव्यम् कव्वं। आदेश (का द्वित्व)– रक्तः रग्गो। सक्तः सग्गो। अमात्यः अमच्चो। आत्मा अप्पा। आर्या अज्जा। उपाध्यायः उवज्झाओ। सह्यः सज्झो। साध्वसम् सज्झसं। बृहस्पतिः बहप्फई। हकार और रेफ इनसे रहित, ऐसा क्यों कहा है? (कारण वैसा होनेपर, द्वित्व नहीं होता।) उदा.–विह्वलः विहलो। दुःखम् दुहं। बाष्पः बाहो। धात्री धारी। तूर्यम् तूरं। धैर्यम् धीरं। स्वरके आगे होनेपर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण स्वरके आगे न होनेपर, द्वित्व नहीं होता।) उदा.– कांस्यम् कंसं। वयस्यः वअंसो। संध्या संझा। भिन्दिपालः भिण्डिवालो। अनादि होनेपर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अनादि न होनेपर, द्वित्व नहीं होता।) उदा.–स्खलितः खलिओ। स्थूलः थूरो। स्तम्भः खम्भो ॥ ८६ ॥

दीर्घान्न ॥ ८७ ॥

(इस सूत्रमें १.४.८६ से) शेषादेशस्य पद (अध्याहृत) है। व्याकरणके नियमोंसे आये हुए (लाक्षणिक) अथवा मूलतः (अलाक्षणिक) दीर्घ होनेवाले (स्वरों) के आगे शेष व्यंजन और आदेशके रूपमें आये हुए व्यंजन, इनका द्वित्व नहीं होता। उदा.–लाक्षणिकके आगे–निःश्वासः णीसासो। स्पर्शः फासो। दंष्ट्रा दाढा। अस्पर्शः अप्फासो। अलाक्षणिकके आगे–पार्श्वम् पासं। शीर्षम् सीसं। ईश्वरः ईसरो। द्वेष्यः वेसो। लास्यम् लासं। आस्यम् आसं। प्रेष्यः पेसो। निर्माल्यम् ओमालं। आज्ञा आणा। आज्ञप्तिः आणत्ती। आज्ञापनम् आणावणं। अमच्चो, इत्यादि शब्दोंमें, 'संयोगे' (१.२.४०) सूत्रानुसार पहलेही ह्रस्व होगया, बादमें लोप होनेपर द्वित्व हो गया। अलाक्षणिकके आगे प्रायः होनेवाला द्वित्वका अभाव (वाङ्मयीन) प्रयोगानुसार अनुसरनेका है ॥ ८७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कर्णिकारे णो वा ॥ ८८ ॥

कर्णिकार शब्दमें शेष ण का द्वित्व विकल्पसे नहीं होता। उदा.–कण्णिआरो कणिआरो। (सूत्रमें किया हुआ) ण का ग्रहण अगले (१.४.८९) सूत्रके लिए है ॥ ८८ ॥

धृष्टद्युम्ने ॥ ८९ ॥

धृष्टद्युम्न शब्दमें आदेशके रूपमें आनेवाले ण का द्वित्व नहीं होता। (यह सूत्र १.४.८८ से) पृथक् कहा जानेसे, यहाँ विकल्प नहीं आता। उदा.–धट्ठज्जुणो ॥ ८९ ॥

वा से ॥ ९० ॥

से यानी समासमें, शेष व्यंजन और आदेशके रूपमें आनेवाला व्यंजन, इनका द्वित्व विकल्पसे होता है। उदा.–णइग्गामो णइगामो। कुसुमप्पअरो कुसुमपअरो। देवत्थुई देवथुई। हरक्खंदा हरखंदा हरस्कन्दौ। आणालक्खंभो आणालखंभो ॥ ९० ॥

प्रमुक्तगे ॥ ९१ ॥

(इस सूत्रमें १.४.९० से) से और वा ये पद (अध्याहृत) होते हैं। प्रमुक्त, इत्यादि शब्दोंमें, समासोंमें, वाङ्मयमें दिखाई देगा वैसा व्यंजनका द्वित्व विकल्पसे होता है। उदा.–प्रमुक्तः पम्मुक्को पमुक्को। सपिपासः सप्पिवासो सपिवासो। बद्धफलः बद्धप्फलो बद्धफलो। मलयशिखरखण्डः मलयसिहरक्खंडो मलयसिहरखंडो। त्रैलोक्यम् तेल्लोक्कं तेलोक्कं। सपरितापः सप्परितावो सपरितावो। परवशः परव्वसो परवसो। प्रतिकूलम् पडिक्कूलं पडिकूलं। अदर्शनम् अदंसणं अदंसणं। इत्यादि। आकृतिगणमें अंतर्भाव होनेसे, प्रफुल्लम् पप्फुल्लं पफुल्लं, सपरिहासम् सप्परिहासं सपरिहासं, इत्यादि रूप सिद्ध हो जाते हैं ॥ ९१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दैवगेषु ॥ ९२ ॥

दैव इत्यादि शब्दोंमें, (वाङ्मयमें) दिखाई देगा वैसा, व्यंजनका द्वित्व विकल्पसे होता है। उदा.-दैवम् दइव्वं दइवं। व्याकुलः वाउल्लो वाउलो। नखः णक्खो णहो। नीडम् णेड्डं नीडं। निहितः णिहित्तो णिहिओ। मृदुत्वम् माउक्कं माउअं। कुतूहलम् कोउहल्लं कोऊहलं। स्थूलः थुल्लो थोरो। एकः एक्को एओ। व्याहृतम् वाहित्तं वाहिअं। तूष्णीकः तुण्हिक्को तुण्हिओ। मूकः मुक्को मूओ। सेवा सेव्वा सेवा। अस्मदीयम् अम्हक्केरं अम्हकेरं। हूतम् हुत्तं हूअं। स्त्यानम् ठिण्णं ठीणं। स्थाणुः खण्णू खाणू। स इव सो च्चिअ सो चिअ। स एव सो च्चेअ। इत्यादि ॥ ९२ ॥

तैलादौ ॥ ९३ ॥

तैल, इत्यादि शब्दोंमें, (वाङ्मयमें) दिखाई देगा वैसा, अन्त्य और अनन्त्य व्यंजनका द्वित्व होता है। यह सूत्र (१.४.९२ से) पृथक् कहा जानेसे, यहाँका द्वित्व नित्य हो जाता है। उदा.—तैलम् तेल्लं। व्रीडा विड्डा। प्रेम पेम्मं। स्रोतः सोत्तं। प्रभूतम् पहुत्तं। मण्डूकः मण्डुक्को। उलूखलम् ओक्खलं। यौवनम् जोव्वणं। ऋजुः उज्जू। विचकिलम् वेइल्लं। इत्यादि ॥ ९३ ॥

पूर्वस्युपरि वर्गस्य युजः ॥ ९४ ॥

वर्ग-संबंधी (यानी वर्गीय) संयुक्त रहनेवाले व्यंजनका-वह शेष व्यंजन हो या आदेश व्यंजन हो—द्वित्व होते समय, (वर्गमेंसे) पूर्वका अक्षर पहले (उपरि) आता है। इसका अर्थ ऐसा—(वर्गीय व्यंजनोंका द्वित्व होते समय) द्वितीय व्यंजनके पूर्व पहला व्यंजन आ जाता है, और चतुर्थ व्यंजनके पूर्व तीसरा व्यंजन आता है। उदा.-व्याख्यानम् वक्खाणं। वृक्षः रुक्खो। व्याघ्रः वग्घो। अर्घति अग्घइ। मूर्च्छा मुच्छा। अक्षीणि अच्छीणि। निर्झरः णिज्झरो। मध्यम् मज्झं। निष्ठुरः णिट्ठुरो। मुष्टिः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मुट्ठी। तीर्थम् तित्थं। हस्ती हत्थी। हस्तः हत्थो। निर्धनः णिद्धणो आश्लिष्टः आलिद्धो। गुल्फम् गुप्फं। पुष्पम् पुप्फं। निर्भरः णिब्भरो। विभ्रमः विब्भमो। पिप्पलः पिप्फलो। प्रमुक्त, इत्यादि शब्दोंमें (१.४.९१) द्वित्व होनेपर, मलयसिहरक्खंडो (इत्यादि रूप होते हैं)। दैव, इत्यादि शब्दोंमें (१.४.९२) (द्वित्व होनेपर), णक्खो (इत्यादि रूप हो जाते हैं)। तैल, इत्यादि शब्दोंमें (१.४.९३) (द्वित्व होनेपर), ओक्खलं (इत्यादि रूप होते हैं)। समासमें (१.४.९०) (द्वित्व होनेपर), कइद्धओ कपिध्वजः (इत्यादि रूप होते हैं)। द्वित्व होनेपरही (इस सूत्रका नियम लागू होता है। द्वित्व न होनेपर नहीं)। उदा.—ख्यातः खाओ ॥ ९४ ॥

प्राक्श्लाघाप्लक्षशार्ङ्गे ङ्लोऽत् ॥ ९५ ॥

श्लाघा, इत्यादि शब्दोंमें ङ्लः यानी ङकार और लकार इनके पूर्व अत् (=अकार) आता है। उदा.—श्लाघा सलाहा। प्लक्षः पलक्खो। शार्ङ्गम् सारंगं॥ ९५ ॥

क्ष्मारत्नेऽन्त्यहलः ॥ ९६ ॥

(इस सूत्रमें १.४.९५ से) प्राक् और अत् पदोंकी अनुवृत्ति है। क्ष्मा शब्दमें और रत्न शब्दमें, संयुक्त व्यंजनमेंसे अन्त्य व्यंजनके पूर्व अ आता है। उदा.—क्ष्मा छमा खमा। रत्नम् रअणं॥ ९६ ॥

स्नेहाग्न्योर्वा ॥ ९७ ॥

(इस सूत्रमें १.४.९६ से) अन्त्यहलः पदकी अनुवृत्ति है। स्नेह और अग्नि शब्दोंमें, संयुक्त व्यंजनमेंसे अन्त्य व्यंजनके पूर्व अ विकल्पसे आता है। उदा.—सणेहो णेहो। अगणी अग्गी॥ ९७ ॥

र्शर्षतप्तवज्रेष्वित् ॥ ९८ ॥

र्श और र्ष इन (संयुक्त व्यंजनों) में, तथा तप्त और वज्र शब्दोंमें, संयुक्त व्यंजनमेंसे अन्त्य व्यंजनके पूर्व इ विकल्पसे आता है। उदा.-र्श-आदर्शः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आअरिसो आअंसो। सुदर्शनः सुअरिसणो सुदंसणो। दर्शनम् दरिसणं दंसणं। र्ष-वर्षम् वरिसं वासं। वर्षा वरिसा वासा। वर्षशतम् वरिससअं वाससअं। तप्तः तविओ तत्तो। वज्रम् वइरं वज्जं॥ ९८॥

हर्षामर्षश्रीह्रीक्रियापरामर्शकृत्स्नदिष्ट्यार्हे॥ ९९॥

हर्ष, इत्यादि शब्दोंमें, और र्ह इस (संयुक्त व्यंजन) में, संयुक्त व्यंजनमेंसे अन्त्य व्यंजनके पूर्व इ आता है। यह सूत्र (१.४.९८ से) पृथक् कहा जानेसे, यहाँका इ नित्य आता है। उदा.—हर्षः हरिसो। अमर्षः अमरिसो। श्रीः सिरी। ह्री हिरी। अह्रीकः अहिरिओ। क्रिया किरिआ। परामर्शः परामरिसो। कृत्स्नम् कसिणं। दिष्ट्या दिट्ठिआ। र्ह—अर्हः अरिहो। गर्हा गरिहा। बर्हः बरिहो॥ ९९॥

स्याद्भव्यचैत्यचौर्यसमे यात्॥ १००॥

स्याद्, भव्य, चैत्य इन शब्दोंमें, तथा चौर्यसम शब्दोंमें, यकारके पूर्व इ आता है। उदा.—स्यात् सिआ। स्याद्वादः सिआवाओ। भव्यः भविओ। चैत्यम् चेइअं। चौर्यसम शब्दोंमें-चौर्यम् चोरिअं। गाम्भीर्यम् गंभीरिअं। धैर्यम् धीरिअं। भार्या भारिआ। सौंदर्यम् सुंदरिअं। ब्रह्मचर्यम् बम्हचरिअं। सूर्यः सूरिओ। शौर्यम् सोरिअं। आचार्यः आइरिओ। वर्यः वरिओ। वीर्यम् वीरिअं। चर्या चरिआ। स्थैर्यम् थेरिअं। इत्यादि। आकृतिगण होनेसे, पर्यंक इत्यादि शब्द यहाँ आते हैं। उदा.—पर्यङ्कः पलिअंको॥ १००॥

लादक्लीबेषु॥ १०१॥

संयुक्त व्यंजनमेंसे लकारके पूर्व इ आता है। पर अक्लीबेषु यानी क्लीब शब्दके प्रकारके जो शब्द हैं उनमें इ नहीं आता। उदा.—क्लिन्नम् किलिन्नं। क्लिष्टम् किलिट्ठं। क्लृप्तम् किलित्तं। प्लुष्टम् पिलुट्ठं। क्लान्तम् किलिन्तं। प्लोषः पिलोसो। श्लेष्मा सिलिम्हो। श्लेषः सिलेसो। शुक्लम् सुकिलं। क्लेदः किलेओ। क्लेशः किलेसो। प्लवः पिलेवो। अम्लम् अमिलं। ग्लायति गिलाअइ। म्लायति मिलाअइ। म्लानम् मिलाणं। क्लाम्यति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

किलम्मइ। क्लीब प्रकारके शब्दोंमें इ नहीं आता, ऐसा क्यों कहा है? (कारण उसी प्रकारके शब्दोंमें आगे दिए प्रकारसे वर्णान्तर हो जाता है)। उदा.–क्लीबः कीवो। विक्लवः विक्कओ। क्लमः कमो। प्लवः पवो। विप्लवः विप्पओ। शुक्लपक्षः सुक्कपक्खो। उत्प्लावयति उप्पावेइ ॥ १०१ ॥

नात्स्वप्ने ॥ १०२ ॥

स्वप्न शब्दमें संयुक्त व्यंजनमेंसे नकारके पूर्व इ आता है। उदा.– सिविणो सिमिणो ॥ १०२ ॥

स्निग्धे त्वदितौ ॥ १०३ ॥

(इस सूत्रमें १.४.१०२ से) नात् पद (अध्याहृत) है। स्निग्ध शब्दमें संयुक्त व्यंजनमेंसे नकारके पूर्व अ और इ विकल्पसे आते हैं।उदा.– सिणिद्धं सणिद्धं। विकल्पपक्षमें–णिद्धं ॥ १०३ ॥

कृष्णे वर्णे ॥ १०४ ॥

(इस सूत्रमें १.४.१०३ से) अत् और इत् पद (अध्याहृत) हैं। वर्णवाचक कृष्ण शब्दमें संयुक्त व्यंजनमेंसे अन्त्य व्यंजनके पूर्व अ और इ आते हैं। उदा.–कसणो कसिणो। वर्णवाचक (कृष्ण शब्दमें), ऐसा क्यों कहा है? (कारण कृष्ण शब्द वर्णवाचक न होनेपर,अ और इ नहीं आते।) उदा.–कृष्णः कण्हो (विष्णु यह अर्थ) ॥ १०४ ॥

अर्हत्युच्च ॥ १०५ ॥

अर्हत् शब्दमें (संयुक्त व्यंजनमेंसे) अन्त्य व्यंजनके पूर्व उ तथा अ और इ आते हैं। उदा.-अरुहो अरहो अरिहो। अरुहन्तो अरहन्तो अरिहन्तो ॥ १०५ ॥

तन्व्याभे ॥ १०६ ॥

(इस सूत्रमें १.४.१०५ से) उत् पदकी अनुवृत्ति है। उकारान्त और ईकार-प्रत्ययान्त शब्द ये तन्व्याभ शब्द होते हैं। वैसे शब्दोंमें

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संयुक्त व्यंजनमेंसे अन्त्य व्यंजनके पूर्व उ आता है। उदा.—तन्वी तणुवी। लघ्वी लहुवी। गुर्वी गुरुवी। पृथ्वी पुहुई। मृद्वी मउई। बह्वी बहुई। पट्वी पटुई। इत्यादि ॥ १०६ ॥

स्रुघ्ने रात् ॥ १०७ ॥

स्रुघ्न शब्दमें संयुक्त व्यंजनमेंसे र् के पूर्व उ आता है। उदा.—सुरुग्घं (नामका) नगर ॥ १०७ ॥

एकाचि श्वःस्वे ॥ १०८ ॥

एक स्वर होनेवाले श्वः और स्व इनमें, संयुक्त व्यंजनमेंसे अन्त्य व्यंजनके पूर्व उ आता है। उदा.-श्वः कृतम् सुओ कअं। स्वे जनाः सुवे जणा। एक स्वर होनेवाले, ऐसा क्यों कहा है? (कारण वैसा न होनेपर, उ नहीं आता।) उदा.—स्वजनः सअणो ॥ १०८ ॥

वा छद्मपद्ममूर्खद्वारे ॥ १०९ ॥

(छद्म, पद्म, मूर्ख, द्वार) इनमें स्तु यानी संयुक्त व्यंजनमेंसे अन्त्य व्यंजनके पूर्व उ विकल्पसे आता है। उदा.—छउमं छम्मं। पउमं पोम्मं। मुरुक्खो मुक्खो। दुवारं, विकल्पपक्षमें-दारं वारं देरं वेरं ॥ १०९ ॥

ईल् ज्यायाम् ॥ ११० ॥

ज्या शब्दमें अन्त्य व्यंजनके पूर्व नित्य ई (वर्ण) आता है। उदा.—जीआ ॥ ११० ॥

ह्रश्च महाराष्ट्रे होर्व्यत्ययः ॥ १११ ॥

(अब) स्तोः यह अधिकार समाप्त हुआ है। महाराष्ट्र शब्दमें होः यानी हकार और रेफ इनका व्यत्यय यानी स्थिति—परिवृत्ति होती है। यानी एकके स्थानपर दूसरा आता है, ऐसा अर्थ होता है। और ह यानी दीर्घका ह्रस्व हो जाता है। उदा.—मरहट्ठो ॥ १११ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लनोरालाने ॥ ११२ ॥

(इस सूत्रमें १.४.१११ से) व्यत्यय पदकी अनुवृत्ति है। आलान-में लकार और नकार इनका व्यत्यय होता है। उदा.–आणालो ॥ ११२ ॥

वाराणसीकरेण्वां रणोः ॥ ११३ ॥

(वाराणसी और करेणु) इन शब्दोंमें रेफ और णकार इनका व्यत्यय होता है। उदा.-वाणारसी। कणेरू। सूत्रमें करेण्वां (स्त्रीलिंगमेंसे करेणुमें), ऐसा क्यों कहा है? (कारण करेण्वां में स्त्रीलिंगका निर्देश है; इसलिए (यह शब्द) इतरत्र यानी अन्य लिंगमें होनेपर, व्यत्यय नहीं होता)। उदा.-एसो करेणू ॥ ११३ ॥

ललाटे डलोः ॥ ११४ ॥

ललाट शब्दमें ट का ड होनेपर, ड आर ल इनका व्यत्यय होता है। उदा.–णिडालं णडालं।– 'लो ललाटे च' (१.३.८१) सूत्रानुसार, (ललाटमें) आद्य ल का ण ही होता है ॥ ११४ ॥

ह्रदे दहयोः ॥ ११५ ॥

ह्रद शब्दमें द और ह इनका व्यत्यय होता है। उदा.–द्रहो दहो ॥ ११५ ॥

चलयोरचलपुरे ॥ ११६ ॥

अचलपुरमें च और ल इनका व्यत्यय होता है। उदा.–अलअउरं ॥ ११६ ॥

ह्ये ह्योर्वा ॥ ११७ ॥

ह्य इस शब्दमें हकार और यकार इनका व्यत्यय विकल्पसे होता है। उदा.–गुह्यम् गुय्हं गुज्झं। सह्यम् सय्हं सज्झं ॥ ११७ ॥

लघुके लहोः ॥ ११८ ॥

लघुक शब्दमें घ का ह होनेपर, ह और ल इनका व्यत्यय विकल्पसे होता है। उदा.-हलुओ लहुओ। घ का व्यत्यय यदि किया जाएगा, तो घ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पदादि होकर उसका ह नहीं होगा; इसलिए घ का ह होनेपर (ऐसा कहा है) ॥ ११८ ॥

रलोर्हरिताले ॥ ११९ ॥

हरिताल शब्दमें र और ल इनका व्यत्यय होता है। उदा.-हरिआलो हलिआरो ॥ ११९ ॥

दर्वीकरनिवहौ दव्वीरयणिहवौ ॥ १२० ॥

(दर्वीकर और निवह) इनके यथाक्रम दव्वीरअ और णिहव ऐसा व्यत्यय करके आये हुए रूप निपातके रूपमें आते हैं। उदा.-दव्वीरओ (यानी) सर्प। विकल्पपक्षमें—दव्वीअरो। णिहवो ॥ १२० ॥

गहिआद्याः ॥ १२१ ॥

जिनका स्पष्टीकरण दिया जा सकता है ऐसे गहिआ, इत्यादि शब्द निपातके रूपमें आते हैं। उदा.—(१) गहिआ (यानी) काम्यमाना। (उसकी) इच्छा की जानेके कारण लेनेके लिए योग्य (ग्राह्या)। यहाँ (पहले) ह्रस्व, और (यह शब्द) चौर्यसम (देखिए १.४.१००) होनेसे, (संयुक्त व्यंजनमेंसे अन्त्य व्यंजनके पूर्व) इ आता है। (२) किमिधरवसणं कौशेय अर्थमें। कृमिगृहवसनम्; कृमीसे किये हुए आवरणसे उसके तन्तु निर्माण होते हैं, इसलिए। (३) णन्दिणी (यानी) धेनु। नंदिनी के समान, नंदिनी। (४) पडिसाओ (यानी) घर्घर कण्ठ। प्रतिशब्दसे युक्त होनेसे या ध्वनिका प्रतिपादन होनेसे। (५) वइरोडो (यानी) जार। पतिं रोटयति वञ्चयति इति (पतिरोटः)। यहाँ प का व और ट का ड हुआ है। (६) अविणअवई अविनयपति। (७) अणडो अनृत यानी असत्य। प्रत्यादि—पाठमें होनेसे (१.२.३२), त का ड हुआ। (८) अजडो अजड, शीघ्रकारित्व होनेसे। (९) छिण्णो छिन्न, मदनके बाणोंसे छेदन होनेसे। (१०) छिण्णालो यानी व्यभिचारी। सदाचारच्छिन्नां लाति आदत्ते इति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(सदाचारसे भ्रष्ट हुई स्त्रीका स्वीकार करता है।) (११) छिच्छओ अक्षिक्षत: यानी अंधा। आँखोंको आनंद देनेके लिए असमर्थ होनेसे। अक्षिमें अकारका लोप हुआ। (१२) मदोली यानी कामपरंपरा, काम-परंपराका कारण होनेसे। आद्य आ का अ हो गया। (१३) संचारी दूती। प्रीतिका संचार कराती, इसलिए। (१४) सहउत्थिआ सहोत्थिता दूती। कार्यमें अनुकूल होनेसे। (१५) मराली (यानी) दूती। मृदु स्वभाव होनेसे या मधुर वाणी होनेसे। (१६) पेसणआरी (यानी) दूती। प्रेषण करती है, इसलिए। (१७) अत्तिहरी दूती। आर्तिहरी, संतर्पण करनेका स्वभाव होनेसे। (१८) पडिसोत्तो प्रतिकूल अर्थमें। उलटा प्रवाह जिसका है वह। (१९) पडिक्खरो प्रतिकूल अर्थमें। उलटा बहता है, इसलिए। (२०) जोओ (२१) दोसणिज्जन्तो (२२) दोसारअणो (२३) समुद्दण-वणीअं चन्द्र। द्योतते (प्रकाशता है) इति द्योतः। ज्योत्स्नायंत्र; यहाँ आ का इ, ज का द और नकारके पूर्व अ आकर (दोसणिज्जंतो रूप बन गया)। दोषारत्नम्। (समुद्र-) मंथनसे उत्पन्न होनेके कारण समुद्रनवनीतम्। (२४) चिरिचिरिआ (२५) चिलिचिडिआ धारा। चिरिचिरि, चिलि-चिलि ऐसा ध्वनि जिसका है वह। (२६) समुद्दहरं अंबुगृह यानी जल-गृह। जलधारोंके उपचारसे। (२७) तम्बकुसुमं कुरबक और कुरण्टक। ताम्रकुसुमम्; वैसे फूल होनेसे। (२८) मुहरोमराई भिउडी अथवा मूँछ। मुखरोमराजि; वैसा स्वरूप होनेसे। (२९) थेवो बिन्दु। कम होनेसे। (३०) धूमद्धअमहिसीओ कृत्तिका। धूमध्वजमहिष्य:, अग्निसे संयुक्त होनेसे। (३१) विसारो सैन्य, विसरण (प्रसरण) स्वभाव होनेसे। (३२) अवहोओ विरह। अपभोग:, भोग शक्य न होनेसे। (३३) पाओ। (३४) पअलाओ, साँप। प्राणियोंको घातक होनेसे, पाप। पादोंको छिपाता है, इसलिए पदलाप। (३५) अहिअलो क्रोध। सर्पकी तरह नाश करता है, इसलिए अहिवल। (३६) सिहिणं स्तन। चूचुक होनेसे शिखित्व (शिखा (चोटी) होना); अस्ति अर्थमें ण। (३७) थिर-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ण्णेसो। जो कभी स्थितिका धारण नहीं करता, स्थिर नहीं रहता, वह थिरण्णेसो (यानी) चपलहृदय। (३८) सूरंगो दीप। सूर (सूर्य) की तरह जिसका अंग है वह। (३९) जोइक्खो ज्योतिष्क। (४०) पासावओ गवाक्ष यानी खिडकी। प्राकृतमें पास यानी चक्षु; वह प्राप्त कर लेता है इसलिए पासावओ। (४१) पासो पश्यति (देखता है) इति पासो (यानी) नेत्र। (४२) कोप्पो अपराध। अपना कोप वही अपराध। (४३) उम्मुहो उन्मुख। (४४) उद्दणो उद्वदन यानी जिसका मुँह ऊपर है वह। यहाँ द् ओर व् इनका लोप हुआ है। (४५) पहट्ठो प्रधृष्ट। गर्वयुक्त यह अर्थ। (४६) लम्बा केश। लम्बन्ते (लटकते हैं) इति लम्बाः। (४७) वल्लीकी तरह 'वेल्ली', वल्लरीकी तरह। (४८) वेल्लरिआ। आद्य अ का ए और स्वार्थे क-प्रत्यय (आये हैं)। (४९) जण्णहरो यज्ञहरः (यानी) राक्षस। वैसा स्वभाव होनेसे। (५०) जणउत्तो ग्रामप्रधाननरः (गाँवका मुख्य पुरुष) जनपुत्रः। उस प्रकारका आचरण करता है, इसलिए। (५१) बम्हहरं (५२) आरनालं (५३) थेरोसणं कमल अर्थमें। ब्रह्मगृहम्। आरात् (यानी) दूर तथा समीप नाल होता है, इसलिए आरनालम्। यहाँ (आरात् में) दूसरे आ का अ हुआ है। स्थविरासनम्; स्थविर (यानी) ब्रह्मदेव। (आसनमें) आ का ओ हुआ है। (५४) कलिमं कन्दोट्टं, उत्पल अर्थमें। के (जलमें) रहता है इसलिए कलिमं। यहाँ डित् इम (डिम) प्रत्यय लग गया। कन्दात् (कन्दसे) उद्दीकते (उगम पाता है) इसलिए कंदोट्ट। 'स्तौ' (१.२.६५) नुसार ओ आगया। (५५) चंदोज्जं (५६) रअणिद्धअं कुमुद। चंद्रेण उद्द्योतते (चंद्रसे प्रकाशता है), इसलिए चंदोज्ज। रजनिध्वजम्। (५७) घरअन्दं मुकुर यानी आयना। गृहे चन्द्रवत् उद्द्योतते (घरमें चंद्रवत् प्रकाशता है), इसलिए। (५८) आआसतलं यानी हर्म्यपृष्ठ यानी आकाशतल। (५९) आणंदवडो, नववधूका रक्तकी तरह रक्त वस्त्र, पहले रजस्वलाका रक्तसे रांजित वस्त्र, (आनन्दपट), आनंदका विषय होनेसे। (६०) सूरद्धओ दिवस। सूर्य जिसका ध्वज है वह। (६१) पल्लविअं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लाक्षारक्त। पल्लववत् पल्लविता हुआ। (६२) अच्छिवडणं निमीलन। (अक्षिपतन) आँखोंके पक्ष्मोंका गिरना। (६३) णीसंको वृषः। निःशंक। (६४) और, एलविलो धनवान्। चकारसे वृष (यह भी अर्थ)। (६५) सुहरओ लडकीका घर और चिडिया। (सुखरत) जिसको अच्छा रत है वह। (६६) हट्ठमहट्ठो स्वस्थ। जो हृष्ट और महार्थ है वह। (६७) णिम्मीसुओ युवा जिसे मूँछ नहीं वह। आद्य अ का ई हो गया है। (६८) जहणारोहो ऊरु। जघनेन आरुह्यते इति। (६९) पल्लट्टजीहो। (७०) अउज्झहरो रहस्यभेदी। पर्यस्तजिह्वः। गुह्यहरः। यहाँ प्रारंभमें अ का आगम हुआ है। (७१) णिहुअं निधुवनं सुरत और निभृत। (७२) अब्बुद्धसिरी, मनोरथसे अधिक फलप्राप्ति। अबुद्धश्रीः; (यह शब्द) प्रमुक्तादिपाठमें (१.४.९१) होनेसे, यहाँ द्वित्व हुआ है। (७३) बहुजाणो (यानी) चोर और धूर्त। बहुज्ञानः। (७४) परेओ परेतः (यानी) पिशाच। (७५) उज्जल्लो (यानी) बहुत बल होनेवाला। उज्ज्वलः। यह शब्द दैवादिपाठमें (१.४.९२) होनेसे, द्वित्व हुआ है। (७६) जोई विद्युत् या ज्योति (७७) भिंगं (यानी) कृष्ण (काला)। भ्रमरकी तरह काला होनेसे। भिंग शब्द संस्कृतमें है, ऐसा कोई कहते हैं। (७८) णिअंधणं परिधान। निबध्यते इति निबन्धनम् (जिससे बांधा जाता है वह)। (७९) जहणूसुअं चल्लणकम्। जघनांशुक यानी कटिवस्त्र। यहाँ अनुस्वारके साथ आ का ऊ हो गया है। (८०) पाउरणं कवच। प्रावरण करनेसे। यहाँ आद्य अ का उ हुआ है। (८१) ओअल्लो (यानी) अपसार और कंप। अपचारसे ओअल्लो। यह शब्द तैलादिपाठमें (१.४.९३) होनेसे, द्वित्व हुआ है। (८२) चवेडी, करसंपुटोंका आघात। (८३) रइलक्खं रतिलक्ष्यम् जघन। (८४) वावडो कुटुम्बी, व्यापृत। (८५) पुरिल्लदेवा (यानी) दैत्य, पुराभव। (८६) गोसण्णो मूर्ख। पशु जैसा होनेसे गोसंज्ञ। (८७) परभत्तो (यानी) भीरु और निष्पीड। पर यानी शत्रु और उसका भक्त। (८८) चच्चिक्को (यानी) स्थासक। चर्चिका; यहाँ क का द्वित्व हुआ और पुल्लिंग हो गया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(८९) कालं तमिस्र (यानी) अंधकार, नील होनेसे। (९०) भट्टिओ (यानी) विष्णु। भर्तृक; कारण वह जगका पोषक है। यहाँ 'ऋ'का 'इ' हुआ है। (९१) इंदग्गिघूमं तुहिन [यानी] हिम। इन्द्राग्निधूमः। (९२) पत्थरं [यानी] पादताडन। पत्थरकी तरह होनेसे प्रस्तर, दुःसह होनेसे। (९३) ओवाअलो [यानी] अस्तकाल। अपातपः। (९४) पिउच्छा (९५) माउआ सखी। बुआ और मा की तरह होनेसे। (९६) पोरत्थो [यानी] मत्सरी। पौलस्त्यवत्। (९७) दोसो [यानी] कोप। अपना दोष होनेसे। (९८) चच्चं चर्चा [यानी] तलाहतिः। (९९) पम्हलो केसर। पक्ष्मलसे युक्त। [१००] खंधलट्ठी [१०१] खंधमसो [यानी] भुजस्कंधकी यष्टि। स्कंधं प्रमृशति इति। (१०२) अग्गिआओ (१०३) तंबकिमी इन्द्रगोप (लाल कीटक)। अग्निकी तरह जिसका देह है वह, अग्निकायः। ताम्रकृमिः। (१०४) विहाडणो अनर्थ। विघाटनम्। (१०५) जोइओ ज्योतिरिंगण (यानी) खद्योत (जुगनू)। (१०६) सिंजिरो ध्वनि। शिंजनही। (१०७) जोइसो (१०८) जोअणा (१०९) जोडो (११०) खज्जोओ, खद्योत अर्थमें। तारका। ज्योतिषं जोइसं। द्योतना जोअणा। द्योतः जोडो। (यहाँ) त का ड हुआ है। खे द्योतते (आकाशमें चमकता है), इसलिए खद्योतः खज्जोओ। (१११) दरवल्लहो कान्त। दर याना भय, वहाँ वल्लभ। (११२) काअरो कातर यानी भीरु। वियोगभीरु होनेसे। (११३) पण्डरंगो (यानी) महेश्वर। धवल अंग होनेसे। (११४) भोइओ ग्रामेश। भोगं चरति इति (भोग लेता है इसलिए) भोगिक। (११५) सग्गहो मुक्त। सुष्टु अग्रहः, स्वग्रहः। (११६) संकरो (यानी) रास्ता। जहाँ संकर होता है वह संकर। (११७) पअरो (यानी) अर्थकी दृष्टिसे उत्कृष्ट। अर्थमें प्रकर्षेण वरः (प्रवरः)। (११८) मइमोहिणी (यानी) सुर। मतिमोहिनी। (११९) धारावासो (यानी) मंडूक। वर्षामें उत्पन्न होनेसे। (१२०) कमलं (यानी) मुख और कलह। कमलकी तरह होनेसे कमल। कं मस्तकं मलति इति (कं यानी मस्तकको ताप देता है इसलिए) कमल (कलह)। (१२१) वेणुसाओ (१२२) घुअराओ (यानी) भ्रमर। वेणुकी तरह जिसका शब्द है वह वेणुसाओ (वेणुशब्दः); यहाँ (ब्द इस) संयुक्त व्यंजनका लोप हुआ है। ध्रुवरागः, कारण वह सदा सुस्वर है। इत्यादि। इस गणमें (शब्दोंका) लिंग परिवर्तन (वाङ्मयीन) प्रयोगके अधीन होता है॥ १२१॥

— प्रथम अध्याय चतुर्थ पाद समाप्त —

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

द्वितीयोऽध्यायः— प्रथमः पादः ॥

मन्तमणवन्तमाआलुआलइरइल्लउल्लइन्ता मतुपः ॥ १ ॥

मतुप् प्रत्ययको मन्त, मण, वन्त, मा, आलु, आल, इर, इल्ल, उल्ल और इन्त ऐसे ये दस आदेश (वाङ्मयीन) प्रयोगानुसार होते हैं। उदा.—मन्त-सिरिमन्तो श्रीमान्। पुण्णमन्तो पुण्यवान्। मण—धणमणो धनवान्। वन्त—धणवन्तो धनवान्। भत्तिवन्तो भक्तिमान्। मा—हणुमा हनुमान्। पडमा पटवान्। आलु—णेहालू स्नेहालुः। दआलू दयालुः। ईसालू ईर्ष्यालुः। आल—सद्दालो शब्दवान्। जडालो जटावान्। पडालो पटवान्। रसालो रसवान्। जोण्हालो ज्योत्स्नावान्। इर—गहिरो ग्रहवान्। इल्ल-सोहिल्लो शोभावान्। छाइल्लो छायावान्। धामिल्लो धामवान्। उल्ल—विआरुल्लो विकारवान्। मंसुल्लो मांसवान्। दप्पुल्लो दर्पवान्। इन्त—कहइन्तो कथावान्। माणइन्तो मानवान्। मतुप् प्रत्ययको, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्य स्वामित्वबोधक प्रत्ययोंको ऐसे आदेश नहीं होते।) उदा.—धणी। अत्थी॥ १॥

वतुपो डित्तिअमेतल्लुक् चैतत्तद्यदः ॥ २ ॥

एतद्, यद्, तद् इनके आगे परिमाण अर्थमें आनेवाले वतुप् प्रत्ययको डित् एत्तिअ ऐसा आदेश होता है, और एतद् का लोप हो जाता है। उदा.—एतावत् एत्तिअं। यावत् जित्तिअं। तावत् तित्तिअं॥ २॥

किमिदमश्च डेत्तिअडित्तिलएद्दहम् ॥ ३ ॥

किम् और इदम् (सर्वनामों) के आगे, और सूत्रके चकारसे (चात्) एतद्, तद् और यद् इनके आगे, आनेवाले वतुप् प्रत्ययको ड् अनुबंध (=डित्) होनेवाले एत्तिअ, इत्तिल और एद्दह ऐसे ये आदेश होते हैं। उदा.—एतावत् एत्तिअं इत्तिलं एद्दहं। यावत् जेत्तिअं जित्तिलं जेद्दहं। तावत् तेत्तिअं तित्तिलं तेद्दहं। कियत् केत्तिअं कित्तिलं केद्दहं। इयत् इत्तिअं इत्तिलं एद्दहं॥३॥

इकः पथो णस्य ॥ ४ ॥

'पथो ण नित्यम्' (देखिए पा. ९.१.७६) इस सूत्रसे पथिन् शब्दके आगे जो ण-प्रत्यय कहा है, उसको इकं ऐसा आदेश होता है। उदा.—पान्थः पहिओ॥ ४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खस्य सर्वाङ्गात् ॥ ५ ॥

सर्वाङ्ग शब्दके आगे 'व्यापक' अर्थमें कहा हुआ जो ख प्रत्यय, उसका इक होता है। उदा.–सर्वाङ्गीणः सव्वंगिओ ॥ ५ ॥

छस्यात्मनो णअः ॥ ६ ॥

आत्मन् के आगे आनेवाले छ प्रत्ययको णअ ऐसा आदेश होता है। उदा.–आत्मीयम् अप्पणअं ॥ ६ ॥

हित्थहास्त्रलः ॥ ७ ॥

सप्तम्यन्त सर्वनामोंके संबंधमें कहे हुए त्रल् प्रत्ययको हि, त्थ और ह ऐसे तीन आदेश होते हैं। उदा.-यत्र जहिं जत्थ जह। तत्र तहिं तत्थ तह। कुत्र कहिं कत्थ कह। अन्यत्र अण्णहिं अण्णत्थ अण्णह ॥ ७ ॥

केर इदमर्थे ॥ ८ ॥

(अमुकका) यह इस अर्थमें (इदमर्थे) कहे हुए छ प्रत्ययको केर ऐसा आदेश होता है। उदा.—युष्मदीयः तुम्हकेरो। अस्मदीयः अम्हकेरो। क्वचित् (ऐसा आदेश) नहीं होता। उदा.–मदीयपक्षः मइज्जपक्खो। पाणिनीयम् पाणिणीअं ॥ ८ ॥

राजपराड्डिक्कडक्कौ च ॥ ९ ॥

राजन् और पर इनके आगे इदमर्थमें कहे हुए प्रत्ययको डित् इक्क और अक्क ऐसे ये (आदेश) होते हैं। (सूत्रमेंसे) चकारसे (इन शब्दोंके आगे) केर आदेशभी आता है। उदा.–राजकीयम् राइक्कं राअक्कं राअकेरं। परकीयं परिक्कं परक्कं परकेरं ॥ ९ ॥

डेच्चओ युष्मदस्मदोऽणः ॥ १० ॥

युष्मद् और अस्मद् इनके आगे इदमर्थमें आनेवाले अण् प्रत्ययको डित् एच्चअ ऐसा आदेश होता है। उदा.–यौष्माकम् तुम्हेच्चअं। आस्माकम् अम्हेच्चअं ॥ १० ॥

वर्वतेः ॥ ११ ॥

उपमान अर्थमें कहे हुए वति प्रत्ययको वर् ऐसा आदेश होता है। (वर् में) र् इत् होनेसे, (व का) द्वित्व होता है। उदा.–महुरव्व पाडलिउत्ते पासाआ, मथुरावत् पाटलिपुत्रे प्रासादाः ॥ ११ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तैलस्यानङ्कोलाड्डेल्लः ॥ १२ ॥

अंकोल शब्दको छोडकर (अन्य) शब्दोंके आगे आनेवाले तैल शब्दको डित् एल्ल ऐसा आदेश होता है। उदा.–सुरहिजलेण कडेल्लं, सुरभिजलेन कटुतैलम्। अंकोल शब्दको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अंकोल शब्दके आगे ऐसा वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.–अंकोलतेल्लं ॥ १२ ॥

त्वस्य तु डिमात्तणौ ॥ १३ ॥

'भाव' के अर्थमें कहे हुए त्व प्रत्ययको डित् इमा, और त्तण ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.–पीनत्वम् पीणिमा पीणत्तणं। पुष्पत्वम् पुप्फिमा पुप्फत्तणं। विकल्पपक्षमें—पीणत्तं पुप्फत्तं। त्व प्रत्ययको, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्य प्रत्ययोंके बारेमें ऐसे आदेश नहीं होते।) उदा.–पीणआ पीणदा पीनता ॥ १३ ॥

दो त्तो तसः ॥ १४ ॥

(इस सूत्रमें २.१.१३ से) तु पदकी अनुवृत्ति है। पंचम्यन्त सर्वनामोंके आगे आनेवाले तसिल् प्रत्ययको दो और त्तो ऐसे (आदेश) विकल्पसे होते हैं। उदा.–सव्वदो सव्वत्तो। एअदो एअत्तो। अण्णदो अण्णत्तो। कदो कत्तो। तदो तत्तो। जदो जत्तो। इदो इत्तो। विकल्पपक्षमें–सव्वओ। इत्यादि ॥ १४ ॥

एकाद्दः सिसिआइआ ॥ १५ ॥

एक शब्दके आगे आनेवाले दा प्रत्ययको सि, सिआ और इआ ऐसे तीन आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.–एक्का एक्कसि एक्कसिआ एक्कइआ एकआ ॥ १५ ॥

ल्हुत्तः कृत्वसुचः ॥ १६ ॥

'वारे कृत्वसुच्' द्वारा कहे हुए कृत्वसुच् प्रत्ययको हुत्त ऐसा आदेश होता है। (सूत्रके ल्हुत्त में) ल् इत् होनेसे, यह आदेश नित्य होता है। उदा.–सअहुत्तो। सहासहुत्तो। चुंबिज्जइ सअहुत्तो। उवगूहिज्जइ सहासहुत्तो। रमिआ वि पुणो रमिज्जइ णवत्तणे णत्थि पुणरुत्तं। पर पिअहुत्तं (यह रूप) मात्र अभिमुख अर्थमें होनेवाले हुत्त शब्दसे होगा ॥ १६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भवे डिल्लोल्लडौ ॥ १७ ॥

संज्ञाके आगे (अमुकस्थानमें) हुआ इस अर्थमें डित् इल्ल और उल्ल ऐसे ये (प्रत्यय) आते हैं। उदा.- इल्ल—मातुलानी मामी, तत्र भवा मामिल्लिआ। पुरो भवं पुरिल्लं। अधो भवं हेट्ठिल्लं उपरि भवं उवरिल्लं। उल्ल—आत्मभवम् अप्पुल्लं। कुछके मतानुसार, अल्ल और ल ऐसेभी प्रत्यय आते हैं ॥ १७ ॥

स्वार्थे तु कश्च ॥ १८ ॥

संज्ञाके आगे स्वार्थें क प्रत्यय विकल्पसे आता है। (सूत्रके) चकारसे डिल्ल (डित् इल्ल) और उल्लड् (ये प्रत्ययभी आते हैं)। उदा.-चन्द्रः चंदओ। हृदयम् हिअअअं। इह इहअं। आश्लिष्टम् आलिद्धअं। (स्वार्थें क प्रत्यय) दो बारभी आता है। उदा.—बहुअअं। (क-प्रत्ययमेंसे) ककारका उच्चारण पैशाची भाषाके लिए किया है। उदा.—वदनम् वतनकम्। डिल्ल—णिज्जिआसोअपल्लविल्लेण, निर्जिताशोकपल्लवेन। पुरिल्लो (यानी) पुरा (पूर्वका) या पुरः (आगे)। उल्लड्-पिउल्लो प्रियः। मुहुल्लं मुखम्। हत्थुल्लो हस्तः। विकल्पपक्षमें—चंदो। इत्यादि। कुत्सा, इत्यादि अर्थमें संस्कृतकी तरह क प्रत्यय सिद्ध होता है ॥ १८ ॥

उपरेः संव्याने ल्लः ॥ १९ ॥

(इस सूत्रमें २.१.१८ से) स्वार्थे पदकी अनुवृत्ति है। संव्यान (आच्छादन) अर्थमें होनेवाले उपरि शब्दके आगे (स्वार्थें) द्विरुक्त ल (=ल्ल) (यह प्रत्यय) आता है। (सूत्रके ल्लल्में) ल् इत् होनेसे, यह ल्ल-प्रत्यय नित्य आता है। उदा.—उवरिल्लो। संव्यान अर्थमें, ऐसा क्यों कहा है? (कारण वैसा न होनेपर, यह प्रत्यय नहीं लगता। उदा.—उवरिं ॥ १९ ॥

नवैकाद्वा ॥ २० ॥

नव और एक शब्दोंके आगे स्वार्थें द्विरुक्त ल (=ल्ल) विकल्पसे आता है। उदा.—णवओ णवो। एक्कल्लो एक्को ॥ २० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिश्राड्डालिअश् ॥ २१ ॥

मिश्र शब्दके आगे स्वार्थे लिअ ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। (सूत्रके लिअश्में) श् इत् होनेसे, पूर्व स्वर दीर्घ होता है। उदा.—मीसालिअं मिस्सं ॥ २१ ॥

शनैसो ल्डिअं ॥ २२ ॥

शनैः शब्दके आगे स्वार्थे लित् (=नित्य) और डित् होनेवाला इअं ऐसा आदेश होता है। उदा.–सणिअं ॥ २२ ॥

मनाको डअं च वा ॥ २३ ॥

मनाक् शब्दके आगे स्वार्थे डित् अअं और इअं ऐसे प्रत्यय विकल्पसे आते हैं। उदा.–मणअं मणिअं। विकल्पपक्षमें–मणा ॥ २३ ॥

रो दीर्घात् ॥ २४ ॥

(इस सूत्रमें २.१.२३ से) वा पदकी अनुवृत्ति है। दीघ शब्दके आगे स्वार्थे र विकल्पसे आता है। उदा.–दीहरं दीहं दिग्घं ॥ २४ ॥

डुमअडमऔल् भ्रुवः ॥ २५ ॥

भ्रु शब्दके आगे स्वार्थे डित् और लित् ऐसे उमअ और अमअ ऐसे ये (प्रत्यय) आते हैं। (ये प्रत्यय) लित् होनेसे, नित्य आते हैं। उदा.–भुमआ भमआ ॥ २५ ॥

लो वा विद्युत्पत्रपीतान्धात् ॥ २६ ॥

(विद्युत्, पत्र, पीत, अन्ध) इन शब्दोंके आगे स्वार्थे ल विकल्पसे आता है। उदा.–विज्जुला विज्जू। पत्तलं पत्तं। पीअलं पीअं। अंधलो अंधो ॥ २६ ॥

त्वादेः सः ॥ २७ ॥

'तस्य भावस्त्वतलौ' (पा. ५.१.११९) इत्यादि (सूत्र) में कहे हुए त्व, इत्यादिके आगे स्वार्थे वही त्व, इत्यादि विकल्पसे आते हैं। उदा.–मृदुत्वेन मउत्तआइ। मृदुतया मउत्तआए। ज्येष्ठतरः जेट्ठअरो। कनिष्ठतरः कणिट्ठअरो ॥ २७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इरः शीलाद्यर्थस्य ॥ २८ ॥

शील, धर्म, साधु इन अर्थोंमें कहे हुए प्रत्ययके स्थानमें इर ऐसा आदेश होता है। उदा.—हसनशीलः हसिरो। रोदनशीलः रोइरो। लज्जाशीलः लज्जिरो। जल्पशीलः जम्पिरो। वेदनशीलः वेइरो। उच्छ्वसनशीलः ऊससिरो। इरं यह तृन्‌को आदेश होता है, ऐसा कोई कहते हैं। उनके बारेमें नमिर, कमिर, इत्यादि (रूप) सिद्ध नहीं होते। कारण अगले सूत्र, इत्यादिमें कहे हुए तृन् से बाध होता है॥ २८ ॥

तुमत्तुआणतूणाः क्त्वः ॥ २९ ॥

क्त्वा प्रत्ययको तुं, अ (अत्), तुआण और तूण ऐसे चार आदेश होते हैं। उदा.—तुं-दट्ठुं। मोत्तुं। भोत्तुं। अ (अत्)-भमिअ। रमिअ। तुआण—घेत्तुआण। सोउआण। 'क्त्वासुपोस्तु सुणात्' (१.१.४३) सूत्रानुसार, अनुस्वार आनेपर घेत्तुआणं। सोउआणं। तूण—घेत्तूण। सोऊण। काऊण। अनुस्वार आनेपर—घेत्तूणं। सोऊणं। काऊणं। पर वंदित्ता यह रूप मात्र (वन्दित्वा इस) सिद्ध रूपमेंसे व् का लोप होकर सिद्ध हुआ है॥ २९ ॥

वरइत्तगास्तृनाद्यैः ॥ ३० ॥

वरइत्त, इत्यादि शब्द जो तृनादि प्रत्ययोंसे सहित और स्वरादि आदेशोंसे विशिष्ट ऐसे होते हैं वे बहुलत्वसे निपातके रूपमें आते हैं। उदा.—(१) वरइत्तो वरयितृकः (यानी) नवीन वर। यहाँ ऋ का अ और त् का द्वित्व हुआ है। (२) कणइल्लो (३) वाअडो (यानी) शुक। कणइल्लो—कणई शब्द लतावाचक देशी शब्द है; (उसको) भवार्थे या अस्ति इस अर्थमें डित् इल्ल प्रत्यय लगा। वाअडो—वाचाट शब्दमें द्वितीय आ का अ हुआ है। (४) मइल-पुत्ती पुष्पवती। मलिन शब्दको मइल ऐसा आदेश होकर उसके आगे पुत्ती शब्द आगया। (५) दुग्घोट्टो दोग्घेट्टो (६) दूणो (यानी) द्विपः (हाथी)। यहाँ पिबति धातुको घोट्ट (ऐसा आदेश है)। द्वाभ्यां पिबति इति। (दूणो-) द्विपान शब्दमें पकारके साथ इ का ऊ होकर दूण रूप होगया। (७) विरिचरो (यानी धारा छोडनेका स्वभाव होनेवाला। (८) सूरल्ली (यानी) मध्याह्न। यहाँ सूर शब्दके आगे अस्ति अर्थमें ल्लि प्रत्यय आया है। (९) वेल्लहलो कोमल और

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विलासी। यहाँ वल्लभ शब्दके आगे ल (आया) और आद्य अ का ए (हुआ है)। (१०) सद्दालं नूपुरम्। 'शब्द' इस शब्दके आगे अस्ति अर्थमें आल प्रत्यय आकर (सद्दाल शब्द बना है)। (११) अल्लिल्लो (१२) फुल्लंधओ (१३) रसाओ भ्रमरः (यानी भँवरा)। इन शब्दोंमें क्रमसे—अलि शब्दके आगे स्वार्थे डित् इल्ल (डिल्ल) और ल् का द्वित्व होकर (अल्लिल्लो)। पुष्पंधयः, यहाँ प का ल होकर (फुल्लंधओ)। रसं अत्ति इति (रसादः) रसाओ। (१४) लअणी लअणा (१५) कणई, लता अर्थमें। लता शब्दके आगे डणी और डणा (डित् अणी और अणा) प्रत्यय आकर (लअणी, लअणा रूप हुए)। (कणई)—कनति धातुको स्त्रीलिंगबोधक डई (डित् अई) प्रत्यय लगकर (कणई); शोभावहत्व-के कारणसे। (१६) वहुज्जा (यानी) कनीयसी श्वश्रूः (छोटी सास)। वधू शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें ज्जा प्रत्यय आगया। (१७) भाउज्जा भ्रातृवधूः। भाईकी भार्या इस अर्थमें (भ्रातृ शब्दके आगे) ज्जा प्रत्यय आगया। (१८) मेहुणिआ मातुलात्मजा और स्याली (ममेरी बहिन, साली)। मैथुनिका। मिथुन शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें इकण् और डात् (=डित् आ) प्रत्यय आगये। (१९) रिमिणो रोदनशीलः। रुद् धातुको शील अर्थमें डिमिण (=डित् इमिण) प्रत्यय जुट गया। (२०) पुण्णाली (२१) छिच्छई (२२) अडअणा असती। पुंश्चली शब्दमें श्च का णा होकर (पुण्णाली शब्द बना)। धिक् धिक् (का वर्णान्तर) छिच्छि। धिक् धिक्, ऐसी निंदा जिसकी होती है वह (छिच्छई)। अस्ति अर्थमें डई (=डित् अई) प्रत्यय (छिच्छि को लगा)। अट् धातुको शील अर्थमें अणा प्रत्यय लगकर, अडअणा (यानी) अटन-शीला (घूमना जिसका स्वभाव है वह)। (२३) चप्पलओ मिथ्याबहु-भाषी। चपल शब्दके आगे क आया और प का द्विरुक्त प (=प्प) हो गया। (२४) पिब्बं जलम्। पिब् धातुमें ब का द्वित्व हो गया। (२५) मघोणो (यानी) मघवा (इंद्र)। यहाँ स्वार्थे ण आया है और 'अवा' इसका ओकार हुआ है। (२६) सइलासिओ मयूर। सदालासिकः, कारण नृत्य करनेका उसका स्वभाव है। यहाँ 'इत्तु सदादौ' (१.२.३४) सूत्रानुसार (सदा शब्दका) सइ (रूप) हुआ है। (२७) वाउल्लो प्रलपिता (प्रलाप करनेवाला)। यहाँ वाच् शब्दको डुल्ल (डित् उल्ल) प्रत्यय लगा है। (२८) पलहिअओ मूर्ख। उपलहृदयः। (यहाँ) (आद्य) उकारका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लोप हुआ है। (२९) चंडिक्को कोपः। चण्ड शब्दके आगे कोप अर्थमें डिक्क (=डित् इक्क) प्रत्यय आया। (३०) चण्डिज्जो पिशुन और कोप। चंड शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें डिज्ज (=डित् इज्ज) प्रत्यय आया। (३१) कुम्मणो ग्लानः। ग्लायति धातुको कुम्म आदेश होकर आगे ण आगया। (३२) अच्छिहरुल्लो द्वेष्य। अक्ष्णोः हरः (आँखोंका हरण करनेवाला, अक्षिहरः), अदर्शनीय होनेसे। अक्षिहर शब्दके आगे स्वार्थे डुल्ल (=डित् उल्ल) प्रत्यय आया। (३३) छाइल्लो रूपवान्। छाया शब्दको अस्ति अर्थमें डिल्ल (डित् इल्ल) प्रत्यय लगा; कान्तिमान् यह अर्थ। (३४) कुडुंगो कुडगो कुडुक्को लतागृह। कुड शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें डुंग, डंग और डुक्क (=डित् उंग, अंग, और उक्क) प्रत्यय लगे हैं। (३५) जरण्डो वृद्धः। जरति धातुको अण्ड प्रत्यय लगा। (३६) अच्छिविअच्छी परस्पराकृष्टिः (परस्पर आकर्षण)। आकर्षति व्याकर्षति इसमें कृष् के स्थानपर विअच्छी (ऐसा आदेश आगया)। (३७) घूमरी तुहिन। घूमवत् (घूमकी तरह) यानी घूमरी। यहाँ उपमानार्थमें री है। (३८) सोत्ती तरङ्गिणी। यहाँ स्रोतस् शब्दके आगे अस्ति अर्थमे डी (डित् ई) आया, त का द्वित्व हुआ। (३९) अहिसिओ (यानी) ग्रहशंकासे रोनेवाला। अभिसीदति धातुको कहे हुए अर्थमें डिक (डित् इक) प्रत्यय लगा। (४०) गावी गौः। गो शब्दके आगे स्त्रीलिंगका डावी (डित् आवी) प्रत्यय आया। (४१) उत्थल्लपत्थल्ला (यानी) पार्श्वयुगापवृत्ति। उरस्थल और प्रस्थल शब्दोंके आगे पार्श्व द्वय-आवृत्ति इस अर्थमें डा (=डित् आ) आया और ल का द्वित्व हुआ। (४२) गज्जिलिओ (यानी) अंगको स्पर्श होनेपर आनेवाला हास्य और पुलक। 'अंगको स्पर्श होनेपर आनेवाला हास्य और पुलक' इन अर्थमें गर्ज् धातुको इलिअ प्रत्यय लग गया। (४३) चित्तलं रम्यम्। चित्तं लाति इति। (४४) पाडहुओ प्रतिभूः (यानी) जामिन। प्रतिभू शब्दके आगे स्वार्थे डुकण् (डित् उकण्) प्रत्यय आया और इ का अ हो गया। (४५) पासणिओ पासाणिओ साक्षी। साक्षात् पार्श्वं नीयते अनेन इति; पार्श्व के आगे आनेवाले नी धातुको डिक (डित् इक) प्रत्यय लगा। (४६) अवरिज्जं अद्वितीयम्। अवर शब्दके आगे भाव अर्थमें डिज्ज (डित् इज्ज) प्रत्यय लगा। (४७) लाहिल्लो लम्पटः। लाभ शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें डिल्ल (डित् इल्ल) प्रत्यय आया। (४८) कडिल्लं (यानी) गहनं,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दौवारिकः, कटिवस्त्रम्, निर्विवरम्, विपक्षः और आशीः (आशीर्वाद)। कटि शब्दके आगे गहन, इत्यादि अर्थोंमें डिल्ल (डित् इल्ल) प्रत्यय आगया। (४९) रूवसिणी रूपवती। रूप शब्दके आगे अस्ति अर्थमें स्त्रीलिंगका सिणी प्रत्यय आया। (५०) कुडुम्बिअं सुरतम्। कुटुम्ब शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें डिक (डित् इक) प्रत्यय आया। (५१) अंतरिज्जं रशना, कटिसूत्र। अंतर शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें डिज्ज (डित् इज्ज) प्रत्यय आगया। (५२) अवडुक्किअं (यानी) कूप, इत्यादि अवटमें पडा हूआ। अवट शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें डुक्किअ (डित् उक्किअ) प्रत्यय आया। (५३) बुड्डिरो महिष। मज्जति धातुके 'बुड्ड' आदेशके आगे शील अर्थमें इर प्रत्यय आगया। (५४) पिप्पिडिअं (यानी, जो किंचित् पठित किया जाता है वह। पिडिपिडि इस अनुकरणवाचक शब्दके आगे क प्रत्यय आया, आद्य डिकारका लोप और पका द्वित्व हुए। (५५) सरिसाहुलो सदृश। सदृश शब्दके आगे स्वार्थे हुलश् प्रत्यय आगया। (हुलश् में श् इत् होनेसे, पूर्व स्वर दीर्घ हुआ)। (५६) गुमिलो मूढः! मुह् धातुका आदेश जो गुम, उसके आगे इल प्रत्यय आगया। (५७) कच्चं कार्यम्। यहाँ कृ धातुको डच्च (डित् अच्च) प्रत्यय लगा है। (५८) घडिअघडा, घडी (यानी) गोष्ठी। घटिता घटा घटना यस्याः सा (जिसकी घटना घट गई है)। (५९) कमणी निश्रेणी (यानी) सीढी। (६०) किरिकिरिआ (यानी) कर्णोपकर्णिका और कुतकम्। कर्णोपकर्णं कर्णपरंपराप्राप्तं कटुजल्पनं, तस्मिन्नर्थे और कौतुक अर्थमें किरिकिरि इस अनुकरणवाचक शब्दके आगे का प्रत्यय आगया। (६१) अण्णइओ (यानी) सब बातोंमें तृप्त।—अर्णव शब्दके आगे उपमान अर्थमें डिक (डित् इक) प्रत्यय आगया। (६२) साहुली शाखा। यहाँ स्वार्थे डुलि (डित् उलि) प्रत्यय आगया। (६३) जंपेक्खिरमग्गिरओ (यानी) जो देखा वह माँगनेवाला। यद् दृष्टं इस अर्थमें (आनेवाले) जंपेक्खिर निपातके आगे याचनशील अर्थमें क-प्रत्ययान्त मग्गिरओ शब्द आगया। (६४) गअसाउल्लो विरक्तः। गतस्वाद शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें डुल्ल (डित् उल्ल) प्रत्यय आगया। (६५) सिहण्डहिल्लो बालः। शिखण्ड शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें हिल्ल प्रत्यय आया है। शिखावान् यह अर्थ। (६६) अलवलवसहो (यानी) धूर्त, दुष्ट, पृष्ठवाही बलीवर्द। अलं अत्यर्थं बलं अस्य वृषभस्य इति (इस बैलका बल अत्यर्थ है)। अनुस्वारका लोप हुआ। (६७) खुरहखुडी प्रणयकोप। क्षुरवत्

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भाति तोदयति इति (उस्तरेकी तरह काटता है)। तुद् के खुड आदेशको डी (डित् ई) प्रत्यय लग गया। (६८) सीउली सीउग्गं (यानी) हिमकाले दुर्दिनम्. (हिमकालमें बरसातका दिन)। शीत शब्दके आगे डुल्लि और डुग्ग (डित् उल्लि और उग्ग) प्रत्यय आये और त का लोप हो गया। (६९) वण्डो वरण प्राकार। वृ (धातु)को रण्ड प्रत्यय लग गया। (७०) तत्ती तत्परता। त के आगे तात्पर्य अर्थमें डत्ती (डित् अत्ती) प्रत्यय आगया। (७१) हीरणा त्रपा (यानी) लज्जा। त्रपा अर्थमें णा और हीर ऐसे आदेश आगये। (७२) गाम-रेडो (यानी) योऽन्तर्भुक्त्वा ग्रामं भुंक्ते। ग्राम शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें रेड शब्द आया। (७३) लडहा (७४) वेल्लरी विलासवती। लस् (धातु) के आगे डहा शब्द आया और स् का लोप हुआ। (वेल्लरी)—वेष्ट्यन्ते विटा अनया इति (जिससे विट घेरे जाते हैं।) वेष्ट् के आगे री आया और ष्ट् का ल्ल हो गया। (७५) दुम्मइणी कलहपरा। दुर्मति शब्दके आगे स्वार्थे स्त्रीलिंगका णी प्रत्यय लग गया। (७६) लज्जालुइणी लज्जावती। लज्जालु शब्दके आगे स्वार्थे णी प्रत्यय आगया। (७७) तण्णाअं आर्द्रम् (यानी) भीगा हुआ। तम् धातुको (तिम्यतेः) डण्णाअं (डित् अण्णाअं) प्रत्यय लग गया। (७८) ।चिक्खअणो असहनः सहन न करनेवाला। नञ् के पूर्व होनेवाले सह् धातुके आगे यण आगया और उसको चिक्ख आदेश हो गया। (७९) वेणिअं वचनीयम् (यानी) निन्दा। वच् धातुके आगे कहे हुए अर्थमें डेणिअ (डित् एणिअ) प्रत्यय आ गया। (८०) सुण्हसिओ निद्रालु। स्वप्न शब्दके आगे शील अर्थमें सिय आया, और प्न का ण्ह हुआ तथा आद्य अ का उ हो गया। अथवा-संस्कृतम सास्ना यानी निद्रा; फिर 'स्तावकसास्ने' (१.२.१८) सूत्रानुसार उ होनेपर, शील अर्थमें डासिअ (डित् असिअ) प्रत्यय लग गया। (८१) वप्पिओ केदारः यानी खेत। उप्यन्ते अत्र इति। वप् के आगे पिअ ऐसा शब्द आया। (८२) बंधोल्लो मेलकः (यानी) मेला। बंध् के आगे डोल्ल (डित् ओल्ल) आगया। (८३) वारिज्जो विवाह। वृ धातुके आगे इज्जण् प्रत्यय आया। 'अचो ञ्णिति' सूत्रानुसार वृद्धि हो गई। (८४) साउल्लो (८५) हडहडं अनुरागः (यानी) प्रेम। स्वाद् के आगे कहे हुए अर्थमें उल्ल प्रत्यय आगया। (हडहडं)—हडत् हडत् इति हृदयं स्फुरति यत्र इति; (अन्त्य) त् का लोप होगया। (८६) माणंसी (यानी) मायावी और मनस्वी। (८७) कोडिल्लो कोडिओ पिशुनः (यानी) दुर्जन। कुड् धातुके आगे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इल्ल और इक्क आये और उ का ओ होगया। (८८) अट्टण्णो आर्तज्ञः। आर्त जानता है वह। (८९) गंजोलो। परिभव अर्थमें होनेवाले देश्य 'गंज' धातुके आगे डोल (डित् ओल) प्रत्यय आगया। (९०) बंदिणो बन्दी। यहाँ स्वार्थे ण आगया। (९१) तत्तिल्लो तच्छील यानी तत्पर। तत्ती यानी तत्परता (२.१.३० के नीचे (७०) तत्ती शब्द देखिए), उसके आगे अस्ति अर्थमें ल आया (और उस) ल का द्वित्व होगया। (९२) ऊसुम्भिअं रुद्धगलरोदनम् (रुद्ध गलेसे रोना)। उद् के आगे होनेवाले सुम्भ के आगे कहे हुए अर्थमें डिक्र (डित् इक) प्रत्यय आगया। (९३) णिउक्को तूष्णीकः मूक। निर्मुक्तः। म का लोप हुआ, आर दैवादिपाठमें होनेसे द्वित्व होगया। (९४) बंहलो अपस्मारः। ब्रह्मन् शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें ल आया। (९५) ठाणिज्जं गौरवम्। स्थान शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें डिज्ज (डित् इज्ज) प्रत्यय आगया। (९६) उवउज्जो उपकारी। उपकृ धातुको डुज्ज (डित् उज्ज) प्रत्यय लग गया। (९७) एक्कलो प्रबलः। एक शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें ल आया। (९८) माउसिआ माउच्छा मातृष्वसा (यानी) मौसी। मातृ शब्दके आगे आनेवाले स्वसृ शब्दको सिआ और च्छ ऐसे (आदेश) हो गये। (९९) महल्लो मुखरः (यानी) बहुत बोलनेवाला। महत् शब्दके आगे डल्ल (डित् अल्ल) प्रत्यय आगया। (१००) कुच्छिमई गर्भवती। कुक्षि के आगे अस्ति अर्थमें मई प्रत्यय आया। (१०१) रिंछोली ऋक्षालिः नक्षत्रमाला, उसकी तरह होनेसे रिंछोली। ऋ के बाद अनुस्वार होगया। (१०२) धोरणी पंक्तिः। धारावत् होनेसे धोरणी। आ का ओ होगया, और उपमा अर्थमें डणी (डित् अणी) प्रत्यय आगया। (१०३) पडमा दूष्यपटम्। पट शब्दके आगे अस्ति अर्थमें मा प्रत्यय आया। (१०४) जुअणो युवा। यहाँ स्वार्थे ण आया है। (१०५) करमरी हठहृता स्त्री, बन्दी (बलात् हरण की हुई स्त्री, बंदी)। 'करेण मृद्यमानात् आकृष्यते' इस अर्थमें कर उपपद होनेवाले मृद् धातुके आगे डरी (डित् अरी) प्रत्यय आया। (१०६) दड्ढाली दववर्त्म दवाग्निमार्ग। दग्ध के आगे डाली (डित् आली) प्रत्यय आगया। (१०७) कुडंगो कुडओ लतागृह। कुटी शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें डंग और डक (डित् अंग और अक) प्रत्यय आ गये। (१०८) कारिम कृत्रिम। कृ धातुके आगे डारिम (डित आरिम) प्रत्यय आया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(१०९) जंघालुओ (११०) जंघामओ दूत। जंघा शब्दके आगे शीघ्र अर्थमें लुअ और मअ आगये। (१११) बलामोडी बलात्कार। बलात् मुच्यते यत्र। (११२) चक्कलं परिवर्तुलम्। चक्र शब्दके आगे ल आगया। (११३) बाउल्ली पुत्रिका (यानी) कुमारीकी क्रीडाके योग्य ऐसी गुढिया। कुमारीः व्यापारयति इति। व्यापृ धातुके आगे डुलि (डित् उलि) प्रत्यय आगया। (११४) मत्त-वालो मत्तः। (मत्त के आगे) स्वार्थे वाल प्रत्यय आया। (११५) वहुणिआ (यानी) ज्येष्ठभाईकी भार्या। वधू शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें णिआ प्रत्यय आगया। (११६) जंभणंभणो स्वैर भाषण करनेवाला। यद्वा तद्वा भणति अधिकं इति। आदि और तृतीय वर्णके आगे अनुस्वार आया और त् का लोप हुआ। (११७) भाइरो भेज्जलो भेज्जो। (११८) ओज्जरो भीरुः (यानी) डरपोक। भी धातुके आगे शील अर्थमें डाइर, डेज्जल, डेज्ज (डित् आइर, एज्जल, एज्ज) प्रत्यय आये। (ओज्जर)—त्रस् धातुका आदेश जो ओज्ज, उसके आगे र आगया। (११९) आहडं सीत्कार। आहरति आदत्ते प्रियहृदयं इति। आहृ धातुके आगे ड आया। (१२०) काअपिउला कोकिला। काकः पितृवत् पोषको यस्याः इस अर्थमें (पितृवत् कौआ जिसका पोषक है) काकपितृ शब्दके आगे ला आगया। (१२१) मुहलं मुख। (मुख शब्दके आगे) स्वार्थें ल प्रत्यय आगया। (१२२) गत्तडी गायिका। गात्री शब्दके आगे स्वार्थे डडी (डित् अडी) प्रत्यय आया। (१२३) दुद्दोलणा, दुग्धा अपि या दुह्यते गौः इति, इस अर्थमें दुग्ध शब्दके आगे दोलणा शब्द आया। (१२४) मा भाइ अभय। मा के आगे होनेवाले भी धातुके भा आदेशके आगे इ आया। (१२५) तोमरिओ शस्त्र-प्रमार्जकः (यानी) शस्त्र साफ करनेवाला। तोमर शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें डिक (डित् इक) प्रत्यय आगया (१२६) वहुहाडिणी, वध्वा उपरि परिणीयते इति। वधू शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें हाडिणी शब्द आया। (१२७) रुअरु-इआ उत्कलिका (यानी) उत्कण्ठा। रुहरुहिका शब्दमें दो हकारोंका लोप हुआ-(१२८) पिउसिआ पिउच्छा पितृष्वसा (बुआ)। पितृ शब्दके आगे होनेवाले स्वसृ शब्दके सिआ और च्छ होगये। (१२९) पुप्फी। पितृ शब्दके आगे होनेवाले स्वसृ का फी हुआ। (१३०) अणुसूआ आसन्नप्रसवा। अनुसूति शब्दके आगे आसन्नप्रसव अर्थमें डा (डित् आ) आगया। (१३१) भच्चो भगिनीसुतः। भगिनी शब्दको भ ऐसा आदेश होकर, बहेनका पुत्र इस अर्थमें

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

च्च प्रत्यय आया। (१३२) ओइल्ली अपसृतिः। (अपसृति शब्दमें) सृति को इल्ली (आदेश) हो गया। (१३३) मम्मक्को गर्वं। मर्मन् शब्दके आगे कहे हुए अर्थमें क्क प्रत्यय आया। (१३४) मडप्फरो मधुपर। यहाँ उ का अ और धु का ड हो गया। इत्यादि। कृष्ट, उपसर्गरहित धृष्ट, वाक्य, विद्वस्, वाचस्पति, विष्टरश्रवस्, प्रचेतस्, प्रोक्त, इत्यादि शब्द; और क्विप्, इत्यादि प्रत्ययोंसे अन्त होनेवाले अग्निचित्, सोमसुत्, इत्यादि शब्द; सुग्लौ, सुम्लौ, इत्यादि शब्द; जिनका उपयोग पूर्व विद्वानोंने नहीं किया है, उसके प्रतीति (अर्थ) घातक ऐसे प्रयोग न करें, उनका अर्थ अन्य (समानार्थक) शब्दोंके द्वारा व्यक्त करें। उदा.–कृष्टः कुशलः। वाचस्पतिः गुरुः। विष्टर-श्रवस् हरिः। इत्यादि। उपसर्गयुक्त घृष्ट शब्दका प्रयोग चलता है। उदा.—मंदरअडपरिघट्टं, मन्दरतटपरिघृष्टम्। तं दिअसणिघट्टाणं, इत्यादि ॥ ३० ॥

अव्ययम् ॥ ३१ ॥

अव्यय पदका अधिकार इस पादकी परिसमाप्तितक है। यहाँसे आगे जो कहे जाएंगे वे अव्ययसंज्ञक शब्द हैं, ऐसा जानना ॥ ३१ ॥

आम अभ्युपगमे ॥ ३२ ॥

आम यह अव्यय स्वीकार (अर्थ) में प्रयुक्त करें। उदा.–आम बहुला वणाली। कोई कहते हैं कि आम अव्यय संस्कृतमेंभी है ॥ ३२ ॥

तं वाक्योपन्यासे ॥ ३३ ॥

तं यह अव्यय वाक्यारंभ करते समय प्रयुक्त करें। उदा.–तं तिअस-बंदिमोक्खं ॥ ३३ ॥

णइ चेअ चिअ च्च एवार्थे ॥ ३४ ॥

णइ, चेअ, चिअ, च्च ये (अव्ययरूप) शब्द अवधारण अर्थमें प्रयुक्त करें। उदा.–गइओ णइ। गदित एव॥ जं चेअ मुउलणं लोअणाणं अणुबंधं तं चिअ कामिणीणं। यदेव मुकुलनं लोचनानामनुबन्धं तदेव कामिनीनाम्॥ (चिअ शब्द) दैवादिपाठमें होनेसे, उसमें द्वित्व होता है। उदा.–ते च्चिअ धण्णा ते च्चिअ सुउरिसा। त एव धन्यास्त एव सुपुरुषाः॥ सो च्च वअरूवेण। स एव वयोरूपेण॥ सो च्च सीले। स एव शीले ॥ ३४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हद्धि निर्वेदे ॥ ३५ ॥

हद्धि ऐसा अव्यय निर्वेद (दिखाते समय) प्रयुक्त करें। हद्धि शब्द 'हा धिक्', शब्दकी तरह है। उदा.—हद्धि हो धावह। हा धिक् हो धावत ॥ ३५ ॥

दर अर्धेऽल्पे वा ॥ ३६ ॥

दर अव्यय अर्ध अर्थमें या ईषद् अर्थमें प्रयुक्त करें। दरविअसिअं अर्ध ईषद् वा विकसितम् ॥ ३६ ॥

किणो प्रश्ने ॥ ३७ ॥

किणो ऐसा अव्यय प्रश्न करते समय विकल्पसे प्रयुक्त करें। उदा.—किणो धुवसि, किं धुवसि, किं धुनोषि ॥ ३७ ॥

मिव पिव विव विअ व व्व इवार्थे ॥ ३८ ॥

मिव, पिव, विव, विअ, व, व्व ऐसे ये छः (शब्द) इव अर्थमें विकल्पसे प्रयुक्त करें। उदा.—कमलं मिव। चंदणं पिव। हंसो विव। जीवो विअ। उअअस्स व ताविअसीअलस्स, उदकस्येव तापितशीतलस्य। साअरो व्व गहिरो, सागर इव गभीरः। साअरो व्व खारओ, सागर इव क्षारः। विकल्पपक्षमें—णीलुप्पलमाला इव, नीलोत्पलमालेव ॥ ३८ ॥

किर इर हिर किलार्थे ॥ ३९ ॥

किर, इर, हिर ऐसे ये तीन (शब्द) किल अर्थमें विकल्पसे प्रयुक्त करें। उदा.—कल्लं किर खलहिअओ। तस्स इर पिअवअस्सो। वाहित्ता हिर देवी। विकल्पपक्षमें—एव्वं किल तेण सिविणए भणिअं ॥ ३९ ॥

अम्हो आश्चर्ये ॥ ४० ॥

आश्चर्य दिखाते समय अम्हो (अव्यय) प्रयुक्त करें। उदा.—अम्हो देवस्स गई। अम्हो कह परिणिज्जइ ॥ ४० ॥

अब्भो पश्चात्तापसूचनादुःखसंभाषणापराधानन्दादरखेदविस्मयविषादभये ॥ ४१ ॥

अब्भो ऐसा (अव्यय) पश्चात्ताप, इत्यादि दिखाते समय प्रयुक्त करें। उदा.—पश्चात्तापमें—अब्भो तह तेण कआ अहअं जह कस्स साहेमि।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूचनामें-अब्भो दुक्करआरंभ। अब्भो आरद्धो। दुःखमें-अब्भो दलइ हिअअं। संभाषणमें-अब्भो किमिणं। अपराधमें-अब्भो हरंति हिअअं तह विव वेसा भवंति जुवईणं। आनंदमें —अब्भो सुप्पहाअमिणं। आदरमें-अब्भो मह सफलं जीविअं। खेदमें-अब्भो ण जाणामि चित्तं। विस्मयमें-अब्भो किं पि रहस्सं मुणन्ति धुत्ता जणब्भहिआ, किमपि रहस्यं जानन्ति धूर्ता जनाभ्यधिकाः। विषादमें-अब्भो णासेंति धिइं पुलअं वड्ढेन्ति देन्ति रणरणअं, नाशयन्ति धृतिं पुलकं वर्धयन्ति ददति रणरणकम्। भयमें-अब्भो गइअ म्हि तुमे णेव रज्जइ सा ण जूरेहइ, अब्भो गदितास्मि त्वया नैव रज्येत सा न खेद्यते ॥ ४१ ॥

हुं पृच्छादाननिवारणे ॥ ४२ ॥

हुं ऐसा (अव्यय) पृच्छा, इत्यादिमें प्रयुक्त करें। उदा.-पृच्छामें—हुं साहसु सब्भावं। दानमें-हुं गेण्ह अप्पणो विअ। निवारणमें—हुं णिल्लज्ज समोसर ॥ ४२ ॥

वणे निश्चयानुकम्प्यविकल्पे ॥ ४३ ॥

वणे ऐसा (अव्यय) निश्चय, इत्यादिमें प्रयुक्त करें। उदा.-निश्चयमें—वणे देमि, निश्चयं ददामि। विकल्पमें-वणे होइ ण होइ, भवति वा न भवति। अनुकम्प्यमें—होइ दासो वणे ण मुच्चइ, भवति दासोऽनुकम्प्यो न मुच्यते ॥ ४३ ॥

संभावने अइ च ॥ ४४ ॥

अइ ऐसा (अव्यय), और (सूत्रमेंसे) चकारके कारण वणे यह (अव्यय), संभावनमें प्रयुक्त करें। उदा.-अइ दिअर किं ण पेच्छसि। णत्थि वणे जं ण देइ विहिपरिणामो ॥ ४४ ॥

आनन्तर्ये णवरिअ ॥ ४५ ॥

णवरिअ ऐसा (अव्यय) आनन्तर्य दिखाते समय प्रयुक्त करें। उदा.—णवरिअ से रहुवइणो, अनन्तरमस्य रघुपतेः ॥ ४५ ॥

केवले णवर ॥ ४६ ॥

केवल अर्थमें णवर ऐसा (अव्यय) प्रयुक्त करें। उदा.—णवर पिआइं चिअ णिव्वडन्ति, केवलं प्रियाण्येव निष्पतन्ति (यानी) पृथग्भवन्ति। 'केवला-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नन्तर्यर्योर्णवरणवरिअ' ऐसा एकही सूत्र है, ऐसा कोई कहते हैं। उनके मतानुसार, दोनों (भी) अव्यय दो अर्थोंमें हैं ॥ ४६ ॥

भन्द ग्रहणार्थे ॥ ४७ ॥

भन्द ऐसा (अव्यय) ग्रहण अर्थमें प्रयुक्त करें। उदा.—गन्द आलोएसु मं। गृहाण (ले) ऐसा अर्थ ॥ ४७ ॥

भन्दि विकल्पविषादसत्यनिश्चयपश्चात्तापेषु च ॥ ४८ ॥

भन्दि ऐसा (अव्यय) विकल्प, इत्यादिमें, तथा ग्रहण अर्थमें प्रयुक्त करें। उदा.—विकल्पमें—भन्दि भोज्ज एत्ताहे, भवेदिदानीम्। विषादमें—भन्दि चरणे तओ संमाणिओ, चरणौ ततः संमानितौ। सत्यमें—भन्दि तुह भणिमो। निश्चयमें—सासिज्जइ भन्दि तुह कज्जे। पश्चात्तापमें—भन्दि सहेहि धरणि। ग्रहण अर्थमें—भन्दि आलोएसु मं ॥ ४८ ॥

संभाषणरतिकलहे रे अरे ॥ ४९ ॥

संभाषण और रतिकलह इनमें यथाक्रमसे रे और अरे ये (अव्यय) प्रयुक्त करें। उदा.-संभाषणमें—रे रे हिअअ मडअसरिसा। रतिकलहमें—अरे बहुवल्लह मए समं मा करेसु उवहासं ॥ ४९ ॥

हरे क्षेपे च ॥ ५० ॥

क्षेप दिखाते समय, (और सूत्रमेंसे) चकारके कारण संभाषण और रतिकलह इनमें, यथाक्रमसे हरे ऐसा (अव्यय) प्रयुक्त करें। उदा.—क्षेपमें-हरे णिल्लज्ज। संभाषणमें—हरे पुरिसा। रतिकलहमें—हरे बहुवल्लह ॥ ५० ॥

धू कुत्सायाम् ॥ ५१ ॥

कुत्सामें धू ऐसा (अव्यय) प्रयुक्त करें। उदा.-धू णिल्लज्जो लोओ ॥ ५१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ऊ गर्हाविस्मयसूचनाक्षेपे ॥ ५२ ॥

गर्हा, इत्यादि दिखानेके समय ऊ ऐसा (अव्यय) प्रयुक्त करें। उदा.—गर्हामें—ऊ णिल्लज्ज। विस्मयमें—ऊ कहं मुणिआ अहं। सूचनमें—ऊ केण ण विण्णाअं। शुरु किए हुए वाक्यका विपर्यास होगा, इस शंकासे विनिवर्तन करना, यह आक्षेपका लक्षण है। वहाँ (उस आक्षेपमें)-ऊ किं मए भणिअं ॥ ५२ ॥

पुणरुत्तं कृतकरणे ॥ ५३ ॥

पुणरुत्तं ऐसा (शब्द) कृतकरणमें (किया हुआ पुनः करना) प्रयुक्त करें। उदा.—अइ सुव्वइ पंसुलि णीसहेहिं अंगेहिं पुणरुत्तं, अयि स्वपिषि पांसुले निःसहैरङ्गैः कृतकरणम् ॥ ५३ ॥

हु खु निश्चयविस्मयवितर्के ॥ ५४ ॥

हु और खु ये (अव्यय) निश्चय, इत्यादिमें प्रयुक्त करें। उदा.—निश्चयमें—तं पि हु अच्छिण्णसिरं। तं खु सिरीएँ रहस्सं। विस्मयमें—को खु एसो सहस्ससिरो। वितर्क यानी ऊह या संशय। ऊहमें—न हु नवर-सग्गहिआ एअं खु हसइ। संशयमें—जलधरो खु धूमो खु। संभावनमेंभी (हु और खु प्रयुक्त करें)। उदा.—तरिउं ण हु णवर इमं। एअं खु तुमं हसइ। बहुलका अधिकार होनेसे, अनुस्वारके आगे हु शब्द प्रयुक्त न करें ॥ ५४ ॥

णवि वैपरीत्ये ॥ ५५ ॥

णवि ऐसा (अव्यय) वैपरीत्यमें प्रयुक्त करें। उदा.—णवि लोअणो ॥ ५५ ॥

वेव्वे विषादभयवारणे ॥ ५६ ॥

वेव्वे ऐसा (अव्यय) विषाद, इत्यादिमें प्रयुक्त करें। उदा.—विषादमें-उल्लाविरीइ वेव्वे त्ति तीएँ भणिअं ण विम्हरिमो, किं उल्लापयन्त्या उत खिद्य-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मानया त्वया वेव्वे इति भणितं न विस्मरामः। भयमें-वेव्वे पलाइदं तेण। निवारणमें-उल्लाविरीइ वि तुमं वेव्वे त्ति मयच्छि किं णेअं। यहाँ उल्लाविरीइ का संबंध स्वप्नमें घटी हुई घटनाके साथ है ॥ ५६ ॥

आमन्त्रणे वेव्वे च ॥ ५७ ॥

और वेव्वे ऐसा (अव्यय) आमंत्रणमेंभी प्रयुक्त करें। उदा.—वेव्वे गोले। वेव्वे मुरन्दले वहसि पाणिअं ॥ ५७ ॥

चा सख्या मामि हला हले ॥ ५८ ॥

(इस सूत्रमें २.१.५७से) आमंत्रणे पद (अध्याहृत) है। सखीको आमंत्रण इस अर्थमें, मामि, हला और हले ऐसे (शब्द) विकल्पसे प्रयुक्त करें। उदा.—मामि सरिसक्खराण वि। पणवह माणस्स हला। हला सउन्दले। हले हआसे। विकल्पपक्षमें—सहि, एरिस च्चिअ गई॥५८॥

दे संमुखीकरणे च ॥ ५९ ॥

संमुखीकरण और सखीको आमंत्रण इनमें दे ऐसा (शब्द) प्रयुक्त करें। उदा.—दे पसिअ णिअत्तसु सुंदरि, यावत् प्रसीद निवर्तस्व सुन्दरि। दे सहि ॥ ५९ ॥

ओ पश्चात्तापसूचने ॥ ६० ॥

पश्चात्तापमें और सूचनामें ओ ऐसा (अन्यय) प्रयुक्त करें। उदा.—पश्चात्तापमें- ओ पच्चाअन्तिआए। सूचनामें—ओ अविणयतत्तिल्लो। परिकल्प अर्थमें, उत का जो आदेश ओकार, उससे ही यह कार्य सिद्ध होता है। उदा.—ओ विरएमि णहअले॥ ६० ॥

अण णाइं नञर्थे ॥ ६१ ॥

नकारके अर्थमें (नञर्थे) अण, णाइं ये (शब्द) प्रयुक्त करें। उदा.-अणचिंतिअं मुणन्ति, अचिन्तितं जानन्ति। णाइं करेमि रोसं, न करोमि रोषम् ॥ ६१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निश्चयनिर्धारणे वले ॥ ६२ ॥

निश्चयमें और निर्धारणमें वले ऐसा (अव्यय) प्रयुक्त करें। उदा.–निश्चयमें–वले सीहो, सिंह एवायम्। निर्धारणमें–वले पुरिसो धणंजओ खत्तिआणं, पुरुषो धनंजय एव क्षत्रियाणाम् ॥ ६२ ॥

मणे विमर्शे ॥ ६३ ॥

विमर्शमें मणे ऐसा प्रयुक्त करें। उदा.–मणे सूरो, किंस्वित् सूर्यः। मन्ये (मुझे भाता है) यह अर्थभी 'मन्ये'से दिखाया जाता है, ऐसा कोई मानते हैं ॥ ६३ ॥

माइं मार्थे ॥ ६४ ॥

माइं ऐसा मा (मत) अर्थमें प्रयुक्त करें। उदा.–माइं काहीअ रोसं, मा कार्षीद् रोषम् ॥ ६४ ॥

अलाहि निवारणे ॥ ६५ ॥

अलाहि ऐसा (अव्यय) निवारणमें प्रयुक्त करें। उदा.–अलाहि विसाएण, अलं विषादेन ॥ ६५ ॥

लक्षणे जेण तेण ॥ ६६ ॥

लक्षण दिखाते समय जेण तेण ये (दो शब्द) प्रयुक्त करें। उदा.-भमररुअं जेण कमलवणं। भमररुअं तेण कमलवणं ॥ ६६ ॥

त्वोदवापोताः ॥ ६७ ॥

अव और अप ऐसे ये उपसर्ग, और विकल्प अर्थ दिखानेवाला निपात उत, (उनके स्थानमें) ओ ऐसा (आदेश) विकल्पसे प्रयुक्त करें। उदा.–ओआरो अवतारः या अपकारः। ओ विरएमि णहत्थले, उत विरचयामि नभःस्थले। विकल्पपक्षमें—अवआरो। इत्यादि ॥ ६७ ॥

उ ओ उपेः ॥ ६८ ॥

उप ऐसा उपसर्ग उ और ओ ऐसे दो प्रकारसे प्रयुक्त करें। उदा.–उआरो ओआरो उपकारः ॥ ६८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रत्येकमः पडिएक्कं पाडिक्कं ॥ ६९ ॥

प्रत्येकम् इस अर्थमें पाडिएक्कं और पाडिक्कं ऐसे (शब्द) विकल्पसे प्रयुक्त करें। उदा.-पाडिएक्कं। पाडिक्कं। विकल्पपक्षमें—पच्चेअं ॥६९॥

स्वयमोऽर्थे अप्पणा ॥ ७० ॥

स्वयं के अर्थमें अप्पणा ऐसा (शब्द) विकल्पसे प्रयुक्त करें। उदा.-विसअं विअसंति अप्पणा कमलसरा। विकल्पपक्षमें—सअं चिअ मुणसि करणिज्जं, स्वयमेव जानासि करणीयम् ॥ ७० ॥

एक्कसरिअं झटिति संप्रति ॥ ७१ ॥

झटिति अर्थमें और संप्रति अर्थमें एक्कसरिअं ऐसा (शब्द) विकल्पसे प्रयुक्त करें। उदा.-एक्कसरिअं झटिति या संप्रति। विकल्पपक्षमें—झत्ति। संपइ ॥ ७१ ॥

इहरा इतरथा ॥ ७२ ॥

इहरा ऐसा (अव्यय) इतरथा (अन्यथा) के अर्थमें प्रयुक्त करें। उदा.—इहरा नीसामन्नेहिं। विकल्पपक्षमें-इअरहा ॥ ७२ ॥

मुधा मोरउल्ला ॥ ७३ ॥

मुधा के अर्थमें मोरउल्ला ऐसा (शब्द) विकल्पसे प्रयुक्त करें। उदा. मोरउल्ला। विकल्पपक्षमें—मुहा ॥ ७३ ॥

अयि ऐ ॥ ७४ ॥

अयि के अर्थमें ऐ ऐसा (शब्द) विकल्पसे प्रयुक्त करें। उदा.—ऐ बीहेइ। ऐ उम्मत्तिए। ऐसे इस विधानकेही कारण, ऐकारका भी प्राकृतमें प्रयोग होता है ॥ ७४ ॥

उअ पश्य ॥ ७५ ॥

पश्य के अर्थमें उअ ऐसा (अव्यय) प्रयुक्त करें। उदा.—उअ णिच्चलणिप्फंदा। विकल्पपक्षमें—ओअच्छ, इत्यादि पश्यत इस अर्थमें (होते

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हैं)। और उव्वह ऐसा भी (पश्य अर्थमें) दिखाई देता है। उदा.—उव्वह गोट्ठमज्झम्मि ॥ ७५ ॥

इजेराः पादपूरणे ॥ ७६ ॥

इ, जे, र ऐसे ये (शब्द) पादपूरणके लिए प्रयुक्त करें। उदा.—णअणा इ। अच्छी इ। अण्णेक्क इ। रूवं तु जे गब्भइ। कलमगोवी र। अहो, हंहो, हा, नाम, इत्यादि संस्कृतसमके रूपमेंही सिद्ध होते हैं। ॥ ७६ ॥

प्याद्याः ॥ ७७ ॥

पि, इत्यादि (अपने अपने) मूल अर्थमें प्राकृतमें प्रयुक्त करें। उदा.—पि यह अव्यय अपि के अर्थमें (प्रयुक्त करें) ॥ ७७ ॥

—द्वितीय अध्याय प्रथम पाद समाप्त—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

द्वितीयः पादः

वीप्सार्थात्तदचि सुपो मस्तु ॥ १ ॥

वीप्सार्थी पदके आगे होनेवाले विभक्ति-प्रत्ययके स्थानपर, तदचि यानी उस वीप्सार्थ वाचकसे संबंधित रहनेवाला स्वर आगे होनेपर, म विकल्पसे (बीचमें) आता है। उदा.-एकैकम् एक्कमेक्कं। एकैकेन एक्कमेक्केण। अंगे अंगे अंगमंगम्मि। विकल्पपक्षमें—एक्केक्कं इत्यादि ॥ १ ॥

अमः ॥ २ ॥

(इस सूत्रमें २.२.१ से) सुपः पदकी अनुवृत्ति है। संज्ञाके आगे आनेवाले विभक्तिप्रत्ययसे संबंधित होनेवाले अमः यानी द्वितीया एकवचनके स्थानपर मकार आता है। उदा.—वच्छं। मालं। गिरिं। गामणिं। तरुं। वहुं ॥ २ ॥

श्लुग्जश्शसोः ॥ ४ ॥

संज्ञाके आगे होनेवाले जस् और शस् इन दोनोंका लोप होता है। (सूत्रके श्लुक्में) श् इत् होनेसे, पिछला (पूर्व) स्वर दीर्घ होता है। उदा.-वच्छा। माला। गिरी। गोरी। गामणी। तरू। वहू चिट्ठन्ति पेच्छ वा ॥ ३ ॥

णशामः ॥ ४ ॥

संज्ञाके आगे आनेवाले षष्ठी बहुवचनके आम् (प्रत्यय) को णश् ऐसा आदेश होता है। (सूत्रके णश्में) श् इत् होनेसे, पूर्व स्वर दीर्घ होता है। उदा.—वच्छाण। वणाण। मालाण। गंगाण। गिरीण। दहीण। बुद्धीण। गामणीण। सुधीण। गोरीण। तरूण। महूण। वहूण। 'क्त्वा-सुपोस्तु सुणात्' (१.१.४३) सूत्रानुसार, विकल्पसे अनुस्वार आनेपर — वच्छाणं। गिरीणं। इत्यादि ॥ ४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हिं हिँ हि भिसः ॥ ५ ॥

संज्ञाके आगे आनेवाले भिस् प्रत्ययके सानुस्वार हिं, सानुनासिक हिँ और केवल हि होते हैं। उदा.—वच्छेहिं वच्छेहिँ वच्छेहि। धणेहिं धणेहिँ धणेहि। मालाहिं मालाहिँ मालाहि। गिरीहिं गिरीहिँ गिरीहि। बुद्धीहिं बुद्धीहिँ बुद्धीहि। दहीहिं दहीहि दहीहि। गामणीहिं गामणीहिँ गामणीहि। गोरीहिं गोरीहिँ गोरीहि। तरूहि तरूहिँ तरूहि। घेणूहिं घेणूहिँ घेणूहि। वहूहिं वहूहिँ वहूहि। महूहिँ महूहिँ महूहि। इत्यादि ॥ ५ ॥

हिंतोत्तोदोदु ङसिस् ॥ ६ ॥

संज्ञाके आगे होनेवाले ङसिस् यानी पंचमी विभक्तिके प्रत्ययोंको। हिंतो, द्विरुक्त तो (=त्तो), दो और दु ऐसे चार आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.—वच्छाहिंतो। 'भिस्भ्यस्सुपि' (२.२.२१) सूत्रानुसार, (संज्ञा शब्दके अन्त्य अकारका) ए होनेपर—वच्छेहिंतो। वच्छत्तो। वच्छादो। वच्छादु (यानी) वृक्षात् अथवा वृक्षेभ्यः॥ दहीहिंतो। दहित्तो। दहीदो। दहीदु॥ गोरीहिंतो। गोरित्तो। गोरीदो। गोरीदु॥ तरूहिंतो। तरुत्तो। तरूदो। तरूदु॥ महूहिंतो। महुत्तो। महूदो। महूदु॥ घेणूहिंतो। घेणुत्तो। घेणूदो। घेणूदु॥ दो और दु इनमेंसे दकार अन्य भाषाके लिए है। इसलिए शौरसेनी और मागधी भाषाओंमें—मलअकेदूदो मलअकेदूदु मलयकेतोः। पैशाची भाषामें, 'तलतदोः' (३.२.४६) सूत्र तकारके लिए है। इसलिए-गिरीतो। इसी प्रकार धन, माला, गिरि, बुद्धि, ग्रामणी, तरु, वधू, इत्यादि शब्दोंके रूप होते हैं॥ ६ ॥

सुंतो भ्यसः ॥ ७ ॥

पंचमी बहुवचन-प्रत्ययको सुंतो ऐसा आदेश होता है। उदा.—वच्छासुंतो वच्छेसुंतो। धणासुंतो धणेसुंतो। मालासुंतो। गिरीसुंतो। दहीसुंतो। गामणीसुंतो। इत्यादि ॥ ७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दिदोत्तोदु ङसौ ॥ ८ ॥

दो, त्तो, दु ये पंचमीके आदेश, और ङसि यानी पंचमी एकवचनका प्रत्यय, ये आगे होनेपर, पूर्व स्वर दीर्घ होता है। उदा.-वच्छाओ वच्छत्तो। 'संयोगे' (१.२.४०) सूत्रानुसार, दीर्घ होनेपरभी (वच्छत्तोमें) ऱ्हस्व होता है; तथापि यहाँ उसका ग्रहण करनेका कारण (यहाँ) एत्व (होने) का बाध हो। ङसि कहनेपर, (दो और दु प्रत्यय) सिद्ध होते हुए भी, दो और दु इसका जो ग्रहण किया है वह भी एत्वको अपवाद हो इसलिए। उदा.— वच्छाउ वच्छाहिंतो वच्छाहि॥ धणाओ धणत्तो धणाउ धणाहिंतो धणाहि॥ गिरीओ गिरित्तो गिरीउ गिरीहिंतो गिरीहि। गोरिओ गोरित्तो गोरीउ गोरीहि॥ दहीओ दहित्तो दहीउ दहीहिंतो दहीहि॥ बुद्धीओ बुद्धित्तो बुद्धीउ बुद्धीहिंतो बुद्धीहि॥ गामणीओ गामणित्तो गामणीउ गामणीहिंतो गामणीहि॥ तरूओ तरुत्तो तरूउ तरूहिंतो तरूहि॥ महूओ महुत्तो महूउ महूहिंतो महूहि। धेणूओ धेणुत्तो धेणूउ धेणूहिंतो धेणूहि॥ वहूओ वहुत्तो वहूउ वहूहिंतो वहूहि॥ ८॥

सोर्लुक् ॥ ९ ॥

संज्ञाके आगे होनेवाले सु का (यानी) प्रथमा एकवचन-प्रत्ययका लोप होता है। उदा.-हे देव। हे गंगे। हे गोरि। हे लच्छि। हे गामणि। हे वहु॥ ९॥

ङसोऽस्त्रियां सर्॥ १०॥

ङस् को (यानी) षष्ठी एकवचन प्रत्ययको स आदेश होता है; किंतु वह अस्त्रियां यानी स्त्रीलिंग शब्दकेबारेमें नहीं होता। (सूत्रके सर् में) र् इत् होनेसे, (स का) द्वित्व होता है। उदा.—वच्छस्स। धणस्स। गिरिस्स। दहिस्स। गामणिस्स। तरुस्स। महुस्स। स्त्रीलिंग-शब्दोंमें नहीं होता, ऐसा क्यों कहा है? (कारण स्त्रीलिंगशब्दोंको स्स प्रत्यय नहीं लगता)। उदा.—गंगाए। गोरीए। धेणूए। वहूए॥ १०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ङेर्म्मिर् ॥ ११ ॥

स्त्रीलिंगमें न होनेवाली संज्ञाके आगे सप्तमी एकवचन प्रत्ययको म्मिर् ऐसा आदेश होता है। (म्मिर् में) र् इत् होनेसे, (म्मि का) द्वित्व होता है। उदा.—वच्छम्मि। धणम्मि। गिरिम्मि। दहिम्मि। तरुम्मि। महुम्मि। स्त्रीलिंगमें न होनेवाले (संज्ञाके आगेही म्मि आदेश होता है; स्त्रीलिंग-शब्दके आगे नहीं) उदा.-मालाए। बुद्धीए। धेणूए। वहूए ॥११॥

अतो डो विसर्गः ॥ १२ ॥

अकारान्त (शब्दों) के आगे विसर्गका डित् ओकार होता है। उदा.—सर्वतः सव्वओ। पुरतः पुरओ। अग्रतः अग्गओ। इसी प्रकार सिद्धावस्थामेंसे शब्दोंकी अपेक्षासे। उदा.—भवतः भवओ। भवन्तः भवन्तो। सन्तः सन्तो। कुतः कुओ ॥ १२ ॥

सोः ॥ १३ ॥

(इस सूत्रमें २.२.१२ से) अतः पदकी अनुवृत्ति है। (शब्दोंके अन्त्य) अकारके आगे सु (प्रथमा एकवचन) प्रत्ययके स्थानपर डो (डित् ओ) होता है। उदा.—वच्छो। देवो ॥ १३ ॥

वैतत्तदः ॥ १४ ॥

अकारान्त एतद् और तद् (सर्वनामों) के आगे सु का डो (डित् ओ) विकल्पसे होता है। उदा.—एसो एस। सो स ॥ १४ ॥

ङसेः श्लुक् ॥ १५ ॥

(इस सूत्रमें २.२.१४ से) वा पदकी अनुवृत्ति है। (शब्दोंके अन्त्य) अकारके आगे ङसि (पंचमी ए. व.) प्रत्ययका श्लुक् विकल्पसे होता है। (श्लुक में) श इत् होनेसे, पूर्व स्वर दीर्घ होता है। उदा.—वच्छा। धणा। विकल्पपक्षमें-वच्छाहिंतो वच्छत्तो वच्छाओ वच्छाउ वच्छाहि ॥ १५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ङेर्डे ॥ १६ ॥

(शब्दोंके अन्त्य) अकारके आगे सप्तमी एकवचनका ङित् ए विकल्पसे होता है। उदा.—वच्छे। धणे। विकल्पपक्षमें—वच्छम्मि। धणम्मि ॥ १६ ॥

ङसिसो हि ॥ १७ ॥

(शब्दोंके अन्त्य) अकारके आगे ङसिस्को यानी पंचमीको हि ऐसा (आदेश) विकल्पसे होता है। उदा.—वच्छाहि। धणाहि। भ्यस् प्रत्ययके पूर्व (अन्त्य अकारका) ए होनेपर—वच्छेहि। धणेहि। विकल्पपक्षमें—हिंतो, त्तो, दो, दु, ये (आदेश होतेही हैं) ॥ १७ ॥

टो डेणल् ॥ १८ ॥

(शब्दोंके अन्त्य) अकारके आगे टा—(तृतीया एक) वचनको डित एण ऐसा आदेश होता है। (सूत्रके डेणल्में) ल् इत् होनेसे, (यह आदेश) नित्य होता है। उदा.—वच्छेण। धणेण। (क्त्वाड्डुपोस्तु डुणात्। १.१.४३ सूत्रानुसार) अनुस्वार आनेपर—वच्छेणं। धणेणं। (ऐसे रूप होंगे) ॥ १८ ॥

दिर्वा भ्यसि ॥ १९ ॥

(अबतक) अतः ऐसा जो पंचम्यन्त पद था (देखिए २.२.१२), वह (अब) षष्ठ्यन्त विभक्तिमें परिणत होता है। भ्यस् का आदेश (आगे) होनेपर, अत् का दि यानी दीर्घ विकल्पसे होता है। उदा.—वच्छाहिंतो वच्छेहिंतो। वच्छ सुंतो वच्छेसुंतो। वच्छाहि वच्छेहि। त्तो, दो, दु (ये आदेश आगे होनेपर), दीर्घ होताही है (सूत्र २.२.८ देखिए) ॥ १९ ॥

शस्येत् ॥ २० ॥

(शब्दोंके अन्त्य) अकारका शस् प्रत्यय आगे होनेपर, ए विकल्पसे होता है। उदा.-वच्छे वच्छा पेच्छ ॥ २० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भिस्भ्यस्सुपि ॥ २१ ॥

भिस्, भ्यस् और सुप् ये (प्रत्यय) आगे होनेपर, (शब्दोंके अन्त्य) अ का ए होता है। यह सूत्र (२.२.२० से) पृथक् कहा जानेसे, (यहाँका ए) नित्य होता है। उदा.-भिस् (आगे होनेपर)—वच्छेहिं। भ्यस् (आगे होनेपर)—वच्छेहिंतो वच्छेसुंतो। वच्छेहि। त्तो, दो, दु (प्रत्यय) आगे होनेपर, दी ही होता है। सुप् (आगे होनेपर)—वच्छेसु ॥ २१ ॥

इदुतोर्दिः ॥ २२ ॥

भिस्, भ्यस् और सुप् (ये प्रत्यय) आगे होनेपर, (शब्दोंके अन्त्य) इ और उ इनका दिः यानी दीर्घ होता है। उदा.-भिस् (आगे होनेपर)—गिरीहिं गिरीहि। इसी तरह- बुद्धीहिं। तरूहिं। धेणूहिं। महूहिं। भ्यस् (आगे होनेपर)—गिरीहिंतो। गिरीसुंतो। गिरीओ। गिरीउ। इसी तरह—बुद्धीओ। गामणीओ। तरूओ। महूओ आअअं। सुप (आगे होनेपर)—गिरीसु। दहीसु। गामणीसु। तरूसुं ठिअं। क्वचित् (ऐसा दीर्घ) नहीं होता। उदा.—दिअभूमिसु दाणजलद्दिआइं, द्विजभूमिषु दानजलार्द्रितानि। इ और उ इनका, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अकारके बारेमें ऐसा नहीं होता।) उदा.—वच्छेहि। वच्छेसुंतो। वच्छेसु ॥ २२ ॥

चतुरो वा ॥ २३ ॥

उकारान्त चतुर् शब्दके आगे भिस्, भ्यस्, सुप् (प्रत्यय) होनेपर, दीर्घ विकल्पसे होता है। उदा.—चउहि चऊहि। चउहिंतो चऊहिंतो। चउसु चऊसु ॥ २३ ॥

पुंसो जसो डउडओ ॥ २४ ॥

(अब) इदुतः (देखिए २.२.२२) पदका पंचम्यन्त परिणाम होता है। पुल्लिंग-शब्दोंमेंसे (अन्त्य) इ और उ इनके आगे आनेवाले जस् (प्रत्यय) को डित् अउ और अओ ऐसे ये (आदेश) विकल्पसे होते हैं। उदा.—अग्गउ अग्गओ। वाअउ वाअओ। विकल्पपक्षमें—अग्गी अग्गिणो। वाऊ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वाउणो। पुल्लिंग-शब्दोंमें, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्यलिंग शब्दोंमें ऐसा नहीं होता)। उदा.—बुद्धीइ। दहीइ। इ और उ इनके आगेही (ऐसे आदेश होते हैं; अकारान्त शब्दके आगे नहीं)। उदा.—वच्छा ॥ २४ ॥

ङवो उतः ॥ २५ ॥

(इस सूत्रमें २.२.२४ से) पुंसः और जसः पद (अध्याहृत) हैं। पुल्लिंग-शब्दमेंसे (अन्त्य) उ के आगे आनेवाले जस् (प्रत्यय) को डित् अवो ऐसा (आदेश) विकल्पसे होता है। उदा.—वाअवो। विकल्पपक्षमें—वाअओ वाऊ वाउणो। (अन्त्य) उ के आगे, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अकारान्त पुल्लिंगशब्दोंमें ऐसा नहीं होता)। उदा.—वच्छा। पुल्लिंग-शब्दमें, ऐसा क्यों कहा है? (कारण उकारान्त स्त्रीलिंगशब्दमें ऐसा नहीं होता)। उदा.—धेणूउ। वहूउ ॥ २५ ॥

णो शसश्च ॥ २६ ॥

(यह सूत्र) पृथक् कहा जानेसे, इत् और उत् इन दोनोंका ग्रहण यहाँ होता है। (शब्दोंके अन्त्य) इत् और उत् इनके आगे आनेवाले जस् (प्रत्यय) को और शस् (प्रत्यय)को णो ऐसा आदेश होता है। उदा.—गिरिणो तरुणो चिट्ठन्ति पेच्छ वा। विकल्पपक्षमें—गिरी। तरू ॥ (इकारान्त और उकारान्त शब्द) पुल्लिंगमें होनेपरही, ऐसा आदेश होता है; (अन्य लिंगमें होनेपर, ऐसा आदेश नहीं होता)। उदा.—बुद्धी। धेणू। दहीइं। महूइं ॥ २६ ॥

नृनपि ङसिङसोः ॥ २७ ॥

पुल्लिंग और नपुंसकलिंग (शब्दों)में (अन्त्य स्थानपर) होनेवाले इ और उ इनके आगे आनेवाले ङसि और ङस् (प्रत्ययों)को णो ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-गिरिणो तरुणो आगओ विआरो वा। विकल्प-पक्षमें-ङसि (आगे होनेपर)—गिरीओ। तरूओ। दहीओ। महूओ। ङस् (आगे होनेपर) —गिरिस्स। तरुस्स। दहिस्स। महुस्स। नृनपि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यानी :पुल्लिंगमें और नपुंसकलिंगमें (इकारान्त और उकारान्त शब्द) होनेपर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण ऐसे स्त्रीलिंगशब्दोंमें यह आदेश नहीं होता)। उदा.-बुद्धीए। धेणूए। ङसि और ङस् (प्रत्ययों) को, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्य विभक्तिप्रत्ययोंको ऐसा आदेश नहीं होता।) उदा.-रिद्धी।समिद्धी। दिट्ठं। इ और उ इनके आगे ही ऐसा आदेश होता है (अन्य स्वरोंके आगे नहीं)। उदा.-कमले। कमलस्स ॥ २७ ॥

टो णा ॥ २८ ॥

पुल्लिंग और नपुंसकलिंग (शब्दों)में (अन्त्य) होनेवाले इ और उ इनके आगे टा-(तृतीया एक)वचनका णा होता है। उदा.-गिरिणा। दहिणा। गामणिणा। तरुणा। महुणा। खलपुणा। नृनपि यानी पुल्लिंग और नपुंसकलिंग (शब्दों) मेंही ऐसा होता है (अन्यथा नहीं)। उदा.— बुद्धीए। धेणूए। इ और उ इनके आगेही ऐसा होता है (अन्य स्वरोंके आगे नहीं)। उदा.-कमलेण ॥ २८ ॥

श्लुगनपि सोः ॥ २९ ॥

(शब्दोंके अन्त्य) इ और उ इनके आगे आनेवाले सु (प्रत्यय) का शानुबंध लोप होता है। अनपि यानी (इकारान्त और उकारान्त) नपुंसकलिंग (शब्दों) में (ऐसा लोप) नहीं होता। उदा.-गिरी। बुद्धी। तरू। धेणू। नपुंसकलिंग-(शब्द) में (लोप) नहीं होता, ऐसा क्यों कहा है? (कारण वहाँके रूप ऐसे)—दहिं। महुं ॥ २९ ॥

मङ्लुगसंबुद्धेर्नपः ॥ ३० ॥

(अब) इदुतः पदकी निवृत्ति हुई। नपः यानी नपुंसकलिंग (शब्द) के आगे आनेवाले सु (प्रत्यय) का मकार और ङानुबंध लोप होते हैं; आमंत्रण (संबोधन) इस अर्थमें (होनेवाले सु का ऐसा) नहीं होता। उदा.- वणं। दहिं। महुं। पर दहि, महु ये रूप मात्र सिद्धावस्थाकी अपेक्षासे हैं। बहुलका अधिकार होनेसे, अकारान्त शब्दके आगे लोप नहीं होता॥ ३०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शिर्निशिङ्ग् जश्शसोः ॥ ३१ ॥

(इस सूत्रमें २.२.३० से) नपः पदकी अनुवृत्ति है। नपुंसकलिंग-शब्दके आगे आनेवाले जस् और शस् इन प्रत्ययोंको श् अनुबंध होनेवाले श्नि, र्शि और शिङ् ऐसे तीन आदेश प्राप्त होते हैं। शकार दीर्घके लिए है। ङकार सानुनासिक उच्चारके लिए है। उदा.-वणाणि वणाइं वणाइँ। गुणाणि गुणाइं गुणाइँ चिट्ठन्ति पेच्छ वा। इसी तरह दहि, महु, बिन्दु, इत्यादि शब्दोंके बारेमें। नपुंसकलिंग (शब्द) के आगेही ऐसे आदेश होते हैं (अन्यथा नहीं)। उदा.-वच्छा ॥ ३१ ॥

शोशु स्त्रियां तु ॥ ३२ ॥

(इस सूत्रमें २.२.३१ से) जस् और शस् पद (अध्याहृत) हैं। स्त्रीलिंगमें होनेवाले संज्ञाके आगे जस् और शस् ये (प्रत्यय) शित् ओ और उ विकल्पसे होते हैं। (श् इत् होनेसे, पूर्व स्वर दीर्घ होता है)। उदा.-मालाओ मालाउ। बुद्धीओ बुद्धीउ। इसी तरह सही, घेणु, वहू, इत्यादि शब्दोंके बारेमें। विकल्पपक्षमें-माला। बुद्धी। सही। घेणू। वहू। स्त्रीलिंगमें (होनेबाले), ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्य लिंगमें ऐसा नहीं होता)। उदा.—वच्छा। जस् और शस्, ऐसा क्यों कहा है? (कारण इतर प्रत्ययोंके ऐसे विकार नहीं होते)। उदा.-मालाए कअं ॥ ३२ ॥

आदीतः सोश्च ॥ ३३ ॥

(इस सूत्रमें २.२.३२ से) स्त्रियां पदकी अनुवृत्ति है। स्त्रीलिंगमें होनेवाले ईकारान्त संज्ञाके आगे सु (प्रत्यय)का तथा सूत्रमेंसे चकारके कारण जस् और शस् (प्रत्ययों) का आ विकल्पसे होता है। उदा.-एसा हसन्तीआ। जस् और शस्-गोरीआ रोहन्ति पेच्छ वा। विकल्पपक्षमें—हसन्तीओ। गोरीओ ॥ ३३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ङसेः शशाशिशे ॥ ३४ ॥

स्त्रीलिंगमें होनेवाली संज्ञाके आगे ङसि प्रत्ययको शित् अ, आ, इ और ए ऐसे चार आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-मालाअ मालाइ मालाए । गोरीअ गोरीआ गोरीइ गोरीए। इसी तरह घेणु, वहू इनके बारेमें। विकल्पपक्षमें-मालाहिंतो। मालत्तो। मालाओ। मालाउ। इसी तरह बुद्धीहिंतो, इत्यादि ॥ ३४ ॥

टाङिङसाम् ॥ ३५ ॥

(इस सूत्रमें २.२.३४ से) शशाशिशे पदकी अनुवृत्ति है। स्त्रीलिंगमें (होनेवाली) संज्ञाके आगे टा, ङि और ङस् इन प्रत्ययों) के स्थानपर शित् अ, आ, इ और ए ऐसे ये आदेश होते हैं। यह सूत्र (२.२.३४ से) पृथक् कहा जानेसे, (ये आदेश) नित्य होते हैं। उदा.-जाआअ जाआइ जाआए कअं ठिअं मुहं वा। (आगे) क-प्रत्यय होनेपर—जाइआअ जाइआइ जाइआए। बुद्धिआअ बुद्धिआआ बुद्धिआइ बुद्धिआए। (आगे) क-प्रत्यय न होनेपर-बुद्धीअ बुद्धीआ बुद्धीइ बुद्धीए कअं ठिअं वअणं वा। स्त्रीलिंगमें (होनेवाली), ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्य लिंगमें ऐसे आदेश नहीं होते)। उदा.—वच्छेण। वच्छम्मि। वच्छस्स॥ ३५ ॥

नातः शा ॥ ३६ ॥

स्त्रीलिंगमें होनेवाली संज्ञाके आगे टा, ङि और ङस् इन (प्रत्ययों)का प्राप्त हुआ शा यानी शित् आकार, वह आकारान्त (स्त्रीलिंग) संज्ञाके आगे नहीं आता। उदा.—मालाअ मालाइ मालाए कअं ठिअं मुहं वा॥ ३६ ॥

पुंसोऽजातेर्ङीब्वा ॥ ३७ ॥

जातिवाचक न होनेवाले पुल्लिंग-शब्दोंके आगे स्त्रीलिंगमें आनेवाला ङीप् प्रत्यय विकल्पसे आता है। उदा.—नीली नीला। काली काला। हसमाणी हसमाणा। सुप्पणही सुप्पणहा। इमीए इमाए। इमीणं इमाणं। एईए एआए। एईणं एआणं।—जातिवाचक न होनेवाला, ऐसा क्यों कहा है? (कारण जाति-वाचक होनेपर, ङीप् प्रत्यय विकल्पसे नहीं आता।) उदा.-अआअ अआइ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अआए। (जहाँ यह प्रत्यय) प्राप्त नहीं होता, वहाँ यह विकल्पका नियम है; इसलिए गौरी, कुमारी, इत्यादि शब्दोंमें संस्कृतकी तरह (यह प्रत्यय) नित्य आता है ॥ ३७ ॥

ङीप्प्रत्यये ॥ ३८ ॥

(इस सूत्रमें २.२.३७से) वा पदकी अनुवृत्ति है। 'टिड्ढाणञ्' (पा. ४.१.१५) इत्यादि सूत्रानुसार, प्रत्यय-निमित्तसे जो ङीप् प्रत्यय कहा गया है, वह स्त्रीलिंगमें होनेवाली संज्ञाओंको विकल्पसे लगता है। उदा.—साहणी साधनी। कुरुअरी। विकल्पपक्षमें—विकल्पके सामर्थ्यसेही टाप् (प्रत्यय लगता है)। उदा.—साहणा। कुरुअरा ॥ ३८ ॥

हरिद्राच्छाये ॥ ३९ ॥

(हरिद्रा और छाया) इन शब्दोंमें ङीप् (प्रत्यय) विकल्पसे आता है। उदा.—हलद्दी हलद्दा। छाही छाहा ॥ ३९ ॥

किंयत्तदोऽस्वमामि सुपि ॥ ४० ॥

सु, अम् और आम् प्रत्ययोंको छोडकर, अन्य विभक्तिप्रत्यय आगे होनेपर, किम्, यद् और तद् इन (सर्वनामों)के आगे स्त्रीलिंगमें ङीप् (प्रत्यय) विकल्पसे आता है। उदा.—कीओ काओ। कीए काए। कीसु कासु ॥ जीओ जाओ। जीए जाए। जीसु जासु ॥ तीओ ताओ। तीए ताए। तीसु तासु ॥ सु,अम्, आम् प्रत्ययोंको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण इन प्रत्ययोंके पूर्व ङीप् विकल्पसे नहीं आता)। उदा.—का। जा। सा। कं। जं। तं। काणं। जाणं। ताणं ॥ ४० ॥

स्वस्रादेर्डा ॥ ४१ ॥

स्त्रीलिंगमें होनेवाले स्वसृ, इत्यादि शब्दोंके आगे डित् आ प्रत्यय आता है। (सूत्रके डाल्में) ल् इत् होनेसे, (यह प्रत्यय) नित्य आता है। उदा.-ससा। णणन्दा। दुहिआ। दुहिआहि। दुहिआसु ॥ ४१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

डोश्लुकौ तु संबुद्धेः ॥ ४२ ॥

'सोः' (२.२.१३) इस सूत्रसे प्राप्त हुआ डो, और 'श्लुगनपि सोः' (२.२.२९) इस सूत्रसे जो श्लुक् कहा गया, वे दोनों, संबुद्धि यानी आमंत्रण इस अर्थमें होनेवाले सु (=प्र. ए. व.) प्रत्ययके विकल्पसे होते हैं। उदा.–हे देव, हे देवो। हे अज्ज, हे अज्जो। श्लुक् (का उदाहरण)। हे हरि, हे हरी। हे गुरु, हे गुरू। हे बुद्धि, हे बुद्धी। हे वहु, हे वहू। जाइविसुद्धेण पहू, जातिविशुद्धेन प्रभो। संबोधनके अर्थमें होनेवाले, ऐसा क्यों कहा है? (कारण आमंत्रणके अर्थमें जब अव्ययोंका उपयोग होता है (देखिए २.१.५९), तब अगला प्रकार होता है)—दे कासवा। दे गोअरा। रे रे पिळिआ। रे रे णिग्घणिआ ॥४२॥

ऋदन्ताड्डः ॥ ४३ ॥

(इस सूत्रमें २.२.४२ से) संबुद्धेः पदकी अनुवृत्ति है। (ऱ्हस्व) ऋकारान्त संज्ञाके आगे संबोधन (प्रत्यय) का डित् अ विकल्पसे होता है। उदा.–हे पितः हे पिअ। हे दातः हे दाअ ॥ ४३ ॥

नाम्नि डरम् ॥ ४४ ॥

नामवाचक यानी संज्ञावाचक (ऱ्हस्व) ऋकारान्त शब्दोंके आगे संबोधन (प्रत्यय) को डित् अरं ऐसा (आदेश) विकल्पसे होता है। उदा.-हे पितः हे पिअरं। विकल्पपक्षमें—हे पिअ। नाम (संज्ञा) वाचक, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्यत्र ऐसा नहीं होता)। उदा.-हे कत्तार ॥४४॥

टापो डे ॥४५॥

टाप् प्रत्ययसे अन्त होनेवाले शब्दोंके आगे संबोधन (प्रत्यय) का डित् ए विकल्पसे होता है। उदा.-हे माले। हे अज्जे। विकल्पपक्षमें-हे माला। हे अज्जु। इत्यादि। टाप् प्रत्ययसे अन्त होनेवाले, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्यत्र ऐसा नहीं होता)। उदा.-हे पिउच्छा। हे माउच्छा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुलका अधिकार होनेसे, क्वचित् ओ भी होता है। उदा.-अम्मो भणामि भणिए ॥ ४५ ॥

ह्रस्वलीदूतः ॥ ४६ ॥

संबोधनके निमित्तसे, (शब्दोंके अन्त्य) ई और ऊ लित् (=नित्य) ह्रस्व होते हैं। उदा.-हे णइ। हे लच्छि। हे वहु ॥ ४६ ॥

क्विपः ॥ ४७ ॥

अब संबुद्धेः पदकी निवृत्ति हो गई। क्विबन्त के रूपमें आनेवाले ई और ऊ इनका ह्रस्व होता है। उदा.-गामणिणा। खलपुणा। गामणिसुंतो। खलपुहिं ॥ ४७ ॥

उद्दतां त्वस्वमामि ॥ ४८ ॥

अस्वमामि यानी सु, अम् और आम् प्रत्ययोंको छोडकर, अर्थात् अन्य विभक्ति-प्रत्यय आगे होनेपर, (ह्रस्व) ऋकारान्त शब्दोंमें (ऋ का) उ विकल्पसे होता है। उदा.-जस् प्रत्यय (आगे होनेपर)-भत्तू भत्तुणो भत्तओ भत्तउ। विकल्पपक्षमें—भत्तारा। शस् (प्रत्यय आगे होनेपर)-भत्तू भत्तुणो। विकल्पपक्षमें-भत्तारा। टा (प्रत्यय आगे होनेपर)-भत्तुणा। (विकल्पपक्षमें) भत्तारेण। भिस् (प्रत्यय आगे होनेपर)-भत्तूहिं। विकल्पपक्षमें-भत्तारेहिं। ङसि (प्रत्यय आगे होनेपर)-भत्तूहिंतो भत्तुत्तो भत्तूओ भत्तूउ भत्तूणो। विकल्पपक्षमें-भत्ताराहिंतो भत्तारत्तो भत्ताराउ भत्तारा भत्ताराहि। ङस् (प्रत्यय आगे होनेपर)-भत्तुणो भत्तुस्स। विकल्पपक्षमें-भत्तारस्स। ङि (प्रत्यय आगे होनेपर)-भत्तुम्मि। विकल्पपक्षमें-भत्तारे। सुप् (प्रत्यय आगे होनेपर)-भत्तूसु। विकल्पपक्षमें:-भत्तारेसु। (ऋतां यानी ऋदन्तानां यह) बहुवचन व्याप्ति दिखानेके लिए है; इसलिए (वाङ्मयमें) दिखाई देगा वैसा संज्ञाओंमें (अन्त्य ऋ का) उ विकल्पसे होता है। उदा.-जस्, शस्, ङसि, ङस् (प्रत्यय आगे होनेपर उ होता है)। उदा.-पिउणो। जामाउणो। टा-माउणा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भिस्-पिऊहिं। सुप्-पिऊसु। विकल्पपक्षमें-पिआर, इत्यादि। सु, अम् और आम् प्रत्ययोंको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण इन प्रत्ययोंके पूर्व ऋ का उ नहीं होता)। उदा.-सु-पिआ। अम्-पिअरं। आम्-पिअराणं ॥ ४८ ॥

आरः सुपि ॥ ४९ ॥

(ह्रस्व) ऋकारान्त शब्दोंमें (अन्त्य ऋ को), विभक्तिप्रत्यय आगे होनेपर, आर ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-भत्तारो। भत्तारा। भत्तारं। भत्तारे। भत्तारेणं। भतारेहिं। इसीप्रकार अन्य शब्दोंके रूप उदाहरणके रूपमें लेना। लुप्त हुए विभक्तिकी अपेक्षासे 'भत्तारविहिअं' (ऐसा होता है) ॥ ४९ ॥

मातुरा अरा ॥ ५० ॥

मातृ शब्दमें (अन्त्य ऋ को) आ और अरा ऐसे आदेश होते हैं। उदा.-माआ माअरा। माआओ माअराओ। माआइ माअराइ। माअं माअरं। बहुलका अधिकार होनेसे, (मातृ शब्दका) माँ अर्थ होनेपर आ (आदेश होता है) और देवता अर्थ होनेपर, अरा (ऐसा आदेश होता है)। उदा.-माआए कुच्छिआए। णमो माअराणं। 'इदुन्मातुः' (१.२.८२) सूत्रानुसार (मातृ में ऋ का) उ होनेपर, माउणि (ऐसा होगा)। 'उदृतां त्वस्वमामि' (२.२.४८) सूत्रानुसार (ऋ का) उ होनेपर, माऊण माऊए (ऐसे रूप होंगे)। समत्तिअं वन्दे। सुप् प्रत्यय आगे होनेपरही (मातृमें ऋ को ऐसे आदेश होते हैं, अन्यथा नहीं)। उदा.-माइदेवो। माइगणो ॥ ५० ॥

संज्ञायामरः ॥ ५१ ॥

संज्ञावाचक ऋकारान्त शब्दोंके आगे विभक्ति प्रत्यय होनेपर, (ऋ को) अर ऐसा आदेश होता है। उदा.-पिअरा पिअरो। पिअरं। पिअरे। पिअरेण पिअरेहिं। जामाअरो जामाअरा। जामाअरं जामाअरे। जामाअरेण जामाअरेहिं ॥ ५१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आ सौ वा ॥ ५२ ॥

ऋकारान्त शब्दोंके आगे सु (प्र. ए. व.) प्रत्यय होनेपर, (ऋ का) आ विकल्पसे होता है। उदा.–पिआ। माआ। जामाआ। भाआ। भत्ता। कत्ता। विकल्पपक्षमें–पिअरो। माअरो। जामाअरो। भाअरो। भत्तारो। कत्तारो ॥ ५२ ॥

राज्ञः ॥ ५३ ॥

(इस सूत्रमें २.२.५२ से) वा पदकी अनुवृत्ति है। राजन् शब्दमें न् का लोप होनेपर, (राजन् मेंसे) अन्त्य वर्णके आगे सु (प्र. ए. व.) प्रत्यय होनेपर, (उस अन्त्य वर्णका) आ विकल्पसे होता है। उदा.–राआ। हे राआ। विकल्पपक्षमें आण ऐसा आदेश होनेपर–राआणो। हे राआणो। हे राअं, ऐसा शौरसेनीमें होता है ॥ ५३ ॥

टो णा ॥ ५४ ॥

(इस सूत्रमें २.२.५३ से) राज्ञः पदकी अनुवृत्ति है। राजन् शब्दके आगे आनेवाले टा (तृ. ए.) वचनको णा ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–रइणा रण्णा। विकल्पपक्षमें–राएण कअं ॥ ५४ ॥

जश्शस्ङसिङसां णोश् ॥ ५५ ॥

राजन् शब्दके आगे, जस्, शस्, ङसि और ङस् इन प्रत्ययोंको शित् णो ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–जस्–राआणो चिट्ठन्ति। विकल्पपक्षमें–राआ। शस्–राआणो पेच्छ। विकल्पपक्षमें–राआ। ङसि–राइणो रण्णो आअओ। विकल्पपक्षमें-राआहिंतो राअत्तो राआओ राआउ राआ राआहि। ङस्–राइणो रण्णो धणं। विकल्पपक्षमें–राअस्स ॥ ५५ ॥

णोणाङिष्विदना जः ॥ ५६ ॥

णो और णा ये दो आदेश, तथा ङि (स. ए.) वचन (प्रत्यय) आगे होनेपर, राजन् शब्दसे संबंधित होनेवाले (=राजन्मेंसे) जकारका अन् के साथ इकार विकल्पसे होता है। उदा.—राइणो चिट्ठन्ति पेच्छ आअओ धणं वा। राइणा कअं। राइम्मि ठिअं। विकल्पपक्षमें–राआणो। रण्णा। राएण। राअम्मि ॥ ५६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इणममामा ॥ ५७ ॥

(इस सूत्रमें २.१.५६ से) अना जः इन पदोंकी अनुवृत्ति है। राजन् शब्दसे संबंध होनेवाले, अन् के सहित जकारको, अम् और आम् प्रत्ययोंके साथ, इणं ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–राइणं पेच्छ धणं वा। विकल्पपक्षमें–राअं। राआणं ॥ ५७ ॥

भिस्भ्यसाम्सुप्स्वीत् ॥ ५८ ॥

भिस्, भ्यस्, आम् और सुप् ये प्रत्यय आगे होनेपर, राजन् शब्दमें, अन् से सहित जकारका ईकार विकल्पसे होता है। उदा.–भिस्–राईहिं। भ्यस्–राईहिंतो। राईसुंतो। राईहि। आम्–राईणं। सुप्–राईसु। विकल्पपक्षमें–राएहिं। इत्यादि ॥ ५८ ॥

ङस्ङसिटां णोणोर्डिण् ॥ ५९ ॥

ङस्, ङसि और टा-वचन प्रत्ययोंको जो णो और णा आदेश होते हैं, वे आगे होनेपर, राजन् शब्दमें अन्से सहित जकारको डित् अण् ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–रण्णो राइणो धणं आअओ वा। रण्णा राइणा कअ। ङस्, ङसि और टा (इन प्रत्ययोंके आदेश), ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्य कुछ प्रत्ययोंके ऐसे आदेश होके भी, ऐसा नहीं होता)। उदा.–राआणो चिट्ठन्ते पेच्छ वा। (सूत्रमें) णोणो (णो और णा आगे होनेपर), ऐसा क्यों कहा है? (कारण ये आदेश न होनेपर, यहाँका वर्णान्तर नहीं होता)। उदा.–राअस्स। राअओ। राएण ॥ ५९ ॥

पुंस्याणो राजवच्चानः ॥ ६० ॥

पुल्लिंगमें होनेवाले (शब्दोंके अन्त्य) अन् के स्थानपर आण ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। विकल्पपक्षमें, (वाङ्मयमें) दिखाई देगा वैसा राजन् शब्दकी तरह कार्य होता है। आण आदेश होनेपर, सोः (२.२.१३) इत्यादि सूत्र लागू होते हैं। परंतु विकल्पपक्षमें, राजन् शब्दकी तरह, 'टो णा' (२.२.५४) 'जश्शसूङसिङसां णोश्' (२.२.५५), 'इणममामा' (२.२.५७) ये सूत्र लागू होते हैं। उदा.–अप्पाणो अप्पाणा। अप्पाणं अप्पाणे। अप्पाणेण अप्पाणेहिं। अप्पाणाओ अप्पाणासुंतो। अप्पाणस्स अप्पाणाणं। अप्पाणम्मि अप्पाणेसु।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विकल्पपक्षमें राजन् शब्दकी तरह—अप्पा अप्पो। दे अप्पा दे अप्पो। अप्पाणो चिट्ठन्ति पेच्छ वा। अप्पणा अप्पेहिं। अप्पाहिंतो अप्पत्तो अप्पाओ अप्पाउ अप्पा अप्पाहि अप्पासुंतो आअओ। अप्पाणो अप्पाणं। अप्पम्मि अप्पेसु॥ राआणो राआणा। राआणं राआणे। राआणेण राआणेहिं। राआणासुंतो राआणाहिंतो। राआणस्स राआणाणं। राआणम्मि राआणेसु॥ विकल्पपक्षमें—राआ, इत्यादि। इसी प्रकार—युवन् जुवाणो जुवाणा जुवा॥ ब्रह्मन्—बम्हाणो बम्हा॥ अध्वन्—अद्धाणो अद्धा॥ उक्षन्—उच्छाणो उच्छा॥ ग्रावन्—गावाणो गावा॥ पूषन्—पूसाणो पूसा॥ तक्षन्—तक्खाणो तक्खा। मूर्धन्—मुद्धाणो मुद्धा। श्वन्—साणो सा। सुकर्मन्—सुकम्माणो सुकम्मा। पेच्छइ स कहं सुकम्माणो, पश्यति स कथं सुकर्मा॥ पुल्लिंगमें होनेवाले, ऐसा क्यों कहा है? (कारण नपुंसकलिंगमें ऐसा नहीं होता)। उदा.—शर्मन् सम्मं॥ ६०॥

टो वात्मनो णिआ णइआ ॥ ६१ ॥

आत्मन् शब्दके आगे होनेवाले टा-वचन (-प्रत्यय) को णिआ और णइआ ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। (सूत्रमें) पुनः 'वा' शब्दका ग्रहण होनेसे, अगले सूत्रोंमें विकल्प नहीं होता। उदा.—अप्पणिआ अप्पणइआ। विकल्पपक्षमें—अप्पाणेण अप्पेण॥ ६१॥

सर्वादेर्जसोऽतो डे ॥ ६२ ॥

अकारान्त सर्वादि (सर्वनाम) के आगे जस् (प्रत्यय) का डित् ए होता है। उदा.—सव्वे। अण्णे। जे। ते। के। इअरे। अवरे। एए। अकारान्त (सर्वादि), ऐसा क्यों कहा है? (कारण सर्वादि शब्द अकारान्त न हों तो ऐसा आदेश नहीं होता।) उदा.—सव्वाओ॥ ६२॥

ङेस्त्थ सिंसम्मि ॥ ६३ ॥

(इस सूत्रमें २.२.६२ से) सर्वादेः और अतः पदोंकी अनुवृत्ति है। अकारान्त सर्वादिके आगे ङि (स. ए. व. प्रत्यय) के स्थानपर त्थ, सिंस और म्मि ऐसे तीन आदेश होते हैं। उदा.—सव्वत्थ सव्वसिंस सव्वम्मि। अण्णत्थ अण्णसिंस अण्णम्मि। इसी प्रकार सर्वत्र। अकारान्त (सर्वादिके आगेही ऐसे आदेश होते हैं, अन्यथा नहीं)। उदा.—अमुम्मि॥ ६३॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनिदमेतदस्तु कियत्तदः स्त्रियां च हिं ॥ ६४ ॥

इदम् और एतद् इन् (शब्दों) को छोडकर, सर्वादिके आगे ङि को हिं ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। किम्, यद्, और तद् इनके बारेमें स्त्रीलिंगमेंभी (ऐसा आदेश होता है)। उदा.–सव्वहिं। अण्णहिं। जहिं। तहिं। कहिं। विकल्पपक्षमें–सव्वत्थ सव्वस्सिं सव्वम्मि,इत्यादि। (सूत्रमें) स्त्रीलिंगमेंभी, ऐसा क्यों कहा है? (कारण) किम्, यद्, और तद् इनके स्त्रीलिंगमेंभी ऐसा आदेश आता है। उदा.–काहिं। जाहिं। ताहिं। बाहुलकत्वसेही 'कियत्तदोऽस्व मामि सुपि (२.२.४०) सूत्रानुसार ङीप् विकल्पसे आता है। उदा.–काए कीए, इत्यादि। इदम् और एतद् इनको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण उनके बारेमें ऐसा आदेश नहीं होता)। उदा.–इमस्सि। अस्सि॥ ६४॥

आमां डेसिं ॥ ६५ ॥

(इस सूत्रमें २.२.६४ से) तु पदकी अनुवृत्ति है। सर्वादिके आगे आम् प्रत्ययको डित् एसिं ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–सव्वेसिं। अण्णेसिं। एसिं। इमेसिं। एएसिं। जेसिं। तेसिं। केसिं। विकल्पपक्षमें— सव्वाणं। अण्णाणं। इत्यादि। आमाम् ऐसा बहुवचन (सूत्रमें) प्रयुक्त किया जानेसे, स्त्रीलिंगके बारेमेंभी ऐसा आदेश होता है। उदा.–सर्वासाम् सव्वेसिं। इसी प्रकार–अण्णेसिं। जेसिं। तेसिं॥ ६५॥

किंतद्भ्यां सश् ॥ ६६ ॥

किम् और तद् इनके आगे आम् प्रत्ययका शित् सकार विकल्पसे होता है। उदा.–कास। तास। विकल्पपक्षमें—केसिं। तेसिं॥ ६६ ॥

कियत्तद्भ्यो ङस् ॥ ६७ ॥

(इस सूत्रमें २.२.६६ से) सश् पदकी अनुवृत्ति है। किम्, यद् और तद् इनके आगे आनेवाले जो ङस् प्रत्यय, उसको सश् ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–कास। जास। तास। विकल्पपक्षमें–कस्स। जस्स। तस्स। बहुलका अधिकार होनेसे, स्त्रीलिंगमेंभी किम्, यद्, और तद् इनके आगे (यह आदेश आता है)। उदा,–कस्याः कास। यस्याः जास। तस्याः तास। विकल्पपक्षमें-काए। जाए। ताए॥ ६७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ईतः सेसाऽ ॥ ६८ ॥

(इस सूत्रमें २.२.६७ से) ङस् पद (अध्याहृत) है। ईकारान्त किम्, यद् और तद् (=की, जी, ती) इनके आगे ङस् (प्रत्यय)को से और साऽ (ऐसे आदेश) विकल्पसे होते हैं। साऽ में ऽ इत् होनेसे, (सा का) द्वित्व होता है। उदा.–कीसे। किस्सा। विकल्पपक्षमें–कीअ। कीआ। कीइ। कीए॥ जीसे जिस्सा। (विकल्पपक्षमें)–जीअ। जीआ। जीइ। जीए॥ तीसे। तिस्सा। (विकल्पपक्षमें)–तीअ। तीआ। तीइ। तीए ॥ ६८ ॥

ङिरिआ डाहे डाला काले ॥ ६९ ॥

काल कहना हो तो, किम्, यद् और तद् इनके आगे ङि को इआ ऐसा आदेश तथा डित् आहे और आला ऐसे (दो आदेश) विकल्पसे होते हैं। उदा.–कइआ काहे काला। जइआ जाहे जाला। तइआ ताहे ताला। ताला जाअन्ति गुणा जाला ते सहिअएहिं घेप्पन्ति (विषमबाणलीला), तदा जायन्ते गुणाः यदा ते सहृदयैर्गृह्यन्ते। विकल्पपक्षमें-कहिं कत्थ कस्सिं कम्मि, इत्यादि ॥ ६९ ॥

म्हा ङसेः ॥ ७० ॥

किम्, यद् और तद् इनके आगे ङसि को म्हा ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.—कम्हा। जम्हा। तम्हा। विकल्पपक्षमें—काओ। जाओ। ताओ ॥ ७० ॥

किमो डीस डिणो ॥ ७१ ॥

किम् के आगे ङसि को डित् ईस और इणो ऐसे दो आदेश होते हैं। उदा.–कीस किणो। विकल्पपक्षमें–कम्हा। काओ ॥ ७१ ॥

डो तदस्तु ॥ ७२ ॥

तद् के आगे ङसि को डित् ओ (ऐसा आदेश) विकल्पसे होता है। उदा.–तो। (विकल्पपक्षमें—) तम्हा ॥ ७२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इदमेतत्किंयत्तद्भ्यष्टो डिणा ॥ ७३ ॥

(इदम्, एतद्, किम्, यद्, तद्) इन अकारान्त सर्वादि (शब्दों)के आगे टा वचनको डित् इणा ऐसा (आदेश) विकल्पसे होता है। उदा.–इमिणा इमेण। एदिणा एदेण। किणा केण। जिणा जेण। तिणा तेण ॥ ७३ ॥

क्वचित्सुपि तदो णः ॥ ७४ ॥

विभक्तिप्रत्यय आगे होनेपर, तत् (सर्वनाम-) शब्दमें ण विकल्पसे होता है। क्वचित् लक्ष्यानुसार (ण आता है)। उदा.- णं पेच्छ, तं पश्य। स्त्रीलिंगमें-भी (ण आता है)। उदा —हत्थुण्णामिअमुही भणइ णं तिअडा, हस्तोन्नामित-मुखी भणति तां त्रिजटा। णेण भणिअं, तेन भणितम्। णीए तया। णेहिं कअं, तैः कृतम्। णाहि कअं, ताभिः कृतम् ॥ ७४ ॥

त्रतसि च किमो क्कः ॥ ७५ ॥

(इस सूत्रमें २.२.७४ से) सुपि पदकी अनुवृत्ति है। किम् शब्दके आगे त्र, तस् और विभक्तिप्रत्यय होनेपर, किम का क्कित् (=नित्य) क होता है। उदा.–(सुप्)-को के। कं के। केण केहिं। त्र–कत्थ कस्सिं। तस्–कत्तो कदो ॥ ७५ ॥

इदम इमः ॥ ७६ ॥

विभक्तिप्रत्यय आगे होनेपर, इदम् को इम ऐसा आदेश होता है। उदा.–इमो इमे। इमं इमे। इमेण इमाई। स्त्रीलिंगमें (इदम्भी को इम आदेश होता है)। उदा.–इमा ॥ ७६ ॥

पुंसि सुना त्वयं स्त्रियामिमिआ ॥ ७७ ॥

सु (प्रत्यय) के साथ इदम् को पुल्लिंगमें अयं ऐसा और स्त्रीलिंगमें इमिआ ऐसा (आदेश) विकल्पसे होता है। उदा.–अयं कअक्कज्जो। इमिआ साणिअमाआ। विकल्पपक्षमें–इमो। इमा ॥ ७७ ॥

अत्सुस्सिंहिस्से ॥ ७८ ॥

सुप्, ङिस, भि और ङस् इन प्रत्ययोंके सु, स्सिं, हि और स्स ये आदेश आगे होनेपर, इदम् का अ विकल्पसे होता है। उदा.–एसु। अस्सिं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एहिं। अस्स। विकल्पपक्षमें-इमेसु। इमस्सि। इमेहिं। इमाहिं। इमस्स ॥ ७८ ॥

टाससि णः ॥ ७९ ॥

टास् यानी तृतीया विभक्ति; अस् यानी द्वितीया विभक्ति; उन दोनों (के प्रत्यय) आगे होनेपर, इदम् के स्थानपर ण ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-णेण णेहि कअं। णं णे पेच्छ। विकल्पपक्षमें-इमेण इमेहि। इमं इमे ॥ ७९ ॥

इहेणं ङ्यमः ॥ ८० ॥

ङि और अम् इन दो (प्रत्ययों) के साथ इदम के स्थानपर इह, इणं ऐसे ये (आदेश) क्रमसे विकल्पसे होते हैं। उदा.-ङि-इह। अम्-इणं। विकल्पपक्षमें-इमस्सि इमम्मि। इमं ॥ ८० ॥

न त्थः ॥ ८१ ॥

इदम् के आगे, 'ङेस्त्थस्सिम्मि' (२.२.६३) सूत्रानुसार प्राप्त होनेवाला ङि-वचनका त्थ, नहीं होता। उदा.-इह। इमस्सि। इमम्मि ॥ ८१ ॥

क्लीबे स्वमेदमिणमिणमो ॥ ८२ ॥

नपुंसकलिंगमें रहनेवाले इदम को, सु और अम् प्रत्ययोंके साथ, इदं, इणं और इणमो ऐसे तीन आदेश होते हैं। उदा.-इदं इणं इणमो चिट्ठइ पेच्छ वा ॥ ८२ ॥

किं किं ॥ ८३ ॥

(इस सूत्रमें २.२.८२ से) क्लीबे और स्वम् ये 'पद (अध्याहृत) हैं। नपुंसकलिंगमें रहनेवाला किम शब्द, सु और अम् प्रत्ययके साथ, किं ऐसाही होता है। उदा.-किं कुलं। किं भणसि ॥ ८३ ॥

तदिदमेतदां सेसिं तु ङसामा ॥ ८४ ॥

ङस् और आम् इन प्रत्ययोंके साथ तद्, इदम् और एतद् इनके स्थानपर यथाक्रम से और सिं ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-तद्-से गुणा, तस्य गुणाः, तस्या वा। सिं उच्छाहो, तेषां उत्साहः, तासां वा। इदम्-से

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सीलं, अस्य शीलं, अस्या वा। सिं गुणा, एषां गुणाः, आसां वा। एतद्-से हिअअं, एतस्य हृदयम्, एतस्या वा। सिं गुणा, एतेषां गुणाः, एतासां वा। विकल्पपक्षमें-तस्स। तेसिं। ताण॥ इमस्स। इमेसिं। इमाण॥ एअस्स। एएसिं। एआण॥ तद् और एतद् इनके अम् प्रत्ययके साथ से और सिं ऐसे आदेश होते हैं, ऐसा कोई कहते हैं॥ ८४॥

एत्तो एत्ताहे ङसिनैतदः ॥ ८५ ॥

(इस सूत्रमें १.२.८४ से) तु पदकी अनुवृत्ति है। ङसि प्रत्ययके साथ एतद् को एत्तो और एत्ताहे ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं।उदा.-एत्तो एत्ताहे आगओ। विकल्पपक्षमें-एआहिंतो एअत्तो एआओ एआहि एआउ एआ ८५॥

थे डेल ॥ ८६ ॥

ड् अनुबंध रखनेवाला थकार आगे होनेपर, एतद् के स्थानपर ड् और ल् अनुबंध रखनेवाला ए होता है। उदा.-एत्थ ॥ ८६ ॥

एतदो म्मावदितौ वा ॥ ८७ ॥

सप्तमी एकवचनका म्मि आदेश आगे होनेपर, एतद्‌मेंसे एकारको अ और इ ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.—अअम्मि इअम्मि। विकल्प-पक्षमें-एअम्मि ॥ ८७ ॥

सुनैस इणमो इणं ॥ ८८ ॥

सु प्रत्ययके साथ एतद् को एस, इणमो और इणं ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-एस सहाओ च्चिअ ससहरस्स, एष स्वभाव एव शशधरस्य। एस गई, एषा गतिः। सव्वस्स वि एस गई, सर्वस्याप्येषा गतिः। एस सरं, एतत्सरः। इणमो। इणं। विकल्पपक्षमें—एसा। एओ। एअं॥ ८८ ॥

तस्सौ सोऽक्लीबे तदश्च ॥ ८९ ॥

तद् और (सूत्रमेंके) चकारके कारण एतद्, इनमेंसे तकारका, सु प्रत्यय आगे होनेपर, सकार होता है; अक्लीबे यानी नपुंसकलिंगमें ऐसा नहीं होता। उदा.-सो पुरिसो। सा महिला॥ एसो पिओ। एसा पिआ। एसा मुद्धा॥ सु प्रत्यय आगे होनेपरही (यह सकार होता है, अन्यथा नहीं)। उदा.-ते, एए

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चिट्ठन्ति । ताओ, एआओ महिलाओ ॥ नपुंसकलिंगमें नहीं, ऐसा क्यों कहा है? (कारण नपुंसकलिंगमें आगे दिये रूप होते हैं)—तं, एअं वणं ॥ ८९ ॥

सुप्यदसो मुः ॥ ९० ॥

विभक्तिप्रत्यय आगे होनेपर, अदस् के स्थानपर अमु ऐसा आदेश होता है। उदा.–अमू पुरिसो। अमुणो पुरिसा। अमुं वणं। अमूइं वणाइं। अमू महिला। अमूओ महिलाओ। टा–अमुणा। अमूहिं॥ ङसि–अमूहिंतो अमूओ अमूहि अमूउ अमुत्तो। भ्यस्–अमूहिंतो अमूसुंतो। ङस्-अमुणो अमुस्स। आम्-अमूणं। ङि–अमुम्मि। सुप्-अमूसु ॥ ९० ॥

अहद्वा सुना ॥ ९१ ॥

सु प्रत्ययके साथ अदस् को अहत् ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। (अहत् में) तकार 'सिर्फ उतनाही' (तावन्मात्र) यह दिखानेके लिए है; इसलिए स्त्रीलिंगमें आ नहीं होता। उदा.–अह पुरिसो। अह महिला। अह वणं। अह णे हसइ हिअएण मारुअतणओ, असावस्मान् हसति हृदयेन मारुततनयः। विकल्पपक्षमें–अमू पुरिसो। अमू महिला। अमुं वणं ॥ ९१ ॥

इआऔ म्मौ ॥ ९२ ॥

ङिवचनका म्मि आदेश आगे होनेपर, अदस् को इअ और अअ ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.–इअम्मि। अअम्मि ॥ ९२ ॥

— द्वितीय अध्याय द्वितीय पाद समाप्त —

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तृतीयः पादः

युष्मत्सुना तुवं तुं तुमं तुह ॥ १ ॥

सु प्रत्ययके साथ युष्मद् शब्दको तुवं, तुं, तुमं, तुह ऐसे चार आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.–तुवं, तुं, तुमं तुह दिट्ठो सि ॥ १ ॥

अमा तुमे तुए च ॥ २ ॥

(इस सूत्रमें २.३.१ से) युष्मद् पदकी अनुवृत्ति है। अम् प्रत्ययके साथ युष्मद् शब्दके तुमे, तुए ऐसे (दो रूप), तथा (सूत्रमेंसे) चकारके कारण तुवं, इत्यादि चार रूप (२.३.१ से) होते हैं। उदा.–तुमे। तुए। (चकार)पक्षमें–तुवं तुं तुमं तुह वन्दामि। तं यह रूप, त्वां इस सिद्धावस्थामेंसे रूपमें व का लोप और ह्रस्व होकर, होगया है ॥ २ ॥

जसा भे तुब्भे तुय्हे उय्हे तुब्भ ॥ ३ ॥

जस् प्रत्ययके साथ युष्मद् शब्दको भे, तुब्भे, तुय्हे, उय्हे, तुब्भ ऐसे पाँच आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.–भे तुब्भे तुय्हे उय्हे तुब्भ चिट्ठइ। 'वा ब्भो म्हज्झौ' (२.३.१४) इस वचनानुसार, तुम्हे, तुज्झे, तुम्ह, तुज्झ, ऐसे (कुल) नौ रूप होते हैं ॥ ३ ॥

शसा वो च ॥ ४ ॥

शस् प्रत्ययके साथ युष्मद् शब्दको वो ऐसा (आदेश), और (सूत्रमेंसे) चकारके कारण भे, इत्यादि (पाँच) आदेश (२.३.३. से) प्राप्त होते हैं। उदा.-वो भे तुब्भे तुय्हे उय्हे तुब्भ तुम्हे तुज्झे तुम्ह तुज्झ ऐसे (कुल) दस रूप होते हैं ॥ ४ ॥

टा भे ते दे दि तुमं तुमइ ॥ ५ ॥

टा-वचनके साथ युष्मद् शब्दको भे, ते, दे, दि, तुमं और तुमइ ऐसे छः आदेश प्राप्त होते हैं। भे ते दे दि तुमं तुमइ कअं ॥ ५ ॥

ङिटाभ्यां तुमए तुइ तुए तुमाइ तुमे ॥ ६ ॥

ङि और टा इन प्रत्ययोंके साथ युष्मद् शब्दको तुमए, तुइ, तुए, तुमाइ और तुमे ऐसे पाँच रूप होते हैं। उदा.—तुमए तुइ तुए तुमाइ तुमे ठिअं कअं वा ॥ ६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तुब्भ तुहिंतो तुय्ह ङसिना ॥ ७ ॥

ङसि प्रत्ययके साथ युष्मद् शब्दको तुब्भ, तुहिंतो और तुय्ह ऐसे तीन रूप प्राप्त होते हैं। उदा.-तुब्भ तुहिंतो तुय्ह वा आगओ। 'वा ब्भो म्हज्झौ' (२.३.१४) इस वचनानुसार, तुम्ह, तुज्झ (रूप होते हैं)। एवं (कुल) पाँच रूप होते हैं ॥ ७ ॥

तु तुइ ङिप्ङसौ ॥ ८ ॥

ङिप् यानी सप्तमी विभक्ति; ङसि यानी पंचमी एकवचन; ये प्रत्यय आगे होनेपर, युष्मद् शब्दको यथाक्रम तु, तुइ ऐसे आदेश प्राप्त होते हैं। सप्तमी और ङसि इनमें यथाप्राप्त (प्रत्यय होते ही हैं)। पर सप्तमीमें मात्र-तुम्मि तुसु। ङसिमें—तुइ तुइत्तो तुईहिंतो तुईओ तुईउ आगओ ॥ ८ ॥

तुव तुम तुह तुब्भ ॥ ९ ॥

(इस सूत्रमें २.३.८ से) ङिप्ङसौ पदकी अनुवृत्ति है। ङिप् और ङसि आगे होनेपर, युष्मद् शब्दको तुव, तुम, तुह, और तुब्भ ऐसे चार रूप प्राप्त होते हैं। ङिप् और ङसि इनमें यथाप्राप्त (प्रत्यय होते ही हैं)। ङिप्में— तुवम्मि तुअम्मि तुहम्मि तुब्भम्मि। 'वा ब्भो म्हज्झौ' (२.३.१४) इस वचनानुसार, तुम्हम्मि तुज्झम्मि। सुप् में-तुवेसु तुमेसु तुहेसु तुब्भेसु तुम्हेसु तुज्झेसु ठिअं। 'क्त्वासुपो-तुमुणात्' (१.१.४३) सूत्रानुसार, अनुस्वार प्राप्त होनेपर, तुवेसुं, इत्यादि रूप होते हैं। ङसिमें-तुवाहिंतो तुमाहिंतो तुहाहिंतो तुब्भाहिंतो। 'वा ब्भो म्हज्झौ' (२.३.१४) इस वचनानुसार, तुम्हाहिंतो तुज्झाहिंतो। इसीप्रकार-तुवत्तो तुमत्तो तुहत्तो तुब्भत्तो तुम्हत्तो तुज्झत्तो। इसीप्रकार दो, दु, हिंतो और सुंतो इन प्रत्ययोंमें उदाहरण लेना है। पर तत्तो रूप मात्र त्वत्तः शब्दमेंसे व का लोप होकर सिद्ध हुआ है ॥ ९ ॥

भिसा भेतुब्भेह्युब्भेह्युय्हेहितुय्हेहि ॥ १० ॥

भिस् प्रत्ययके साथ युष्मद्को भे, तुब्भेहि, उब्भेहि, उय्हेहि और तुय्हेहि ऐसे पाँच रूप प्राप्त होते हैं। उदा.-भे तुब्भेहि उब्भेहि उय्हेहि तुय्हेहि कअं। 'वा ब्भो म्हज्झौ' (२.३.१४) वचनानुसार, तुम्हेहि तुज्झेहि उम्हेहि उज्झेहि (रूप होते हैं)। इसीतरह (कुल) नौ रूप होते है ॥ १० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उम्होय्हतुय्हतुब्भ भ्यसि ॥ ११ ॥

भ्यस् प्रत्यय आगे होनेपर, युष्मद्‌को उम्ह, उय्ह, तुय्ह, और तुब्भ ऐसे चार रूप प्राप्त होते हैं। भ्यस् के (प्रत्यय मात्र) यथाप्राप्त होते हैं। उदा.— उम्हाहिंतो उय्हाहिंतो तुय्हाहिंतो तुब्भाहिंतो आगओ। 'वा ब्भो म्हज्झौ' (२.२.१४) इस वचनानुसार, तुम्हाहिंतो तुज्झाहिंतो (रूप होते हैं)। उम्हत्तो उय्हत्तो तुम्हत्तो तुब्भत्तो तुम्हत्तो तुज्झत्तो, इत्यादि। इसीतरह दो, दु, हिंतो और सुंतो प्रत्ययोंमेंभी उदाहरण लेना है ॥ ११ ॥

तुब्भोब्भोय्हतइतुहंतुहतुम्हंतुवतुमतुमेतुमाइतुमोदेतेदितितुइए ङसा ॥ १२ ॥

ङस् प्रत्ययके साथ युष्मद्‌को तुब्भ, उब्भ, उय्ह, तुइ, तुहं, तुह, तुम्हं, तुव, तुम, तुमे, तुमाइ, तुमो, दे, ते, दि, ति, तु, इ, और ए ऐसे अठारह आदेश होते हैं। 'वा ब्भो म्हज्झौ' (२.३.१४) इस वचनानुसार, तुम्ह, तुज्झ, उम्ह, उज्झ; ऐसे (कुल) बाईस रूप होते हैं ॥ १२ ॥

तुम्हाणतुब्भंतुब्भाणतुमाणतुवाणतुहाणतुब्भवोभे त्वामा ॥१३ ॥

आम् प्रत्ययके साथ युष्मद्‌को तुम्हाण, तुब्भं, तुब्भाण, तुमाण, तुवाण, तुहाण, तुब्भ, वो, भे और त्वा ऐसे दस आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.-तुम्हाण तुब्भं। 'वा ब्भो म्हज्झौ' (२.३.१४) वचनानुसार, तुम्हं, तुज्झं; तुब्भाण तुम्हाण तुज्झाण तुब्भ तुम्ह तुज्झ वो भे त्वा। 'क्त्वासुपोस्तु सुणात्' (१.१.४३) सूत्रानुसार, अनुस्वार प्राप्त होनेपर, तुम्हाणं, तुब्भाणं, तुज्झाणं, तुमाणं, तुवाणं, तुहाणं। एवं (कुल) तेईस रूप होते है ॥ १३ ॥

वा ब्भो म्हज्झौ ॥ १४ ॥

युष्मद् के आदेशोंसे संबधित रहनेवाले द्विरुक्त भकारको (=ब्भ को) म्ह और ज्झ ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। इसके उदाहरण योग्य स्थानपर (२.३.२, ७, ९, १३ देखिए) दियेही हैं ॥ १४ ॥

अस्मत्सुना अम्हिहमहअमहमहम्यम्मि ॥ १५ ॥

सु के यानी प्रथमा एकवचन (प्रत्यय)के साथ अस्मद् शब्दको अम्हि, हं, अहअं, अहं, अहम्मि और अम्मि ऐसे छः आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.— अम्मि करेमि, अहं करोमि। तेण हं दिट्ठो, तेनाहं दृष्टः। अहअं जप्पामि,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अहं जल्पामि। अहं गमिस्सं, अहं गमिष्यामि। अज्ज अहम्मि हासिआ, अद्याहं हासिता। न अम्मि कुविआ, नाहं कुपिता ॥ १५ ॥

मो भे वअं जसा ॥ १६ ॥

(इस सूत्रमें २.३.१५ से) अस्मद् पदकी अनुवृत्ति है। जस् प्रत्ययके साथ अस्मद् शब्दको मो, भे, और वअं ऐसे तीन आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.-मो भणामो, इत्यादि ॥ १६ ॥

अम्हे अम्हो अम्ह ॥ १७ ॥

जस् प्रत्ययके साथ अस्मद् शब्दको अम्हे, अम्हो और अम्ह ऐसे तीन आदेश प्राप्त होते हैं। यह सूत्र (२.३.१६ से) स्वतंत्र रूपसे कहनेका कारण यह है कि उसका उपयोग अगले सूत्रमें हो। उदा.-अम्हे, इत्यादि ॥ १७ ॥

णे च शसा ॥ १८ ॥

शस् प्रत्ययके साथ अस्मद् शब्दको णे ऐसा (आदेश), और (सूत्रमेंसे) चकारके कारण अम्हे, इत्यादि (२.३.१७ मेंसे) तीन आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.—णे अम्हे पेच्छ, इत्यादि ॥ १८ ॥

मं णे णं मि मिमं ममम्मि अहं मम्हाम्ह अमा ॥ १९ ॥

अम् प्रत्ययके साथ अस्मद् शब्दको मं, णे, णं, मि, मिमं, ममं, अम्मि, अहं, मम्ह, अम्ह ऐसे दस आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.-मं पेच्छ, इत्यादि ॥ १९ ॥

मि मइ ममाइ मए मे ङिटा ॥ २० ॥

ङिवचन और टावचन इनके साथ अस्मद् शब्दको मि, मइ, ममाइ, मए, मे ऐसे पाँच आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.-मि ठिअं कअं वा, इत्यादि ॥ २० ॥

ममं णे मआइ ममए टा ॥ २१ ॥

टावचन के साथ अस्मद् शब्दको ममं, णे, मआइ और ममए ऐसे चार आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.-ममं कअं, इत्यादि ॥ २१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णेऽम्हेह्यम्हाह्यम्हेऽम्ह भिसा ॥ २२ ॥

भिस् प्रत्ययके साथ अस्मद् शब्दको णे, अम्हेहि, अम्हाहि, अम्हे और अम्ह ऐसे पाँच आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.-णे कअं, इत्यादि ॥ २२ ॥

मइ मम मह मज्झ ङसौ ॥ २३ ॥

ङसि यानी पंचमी एकवचन प्रत्यय आगे होनेपर, अस्मद् शब्दको मइ मम, मह, मज्झ ऐसे चार आदेश प्राप्त होते हैं। ङसिके (प्रत्यय) यथाप्राप्त होतेही हैं। उदा.-मईहिंतो मइत्तो मईओ मईउ। इसीप्रकार–ममाहिंतो ममत्तो ममाउ ममाहि ममा। इसीतरह–महाहिंतो महत्तो मज्झाहिंतो मज्झत्तो, इत्यादि ॥ २३ ॥

अम्ह मम भ्यसि ॥ २४ ॥

भ्यस् यानी पंचमी बहुवचन प्रत्यय आगे होनेपर, अस्मद् शब्दको अम्ह और मम ऐसे दो आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.–अम्हाहिंतो अम्हेहिंतो अम्हत्तो अम्हाओ अम्हाउ अम्हासुंतो अम्हेसुंतो अम्हाहिं अम्हेहिं। ममाहिंतो ममेहिंतो ममत्तो ममाओ ममाउ ममासुंतो ममाहि ॥ २४ ॥

अम्हं मज्झं मज्झ मइ मह महं मे च ङसा ॥ २५ ॥

ङस् प्रत्ययके साथ अस्मद् शब्दको अम्हं, मज्झं, मज्झ, मइ, मह, महं, मे, ऐसे सात आदेश, और (सूत्रमेंसे) चकारके कारण (२.३.२४ मेंसे) अम्ह और मम (ये दो आदेश) प्राप्त होते हैं। उदा.-अम्हं, इत्यादि ॥ २५ ॥

अम्हे अम्हो अम्हाण ममाण महाण मज्झाण मज्झाम्हाम्हं णे णो आमा ॥ २६ ॥

आम् प्रत्ययके साथ अस्मद् शब्दको अम्हे, अम्हो, अम्हाण, ममाण, महाण, मज्झाण, मज्झ, अम्ह, अम्हं णे और णो ऐसे ग्यारह आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.–अम्हे धणं, इत्यादि। 'क्त्वासुपोस्तु सुणात्' (१.१.४३) सूत्रानुसार अनुस्वार प्राप्त होनेपर, अम्हाणं (ममाणं, महाणं, मज्झाणं)। इसीतरह (कुल) पंद्रह रूप होते हैं ॥ २६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अम्ह मम मज्झ मह ङिपि ।। २७ ।।

सप्तमी विभक्ति (के प्रत्यय) आगे होनेपर, अस्मद् शब्दको अम्ह, मम मज्झ, मह ऐसे चार आदेश प्राप्त होते हैं। ङिप् के प्रत्यय यथाप्राप्तही होते हैं। उदा.-ङिमें-अम्हम्मि ममम्मि मज्झम्मि महम्मि । सुप्में-अम्हेसु ममेसु मज्झेसु महेसु । (इस प्रत्ययके पूर्व अन्त्य अ का) ए विकल्पसे होता है, इस मतानुसार-अम्हसु ममसु मज्झसु महसु । कुछके मतानुसार, (इस प्रत्ययके पूर्व अन्त्य अ का) आ होता है। उदा.-अम्हासु ममासु मज्झासु महासु । 'क्त्वासुपोस्तु सुणात्' (१.१.४३) सूत्रानुसार, अनुस्वार प्राप्त होनेपर—अम्हेसुं ममेसुं मज्झेसुं महेसुं । अम्हसुं ममसुं मज्झसुं महसुं । अम्हासुं ममासुं मज्झासुं महासुं । इसीप्रकार (कुल) अठारह रूप होते है ।। २७ ।।

चतुरो जश्शस्भ्यां चउरो चत्तारो चत्तारि ।। २८ ।।

जस् और शस् प्रत्ययोंके साथ चतुर् शब्दको चउरो, चत्तारो, चत्तारि ऐसे तीन आदेश होते हैं। उदा.-चउरो चत्तारो चत्तारि चिट्ठन्ति पेच्छ वा ।। २८ ।।

तिण्णि त्रेः ।। २९ ।।

(इस सूत्रमें २.३.२८ से) जश्शस्भ्याम् पद (अध्याहृत) है। जस् और शस प्रत्ययोंके साथ त्रि शब्दको तिण्णि ऐसा आदेश होता है।उदा.-तिण्णि पुरिसा महिला वणाणि वा चिट्ठन्ति पेच्छ वा ।। २९ ।।

दोण्णि दुवे वेण्णि द्वेः ।। ३० ।।

जस् और शस् प्रत्ययोंके साथ द्वि शब्दको दोण्णि, दुवे, बेण्णि ऐसे तीन आदेश होते हैं। उदा.-दोण्णि दुवे बेण्णि महिला चिट्ठन्ति पेच्छ वा। 'संयोगे' (१.२.४०) सूत्रानुसार ह्रस्व होनेपर, दुण्णि, बिण्णि (ऐसे रूप होते हैं) ।। ३० ।।

दो बे टादौ च ।। ३१ ।।

(इस सूत्रमें २.३.३० से) द्वेः पद (अध्याहृत) है। टादि यानी तृतीया, इत्यादिके विभक्तिप्रत्यय आगे होनेपर, द्वि शब्दको दो और बे ऐसे आदेश होते हैं। (सूत्रमेंसे) चकारके कारण, जस् और शस् प्रत्ययोंके सहित (द्वि को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एस आदेश होते है)। उदा.–दोहिं बेहिं कअं। दोहिंतो बेहिंतो आगओ। दोण्णं वेण्णं धणं। दोसु बेसु ठिअं। जस् और शस् प्रत्ययोंके साथ—दो बे ठिआ पेच्छ वा ॥ ३१ ॥

ति त्रेः ॥ ३२ ॥

(इस सूत्रमें २.३.३१ से) टादौ पदकी अनुवृत्ति है। टादौ यानी तृतीया, इत्यादि विभक्तिप्रत्यय आगे होनेपर, त्रि शब्दको ति ऐसा आदेश होता है। उदा.-तिहिं कअं, त्रिभिः कृतं तिसृभिः वा। तिहिंतो आगओ, त्रिभ्यः तिसृभ्यो वा आगतः। तिण्णं धणं, त्रयाणां तिसृणां वा धनम्। तिसु ठिअं, त्रिषु तिसृषु वा स्थितम् ॥ ३२ ॥

ण्ह ण्हं संख्याया आमोऽविंशतिगे ॥ ३३ ॥

अविंशतिगे यानी विंशति-गणमेंसे शब्दोंको छोडकर, (अन्य) संख्यावाचक शब्दोंके आगे आम् प्रत्ययको ण्ह, ण्हं ऐसे आदेश होते हैं। उदा.–दोण्ह तिण्ह। दोण्हं तिण्हं। चउण्ह चउण्हं। पंचण्ह पंचण्हं। छण्ह छण्हं। सत्तण्ह सत्तण्हं। अट्ठण्ह अट्ठण्हं। नवण्ह नवण्हं। दसण्ह दसण्हं। पण्णारहण्ह पण्णारहण्हं। अट्ठारहण्ह अट्ठारहण्हं। कइण्ह कइण्हं, कतीनाम्। विंशतिगणमेंसे शब्दोंको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण उन्हें ये प्रत्यय नहीं लगते)। उदा.-वीसाणं। तिसाणं ॥ ३३ ॥

द्विवचनस्य बहुवचनम् ॥ ३४ ॥

सु, इत्यादि सब विभक्ति और तिङ् इत्यादिमें द्विवचनके स्थानपर बहुवचन (अनेकवचन) आता है। उदा.-दोण्णि कुणन्ति, द्वौ कुरुतः। दोहिं। दोसुंतो। दोण्हं। दोसु ॥ दो पाआ, द्वौ पादौ। दोण्णि हत्था, द्वौ हस्तौ। दुवे णअणा, द्वे नयने। बेण्णि कण्णा, द्वौ कर्णौ ॥ ३४ ॥

ङेसो ङम् ॥ ३५ ॥

ङेस् यानी चतुर्थी विभक्ति; ङम् यानी षष्ठी विभक्ति। ङेस् के स्थानपर ङम् आती है। उदा.-मुणिस्स, मुणीणं भोअणं देहि। णमो देवस्स, देवाणं ॥ ३५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तादर्थ्ये ङेस्तु ॥ ३६ ॥

तादर्थ्य (उसके, अमुकके) के लिए कही हुई ङे: यानी चतुर्थी एकवचनके स्थानपर ङस् यानी षष्ठी विभक्ति विकल्पसे आती है। उदा.-देवस्स, देवाअ, देवार्थम् ऐसा अर्थ। ङे:, ऐसा क्यों कहा है? (कारण)-देवाणं ॥ ३६ ॥

वधाड्डाइ च ॥ ३७ ॥

(इस सूत्रमें २.३.३६ से) तु पदकी अनुवृत्ति है। वध शब्दके आगे आनेवाले ङे यानी चतुर्थी एकवचनके स्थानपर डित् आइ ऐसा आदेश, तथा षष्ठी और चतुर्थी (एकवचन प्रत्यय) आते हैं। उदा.-वहाइ वहस्स वहाअ (यानी) वधके लिए ऐसा अर्थ ॥ ३७ ॥

क्वचिदसादेः ॥ ३८ ॥

अस् यानी द्वितीया विभक्ति। अस् इत्यादि विभक्तियोंके स्थानपर क्वचित् षष्ठी विभक्ति आती है। उदा.-सीमंधरस्स वन्दे, सीमंधरं वन्दे। तिस्सा मुहस्स भरिमो, तस्या मुखं स्मरामः। यहाँ द्वितीयाके स्थानपर (षष्ठी आई है)। धणस्स लद्धं, धनेन लब्धम्। तेसिमेसमणाइण्णं, तैरेतद् अनाचीर्णम्। यहाँ तृतीयाके स्थानपर (षष्ठी आगयी है)। चोरस्स बीहइ, चोराद् बिभेति। इमाण पाअन्तसहिआण इअराइं लहुअक्खराइं ति, एभ्यः पादान्तसहितेभ्य इतराणि लघ्वक्षराणि। यहाँ पंचमीके स्थानपर (षष्ठी आई है)। वणसिरिपट्ठीएँ कबरि व्व, वनश्रीपृष्ठे कबरीव। यहाँ सप्तमीके स्थानपर (षष्ठी आगयी है) ॥ ३८ ॥

अस्टासोर्ङिप् ॥ ३९ ॥

अस् यानी द्वितीया विभक्ति; टास् यानी तृतीया विभक्ति; उन दोनोंके स्थानपर ङिप् यानी सप्तमी विभक्ति क्वचित् विकल्पसे आती है। उदा.-गामे वहामि, णअरे णआमि, ग्रामं वहामि, नगरं नयामि। यहाँ द्वितीयाके स्थानपर (सप्तमी हुई है)। तेसुं अलंकिआ पुहवी, तैरलंकृता पृथिवी। यहाँ तृतीयाके स्थानपर (सप्तमी विभक्ति आई है) ॥ ३९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ङसिसष्टाश्च ॥ ४० ॥

ङसिस् के यानी पंचमी विभक्तिके स्थानपर टास् यानी तृतीया विभक्ति, और (सूत्रमेंसे) चकारके कारण सप्तमी विभक्ति क्वचित् आती है। उदा.-चोरेण बीहइ, चोराद् बिभेति। अंतेउरे रमिअ आगओ, अन्तःपुरात् रन्त्वा आगतः ॥ ४० ॥

ङिपोऽम् ॥ ४१ ॥

ङिप् के यानी सप्तमी विभक्तिके स्थानपर अम् यानी द्वितीया विभक्ति क्वचित् आती है। उदा.-विज्जुज्जोअं भरइ रइं, विद्युद्द्योते स्मरति रतिम् ॥ ४१ ॥

लुक् क्यङोर्यस्य तु ॥ ४२ ॥

क्यङ् से अन्त होनेवाले शब्दके द्विवचनके आगे और क्यष्से अन्त होनेवाले शब्दसे संबंधित होनेवाले य का लोप विकल्पसे होता है। उदा.-क्यङ्-गुरूअइ गुरूइ (यानी) अगुरुर्गुरुर्भवति या गुरुरिवाचरति। क्यष्-धमधमाअइ धमधमाइ। लोहिआअइ लोहिआइ ॥ ४२ ॥

—द्वितीय अध्याय तृतीय पाद समाप्त—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चतुर्थः पादः

लटस्तिताविजेच् ॥ १ ॥

लट् यानी वर्तमानकाल; तत्संबंधी प्रथमपुरुषके एकवचनमें होनेवाले, परस्मैपद और आत्मनेपदमें ऐसे कहे, जो तिप् और तङ् ऐसे ये (दो प्रत्यय होते हैं), उनको प्रत्येकको इच् और एच् ऐसे ये (आदेश) होते हैं। (इच् और एच् मेंसे दो) चकार 'हुग्चिति' (३.१.५) सूत्रानुसार, विशेषणार्थमें होते हैं। उदा.-हसइ हसए। रमइ रमए॥ १ ॥

सिप्थास्सेसि ॥ २ ॥

(इस सूत्रमें २.४.१ से) लटः पदकी अनुवृत्ति है। परस्मैपद और आत्मनेपद इनमेंसे मध्यम पुरुषके एकवचनमें होनेवाले जो सिप् और थास् ये (दो प्रत्यय होते हैं) उनको प्रत्येकको से और सि ऐसे ये (दो आदेश) विकल्पसे होते हैं। उदा.-हससे हससि। रमसे रमसि॥ २ ॥

मिर्मिबिटौ ॥ ३ ॥

वर्तमानकालके परस्मैपद और आत्मनेपद इनके उत्तमपुरुषके एकवचनमें होनेवाले जो मिप् और इट् ऐसे (दो प्रत्यय होते हैं), उनको प्रत्येकको मि होता है। उदा.-हसामि। रमामि। और बहुलका अधिकार होनेसे, मिप् और इट् इनके आदेशके रूपमें आनेवाले मि-में इ का लोप होता है। उदा.-बहु वण्णिउं न सक्कं, बहु वर्णितुं न शक्नोमि। न मरं, न म्रिये॥ ३ ॥

झिझौ न्ति न्ते इरे ॥ ४ ॥

वर्तमानकालमें प्रथमपुरुषके बहुवचनमें होनेवाले झि और झ ये (जो दो प्रत्यय हैं) उनको प्रत्येकको न्ति, न्ते, इरे ऐसे तीन आदेश होते हैं। उदा.-हसन्ति हसन्ते। रमन्ति रमन्ते। हसिज्जन्ति हसिज्जन्ते।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रमिज्जन्ति रमिज्जन्ते। गज्जन्ते खे मेहा। उप्पज्जन्ते कइहिअअसाअरे कव्वरअणाइं। दोण्णि वि ण पहुप्पिरे बाहू, द्वावपि न प्रभवतः बाहू। क्वचित् एकवचनमेंभी इरे (प्रत्यय होता है)। उदा.-सूसइरे ताण तारिसो कण्ठो, शुष्यति तासां तादृशः कण्ठः ॥ ४ ॥

थध्वमित्थाहचौ ॥ ५ ॥

वर्तमानकालमें मध्यमपुरुषके बहुवचनमें होनेवाले थ और ध्वम् ऐसे ये (जो दो प्रत्यय हैं), उनको प्रत्येकको, इत्था और हच् ऐसे आदेश प्राप्त होते है। उदा.-हसित्था हसह। रमित्था रमह। बहुलका अधिकार होनेसे इतरत्रभी (यानी अन्य पुरुषोंमेंभी) इत्था (आदेश दिखाई देता है)। उदा.-जं जं ते रोइत्था, यद्यत्ते रोचते। हच् मेंसे चकार 'इहहचोः' (२.२.५) सूत्रानुसार विशेषणार्थमें है ॥ ५ ॥

मो म मु मस्महिङ् ॥ ६ ॥

वर्तमानकालमें उत्तमपुरुषके बहुवचनमें होनेवाले मस् और महिङ् ऐसे ये (जो दो प्रत्यय हैं), उनको प्रत्येकको मो, म, मु ऐसे तीन आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.-हसामो हसाम हसामु। रमामो रमाम रमामु ॥ ६ ॥

अत एवैच् से ॥ ७ ॥

वर्तमानकालमें प्रथमपुरुषके एकवचनमें जो एच् (प्रत्यय) और मध्यमपुरुषके एकवचनमें कहा हुआ जो से(प्रत्यय), वे दोनों अकारान्त (धातुओं) के आगेही आते हैं, अन्य स्वरान्त धातुओंके आगे नहीं आते। उदा.-हसए हससे। तुवरए तुवरसे। करए करसे। अकारान्तके आगे आते हैं, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्य स्वरान्त धातुओंके आगे ये प्रत्यय नहीं आते)। उदा.-ठाइ ठासि। वसुआइ वसुआसि। होइ होसि ॥ ७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्वस्तेर्म्हस्होम्हि ममोमिना ॥ ८ ॥

अस् धातुके स्थानपर, म, मो और मि इनके सह यथाक्रम म्ह, म्हो और म्हि ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-गअ म्ह गअ म्हो गअ म्हि, गताः स्मः। एस म्हि एषोऽस्मि। (२.४.६ में कहे हुए) मुकारका यहाँ ग्रहण न होनेसे, उसका प्रयोग नहीं होता, ऐसा निश्चित होता है। विकल्पपक्षमें-अत्थि अम्हे। अत्थि अहं ॥ ८॥

सिना स्सि ॥ ९ ॥

(इस सूत्रमें २.४.८ से) अस्तेः पदकी अनुवृत्ति है। सि के साथ यानी मध्यमपुरुषके एकवचनके आदेशके साथ, अस् धातुको सि ऐसा आदेश ल्वित् (=नित्य) होता है। उदा.-णिट्ठुरो जं सि, निष्ठुरो यदसि। सि के साथ, ऐसा क्यों कहा है? (कारण) से आदेश होनेपर-अत्थि तुमं, ऐसा होता है ॥ ९ ॥

तिङात्थि ॥ १० ॥

अस् धातुको तिङ् यानी तिप्, इत्यादिके साथ अत्थि ऐसा आदेश होता है। उदा.-अत्थि सो। अत्थि ते। अत्थि तुमं। अत्थि तुम्हे। अत्थि अहं। अत्थि अम्हे ॥ १० ॥

णिजदेदावावे ॥ ११ ॥

धातुको प्रेरणार्थमें कहा हुआ जो णिच् प्रत्यय, उसको अ, ए, आव, आवे ऐसे चार आदेश प्राप्त होते हैं। (अत्, एत् मेंसे) तकार तात्र्नात्रत्व दिखानेके लिए है। उदा.-अत्-दरिसइ। एत्- कारेइ। आव- कारावइ। आवे-कारावेइ ॥ हासावइ हासइ हासावेइ हासेइ। उवसमावइ उवसमेइ। बहुलका अधिकार होनेसे, क्वचित् ए (प्रत्यय लगता) नहीं। उदा.-जाणइ जाणावइ जाणावेइ। क्वचित् आवे (प्रत्यय लगता) नहीं। उदा.-धावइ धावेइ धावावइ ॥ ११ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शुष्यादेरवि्र्वा ।। १२ ।।

(इस सूत्रमें २.४.११ से) णिच् पदकी अनुवृत्ति है। शुष्, इत्यादिके आगे आनेवाले णिच् को अवि ऐसा (आदेश) विकल्पसे होता है। उदा.-शोषितं सोसाविअं सोसिअं। तोषितं तोसाविअं तोसिअं ।।१२।।

भ्रमेराडः ।। १३ ।।

भ्रम् धातुके आगे णिच् (प्रत्यय) आड ऐसा विकल्पसे होता है। उदा.-भमाडइ। विकल्पपक्षमें-भामइ भामेइ भमावइ भमावेइ ।। १३ ।।

लुगाविल् भावकर्मक्ते ।। १४ ।।

भाव (और) कर्म के लिए कहा हुआ प्रत्यय तथा क्त-प्रत्यय आगे होनेपर, णिच् प्रत्ययको लुक् और आवि ऐसे आदेश होते हैं। (सूत्रमेंसे लुगाविल् में) ल् इत् होनेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.-भाव और कर्म (प्रत्यय आगे होनेपर)-कारिअइ काराविअइ कारिज्जइ काराविज्जइ। हासिअइ हासाविअइ हासिज्जइ हासाविज्जइ। क्त प्रत्यय आगे होनेपर—कारिअं काराविअं। हासिअं हासाविअं। खामिअं खामाविअं ।। १४ ।।

अदेल्लुक्यात्खोरतः ।। १५ ।।

णिच् प्रत्ययके स्थानपर आनेवाले ऐसे कहे हुए जो अत्, एत् और लुक्, वे आगे होनेपर, (धातुमेंसे) खु यानी आद्य अत् का यानी अकारका आत् (आकार) होता है। उदा.-अत्-पाडइ। मारइ। एत्—कारेइ। मारेइ। खामेइ। लुक्-कारिअइ कारिज्जइ। खामिअइ खामिज्जइ। अत्, एत और लुक् आगे होनेपर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्य आदेश आगे होनेपर)-काराविअं कारिअं। काराविअइ काराविज्जइ। खु (आद्य अ)का, ऐसा क्यों कहा है? (कारण इसीप्रकार) संगामेइ, यहाँ व्यवहित (अ का आ) न हो। कारिअं, यहाँ अन्त्य (अ का आ) न हो। अत् का, ऐसा क्यों कहा है? (कारण-) आसेइ। आवे और आवि प्रत्यय आगे होनेपरभी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आद्य अ का आ होता है, ऐसा कोई कहते हैं। उदा..कारवेइ। हासाविओ जणो सामलंगीए।। १५।।

तु मौ ॥ १६।।

(इस सूत्रमें २.४.१५ से) अतः और आत् इन पदोंकी अनुवृत्ति है। अकारान्त धातुके आगे, मि यानी वर्तमानकालीन उत्तमपुरुषके एकवचनका आदेश आगे होनेपर, (अन्त्य अ का) आ विकल्पसे होता है। उदा.-हसामि हसमि। जाणामि जाणमि। लिहामि लिहमि। अकारान्त धातुके आगेही ऐसा होता है (अन्य स्वरान्त धातुके आगे नहीं)। उदा.- होमि।।१६।।

मोमस्तुष्विच्च।। १७।।

(इस सूत्रमें २.४.१६ से) तु पदकी अनुवृत्ति है। अकारान्त धातुके आगे, मो, मु और म ऐसे ये (प्रत्यय) आगे होनेपर, (अन्त्य) अ का इ, और (सूत्रमेंसे) चकारके कारण आ विकल्पसे होते हैं। उदा.-भणिमो भणामो। भणिम भणाम। भणिमु भणामु। विकल्पपक्षमें-भणमो भणम भणमु। 'वा लड्लोट्छतृषु' (२.४.२०) सूत्रानुसार, विकल्पसे (अ का) ए होनेपर-भणेमो भणेम भणेमु। अकारान्त धातुके आगेही ऐसा होता है (अन्य स्वरान्त धातुके आगे नहीं)। उदा.-होमो ॥ १७ ॥

क्ते ।। १८।।

(इस सूत्रमें २.४.१७ से) इत् पदकी अनुवृत्ति है। क्तप्रत्यय आगे होनेपर, (धातुके अन्त्य) अ का इ होता है। उदा.-हसिअं। पढिअं। नमिअं। हासिअं। पाढिअं। नामिअं। णअं, गअं, इत्यादि रूप मात्र उनके सिद्धावस्थाकी अपेक्षासे होते हैं। (धातुमेंसे अन्त्य) अकाही (इ होता है; इतर अन्त्य स्वरोंका नहीं)। उदा.-हूअं। हूअं ॥ १८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एच्च क्त्वातुंतव्यभविष्यति ।। १९ ।।

क्त्वा, तुम् और तव्य (ये प्रत्यय) तथा भविष्यकालका ऐसा कहा हुआ प्रत्यय, ये आगे होनेपर, (धातुके अन्त्य) अ का ए, और (सूत्रमेंसे) चकारके कारण इ होते है। उदा.-क्त्वा-हसेऊण हसिऊण। तुम्-हसेउं। तव्य—हसेअव्वं हसिअव्वं। भविष्यकालका प्रत्यय-हसेहिइ हसिहिइ। (धातुमेंसे अन्त्य) अकेही (इ अथवा ए होते है; अन्य अन्त्य स्वरोंके नहीं) उदा.-जाऊण। काऊण ।। १९ ।।

वा लट्लोट्छतृषु ॥ २० ॥

(इस सूत्रमें २.४.१९ से) एत् पदकी अनुवृत्ति है। लट् यानी वर्तमानकाल; लोट् यानी पंचमी (=आज्ञार्थ); इन दोनोंके प्रत्यय, तथा शतृ प्रत्यय आगे होनेपर, (धातुमेंसे अन्त्य) अ का ए विकल्पसे होता है।उदा.-लट्-हसेइ हसइ। हसेम हसिम। लोट्-हसेउ हसउ। सुणेउ सुणउ। शतृ-हसेन्तो। क्वचित् (धातुमेंसे अन्त्य अ का) ए नहीं होता। उदा.-जअइ। क्वचित् (धातुके अन्त्य अ का) आ होता है। उदा.-सुणाइ ।। २० ।।

ज्जा ज्जे ॥ २१ ।।

ज्जा और ज्ज प्रत्यय आगे होनेपर, (धातुमेंसे अन्त्य) अ का ए होता है। उदा.-हसेज्जा हसेज्ज। (धातुमेंसे अन्त्य) अकाही (ए होता है, अन्य अन्त्य स्वरोंका नहीं)। उदा.-होज्जा होज्ज ।। २१ ।।

भूतार्थस्य सी हीअ ही ।। २२ ।।

भूतार्थमें यानी भूतकालके अर्थमें कहे हुए जो अनद्यतन, इत्यादि (भूतकालके) प्रत्यय (यानी सूत्रमेंसे भूतार्थ यानी लुङ्, लङ् और लिट् इन तीन भूतकालोंके प्रत्यय), उनके स्थानपर सी, हीअ और ही ऐसे तीन आदेश होते है। अगले (२.४.२३) सूत्रमें 'हल ईअ' ऐसा विधान होनेसे, यह विधि (नियम) स्वरान्त धातुकोही लगता है। उदा.-कासी काहीअ काही, अकार्षीत् अकरोत् चकार वा। इसीप्रकार-ठासी ठाहीअ ठाही ॥ २२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हल ईअ ।। २३ ।।

(इस सूत्रमें २.४.२२) से) भूतार्थस्य पदकी अनुवृत्ति है। हलन्त (व्यंजनान्त) धातुके आगे आनेवाले भूतार्थके यानी लुङ्, इत्यादिके प्रत्ययोंके स्थानपर ईअ ऐसा आदेश होता है। उदा.-भुवीअ, अभूत्, अभवत्, बभूव वा। इसीतरह-आसीअ, आसिष्ट आस्त आसांचक्रे वा। गहीअ, अग्रहीत् अगृह्णात् जग्राह वा।। २३ ।।

अहेस्यासी तेनास्तेः ।। २४ ।।

(सूत्रमेंसे) तेन यानी भूतार्थके प्रत्ययोंके साथ, अस् धातुको अहेसि और आसि ऐसे आदेश होते हैं। उदा.-अहेसि सो तुमं अहं वा। जे अहेसि, ये आसन्। इसीप्रकार-आसि ।। २४ ।।

भविष्यति हिरादिः ।। २५ ।।

भविष्यदर्थमें कहे हुए प्रत्यय आगे होनेपर, उसके पूर्व हि ऐसा प्रयुक्त करें। उदा.-होहिइ, भविष्यति भविता वा। होहिन्ति। होहिसि होहित्था। होहिम। हसिहिइ। काहिइ ।। २५ ।।

हा र्सा मिमोमुमे वा ।। २६ ।।

(इस सूत्रमें २.४.२५ से) भविष्यति और आदिः पदोंकी अनुवृत्ति है। भविष्यत्यर्थमें, उत्तमपुरुषके आदेश आगे होनेपर, उनके पूर्व हा और र्सा विकल्पसे प्रयुक्त करें। [र्सामें र् इत् होनेसे, सा का द्वित्व (=स्सा) होता है]। विकल्पपक्षमें-हि भी (प्रयुक्त करें)। उदा.-होहामि होस्सामि। होहामो होस्सामो। होहामु होस्सामु। होहाम होस्साम। होहिमो होहिमु होहिमि होहिम। क्वचित् हा नहीं होता। उदा.-हसिहिमो हसिस्सामो। हसिहिमु हसिस्सामु। हसिहिम हसिस्साम ।। २६ ।।

हिस्सा हित्था मुमोमस्य ।। २७ ।।

(इस सूत्रमें २.४.२६ से) वा पदकी अनुवृत्ति है। भविष्यकालमें मु, मो और म इनके स्थानपर हिस्सा और हित्था ये धातुके आगे विकल्पसे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रयुक्त करें। उदा.-होहिस्सा होहित्था। विकल्पपक्षमें-होहिमु होहिमो होहिम। क्वचित् वैसा नहीं होता। उदा.-होस्सामो, इत्यादि ।। २७ ।।

डच्छ दृशिगम इजादौ हिलुक्च वा ।। २८ ॥

दृश् और गम् इन धातुओंके आगे, भविष्यकाल इत्यादिमेंसे इच्, इत्यादि प्रत्यय होनेपर, डित् अच्छ ऐसा विकल्पसे होता है अथवा हि का लोप विकल्पसे होना है। (अच्छ) डित् होनेसे,(धातुमेंसे) अन्त्य स्वरके साथ अगले वर्णोंका लोप होता है। उदा.-(दृश्)-दच्छिइ दच्छिहिइ। दच्छिन्ति दच्छिहिन्ति। दच्छिसि दच्छिहिसि। दच्छित्था दच्छिहित्था। दच्छिह दच्छिहिह। दच्छिमि छच्छिहिमि। दच्छिहामि दच्छिस्सामि। दच्छिस्सं दच्छिहिस्सं। दच्छिमो दच्छिहिमो। दच्छिहामो दाच्छिस्सामो। दच्छिहिस्सा दच्छिहित्था। दच्छिम दच्छिहिम। दच्छिहाम दच्छिस्साम। दच्छिमु दच्छिहिमु दच्छिहामु दच्छिस्सामु। इसीतरह (गम्)-गच्छिइ गच्छिहिइ। गच्छिन्ति गच्छिहिन्ति। गच्छिसि गच्छिहिसि। गच्छित्था गच्छिहित्था। गच्छिह गच्छिहिह। गच्छिमि गच्छिहिमि। गच्छिहामि गच्छिस्सामि। गच्छिस्सं गच्छिहिस्सं। गच्छिमो गच्छिहिमो। गच्छिहामो गच्छिस्सामो। गच्छिहिस्सा गच्छिहित्था। गच्छिम गच्छिहिम। गच्छिहाम गच्छिस्साम। गच्छिमु गच्छिहिमु। गच्छिहामु गच्छिस्सामु ।। २८ ।।

भिदिविदिच्छिदो डेच्छ ।। २९ ।।

(इस सूत्रमें २.४.२८ से) हिलुक्च वा और इजादौ पदाकी अनुवृत्ति है। भिद्, विद् और छिद् इन धातुओंके आगे भविष्यदर्थमें होनेवाले तिप्, त्, इत्यादिके आदेश होनेपर, डित् एच्छ ऐसा यह (आदेश) विकल्पसे होता है और हि का लोप विकल्पसे होता है। उदा.-भिद्–भेच्छिहि भेच्छिहिइ। भेच्छिन्ति भेच्छिहिन्ति। भेच्छिसि भेच्छिहिसि। भेच्छित्था भेच्छिहित्था। भेच्छिह भेच्छिहिह। मेंच्छिम मेच्छिहिम। मेच्छिमि मेच्छिहिमि। भेच्छिहामि भेच्छिस्सामि। भेच्छिस्सं भेच्छिहिस्सं। भेच्छिमो भेच्छिहिमो। भेच्छिहामो भेच्छिस्सामो।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भेच्छिहिस्सा भेच्छिहित्था। इसीतरह मु और म इनके बारेमें भी। विद्-वेच्छिहि वेच्छिहिइ। वेच्छिन्ति वेच्छिहिन्ति। वेच्छिसि वेच्छिहिसि। वेच्छित्था वेच्छिहित्था। वेच्छिह वेच्छिहिह। वेच्छिमि वेच्छिहिमि। वेच्छिहामि वेच्छिस्सामि। वेच्छिस्सं वेच्छिहिस्सं। वेच्छिमो वेच्छिहिमो। वेच्छिहामो वेच्छिस्सामो। वेच्छिहिस्सा वेच्छिहित्था। इसीतरह म और मु इनके बारेमें भी। छिद्—छेच्छिइ छेच्छिहिइ। छेच्छिन्ति छेच्छिहिन्ति। छेच्छिसि छेच्छिहिसि। छेच्छित्था छेच्छिहित्था। छेच्छिह छेच्छिहिह। छेच्छिम छेच्छिहिम। छेच्छिमि छेच्छिहिमि। छेच्छिहामि छेच्छिस्सामि। छेच्छिस्सं छेच्छिहिस्सं। छेच्छिमो छेच्छिहिमो। छेच्छिहामो छेच्छिस्सामो। छेच्छिहिस्सा छेच्छिहित्था। इसीप्रकार म और मु इनके बारेमें भी ॥२९॥

डोच्छ वचिमुचिरुदिश्रुभुजः ॥ ३० ॥

वच् (वचि), मुच् (मुचि), रुद् (रुदि), श्रु और भुज् (भुजि) इन धातुओंके आगे भविष्यदर्थमें रहनेवाले तिप्, इत्यादि प्रत्ययोंके आदेश होनेपर, डित् ओच्छ ऐसा (आदेश) विकल्पसे होता है, और हि का लोप विकल्पसे होता है। उदा.—वच-वोच्छिइ वोच्छिहिइ। वोच्छिन्ति वोच्छिहिन्ति। वोच्छिसि वोच्छिहिसि। वोच्छित्था वोच्छिहित्था। वोच्छिह वोच्छिहिह। वोच्छिमि वोच्छिहिमि। वोच्छिहामि वोच्छिस्सामि। वोच्छिस्सं वोच्छिहिस्स। वोच्छिमो वोच्छिहिमो। वोच्छिहामो वोच्छिस्सामो। वोच्छित्था वोच्छिहित्था। इसीप्रकार म और मु इनके बारेमें भी। मुच्-मोच्छिइ मोच्छिहिइ। मोच्छिन्ति मोच्छिहिन्ति। मोच्छिसि मोच्छिहिसि। मोच्छित्था मोच्छिहित्था। मोच्छिह मोच्छिहिह। मोच्छिमि मोच्छिहिमि। मोच्छिहामि मोच्छिस्सामि। मोच्छिस्सं मोच्छिहिस्सं। मोच्छिमो मोच्छिहिमो। मोच्छिहामो मोच्छिस्सामो। मोच्छित्था मोच्छिहित्था। इसीप्रकार म और मु इनके बारेमें भी। रुद्—रोच्छिइ रोच्छिहिइ। रोच्छिन्ति रोच्छिहिन्ति। इसीप्रकार स्सा, इत्यादिके बारेमें भी। श्रु-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सोच्छिइ सोच्छिहिइ। सोच्छिन्ति सोच्छिहिन्ति। सोच्छिसि सोच्छिहिसि। इसीप्रकार इट् इत्यादिके बारेमें भी। भुज्-भोच्छिइ भोच्छिहिइ। भोच्छिन्ति भोच्छिहिन्ति। भोच्छिसि भोच्छिहिसि। इसीप्रकार इट्, इत्यादिके बारेमें भी।। ३०।।

डं मेश्छात्ततः।। ३१।।

भविष्यकालमें दृश्, इत्यादि धातुओंके अगले, पूर्व (तीन) सूत्रोंमें (२.४.२८-३०) कहे हुए डच्छ, डेच्छ और डोच्छ इनमेंसे जो च्छकार, उसके अगले मि के (यानी उत्तमपुरुष एकवचनके) आदेशके स्थानपर डित् अं ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-दच्छं द्रक्ष्यामि। गच्छं गमिष्यामि। संगच्छं संगस्ये। भेच्छं भेत्स्यामि। वेच्छं वेदिष्यामि। छेच्छं छेत्स्यामि। वोच्छं वक्ष्यामि। मोच्छं मोक्ष्यामि। रोच्छ रोदिष्यामि। सोच्छं श्रोष्यामि। भोच्छं भोक्ष्ये। विकल्पपक्षमें-दच्छिमि दच्छिहिमि दच्छिहामि दच्छिस्सामि दच्छिस्सं। इसीप्रकार गम्, इत्यादि धातुओंके उदाहरण लेना। (सूत्रमें) छ के बाद आनेवाले, ऐसा क्यों कहा है? इसका कारण—हि, हा, स्सा इनके आगे ऐसा न हो इसलिए। उदा.-गच्छिहिमि गच्छिहामि गच्छिस्सामि।। ३१।।

कृदो हं।। ३२।।

(इस सूत्रमें २.४.३१ से) मेः पदकी अनुवृत्ति है। कृ (करोति) और दा (ददाति) इनके आगे, भविष्यकालमें कहे हुए मि के स्थानपर हं ऐसा विकल्पसे प्रयुक्त करें। उदा.-काहं। दाहं। विकल्पपक्षमें-काहिमि दाहिमि, इत्यादि।। ३२।।

सँ।। ३३।।

धातुके आगे भविष्यकालमें मि के स्थानपर सँ ऐसा विकल्पसे होता है। (सँमेंसे) र् इत् होनेसे, (सका) द्वित्व होता है। उदा..होस्सं हविस्सं। विकल्पपक्षमे-होहिमि होहामि होस्सामि, इत्यादि।। ३३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्विज्जाल्लिङः ॥ ३४ ॥

लिङ् यानी सप्तमी (=विध्यर्थ) का आदेश ऐसा जो 'जा', उसके आगे इकार विकल्पसे प्रयुक्त करें। उदा.-होज्जा होज्जाइ भवेत्। (यहाँ) वा का अधिकार होनेपरभी, पुनः (सूत्रमें) तु ऐसा कहा जानेसे, अगले सूत्रमें विकल्प नहीं होता ॥ ३४ ॥

एकस्मिन् प्रथमादेर्विध्यादिषु दु सु मु ॥ ३५ ॥

विधि, इत्यादिमें यानी विधि, निमंत्रण, आमंत्रण, अभीष्ट, संप्रश्न और प्रार्थना, इनमें होनेवाले प्रथम, इत्यादिके यानी प्रथम, इत्यादि पुरुषोंके एकवचनमें होनेवाले प्रत्ययोंके स्थानपर यथाक्रम दु, सु और मु ऐसे आदेश होंगे। उदा.—हसउ सा। हससु तुमं। हसामु अहं। पेच्छउ पेच्छसु पेच्छामु। (दुमेंसे) दकारका उच्चार अन्य भाषाओंके लिए है ॥ ३५ ॥

बहौ न्तु ह मो ॥ ३६ ॥

विधि, इत्यादि अर्थोंमें कहे हुए प्रथम, मध्यम और उत्तम पुरुषोंके बहुवचनमें होनेवाले प्रत्ययोंके स्थानपर यथाक्रम न्तु, ह और मो ऐसे आदेश होते हैं। उदा.-हसन्तु, हसन्तु हसेयुः वा। हसह, हसत हसेत वा। हसामो, हसाम हसेम वा। इसीप्रकार—तुवरन्तु तुवरह तुवरामो। इसीप्रकार सर्व धातुओंके बारेमें उदाहरण जानें ॥ ३६ ॥

सोस्तु हि ॥ ३७ ॥

विधि, इत्यादि अर्थोंमें सु के यानी मध्यमपुरुष एकवचनके स्थानपर हि ऐसा आदेश विकल्पसे होगा। उदा.-देहि देसु। होहि होसु ॥ ३७ ॥

लुगिज्जहीज्जस्विज्जेऽतः ॥ ३८ ॥

(इस सूत्रमें २.४.३७ से) सोः और तु पदोंकी अनुवृत्ति है। अत् के आगे यानी (धातुके अन्त्य) अकारके आगे सु के स्थानपर लोप, और इज्जहि, इज्जसु, इज्जे ऐसे तीन आदेश विकल्पसे होते हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उदा.-हस हसिज्जहि हसिज्जसु हसिज्जे। विकल्पपक्षमें—हससु। अकारके आगे, ऐसा क्यों कहा है? (कारण इतर स्वरोंके आगे ऐसा नहीं होता)। उदा.-होसु ठाहि ॥ ३८ ॥

लङ्लृटोश्च जर्जारौ ॥ ३९ ॥

लट् और लृट् इनमें यानी वर्तमानकाल तथा भविष्यकाल इनमें तथा (सूत्रमेंसे) चकारके कारण विधि, इत्यादिमें कहे हुए प्रत्ययोंके स्थानपर ज और जा ऐसे ये रित् (प्रत्यय) विकल्पसे होते हैं। (सूत्रमेंसे जर्जारौ में) र् इत् होनेसे, (ज का) द्वित्व (=ज्ज) होता है। उदा.-लट्-हसेज्ज हसेज्जा। पढेज्ज पढेज्जा। सुणेज्ज सुणेज्जा। विकल्पपक्षमें—हसइ। पढइ। सुणइ। लृट्-पढेज्ज पढेज्जा। सुणेज्ज सुणेज्जा। विकल्पपक्षमें-पढिहिइ। सुणिहिइ। विधि, इत्यादिमें-हसेज्ज हसेज्जा, हसतु हसेत् वा। विकल्पपक्षमें-हसउ। इसीतरह सब पुरुषोंमें और सब वचनोंमें अन्य लकारोंके बारेमेंभी होता है (ऐसा कोई) कहते हैं। उदा-होज्ज होज्जा, भवति भवेत् भवतु अभवत् अभूत् बभूव भूयात् भविता भविष्यति अभविष्यत् ऐसा अर्थ (होता है) ॥ ३९ ॥

मध्ये चाजन्तात् ॥ ४० ॥

(इस सूत्रमें २.४.३९ से) जर्जारौ पदकी अनुवृत्ति है। लट्, लृट् और विधि, इत्यादिमें, अजन्त यानी स्वरान्त धातुके बारेमें, प्रकृति और प्रत्यय इनके बीचमें, तथा (सूत्रमेंसे) चकारके कारण प्रत्ययोंके स्थानपर, जर् और जार् ये दो आदेश होते हैं। उदा.-होज्जइ होज्जाइ। होज्ज होज्जा। होज्जहिमि होज्जाहिमि। विधि, इत्यादिमें-होज्जइ होज्जाइ। होज्ज होज्जा। भवतु भवेत् वा। विकल्पपक्षमें-होइ। स्वरान्त धातुके बारेमें, ऐसा क्यों कहा है? (कारण व्यंजनान्त धातुके बारेमें ऐसा नहीं होता)। उदा.—हसेज्ज हसेज्जा। तुवरिज्ज तुवरिज्जा ॥ ४० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

माणन्तौल् च ज्लः ॥ ४१ ॥

लृङ् यानी क्रियातिपत्ति (=संकेतार्थ); उसके जो तिप् और त (ऐसे दो प्रत्यय हैं),उनके स्थानपर माण और न्त ऐसे ये (दो), तथा (सूत्रमेंसे) चकारके कारण जर् और जार् ऐसे होते हैं। (जर् और जार्में र् इत् होनेसे, ज और जा का द्वित्व होता है)। (सूत्रमेंसे माणन्तौल् में) ल् इत् होनेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.-होमाणो होन्तो होज्ज होज्जा। (यानी) अभविष्यत् ऐसा अर्थ ॥ ४१ ॥

शतृशानचोः ॥ ४२ ॥

(इस सूत्रमें २.२.४१ से) माणन्तौ पदकी अनुवृत्ति है। शतृ और शानच् इन दो प्रत्ययोंके स्थानपर माण और न्त ऐसे ये (दो) प्रत्येकको होते हैं। उदा.-शतृ—हसमाणो हसन्तो शानच्-सहमाणो सहन्तो ॥ ४२ ॥

स्त्रियामी च ॥ ४३ ॥

स्त्रीलिंगमें रहनेवाले शतृ और शानच् इन प्रत्ययोंके स्थानपर ई, और (सूत्रमेंसे) चकारके कारण माण और न्त होते हैं। उदा.-हसई हसमाणा हसन्ती। वेवई वेवमाणा वेवन्ती ॥ ४३ ॥

घेत् तुंतव्यक्त्वासु ग्रहेः ॥ ४४ ॥

तुम्, तव्य और क्त्वा प्रत्यय आगे होनेपर, ग्रह् धातुको घेत् ऐसा (आदेश) होता है। उदा.-तुम्-घेत्तुं। तव्य—घेत्तव्वं। क्त्वा—घेत्तुआण घेत्तूण। क्वचित् ऐसा नहीं होता। उदा.-गहिउं। गेण्हिअ ॥ ४४ ॥

अन्त्यस्य वचिमुचिरुदिश्रुभुजां डोत ॥ ४५ ॥

(इस सूत्रमें २.४.४४ से) तुंतव्यक्त्वासु पदकी अनुवृत्ति है। वच् (वचि), मुच् (मुचि), रुद् (रुदि), श्रु और भुज् (भुजि) इन धातुओंके अन्त्य वर्णको, तुं, तव्य और क्त्वा प्रत्यय आगे होनेपर, डित् ओ ऐसा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आदेश होता है। उदा.-वच्-वोत्तुं। वोत्तव्वं। वोत्तुआण वोत्तूण॥ मुच्-मोत्तुं। मोत्तव्वं। मोत्तुआण मोत्तूण॥ रुद्-रोत्तुं। रोत्तव्वं। रोत्तुआण रोत्तूण॥ श्रु-सोत्तुं। सोत्तव्वं। सोत्तुआण सोत्तूण॥ भुज्-भोत्तुं। भोत्तव्वं। भोत्तुआण भोत्तूण॥ ४५॥

ता ट्ठो दृशः॥ ४६॥

(इस सूत्रमें २.४.४५ से) अन्त्यस्य पदकी अनुवृत्ति है। तुं, तव्य और क्त्वा प्रत्यय आगे होनेपर, उन प्रत्ययोंका आद्य तकारके साथ, दृश् धातुके अन्त्य वर्णका द्विरुक्त ठकार (=ट्ठ) होता है। उदा.-दट्ठुं। दट्ठव्वं। दट्ठुआण दट्ठूण॥ ४६॥

आ भूतभविष्यति च कृञः॥ ४७॥

भूतकाल और भविष्यकाल इनके प्रत्यय, तथा (सूत्रमेंसे) चकारके कारण तुम्, तव्य और क्त्वा प्रत्यय, ये आगे होनेपर, कृ (कृञ्) धातुके अन्त्य वर्णको आ ऐसा आदेश होता है। उदा.-काहीअ, अकार्षीत् अकरोत् चकार वा॥ काहिइ, करिष्यति कर्ता वा॥ तुम्-काउं। तव्य-काअव्वं। क्त्वा-काउआण काऊण॥ ४७॥

नमोद्विजरुदां वः॥ ४८॥

नम्, उद्विज् और रुद् धातुओंके अन्त्य वर्णका वकार होता है। उदा.-णवइ। उव्विवइ उव्वेइ। रुवइ रोवइ॥ ४८॥

चर् नृतिमदिव्रजाम्॥ ४९॥

नृत्, मद्, व्रज् धातुओंके अन्त्य वर्णका चकार होता है। (सूत्रमेंसे चर् में) र् इत् होनेसे, (च का) द्वित्व (=च्च) होता है। उदा.-णच्चइ। मच्चइ। वच्चइ॥ ४९॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छर् गमिष्यमासाम् ॥ ५० ॥

गम्, इष्, यम् और आस् धातुओंके अन्त्य वर्णका छ होता है। (सूत्रमेंसे छर् में) र् इत् होनेसे) (छ का) द्वित्व (=च्छ) होता है। उदा.-गच्छइ। इच्छइ। जच्छइ। अच्छइ ॥ ५० ॥

रुधो न्धम्भौ ॥ ५१ ॥

रुध् धातुके अन्त्य वर्णको न्ध और म्भ ऐसे ये आदेश होते हैं। उदा.-रुन्धइ। रुम्भइ ॥ ५१ ॥

युधबुधगृधक्रुधसिधमुहां च ज्झः ॥ ५२ ॥

युध्, बुध्, गृध्, क्रुध्, सिध्, मुह् इन धातुओंके, तथा (सूत्रमेंसे) चकारके कारण रुध् धातुके, अन्त्य वर्णका द्विरुक्त झकार (=ज्झ) होता है। उदा.-जुज्झइ। बुज्झइ। गिज्झइ। कुज्झइ। सिज्झइ। मुज्झइ। रुज्झइ ॥ ५२ ॥

जर् स्विदाम् ॥ ५३ ॥

स्विद् प्रकारके धातुओंके अन्त्य वर्णका ज होता है। (सूत्रमेंसे जर् में) र् इत् होनेसे, (ज का) द्वित्व (ज्ज) होता है। उदा.-सिज्जइ। सव्वंगसिरीए संपज्जइ, सर्वांगश्रिया संपद्यते। खिज्जइ। प्रयोगका अनुसरण करें, इसलिए (स्विदाम्) ऐसा बहुवचन (सूत्रमें) है ॥ ५३ ॥

छिदिभिदो न्दः ॥ ५४ ॥

छिद् और भिद् धातुओंके अन्त्य वर्णको न्द, ऐसा आदेश होता है उदा.-छिन्दइ। भिन्दइ ॥ ५४ ॥

ढः कथिवर्धाम् ॥ ५५ ॥

कथ् और वृध् धातुओंके अन्त्य वर्णका ढ होता है। उदा.-कढइ। वड्ढइ। (सूत्रमें °वर्धाम् ऐसा) बहुवचन होनेसे, जिसमें गुण किया गया

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है ऐसे वृध् धातुकाभी थोडा भी बदल न होते (अविशेषेण) ग्रहण होता है ॥ ५५ ॥

वेष्टेः ॥ ५६ ॥

(इस सूत्रमें २.४.५५ से) ढः पद (अध्याहृत) है। वेष्टन अर्थमें होनेवाले वेष्ट् धातुमें, 'कगटड' (१.४.७७) इत्यादि सूत्रानुसार ष्का लोप होनेपर, (शेष) ट का ढ होता है। उदा.-वेढइ। वेढिज्जइ ॥ ५६ ॥

समुदो लर् ॥ ५७ ॥

सम् और उद् उपसर्गोंके आगे रहनेवाले वेष्ट् धातुके अन्त्य वर्णका रित् लकार होता है। (सूत्रमेंसे लर् में र् इत् होनेसे, लकारका द्वित्व होता है)। उदा-संवेल्लइ। उव्वेल्लइ। बहुलका अधिकार होनेसे, उद् (उपसर्ग) के अगले (वेष्ट् धातुके अन्त्य वर्णका) विकल्पसे ढ भी होता है। उदा.-उव्वेल्लइ उव्वेढइ ॥ ५७ ॥

खादधावि लुक् ॥ ५८ ॥

खाद् और धाव् धातुओंमें अन्त्य वर्णका लोप होता है। उदा.-खाइ खाअइ। खाओ खाइओ। धाइ धाअइ। धाओ। धाइओ। बहुलका अधिकार होनेसे, वर्तमानकाल, भविष्यकाल, विधि, इत्यादिके एकवचनमेंही (इन धातुओंके अन्त्य वर्णका लोप) होता है, इसलिए यहाँ (आगे दिये उदाहरणोंमें) नहीं होता। उदा.-खादन्ति। धावन्ति। क्वचित् 'धावइ पुरओ' ऐसा भी (वाङ्मयमें) दिखाई देता है ॥ ५८ ॥

रः सृजि ॥ ५९ ॥

सृज् धातुमें अन्त्य वर्णका र होता है। उदा.-विसरइ। ओसरइ। ओसरामि ॥ ५९ ॥

डः सीदपति ॥ ६० ॥

सद् (सीदति) और पत् (पतति) धातुओंमें अन्त्य वर्णका ड होता है। उदा.-सडइ। पडइ ॥ ६० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मीलेः प्रादेर्द्वे तु ।। ६१ ।।

प्र, इत्यादि उपसर्गोंके अगले मील् (मीलि) धातुके अन्त्य वर्णके दो रूप विकल्पसे होते हैं। उदा.—पमिल्लइ। पमीलइ। निमिल्लइ निमीलइ। संमिल्लइ संमीलइ। उम्मिल्लइ उम्मीलइ। प्र, इत्यादि उपसर्गोंके अगले, ऐसा क्यों कहा है? (कारण उपसर्ग पीछे न हो तो ऐसे दो रूप नहीं होते)। उदा.—मीलइ ॥ ६१ ॥

चलस्फुटे ।। ६२ ।।

(इस सूत्रमें २.४.६१ से) द्वे पदकी अनुवृत्ति है। चल् और स्फुट् धातुओंमें अन्त्य वर्णके दो रूप विकल्पसे होते हैं। उदा.—चल्लइ चलइ। फुट्टइ फुडइ ।। ६२ ।।

शकगे ।। ६३ ।।

शक्, इत्यादि धातुओंमें अन्त्य वर्णके दो रूप होते हैं। यह सूत्र (२.४.६२ से) पृथक् कहा जानेसे, (यहाँका वर्णान्तर) नित्य होता है। उदा.-शक्-सक्कइ। मृग्-मग्गइ। लग् लग्गइ। सिच् (षिच्)—सिच्चइ। अट्-अट्टइ। लुट्-लुट्टइ। त्रुट्-तुट्टइ। कुप्-कुप्पइ। जिम्-जिम्मइ। नश् (णश्)-णस्सइ। इत्यादि ॥ ६३ ।।

उवर्णस्यावः ।। ६४ ।।

धातुके अन्त्य उ-वर्णको अव ऐसा आदेश होता है। उदा.—ह्नु (हुङ्)-निन्हवइ। च्यु-चवइ। रु-रवइ। कु-कवइ। सु-सवइ। पसवइ ।। ६४ ।।

योरेङ् ।। ६५ ।।

(सूत्रमेंसे यु यानी) इ और उ=यु, उस युके—धातुमेंसे उस इ-वर्ण और उ-वर्ण इनके—एङ् यानी ए और ओ यथाक्रम होते हैं। (यानी) इ-वर्णका एकार और उ-वर्णका ओकार (होते हैं)। उदा.-जेऊण जित्वा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0 In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नेऊण नीत्वा। नेइ नयति। उड्डेइ उड्डयति। सोऊण श्रुत्वा। क्वचित् (ऐसा वर्णान्तर) नहीं होता। उदा.—नीओ। उड्डीणो ॥ ६५ ॥

अर उः ॥ ६६ ॥

धातुके अन्त्य ऋ-वर्णको अर ऐसा आदेश होता है। उदा.-करइ। धरइ। वरइ। सरइ। भरइ। मरइ। तरइ। जरइ ॥ ६६ ॥

अरि वृषाम् ॥ ६७ ॥

वृष् प्रकारके धातुओंके ऋ-वर्णको अरि ऐसा आदेश होता है। उदा.-वृष्-वरिसइ। मृष्-मरिसइ। कृष्-करिसइ। हृष्-हरिसइ। प्रयोगका अनुसरण करें यह दिखानेके लिए (वृषाम्) ऐसा बहुवचन (सूत्रमें) है ॥ ६७ ॥

रुषगेऽचो दिः ॥ ६८ ॥

रुष्, इत्यादि धातुओंमें, अच् का यानी स्वरका दीर्घ होता है। उदा.-रुष्-रूसइ। शुष्-सूसइ। दुष्-दूसइ। तुष्-तूसइ। पुष्-पूसइ। शिष्-सीसइ। इत्यादि ॥ ६८ ॥

हलोऽक् ॥ ६९ ॥

हलन्त (=व्यंजनान्त) धातुके आगे अक् ऐसा आगम होता है। (अक् मेंसे) ककार अन्तका विधि दिखानेके लिए है। उदा.-हसइ। भमइ। रमइ। गच्छइ। भुञ्जइ। उवसमइ। पावइ। सिंचइ। रुंधइ। मुसइ। वहइ। सहइ। शस्, इत्यादि धातुओंके प्रयोग प्रायः नहीं होते ॥ ६९ ॥

त्वनतः ॥ ७० ॥

(इस सूत्रमें २.४.६९ से) अक् पद (अध्याहृत) है। अकारान्त धातुको छोडकर (अन्य) धातुके आगे अक् का आगम विकल्पसे होता है। उदा.-पाअइ पाइ। ठाअइ ठाइ। वाअइ वाइ। धाअइ धाइ। जाअइ जाइ। झाअइ झाइ। भाअइ भाइ, बिभेति भाति वा। जम्भाअइ जम्भाइ जम्भते। उव्वाअइ उव्वाइ उव्दाति। मिलाअइ मिलाइ, म्लायते। विक्केअइ विक्केइ,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विक्रीणीते। अकारान्त धातुको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अकारान्त धातुके आगे अक् नहीं आता)। उदा.—चिइच्छइ चिकित्सते ॥ ७० ॥

अचोऽचाम् ॥ ७१ ॥

धातुमेंसे अच् के यानी स्वरोंके स्थानपर (अन्य) स्वर बहुलत्वसे आते हैं। उदा.-हवइ हिवइ। चिणइ चुणइ। सद्दहणं सद्दहाणं। धावइ धुवइ। रुवइ रोवइ। क्वचित् (ऐसा परिवर्तन) नित्य होता है। उदा.—जेइ। चेइ। देइ। लेइ। विहेइ। नासइ ॥ ७१ ॥

णो ह्रस्व चिजिपूश्रुधूस्तुहुलूभ्यः ॥ ७२ ॥

चि, जि, पू, श्रु, धू, स्तु, हु और लू इन धातुओंके आगे ण ऐसा आगम होता है, और उसके सांनिध्यके कारण ह का यानी दीर्घका ह्रस्व होता है। उदा.-चिणइ। जिणइ। पुणइ। सुणइ। धुणइ। थुणइ। हुणइ। लुणइ। बहुलका अधिकार होनेसे, क्वचित् विकल्प होता है उदा.-उच्चेणइ उच्चेइ। जिणिऊण जेऊण। जिणइ जेणइ। सुणिऊण सोऊण ॥ ७२ ॥

भावकर्मणि तु वर्यग्लुक् च ॥ ७३ ॥

भावे और कर्मणिमें रहनेवाले चि, जि, पू, श्रु, धू, स्तु, हु और लू धातुओंके आगे वकारका आगम विकल्पसे होता है। और उसके सांनिध्यके कारण यक् प्रत्ययका लोप होता है। (सूत्रमेंसे वर् में) र् इत् होनेसे, (व का) द्वित्व (=व्व) होता है। उदा.-चिव्वइ चिणिज्जइ। जिव्वइ जिणिज्जइ। पुव्वइ पुणिज्जइ। सुव्वइ सुणिज्जइ। धुव्वइ धुणिज्जइ। इसीप्रकार भविष्यकालमें चिव्विहिइ चिणिज्जिहिइ, इत्यादि ॥ ७३ ॥

म्मश्चेः ॥ ७४ ॥

(इस सूत्रमें २.४.७३ से) भावकर्मणि पदकी अनुवृत्ति है। भावकर्मणिमें चि धातुके आगे रित् म-आगम होता है, और उसके सांनिध्यके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कारण यक् का लोप होता है। चिम्मइ। विकल्पपक्षमें-चिव्वइ चिणिज्जइ। भविष्यकालमें-चिम्मिहिइ, चिव्विहिइ, चिणिज्जहिइ (इत्यादि) ।। ७४ ।।

अन्त्यस्य हनखनोः ।। ७५ ।।

(इस सूत्रमें २.४.७४ से) मर् पद (अध्याहृत) है। भावकर्मणिमें हन् और खन् धातुओंके अन्त्य वर्णको रित् म-आगम विकल्पसे होता है, और उसके सांनिध्यके कारण यक् का लोप होता है। उदा.—हम्मइ हणिज्जइ। खम्मइ खणिज्जइ। भविष्यकालमें—हम्मिहिइ हणिज्जहिइ, खम्मिहिइ खणिज्जहिइ। बहुलका अधिकार होनेसे, हन् धातुके कर्तरि रूपमेंभी (म् का आगम रित् होता है)। उदा.-हम्मइ (यानी) हन्ति ऐसा अर्थ। क्वचित् (म का आगम नहीं होता)। उदा.—हन्तव्वं। हन्तूण। हओ ।। ७५ ।।

दुहलिहवहरुहां भरत उच्च ।। ७६ ।।

दुह्, लिह्, वह्, रुह् धातुओंके अन्त्य वर्णका रित् भकार विकल्पसे होता है, और उसके सांनिध्यके कारण यक् का लोप होता है। वह् धातुमें अ का उकार होता है। उदा.-दुब्भइ दुहिज्जइ। लिब्भइ लिहिज्जइ। वुब्भइ वहिज्जइ। रुब्भइ रुहिज्जइ। भविष्यकालमें-दुब्भिहिइ, दुहिज्जहिइ, इत्यादि ।। ७६ ।।

दहेर्झर् ।। ७७ ।।

(इस सूत्रमें २.४.७५ से) अन्त्यस्य पदकी अनुवृत्ति है। भावकर्मणिमें दह् धातुमेंसे अन्त्य वर्णका रित् झकार विकल्पसे होता है, और उसके सांनिध्यसे यक् का लोप होता है। उदा.-डज्झइ डहिज्जइ। भविष्यकालमें-डज्झिहिइ डहिज्जहिइ ।। ७७ ।।

बन्धो न्धः ।। ७८ ।।

(इस सूत्रमें २.४.७७ से) झर् पदकी अनुवृत्ति है। बन्ध् धातुके न्ध का भावकर्मणिमें झर् ऐसा आदेश विकल्पसे होता है, और उसके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सांनिध्यसे यक् का लोप होता है। उदा.-बज्झइ बन्धिज्जइ। भविष्यकालमें-बज्झिहिइ बंधिज्जहिइ ॥ ७८ ॥

रुध उपसमनोः ॥ ७९ ॥

उप, सम् और अनु इन उपसर्गोंके आगे रुन्ध् धातुके अन्त्य वर्णका भावकर्मणिमें झर् विकल्पसे होता है, और उसके सांनिध्यसे यक् का लोप होता है। उदा.-उवरुज्झइ। संरुज्झइ। अणुरुज्झइ। विकल्पपक्षमें-उवरुन्धिज्जइ। संरुन्धिज्जइ। अणुरुन्धिज्जइ। भविष्यकालमें—उवरुज्झहिइ। संरुज्झहिइ। इत्यादि ॥ ७९ ॥

द्वे गमिगे ॥ ८० ॥

गम्, इत्यादि धातुओंमें अन्त्य वर्णोंके भावकर्मणिमें दो रूप होते हैं और उनके सांनिध्यसे यक् प्रत्ययका लोप होता है। उदा.-गम्-गम्मइ गमिज्जइ। हस्-हस्सइ हसिज्जइ। भण्-भण्णइ भणिज्जइ। लुभ् लुब्भइ लुभिज्जइ। कथ्-कत्थइ कहिज्जइ। कुप्-कुप्पइ कुविज्जइ। भुज्-भुज्जइ भुजिज्जइ। रुद्-रुव्वइ रुविज्जइ। 'नमोद्विजरुदाम्' (२.४.४८) इस सूत्रानुसार जिसमें वकारका आदेश किया गया है वह रुद् धातु यहाँ लिया है। भविष्यकालमें-गम्मिहिइ गमिज्जहिइ, इत्यादि ॥ ८० ॥

ईर हृकृतॄज्राम् ॥ ८१ ॥

भावकर्मणिमें हृ (हृञ्), कृ (कृञ्), तॄ और जॄ इन धातुओंके अन्त्य वर्णका ईर ऐसा आदेश विकल्पसे होता है, और उसके सांनिध्यसे यक् का लोप होता है। उदा.-हीरइ हरिज्जइ। कीरइ करिज्जइ। तीरइ तरिज्जइ। जीरइ जरिज्जइ ॥ ॥ ८१ ॥

अर्जेविढप्पः ॥ ८२ ॥

(यहाँ) 'अन्त्यस्य' पदकी निवृत्ति हुई। भावकर्मणिमें अर्ज् धातुको विढप्प ऐसा आदेश विकल्पसे होता है, और उसके सांनिध्यसे यक् का

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लोप होता है। उदा.-विढप्पइ। विकल्पपक्षमें--अज्जिज्जइ विढप्पिज्जइ ॥ ८२ ॥

आरभ आढप्पः ॥ ८३ ॥

भावकर्मणिमें आरभ् धातुको आढप्प ऐसा आदेश विकल्पसे होता है, और यक् का लोप होता है। उदा.--आढप्पइ। विकल्पपक्षमें--आरभिज्जइ आढप्पिज्जइ ॥ ८३ ॥

णप्पणज्जौ ज्ञः ॥ ८४ ॥

भावकर्मणिमें ज्ञा (जानाति) धातुको णप्प और णज्ज ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं, और यक् का लोप होता है। उदा.--णप्पइ। णज्जइ। विकल्पपक्षमें-जाणिज्जइ। मुणिज्जइ। 'ज्ञम्नोः' (१.४.३७) सूत्रानुसार (ज्ञा मेंसे ज्ञ का) ण होनेपर, णाइज्जइ (ऐसा रूप होगा)। नञ् पूर्व होनेवाले ज्ञा का अणाइज्जइ (ऐसा रूप होगा) ॥ ८४ ॥

सिप्पः सिचस्निहोः ॥ ८५ ॥

भावकर्मणिमें सिच् (सिञ्चति) और स्निह् धातुओंको सिप्प ऐसा आदेश विकल्पसे होता है, और यक् का लोप होता है। उदा.-सिप्पइ सिच्यते स्निह्यते वा। विकल्पपक्षमें-सिंचिज्जइ। णेहिज्जइ ॥ ८५ ॥

वाहिप्पो व्याहृः ॥ ८६ ॥

व्याहृ (व्याहरति) धातुको भावकर्मणिमें वाहिप्प ऐसा आदेश विकल्पसे होता है, और यक् का लोप होता है। उदा.-वाहिप्पइ। विकल्पपक्षमें-वाहरिज्जइ ॥ ८६ ॥

ग्रहेर्घेप्पः ॥ ८७ ॥

भावकर्मणिमें ग्रह् धातुको घेप्प ऐसा आदेश विकल्पसे होता है, और यक् का लोप होता है। उदा.-घेप्पइ। विकल्पपक्षमें-गेण्हिज्जइ ॥ ८७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छिप्पः स्पृशतेः ॥ ८८ ॥

भावकर्मणिमें स्पृश् (स्पृशति) धातुको छिप्प ऐसा आदेश विकल्पसे होता है, और यक् का लोप होता है। उदा.—छिप्पइ। विकल्पपक्षमें—छिविज्जइ ॥ ८८ ॥

दीसल् दृशेः ॥ ८९ ॥

भावकर्मणिमें दृश् (दृशि) धातुको लित् (=नित्य) दीस ऐसा आदेश होता है, और यक् का लोप होता है। उदा.-दीसइ ॥ ८९ ॥

वचेरुच्चः ॥ ९० ॥

भावकर्मणिमें वच् (वचि) धातुको उच्च ऐसा आदेश विकल्पसे होता है, और यक् का लोप होता है। उदा.-उच्चइ। विकल्पपक्षमें-वइज्जइ ॥ ९० ॥

ईअइज्जौ यक् ॥ ९१ ॥

अपवादके निमित्तसे यह नियम कहा है। भावकर्मणिमें कहा हुआ जो यक् प्रत्यय है, उसको ईअ और इज्ज ऐसे आदेश होते हैं। उदा.—हसीअइ हसिज्जइ। हसीअन्तो हसिज्जन्तो। हसीअमाणो हसिज्जमाणो। पढीअइ पढिज्जइ। होईअइ होइज्जइ। बहुलका अधिकार होनेसे, क्वचित् यक् प्रत्ययभी विकल्पसे होता है। उदा.-तेण लहिज्ज। तेण लहिज्जेज्ज। मए णवेज्ज। मए णविज्जेज्ज। तेण अच्छिज्ज। तेण अच्छिज्जेज्ज। तेण अच्छीअइ ॥ ९१ ॥

स्पृहदूञोः सिहदूमौ णिचोः ॥ ९२ ॥

णिच् प्रत्ययान्त (प्रेरणार्थी प्रत्ययान्त) स्पृह् और दू (दूञ्) धातुओंको सिह और दूम ऐसे आदेश यथाक्रम होते हैं। उदा.—सिहइ। दूमइ ॥ ९२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निवृपतोर्णिहोडो वा ॥ ९३ ॥

(इस सूत्रमें २.४.९२ से) णिचोः पदकी अनुवृत्ति है। णिच् प्रत्ययान्त, नि (उपसर्ग) जिसके पूर्व है ऐसा वृ (वृञ्) और पत् (पति) इन धातुओंके स्थानपर णिहोड ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.— णिहोडइ निवारयति पातयति वा। विकल्पपक्षमें—णिवारेइ। पाडेइ ॥९३॥

धवलोद्घटोर्दुमोग्गौ ॥ ९४ ॥

(इस सूत्रमें २.४.९३ से) वा पदकी अनुवृत्ति है। णिच् प्रत्ययान्त धवलयति और उत् (उपसर्ग) पूर्व होनेवाला घटयति, इनको विकल्पसे दुम और उग्ग ऐसे आदेश यथाक्रम होते हैं। उदा.—दुमइ। उग्गइ। विकल्प-पक्षमें-धवलेइ। उग्घाडेइ। 'अचोऽचाम्' (२.४.७१) सूत्रानुसार, दुममेंसे (उ का) अ होनेपर-दमिअं धवलिअं ॥ ९४ ॥

भ्रमवेष्टयोस्तालिअण्टपरिआलौ ॥ ९५ ॥

णिच्-प्रत्ययान्त ऐसे भ्रम् और वेष्ट् धातुओंको तालिअण्ट और परिआल ऐसे ये (आदेश) यथाक्रम विकल्पसे होते हैं। उदा.—तालिअण्टइ विकल्पपक्षमें—भमाडइ। भमाडेइ। भामइ। भामावइ। भामावेइ। वेष्ट्—परिआलइ। विकल्पपक्षमें—वेढइ ॥ ९५ ॥

रावो रञ्जयतेः ॥ ९६ ॥

णिच्-प्रत्ययान्त रञ्जयति धातुको राव ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.—रावेइ। विकल्पपक्षमें-रञ्जेइ ॥ ९६ ॥

तुलिडोल्योरोहामरक्खोलौ ॥ ९७ ॥

णिच्-प्रत्ययान्त तुलयति और दोलयति नामधातुओंको यथाक्रम ओहाम और रक्खोल ऐसे ये (आदेश) विकल्पसे होते हैं। उदा.— ओहामइ। रक्खोलइ। विकल्पपक्षमें—तुलइ। डोलइ ॥ ९७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आसंघः संभावेः ॥ ९८ ॥

णिच्-प्रत्ययान्त संभावयति धातुको आसंघ ऐसा (आदेश) विकल्पसे होता है। उदा.-आसंघइ। विकल्पपक्षमें—संभावेइ, संभावयति ॥ ९८ ॥

अर्पेरल्लिवपणामचच्चुप्पाः ॥ ९९ ॥

णिच्-प्रत्ययान्त अर्पयति धातुको अल्लिव, पणाम और चच्चुप्प ऐसे ये तीन आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.—अल्लिवइ। पणामइ। चच्चुप्पइ। विकल्पपक्षमें—अप्पेइ ओप्पेइ ॥ ९९ ॥

गुलुगुच्छोत्थङ्घोव्वेल्लोल्लाला उन्नमेः ॥ १०० ॥

णिच्-प्रत्ययान्त, उत् (उपसर्ग) पूर्वक ऐसे नम् (नमि) धातुको गुलुगुच्छ, उत्थंघ, उव्वेल्ल और उल्लाल ऐसे चार आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-गुलुगुच्छइ। उत्थंघइ। उव्वेल्लइ। उल्लालइ। विकल्पपक्षमें—उण्णवेइ ॥ १०० ॥

प्रकाशेर्णुव्वः ॥ १०१ ॥

णिच्-प्रत्ययान्त प्रकाश् (प्रकाशि) धातुको णुव्व ऐसा (आदेश) विकल्पसे होता है। उदा.-णुव्वइ। विकल्पपक्षमें—पआसेइ ॥ १०१ ॥

णिहुवः कमेः ॥ १०२ ॥

स्वार्थे णिच्-प्रत्ययान्त कम् (कमि) धातुको णिहुव ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-णिहुवइ। विकल्पपक्षमें—कामेइ ॥ १०२ ॥

नशेर्विप्पगालनासवपलावहारवविउडाः ॥ १०३ ॥

णिच्-प्रत्ययान्त नश् (नाशयति) धातुको विप्पगाल, नासव, पलाव, हारव, विउड ऐसे पाँच आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.—विप्पगालइ। नासवइ। पलावइ। हारवइ। विउडइ। विकल्पपक्षमें-णासेइ ॥ १०३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वल आरोपेः ।। १०४ ।।

णिच्-प्रत्ययान्त आरोपि धातुको वल ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–वलइ। विकल्पपक्षमें–आरोवेइ ।। १०४ ।।

विरेचेरोलुण्डोल्लुण्डपल्लत्थाः ।। १०५ ।।

णिच्-प्रत्ययान्त विरेचयति धातुको ओलुण्ड, उल्लुण्ड, पल्लत्थ ऐसे तीन आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.–ओलुण्डइ। उल्लुण्डइ। पल्लत्थइ। विकल्पपक्षमें–विरेअइ ।। १०५ ।।

कम्पेर्विच्छोलः ।। १०६ ।।

णिच्-प्रत्ययान्त कम्पयति धातुको विच्छोल ऐसा (आदेश) विकल्पसे होता है। उदा.–विच्छोलइ। विकल्पपक्षमें–कम्पेइ ।। १०६ ।।

रोमन्थेरोग्गालवग्गालौ ।। १०७ ।।

णिच्-प्रत्ययान्त रोमन्थि इस नामधातुको ओग्गाल और वग्गाल ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.—ओग्गालइ। वग्गालइ। विकल्प-पक्षमें–रोमन्थेइ ।। १०७ ।।

प्लावेरोव्वालपव्वालौ ।। १०८ ।।

णिच्-प्रत्ययान्त प्लावयति धातुको ओव्वाल, पव्वाल ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-ओव्वालइ। पव्वालइ।। विकल्पपक्षमें-पावेइ।। १०८।

मिश्रेर्मीसालमेलवौ ।। १०९ ।।

णिच् प्रत्ययान्त मिश्रयति धातुको मीसाल, मेलव ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-मीसालइ। मेलवइ। विकल्पपक्षमें-मीसेइ ।। १०९ ।।

छादेर्नूमनुमोव्वालडक्कपव्वालसंतुमाः ।। ११० ।।

णिच्-प्रत्ययान्त छादयति धातुको नूम, नुम, उव्वाल, डक्क, पव्वाल और संतुम ऐसे छः आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.—नूमइ। नुमइ। (न का) ण होनेपर–णूमइ। उव्वालेइ। डक्केइ। पव्वालेइ। संतुमइ। विकल्पपक्षमें-छाएइ ।। ११० ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अच्चुक्कवोक्कौ विज्ञापेः ॥ १११ ॥

णिच्-प्रत्ययान्त विज्ञापि धातुको अच्चुक्क और वोक्क ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-अच्चुक्कइ। वोक्कइ। विकल्पपक्षमें-विण्णावेइ ॥ १११ ॥

परिवाडो घटेः ॥ ११२ ॥

णिच्-प्रत्ययान्त घटयति धातुको परिवाड ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.—परिवाडेइ। विकल्पपक्षमें-घडेइ ॥ ११२ ॥

दर्शेर्दावदक्खवदंसाः ॥ ११३ ॥

णिच्-प्रत्ययान्त दर्शयति धातुको दाव, दक्खव, दंस ऐसे तीन आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-दावइ। दक्खवइ। दंसइ। विकल्पपक्षमें—दरिसइ ॥ ११३ ॥

प्रस्थापेः पेट्ठवपेड्डवौ ॥ ११४ ॥

णिच्-प्रत्ययान्त प्रस्थापयति धातुको पेट्ठव, पेड्डव ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.–पेट्ठवइ। पेड्डवइ। विकल्पपक्षमें—पट्ठावेइ ॥ ११४ ॥

यापेर्जवः ॥ ११५ ॥

णिच्-प्रत्ययान्त यापयति धातुको जव ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-जवइ। विकल्पपक्षमें–जावेइ ॥ ११५ ॥

विकोशेः पक्खोडः ॥ ११६ ॥

णिच्-प्रत्ययान्त विकोशयति नामधातुको पक्खोड ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–पक्खोडइ। विकल्पपक्षमें-विओसेइ ॥ ११६ ॥

गुण्ठ उध्दूलेः ॥ ११७ ॥

णिच्-प्रत्ययान्त उध्दूलयति धातुको गुण्ठ ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-गुण्ठइ। विकल्पपक्षमें-उध्दूलेइ ॥ ११७ ॥

तडेराहोडविहोडौ ॥ ११८ ॥

णिच्-प्रत्ययान्त ताडयति धातुको आहोड और विहोड ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं उदा.-आहोडइ। विहोडइ। विकल्पपक्षमें-ताडेइ ॥ ११८॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ह्लादेरवअच्छलणिचश्च ॥ ११९ ॥

णिच्-प्रत्ययान्त और णिच्-प्रत्ययरहित ह्लादयति धातुको अवअच्छ ऐसा लित् आदेश होता है। उदा.-अवअच्छइ (यानी) ह्लादते ह्लादयति वा॥११९॥

निर्मेर्निम्मवनिम्माणौ ॥ १२० ॥

निर् (उपसर्ग) पूर्वमें रहनेवाले मिमीते धातुको निम्मव और निम्माण ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-निम्मवइ। निम्माणइ। 'आदेस्तु' (१.३.९३) सूत्रानुसार, (न का) ण होनेपर—णिम्मवइ। णिम्माणइ। विकल्पपक्षमें-णिम्मइ ॥ १२० ॥

आङ्लीडोल्लिः ॥ १२१ ॥

आ (आङ्) (उपसर्ग) पीछे होनेवाले लीयति धातुको अल्लि ऐसा आदेश होता है। उदा.-अल्लिइ। अल्लिअइ अल्लीणो ॥ १२१ ॥

क्रियः कीणः ॥ १२२ ॥

क्रीणाति धातुको कीण ऐसा आदेश होता है। उदा.—कीणइ ॥ १२२॥

केर् च वेः ॥ १२३ ॥

वि उपसर्गके आगे होनेवाले क्रीणाति धातुको केर् ऐसा (आदेश) होता है; और (सूत्रमेंसे) चकारके कारण कीण (आदेश भी होता है)। (केर् में) र् इत् होनेसे, (के का) द्वित्व (=क्के) होता है। उदा.-विक्केइ। विक्कीणइ॥१२३॥

स्त्यः समः खा ॥ १२४ ॥

'स्त्यै ष्ट्यै शब्दसंघातयोः' मेंसे स्त्यै धातु (यहाँ अभिप्रेत है)। सम् (उपसर्ग) पीछे होनेवाले स्त्यै स्त्यायति) धातुको खा ऐसा आदेश होता है। उदा.-संखाइ। संखाअइ। संखाअं ॥ १२४ ॥

ध्मो धुमोदः ॥ १२५ ॥

'ध्मा शब्दाग्निसंयोगयोः'मेंसे ध्मा धातु (यहाँ अभिप्रेत है)। उद् (उपसर्ग)-के अगले ध्माको धुमा ऐसा आदेश होता है। उदा.-उद्धुमाइ ॥ १२५ ॥

स्थष्ठकुक्कुरौ ॥ १२६ ॥

उद् (उपसर्ग) के अगले 'ष्ठा गतिनिवृत्तौ'मेंसे ष्ठा धातुको ठ और कुक्कुर ऐसे आदेश होते हैं। उदा.-उट्ठइ। उक्कुंरइ ॥ १२६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निरप्पथक्कठाचिट्ठाः ॥ १२७ ॥

(इस सूत्रमें २.४.१२६ से) स्थः पदकी अनुवृत्ति है। स्था (तिष्ठति) धातुको निरप्प, थक्क, ठा, चिट्ठा ऐसे चार आदेश होते हैं। उदा.–निरप्पइ। (न का) ण होनेपर–णिरप्पइ। थक्कइ। ठाइ। चिट्ठाइ। ठाणं। पट्ठाओ। उट्ठओ। पट्ठाविओ। उट्ठाविओ। चिट्ठिऊण। बहुलका अधिकार होनेसे, थिअं (ऐसा भी रूप होता है)। थाणं। पत्थिओ। उत्थिओ। थाऊण ॥ १२७ ॥

विस्मरः पम्हसवीसरौ ॥ १२८ ॥

विस्मृ (विस्मरति) धातुको पम्हस, वीसर ऐसे आदेश होते हैं। उदा.–पम्हसइ। वीसरइ। विकल्पपक्षमें-विम्हरइ। (यह रूप)'इमष्म...'(१.४.६७) सूत्रानुसार स्म का म्ह होकर,और 'अर ऋः'(२.४.६६) सूत्रानुसार ऋवर्णको अर आदेश होकर सिद्ध होगा ॥ १२८ ॥

कृपौ णिजवहः ॥ १२९ ॥

'कृप कृपायाम्'मेंसे कृप् धातुको अवह ऐसा णिच्-प्रत्ययान्त आदेश होता है। उदा.–अवहावेइ, कृपां करोति ऐसा अर्थ ॥ १२९ ॥

जाणमुणौ ज्ञः ॥ १३० ॥

'ज्ञा अवबोधने'मेंसे ज्ञा धातुको जाण,मुण ऐसे आदेश होते हैं। उदा.-जाणइ। मुणइ। बहुलका अधिकार होनेसे, क्वचित् विकल्प होता है। उदा.–जाणिअं मुणिअं णाअं, ज्ञातम्। जाणिऊण णाऊण, ज्ञात्वा। जाणणं णाणं, ज्ञानम्। परंतु मणइ यह रूप मात्र मन्यते धातुसे है ॥ १३० ॥

धो दह श्रदः ॥ १३१ ॥

'डुधाञ् धारणपोषणयोः'मेंसे धा धातु श्रत् अव्ययके आगे होनेपर, उसको दह ऐसा आदेश होता है। उदा.–सद्दहइ। सद्दहमाणो जीवो। सद्दहणं होइ सम्मत्तं ॥ १३१ ॥

स्पृशश्छिवालुक्खफरिसफासफंसालिहच्छिहान् ॥ १३२ ॥

'स्पृश स्पर्शने' मेंसे स्पृश् (स्पृशति) धातुको छिव, आलुक्ख, फरिस, फास, फंस, आलिह, छिह ऐसे सात आदेश होते हैं। उदा.–छिवइ। आलुक्खइ। फरिसइ। फासइ। फंसइ। आलिहइ। छिहइ ॥ १३२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

फक्कस्थक्कः ॥ १३३ ॥

फक्कति को थक्क ऐसा आदेश होता है। उदा.-थक्कइ ॥ १३३ ॥

श्लाघः सलाहः ॥ १३४ ॥

'श्लाघृ कत्थने'मेंसे श्लाघ् धातुको सलाह ऐसा आदेश होता है। उदा.-सलाहइ ॥ १३४ ॥

थिप्पस्तृपः ॥ १३५ ॥

'तृप प्रीणने'मेंसे तृप् धातुको थिप्प ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.--थिप्पइ ॥ १३९ ॥

भियो भाबिहौ ॥ १३६ ॥

'ञिभी भये'मेंसे भी धातुको भा, बिह ऐसे आदेश होते हैं। उदा.-भाइ। भाअइ। भाइअं। बिहइ। परंतु भीअं रूप मात्र सिद्धावस्थामेंसे है ॥ १३६ ॥

भुजिरण्णभुज्जकम्मसमाणचमडचड्डजेमजिमान् ॥ १३७ ॥

'भुज पालनाभ्यवहारयोः'मेंसे भुज् धातुको अण्ण, भुज्ज, कम्म, समाण, चमड, चड्ड, जेम, जिम ऐसे आठ आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.-अण्णइ। भुज्जइ। कम्मइ। समाणइ। चमडइ। चड्डइ। जेमइ। जिमइ ॥ १३७ ॥

जृम्भेऽवेर्जम्भा ॥ १३८ ॥

'जृभी गात्रविनामे'मेंसे जृभ् धातुको जम्भा ऐसा आदेश होता है। (सूत्रमेंसे) अवेः का अभिप्राय वि उपसर्गके आगे यह धातु होनेपर, (ऐसा आदेश) नहीं होता। उदा.-जम्भाइ। जम्भाअइ। वि उपसर्गके आगे नहीं होता, ऐसा क्यों कहा है? (कारण वि उपसर्गके आगे इस धातुका रूप) केलिपसरो विअम्भइ (ऐसा होता है) ॥ १३८ ॥

जुञ्जजुज्जजुप्पा युजेः ॥ १३९ ॥

'युजियोगे'मेंसे युज् धातुको जुञ्ज, जुज्ज, जुप्प ऐसे तीन आदेश होते हैं। उदा.-जुञ्जइ। जुज्जइ। जुप्पइ ॥ १३९ ॥

जनो जाजम्मौ ॥ १४० ॥

'जनी प्रादुर्भावे'मेंसे जन् धातुको जा, जम्म ऐसे आदेश होते हैं। उदा.-जाइ। जाअइ। जम्मइ ॥ १४० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उत्थल उच्चलेः ॥ १४१ ॥

'चल गतौ'मेंसे चल् धातुके पीछे उत् (उपसर्ग) होनेपर, उस धातुको उत्थल ऐसा आदेश होता है। उदा.-उत्थलइ ॥ १४१ ॥

घूर्णेर्घुम्मपहल्लघोलघुलाः ॥ १४२ ॥

'घूर्ण भ्रमणे'मेंसे घूर्ण् धातुको घुम्म, पहल्ल, घोल और घुल ऐसे चार आदेश होते हैं। उदा.–घुम्मइ। पहल्लइ। घोलइ। घुलइ ॥ १४२ ॥

लिम्पो लिपः ॥ १४३ ॥

लिप् (लिपि) धातुको लिम्प ऐसा आदेश होता है। उदा.–लिम्पइ ॥१४३॥

शदेर्झडपक्खोडौ ॥ १४४ ॥

'शद्लृ शातने'मेंसे शद् धातुको झड, पक्खोड ऐसे आदेश होते हैं। उदा.-झडइ। पक्खोडइ ॥ १४४ ॥

नेः सदेर्मज्जः ॥ १४५ ॥

'षद्लृ विशरणगत्यवसादने'मेंसे षद् (सद्) धातुके पीछे नि (उपसर्ग) होनेपर, उस धातुको मज्ज ऐसा आदेश होता है। अत्ता एत्थ णुमज्जइ; श्वश्रूरत्र निषीदति ॥ १४५ ॥

पुच्छः पृच्छेः ॥ १४६ ॥

पृच्छति को पुच्छ ऐसा आदेश होता है। उदा.—पुच्छइ ॥ १४६ ॥

गण्ठो ग्रन्थेः ॥ १४७ ॥

ग्रन्थ् (ग्रन्थि) धातुको गण्ठ ऐसा आदेश होता है। उदा.–गण्ठइ ॥१४७॥

तुवरजअडौ त्वरेः ॥ १४८ ॥

त्वर् (त्वरि) धातुको तुवर, जअड ऐसे आदेश होते हैं। उदा.-तुवरइ। जअडइ। तुवरन्तो। जअडन्तो ॥ १४८ ॥

अतिङि तुरः ॥ १४९ ॥

(इस सूत्रमें २.४.१४८ से) त्वरेः पदकी अनुवृत्ति है। तिङ् प्रत्ययोंको छोडकर अन्य प्रत्यय आगे होनेपर,त्वर् को तुर ऐसा आदेश होता है। उदा.-तुरिओ। तुरन्तो। तिङ् प्रत्ययोंको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण तिङ् प्रत्यय आगे होनेपर, तुवर ऐसा आदेश होता है)। उदा.-वरतुइ ॥ १४९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तूरः शतृतिङि ॥ १५० ॥

शतृ प्रत्यय और तिङ् प्रत्यय आगे होनेपर, त्वरति धातुको तूर ऐसा आदेश होता है। उदा.-तूरन्तो। तूरइ ॥ १९० ॥

पर्यसः पल्लट्टपल्लोट्टपल्हत्थाः ॥ १५१ ॥

'असु क्षेपणे' मेंसे अस् धातुके पीछे परि (उपसर्ग) होनेपर, उस धातुको पल्लट्ट, पल्लोट्ट, पल्हत्थ ऐसे तीन आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.-पल्लट्टइ। पल्लोट्टइ। पल्हत्थइ ॥ १९१ ॥

मृद्नातेर्मलपरिहट्टखुड्डपन्नाडचड्डमड्डमडाः ॥ १५२ ॥

मृद् (मृद्नाति) धातुको मल, परिहट्ट, खुड्ड, पन्नाड, चड्ड, मड्ड, मड ऐसे सात आदेश होते हैं। उदा.-मलइ। परिहट्टइ। खुड्डइ। पन्नाडइ। चड्डइ। मड्डइ। मडइ ॥ १९२ ॥

दृशिरोअक्खणिअच्छावअच्छचज्जावअज्झपुलअपुलोअदेक्खावअक्खपेच्छावआसपासणिअसच्चवावक्खान् ॥ १५३ ॥

'दृशिर् प्रेक्षणे' मेंसे दृश् धातुको ओअक्ख, णिअच्छ, अवअच्छ, चज्ज, अवअज्झ, पुलअ, पुलोअ, देक्ख, अवअक्ख, पेच्छ, अवआस, पास, णिअ, सच्चव, अवक्ख ऐसे पंद्रह आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.-ओअक्खइ। णिअच्छइ। अवअच्छइ। चज्जइ। अवअज्झइ। पुलअइ। पुलोअइ। देक्खइ। अवअक्खइ। पेच्छइ। अवआसइ। पासइ। णिअइ। सच्चवइ। अवअक्खइ। पर णिज्झअइ रूप मात्र दर्शन अर्थमें होनेवाले नि (उपसर्ग) पूर्वक ध्यायति धातुका है॥ १९३॥

झरपज्झरपच्चड्डखिरणिड्डुअणिव्वलाः क्षरेः ॥ १५४ ॥

क्षर् (क्षरतेः) धातुको झर, पज्झर, पच्चड्ड, खिर, णिड्डुअ और णिव्वल ऐसे छः आदेश होते हैं। उदा.-झरइ। पज्झरइ। पच्चड्डइ। खिरइ। णिड्डुअइ। णिव्वलइ ॥ १९४ ॥

कासेरवाद्वासः ॥ १५५ ॥

अव (उपसर्ग) के अगले कास् (कासेः) धातुको वास ऐसा आदेश होता है। उदा.-ओवासइ ॥ १९५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

न्यसेर्णिमणुमौ ॥ १५६ ॥

नि (उपसर्ग) पीछे होनेवाले अस्यति धातुको णिम, णुम ऐसे आदेश होते हैं। उदा.-णिमइ। णुमइ ॥ १५६ ॥

ग्रहेर्णिरुवारगेण्हवलहरपग्गाहिपच्चुआः ॥ १५७ ॥

'ग्रह उपादाने' मेंसे ग्रह् धातुको णिरुवार, गेण्ह, वल, हर, पग्ग, अहिपच्चुअ ऐसे छः आदेश होते हैं। उदा.-णिरुवारइ। गेण्हइ। वलइ। हरइ। पग्गइ। अहिपच्चुअइ ॥ १५७ ॥

— द्वितीय अध्याय चतुर्थ पाद समाप्त —

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तृतीयोऽध्यायः—प्रथमः पादः ॥

होहुवहवा भुवेस्तु ॥ १ ॥

भू (भुवि) धातुको हो, हुव, हव ऐसे तीन आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-होइ होन्ति हुवइ हुवन्ति। हवइ हवन्ति। विकल्पपक्षमें—भवइ। परिहीणविहवो भाविउं पभवइ। परिभवइ। संभवइ। क्वचित् दूसराभी रूप होता है। उदा.-उभअहुत्तं ॥ १ ॥

पृथक्स्पष्टे णिव्वडः ॥ २ ॥

(इस सूत्रमें ३.१.१ से) भुवेः पदकी अनुवृत्ति है। पृथग्भूत और स्पष्ट अर्थोंमें कर्तरि भू धातुको णिव्वड ऐसा आदेश होता है। उदा.-णिव्वडइ, पृथक् स्पष्टो वा भवति, ऐसा अर्थ ॥ २ ॥

प्रभौ हुप्पः ॥ ३ ॥

(इस सूत्रमें ३.१.१ से) वा पदकी अनुवृत्ति है। प्रभु-कर्तृक भू धातुको हुप्प ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.—अंगे वि न पहुप्पइ। विकल्पपक्षमें-पहवइ प्रभवति ॥ ३ ॥

हु क्ते ॥ ४ ॥

क्त प्रत्यय आगे होनेपर, भू धातुको हु ऐसा आदेश होता है। उदा.-हुअं ॥ ४ ॥

हुरचिति ॥ ५ ॥

चित् (जिसमें च् इत् है) प्रत्ययोंको छोडकर अन्य प्रत्यय आगे होनेपर, (भू धातुको) हु ऐसा रित् आदेश विकल्पसे होता हैं। उदा.-हुन्ति। होन्ति। हुमो। चित् प्रत्ययोंको छोडकर, ऐसा क्यों कहा है? (कारण वे प्रत्यय आगे होनेपर हु आदेश नहीं होता)। उदा.—होइ ॥ ५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आघ्राक्षिस्नामाइग्घणिज्झराब्बुत्ताः ॥ ६ ॥

आजिघ्रति, क्षयति और स्नाति धातुओंको यथाक्रम आइग्घ, णिज्झर और अब्बुत्त ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-आइग्घइ आजिघ्रति। णिज्झरइ क्षयति। अब्बुत्तइ स्नाति। विकल्पपक्षमें-अग्घाइ। खअइ। ण्हाइ ॥ ६ ॥

रा वेर्लियः ॥ ७ ॥

'लीङ् श्लेषणे'मेंसे ली धातु वि उपसर्गके आगे होनेपर, उसको रा ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-विराइ। विराअइ। विकल्पपक्षमें-विलिज्जइ ॥ ७ ॥

निना ल्हिक्कणिलुक्कणिलिअलिक्कलुक्कणिरुग्घाः ॥ ८ ॥

(इस सूत्रमें ३.१.७ से) लियः पदकी अनुवृत्ति है। नि उपसर्गके साथ लीयति धातुको ल्हिक्क, णिलुक्क, णिलिअ, लिक्क, लुक्क और णिरुग्घ ऐसे छः आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-ल्हिक्कइ। णिलुक्कइ। णिलिअइ। लिक्कइ। लुक्कइ। णिरुग्घइ। विकल्पपक्षमें-णिलिज्जइ ॥ ८ ॥

सारः प्रहृः ॥ ९ ॥

प्रहरति धातुको सार ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-सारइ। विकल्पपक्षमें—पहरइ ॥ ९ ॥

प्रसुरुवेल्लवअल्लौ ॥ १० ॥

प्रसरति धातुको उवेल्ल और वअल्ल ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-उवेल्लइ। वअल्लइ। विकल्पपक्षमें—पसरइ ॥ १० ॥

महमहो गन्धे ॥ ११ ॥

गंध विषयमें प्रसरति धातुको महमह ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-महमहइ मालईगंधो। गंध विषयमें, ऐसा क्यों कहा है? (कारण गंध विषयमें न होनेपर) पसरइ (ऐसा रूप होता है) ॥ ११ ॥

झरझूरसुमरविम्हरहरहलुढपअरपम्हुहाः स्मरतेः ॥ १२ ॥

स्मरति धातुको झर, झूर, सुमर, विम्हर, हर, हल, लुढ, पअर, पम्हुह ऐसे नौ आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.—झरइ। झूरइ। सुमरइ। विम्हरइ। हरइ। हलइ। लुढइ। पअरइ। पम्हुहइ। विकल्पपक्षमें—सरइ ॥ १२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

व्याप्रेराअड्डः ॥ १३ ॥

व्याप्रियति धातुको आअड्ड ऐसा आदेश विकल्पसे होता हैं। उदा.—आअड्डइ। विकल्पपक्षमें—वावरइ ॥ १३ ॥

निस्सुर्निहरनिलदाढवरहाढाः ॥ १४ ॥

निःसरति धातुको, निहर, निल, दाढ, वरहाढ ऐसे चार आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-निहरइ। निलइ। दाढइ। वरहाढइ। (विकल्पपक्षमें)—नीसरइ ॥ १४ ॥

जाग्रेर्जग्गः ॥ १५ ॥

'जागृ निद्राक्षये' मेंसे जागृ धातुको जग्ग ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-जग्गइ। विकल्पपक्षमें—जागरइ ॥ १५ ॥

पट्टघोट्टडल्लपिज्जाः पिबेः ॥ १६ ॥

पिब ऐसा जिसको आदेश कहा है ऐसे 'पा पाने' मेंसे पा धातुको पट्ट घोट्ट, डल्ल, पिज्ज ऐसे चार आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-पट्टइ। घोट्टइ। डल्लइ। पिज्जइ। विकल्पपक्षमें-पिवइ ॥ १६ ॥

धुवो धूञः ॥ १७ ॥

'धूञ कम्पने' मेंसे धू धातुको धुव ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.—धुवइ। (विकल्पपक्षमें)—धुणइ ॥ १७ ॥

हणः शृणोतेः ॥ १८ ॥

'श्रु श्रवणे' मेंसे श्रु धातुको हण ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.—हणइ। (विकल्पपक्षमें)-सुणइ ॥ १८ ॥

म्लैर्वापव्वाऔ ॥ १९ ॥

'म्लै गात्रविनामे' मेंसे म्लै धातुको वा और पव्वाअ ऐसे आदेश विकल्पसे प्राप्त होते हैं। उदा.-वाइ। पव्वाअइ। (विकल्पपक्षमें)—मिलाइ ॥ १९ ॥

कृञः कुणः ॥ २० ॥

'डुकृञ करणे' मेंसे कृ धातुको कुण ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-कुणइ। (विकल्पपक्षमें)-करइ ॥ २० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

काणेक्षिते णिआरः ॥ २८ ॥

(इस सूत्रमें ३.१.२० से) कृञः पदकी अनुवृत्ति है। काणेक्षित विषयमें कृ धातुको णिआर ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.—णिआरइ, काणेक्षितं करोति, ऐसा अर्थ ॥ २१ ॥

निष्टम्भे णिट्ठुहः ॥ २२ ॥

निष्टम्भ विषय होनेवाले कृ धातुको णिट्ठुह ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–णिट्ठुहइ, निष्टम्भं करोति, ऐसा अर्थ ॥ २२ ॥

श्रमे वावम्फः ॥ २३ ॥

श्रम विषय होनेवाले कृ धातुको वावम्फ ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-वावम्फइ, श्रमं करोति (ऐसा अर्थ) ॥ २३ ॥

संदाणोऽवष्टम्भे ॥ २४ ॥

अवष्टम्भ विषय होनेवाले कृ धातुको संदाण ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–संदाणइ, अवष्टम्भं करोति (ऐसा अर्थ) ॥ २४ ॥

णिव्वोलो मन्युनौष्ठमालिन्ये ॥ २५ ॥

क्रोध इस कारणसे जो ओष्ठमालिन्य, उस विषयमें कृ धातुको णिव्वोल ऐसा आदेश होता है। उदा.-णिव्वोलइ, मन्युना ओष्ठं मलिनं करोति (ऐसा अर्थ) ॥ २५ ॥

गुललश्चाटौ ॥ २६ ॥

चाटु विषय होनेवाले कृ धातुको गुलल ऐसा आदेश होता है। उदा.–गुललइ, चाटु करोति, ऐसा अर्थ ॥ २६ ॥

पअल्लो लम्बनशैथिल्ययोः ॥ २७ ॥

लम्बन या शैथिल्य विषय होनेवाले कृ धातुको पअल्ल ऐसा आदेश होता है। उदा. पअल्लइ, लम्बयति शैथिल्यं करोति वा (ऐसा अर्थ) ॥ २७ ॥

क्षुरे कम्मः ॥ २८ ॥

क्षुर विषय होनेवाले कृ धातुको कम्म ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-कम्मइ, क्षुरं करोति (ऐसा अर्थ) ॥ २८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णिलुञ्छो निष्पाताच्छोटे ॥ २९ ॥

[1]निष्पतन और आच्छोटन विषय होनेवाले कृ धातुको णिलुञ्छ ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-णिलुञ्छइ, निष्पतति आच्छोटयति वा (ऐसा अर्थ) ॥ २९ ॥

साहट्टसाहरौ संवृः। ३० ॥

सम् (उपसर्ग) पीछे होनेवाले वृणोति धातुको साहट्ट और साहर ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-साहट्टइ। साहरइ। (विकल्पपक्षमें)-संवरइ ॥ ३० ॥

ओहिरोग्घा निद्रः ॥ ३१ ॥

'द्रै स्वप्ने'मेंसे द्रा धातुके पीछे नि उपसर्ग होनेपर, उस धातुको ओहिर और उग्ध ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-ओहिरइ। उग्घइ।(विकल्पपक्षमें)-णिद्दाइ ॥ ३१ ॥

उद्व ओरुम्मावसुऔ ॥ ३२ ॥

'वा गतिगन्धनयोः'मेंसे वा धातुके पीछे उद् (उपसर्ग) होनेपर, उस धातुको ओरुम्मा और वसुआ ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-ओरुम्माइ। वसुआइ। (विकल्पपक्षमें)-उव्वाइ ॥ ३२ ॥

रुवो रुञ्जरुण्टौ ॥ ३३ ॥

'रु शब्दे'मेंसे रु (रौति) धातुको रुञ्ज, रुण्ट ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-रुञ्जइ। रुण्टइ। (विकल्पपक्षमें)-रुवइ ॥ ३३ ॥

कोक्कवोक्कौ व्याहृः ॥ ३४ ॥

व्याहरति धातुको कोक्क, वोक्क ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-कोक्कइ। वोक्कइ। (विकल्पपक्षमें)-वाहरइ ॥ ३४ ॥

संनाम आदृङः ॥ ३५ ॥

आद्रियति धातुको संनाम ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-संनामइ। (विकल्पपक्षमें)-आदरइ ॥ ३५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ओहरोसरावक्तरेस्तु ॥ ३६ ॥

'तॄ प्लवनतरणयोः' मेंसे तॄ धातुके पीछे अव (उपसर्ग) होनेपर, उसके ओहर, ओसर ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-ओहरइ। ओसरइ (यहाँ) तु का अधिकार होनेपरभी, (सूत्रमें) पुनः तु कहनेका कारण (तु) अधिकारका स्मरण हो ॥ ३६ ॥

शकेस्तरतीरपारचआः ॥ ३७ ॥

'शक्लृ शक्तौ' मेंसे शक् धातुको तर, तीर, पार और चअ ऐसे चार आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.—तरइ। तीरइ। पारइ। चअइ। विकल्पपक्षमें-सक्कइ। तरति धातुकाभी तरइ (ऐसा रूप होता है)। 'तीर पार कर्मसमाप्तौ' मेंसे तीर और पार इन धातुओंकेभी (रूप) तीरइ, पारइ (ऐसे होते हैं)। त्यज् (त्यजि) धातुकाभी चअइ (ऐसा रूप होता है) ॥ ३७ ॥

सोल्लपउल्लौ पचेः ॥ ३८ ॥

'डुपचष् पाके' मेंसे पच् धातुको सोल्ल, पउल्ल ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-सोल्लइ। पउल्लइ। विकल्पपक्षमें-पअइ ॥ ३८ ॥

वेअडः खचेः ॥ ३९ ॥

खचति धातुको वेअड ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.—वेअडइ। विकल्पपक्षमें-खअइ ॥ ३९ ॥

णिव्वलो मुचेर्दुःखे ॥ ४० ॥

'मुच्लृ मोक्षणे' मेंसे मुच् धातुको दुःख विषयमें णिव्वल ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.—णिव्वलइ, दुःखं मुञ्चति, ऐसा अर्थ ॥ ४० ॥

अवहेडमेल्लणिल्लुञ्छोसिक्कदिसडरेअवछण्डाः ॥ ४१ ॥

(इस सूत्रमें ३.१.४० से) मुचेः पदकी अनुवृत्ति है। मुञ्चति धातुको अवहेड, मेल्ल, णिल्लुञ्छ, उसिक्क, दिसड, रेअव, छण्ड ऐसे सात आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.—अवहेडइ। मेल्लइ। णिल्लुञ्छइ। उसिक्कइ। दिसडइ। रेअवइ। छण्डइ। विकल्पपक्षमें-मुअइ ॥ ४१ ॥

सिञ्चसिप्पौ सिचेः ॥ ४२ ॥

सिञ्चति धातुको सिञ्च, सिप्प ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.—सिञ्चइ। सिप्पइ। (विकल्पपक्षमें)—सेअइ ॥ ४२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रचेर्विडविड्डावहोग्गहाः ॥ ४३ ॥

'रचि प्रतियत्ने'मेंसे रच् धातुको विडविड्ड, अवह, उग्गह, ऐसे तीन आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.–विडविड्डइ। अवहइ। उग्गहइ। (विकल्पपक्षमें)–रअइ ॥ ४३ ॥

केवलाअसारवसमारोवहत्थाः समारचेः ॥ ४४ ॥

समारच् (समारचि) धातुको केवलाअ, सारव, समार, उवहत्थ ऐसे चार आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.–केवलाअइ। सारवइ। समारइ। उवहत्थइ। (विकल्पपक्षमें)–समारअइ ॥ ४४ ॥

मस्जेराउड्डणिउड्डबुड्डखुप्पाः ॥ ४५ ॥

'टुमस्जी शुद्धौ'मेंसे मस्ज् धातुको आउड्ड, णिउड्ड, बुड्ड, खुप्प ऐसे चार आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.—आउड्डइ। णिउड्डइ। बुड्डइ। खुप्पइ। (विकल्पपक्षमें)-मज्जइ ॥ ४५ ॥

अनुव्रजतेः पडिअग्गः ॥ ४६ ॥

'व्रज गतौ'मेंसे व्रज् धातुके पीछे अनु (उपसर्ग) होनेपर, उसको पडिअग्ग ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–पडिअग्गइ। (विकल्पपक्षमें)-अणुवअइ ॥ ४६ ॥

वञ्चेर्वेहववेलवजूरवोम्मच्छाः ॥ ४७ ॥

वञ्चति धातुको वेहव, वेलव, जूरव, उम्मच्छ ऐसे चार आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.—वेहवइ। वेलवइ। जूरवइ। उम्मच्छइ। (विकल्पपक्षमें)-वञ्चइ ॥ ४७ ॥

रोसाणोबुसलुहलुच्छपुच्छफुसफुस्सघसहुला मार्ष्टेः ॥ ४८ ॥

'मृजू शुद्धौ'मेंसे मृज् धातुको रोसाण, उबुस, लुह, लुच्छ, पुच्छ, फुस, फुस्स, घस, हुल ऐसे नौ आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-रोसाणइ। उबुसइ। लुहइ। लुच्छइ। पुच्छइ। फुसइ। फुस्सइ। घसइ। हुलइ। विकल्पपक्षमें-मज्जइ ॥ ४८ ॥

भञ्जेर्वेमअमुसुमूरमूरपविरज्जसूरसूडकरञ्जनिरञ्जविराः ॥ ४९ ॥

'भञ्जी आमर्दने'मेंसे भञ्ज् धातुको वेमअ, मुसुमूर, मूर, पविरज्ज, सूर, सूड, करञ्ज, निरञ्ज, विर ऐसे नौ आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-वेमअइ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

झुसुमूरइ । मूरइ । पविरज्जइ । सूरइ । सूडइ । करञ्जइ । निरञ्जइ । विरइ । विकल्पपक्षमें–भञ्जइ ॥ ४९ ॥

गर्जेर्बुक्कः ॥ ५० ॥

गर्जति धातुको बुक्क ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–बुक्कइ । विकल्पपक्षमें–गज्जइ ॥ ५० ॥

डिक्को वृषे ॥ ५१ ॥

वृष-कर्तृक गर्जति धातुको डिक्क ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा. डिक्कइ, वृषो गर्जति, ऐसा अर्थ ॥ ५१ ॥

तिजेरोसुक्कः ॥ ५२ ॥

'तिज निशातने'मेंसे तिज् धातुको ओसुक्क ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-ओसुक्कइ । विकल्पपक्षमें-तेअइ। तेअणं ॥ ५२ ॥

आरोलवमालौ पुञ्जेः ॥ ५३ ॥

पुञ्ज् (पुञ्जि) धातुको आरोल, वमाल ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-आरोलइ । वमालइ । (विकल्पपक्षमें)-पुञ्जइ ॥ ५३ ॥

कम्मवस्रुपभुजिः ॥ ५४ ॥

उप (उपसर्ग) पीछे होनेवाले भुज् (भुजि) धातुको कम्मव ऐसा आदेश विकल्पसे प्राप्त होता है। उदा.-कम्मवइ । (विकल्पपक्षमें)-उवभुञ्जइ ॥५४॥

विडवमर्जिः ॥ ५५ ॥

अर्ज् (अर्जि) धातुको विडव ऐसा आदेश विकल्पसे प्राप्त होता है। उदा.– विडवइ । (विकल्पपक्षमें)-अज्जइ ॥ ५५ ॥

लज्जेर्जीहः ॥ ५६ ॥

'ओलस्जी व्रीडायाम्'मेंसे लस्ज् धातुको जीह ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा–जीहइ । (विकल्पपक्षमें)–लज्जइ ॥ ५६ ॥

राजेः सहरेहच्छज्जरिराग्घाः ॥ ५७ ॥

'राजृ दीप्तौ'मेंसे राज् धातुको सह, रेह, छज्ज, रि और अग्घ ऐसे पाँच आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा–सहइ। रेहइ । छज्जइ। रिरइ । अग्घइ। (विकल्पपक्षमें)–राअइ ॥ ५७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

घटेर्गडः ॥ ५८ ॥

घटति धातुको गड ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-गडइ। (विकल्पपक्षमें)-घडइ ॥ ५८ ॥

समो गलः ॥ ५९ ॥

सम् (उपसर्ग) के अगले घटति धातुको गल ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-संगलइ। (विकल्पपक्षमें)-संघडइ ॥ ५९ ॥

हासेन स्फुटतेर्मुरः ॥ ६० ॥

हास इस करणके साथ प्रयुक्त किए जानेवाला जो 'स्फुट विकसने'-मेंसे स्फुट् धातु, उसको मुर ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-मुरइ, हासेन स्फुटति, ऐसा अर्थ ॥ ६० ॥

मण्डेष्टिविडिक्करिडचिश्चचिञ्चिल्लचिश्चआः ॥ ६१ ॥

'मडि भषायाम्'मेंसे मण्ड् धातुको टिविडिक्क, रिड, चिश्च, चिञ्चिल्ल, चिश्चअ ऐसे पाँच आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-टिविडिक्कइ। रिडइ। चिश्चइ। चिञ्चिल्लइ। चिश्चअइ। विकल्पपक्षमें-मण्डइ ॥ ६१ ॥

तुडिरुल्लुक्कणिल्लुक्कोल्लूरोक्खुडलुक्कतोडखुट्टखुडान् ॥ ६२ ॥

'तुड तोडने'मेंसे तुड् धातुको उल्लुक्क, णिल्लुक्क, उल्लूर, उक्खुड, लुक्क, तोड, खुट्ट, खुड ऐसे आठ आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-उल्लुक्कइ। णिल्लुक्कइ। उल्लूरइ। उक्खुडइ। लुक्कइ। तोडइ। खुट्टइ। खुडइ। विकल्पपक्षमें-तुडइ। पर तुट्टइ रूप त्रुट् धातुसे; (यह धातु) शकादि गणमें होनेसे, द्वित्व होकर (२.४.६३), तुट्टइ रूप होगा ॥ ६२ ॥

घुसलविरोलौ मन्थेः ॥ ६३ ॥

'मन्थ विलोडने'मेंसे मन्थ् धातुको घुसल, विरोल ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-घुसलइ। विरोलइ। (विकल्पपक्षमें)-मन्थइ ॥ ६३ ॥

ढंसोत्थङ्घौ विवृतिरुध्योः ॥ ६४ ॥

'वृतु वर्तने'मेंसे वृत् धातुके पीछे वि उपसर्ग होनेपर, और 'रुधि आवरणे'-मेंसे रुध्, इन धातुओंको क्रमसे ढंस, उत्थंघ ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-ढंसइ। विकल्पपक्षमें-विवट्टइ। उत्थंघइ। विकल्पपक्षमें-रुंधइ ॥ ६४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णिहर आक्रन्दे: ॥ ६५ ॥

आ (आङ्) (उपसर्ग) पीछे होनेवाले क्रन्द् (क्रन्दि) धातुको णिहर ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-णिहरइ। (विकल्पपक्षमें)-अक्कन्दइ ॥ ६५ ॥

ओअन्दोद्दालौ छिदेराङा ॥ ६६ ॥

'छिदिर् द्वैधीकरणे'मेंसे छिद् (छिदि) धातुको आ (आङ्) इस (उपसर्ग)के साथ ओअन्द, उद्दाल ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-ओअन्दइ। उद्दालइ। (विकल्पपक्षमें)—अच्छिन्दइ ॥ ६६ ॥

णिल्लूरलूरणिव्वरणिच्छल्लदुहावणिज्झोडाः ॥ ६७ ॥

(इस सूत्रमें ३.१.६६ से) छिदे: पदकी अनुवृत्ति है। छिद् धातुको णिल्लूर, लूर, णिव्वर, णिच्छल्ल, दुहाव, णिज्झोड ऐसे छः आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-णिल्लूरइ। लूरइ। णिव्वरइ। णिच्छल्लइ। दुहावइ। णिज्झोडइ। विकल्पपक्षमें-छिन्दइ ॥ ६७ ॥

अट्टः क्वथेः ॥ ६८ ॥

'क्वथ निष्पाके'मेंसे क्वथ् धातुको अट्ट ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-अट्टइ। विकल्पपक्षमें-कढइ ॥ ६८ ॥

कथेर्वज्जरपज्जरसग्घसाससाहचवजप्पपिसुणवोल्लोव्वालाः ॥६९ ॥

कथयति धातुको वज्जर, पज्जर, सग्घ, सास, चव, जप्प, पिसुण, बोल्ल, उव्वाल ऐसे दस आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-वज्जरइ। पज्जरइ। सग्घइ। सासइ। साहइ। चवइ। जप्पइ। पिसुणइ। बोल्लइ। उव्वालइ। विकल्पपक्षमें-कहइ ॥ ६९ ॥

दुःखे णिव्वरः ॥ ७० ॥

दुःख विषय होनेवाले कथयति धातुको णिव्वर ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-णिव्वरइ, दुःखं कथयति, ऐसा अर्थ ॥ ७० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निषेधेर्हक्कः ॥ ७१ ॥

'षिधू शास्त्रे माङ्गल्ये च'मेंसे सिध् धातुके पीछे नि (उपसर्ग) होनेपर, हक्क ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-हक्कइ। (विकल्पपक्षमें)-णिसेहइ ॥ ७१ ॥

जूरः क्रुधेः ॥ ७२ ॥

कुप्, क्रुध्, रुष् ये तीन क्रुध्यति (अर्थमें हैं)। उस (क्रुध्)को जूर ऐसा आदेश (विकल्पसे) होता है। उदा.-जूरइ। (विकल्पपक्षमें)—कुज्झइ ॥७२॥

विसूरश्च खिदेः ॥ ७३ ॥

'खिद दैन्ये'मेंसे खिद् धातुको विसूर ऐसा आदेश, और (सूत्रमेंसे) चकारके कारण जूर (ऐसा आदेश) विकल्पसे होता है। उदा.-विसूरइ। जूरइ। (विकल्पपक्षमें)—खिज्जइ ॥ ७३ ॥

तड्डवविरल्लतडतड्डास्तनेः ॥ ७४ ॥

'तनु विस्तारे'मेंसे तन् धातुको तड्डव, विरल्ल, तड, तड्ड ऐसे चार आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-तड्डवइ। विरल्लइ। तडइ। तड्डइ। (विकल्पपक्षमें)-तणइ ॥ ७४ ॥

निरः पद्यतेर्वलः ॥ ७५ ॥

'पद गतौ'मेंसे पद् धातुके पीछे निर् (उपसर्ग) होनेपर, उसको वल ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-णिव्वलइ। (विकल्पपक्षमें)—णिवज्जइ ॥ ७५ ॥

संतपां झङ्खः ॥ ७६ ॥

सम् (उपसर्ग) पीछे होनेवाले तप्यति धातुको झङ्ख ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। (सूत्रमें संतपाम् ऐसा) बहुवचन होनेके कारण, निःश्वसिति, विलपति, उपालभति (इन धातुओंको भी झङ्ख ऐसा आदेश होता है)। उदा.-झङ्खइ (यानी) संतप्यते, निःश्वसिति, विलपति उपालभते वा। विकल्पपक्षमें-संतवइ। णीससइ। विलवइ। उवालहइ ॥ ७६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ओअग्गसमाणौ व्यापिसमाप्योः ॥ ७७ ॥

व्याप्नोति और समाप्नोति इन धातुओंको यथाक्रम ओअग्ग और समाण ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-ओअग्गइ। समाणइ। विकल्पपक्षमें-वावेइ व्याप्नोति। समावेइ समाप्नोति ॥ ७७ ॥

णिरवो बुभुक्ष्याक्षिप्योः ॥ ७८ ॥

आचारे क्विप् (प्रत्यय) अन्तमें होनेवाला बुभुक्षि, और आ (उपसर्ग) पीछे होनेवाला क्षिपति, इन धातुओंको णिरव ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-णिरवइ, बुभुक्षते आक्षिपति वा। (विकल्पपक्षमें)-बुभुक्खइ। अक्खिवइ ॥ ७८ ॥

क्षिपेरड्डक्खपरिहुलघत्तछुहफेल्लणोल्लसोल्लगल्लत्थान् ॥ ७९ ॥

'क्षिप प्रेरणे'मेंसे क्षिप् धातुको अड्डक्ख, परि, हुल, घत्त, छुह, फेल्ल, णोल्ल, सोल्ल, गल्लत्थ ऐसे नौ आदेश विकल्पसे प्राप्त होते हैं। उदा.—अड्डक्खइ। परिइ। हुलइ। घत्तइ। छुहइ। फेल्लइ। णोल्लइ। सोल्लइ। गल्लत्थइ। विकल्पपक्षमें-खिवइ ॥ ७९ ॥

उत्क्षिपेरुत्थग्घोसिक्कहक्खुवाल्लत्थगुलुगुञ्छाब्भुत्तान् ॥ ८० ॥

उत्क्षिपति धातुको उत्थग्घ, उसिक्क, हक्खुव, अल्लत्थ, गुलुगुञ्छ, अब्भुत्त, ऐसे छः आदेश विकल्पसे प्राप्त होते हैं। उदा.-उत्थग्घइ। उसिक्कइ। हक्खुवइ। अल्लत्थइ। गुलुगुञ्छइ। अब्भुत्तइ। विकल्पपक्षमें-उक्खिवइ ॥ ८० ॥

वेपेराअब्बाअज्झौ ॥ ८१ ॥

'टुवेपृ कम्पने'मेंसे वेपृ धातुको आअब्ब और आअज्झ ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-आअब्बइ। आअज्झइ। विकल्पपक्षमें-वेवइ ॥ ८१ ॥

विरणडौ गुपेः ॥ ८२ ॥

'गुप व्याकुलत्वे'मेंसे गुप् धातुको विर और णड ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-विरइ। णडइ। विकल्पपक्षमें-गुप्पइ ॥ ८२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चच्चारवेलवावुपालभेः ।। ८३ ।।

'डुलभष् प्राप्तौ'मेंसे लभ् धातुके पीछे उप और आ (उपाङ्) ये उपसर्ग होनेपर, उसको चच्चार, वेलव ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-चच्चारइ। वेलवइ। (विकल्पपक्षमें)-उवालम्भइ ।। ८३ ।।

खउरपड्डुहौ क्षुभेः ।। ८४ ।।

क्षुभ्यति धातुको खउर, पड्डुह ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-खउरइ। पड्डुहइ। (विकल्पपक्षमें)-खुब्भइ ।। ८४ ।।

प्रदीपेः संधुक्काब्बुत्ततेअवसंधुमाः ।। ८५ ।।

प्र (उपसर्ग) पीछे होनेवाले दीप्यति धातुको संधुक्क, अब्बुत्त, तेअव, संधुम ऐसे चार आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-संधुक्कइ। अब्बुत्तइ। तेअवइ। संधुमइ। विकल्पपक्षमें—पलीवइ ।। ८५ ।।

अल्लिअ उपसर्पेः ।। ८६ ।।

'सृप गतौ'मेंसे सृप् धातुके पीछे उप (उपसर्ग) होनेपर, उसको अल्लिअ ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-अल्लिअइ। (विकल्पपक्षमें)-उवसप्पइ ।। ८६ ।।

कमवसलिसलोट्टाः स्वपेः ।। ८७ ।।

'ञिष्वप शये'मेंसे स्वप् धातुको कमवस, लिस और लोट्ट ऐसे तीन आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-कमवसइ। लिसइ। लोट्टइ। विकल्पपक्षमें-सुवइ। सोवइ ।। ८७ ।।

वडवडो विलपेः ।। ८८ ।।

'लप व्यक्तायां वाचि'मेंसे लप् धातुके पीछे वि (उपसर्ग) होनेपर, उसको वडवड ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-वडवडइ। (विकल्पपक्षमें)-विलवइ। 'संतपाम् झङ्खः' (३.१.७६) सूत्रानुसार, (सूत्रमें)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुवचन कहे जानेसे, विनिःश्वसिति, इत्यादि धातुओंको झङ्खइ ऐसा आदेश होता है ॥ ८८ ॥

रभिराङो रम्भडवौ ॥ ८९ ॥

'रभ राभस्ये'मेंसे रभ् धातु आ (उपसर्ग)के आगे होनेपर, उसको रम्भ और डव ऐसे आदेश विकल्पसे प्राप्त होते हैं। उदा.-आरम्भइ। आडवइ। (विकल्पपक्षमें)-आरहइ ॥ ८९ ॥

भाराक्रान्ते नमेर्निसुडः ॥ ९० ॥

'णमु प्रह्वत्वे शब्दे'मेंसे नम् धातुको, भाराक्रान्त (मनुष्य) कर्ता होनेपर, निसुड ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-निसुडइ, भाराक्रान्तः नमति, ऐसा अर्थ ॥ ९० ॥

उब्भाववेल्लणिसरकोड्डुमसक्खुड्डखेड्डमोट्टाअकिलिकिञ्चा रमतेः ॥ ९१ ॥

'रमु क्रीडायाम्'मेंसे रम् धातुको उब्भाव, वेल्ल, णिसर, कोड्डुम, सक्खुड्ड, खेड्ड, मोट्टाअ, किलिंकिञ्चि ऐसे आठ आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-उब्भावइ। वेल्लइ। णिसरइ। कोड्डुमइ। सक्खुड्डइ। खेड्डइ। मोट्टाअइ। किलिकिञ्चइ। विकल्पपक्षमें—रमइ ॥ ९१ ॥

पडिसापरिसामौ शमेः ॥ ९२ ॥

'शमु उपशमे'मेंसे शम् धातुको पडिसा और परिसाम ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-पडिसाइ। परिसामइ। (विकल्पपक्षमें)—समइ ॥ ९२ ॥

लुभेः संभावः ॥ ९३ ॥

'लुभ गार्ध्ये'मेंसे लुभ् धातुको संभाव ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-संभावइ। (विकल्पपक्षमें)—लुब्भइ ॥ ९३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आक्रामिरोहावोत्थारच्छुन्दान् ।। ९४ ।।

'क्रमु पादविक्षेपे'मेंसे क्रम् धातुके पीछे आ (उपसर्ग) होनेपर, उसको ओहाव, उत्थार, छुन्द ऐसे तीन आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.-ओहावइ। उत्थारइ। छुन्दइ। (विकल्पपक्षमें)-अक्कमइ ।। ९४ ।।

विश्रमेर्णिप्पा ।। ९५ ।।

'श्रमु तपसि खेदे च'मेंसे श्रम् धातुके पीछे वि (उपसर्ग) होनेपर, उसको णिप्पा ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-णिप्पाइ। (विकल्पपक्षमें) वीसमइ ।। ९५ ।।

ढुण्ढुल्लढुमढण्डल्लभमाडभम्मभमुडतलअण्टझण्टगुमटिरिटिल्लपरिपरघमचक्कमभमडघसझम्पढुसा भ्रमेः ।। ९६ ।।

'भ्रमु अनवस्थाने'मेंसे भ्रम् धातको ढुण्ढुल्ल, ढुम, ढण्डल्ल, भमाड, भम्म, भमुड, तलअण्ट, झण्ट, गुम, टिरिटिल्ल, परि, पर, घम, चक्कम, भमड, घस, झम्प, ढुस, ऐसे अठारह आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-ढुण्ढुल्लइ। ढुमइ। ढण्डल्लइ। भमाडइ। भम्मइ। भमुडइ। तलअण्टइ। झण्टइ। गुमइ। टिरिटिल्लइ। परिइ। परइ। घमइ। चक्कमइ। भमडइ। घसइ। झम्पइ। ढुसइ। विकल्पपक्षमें-भमइ ।। ९६ ।।

गमिरणुवज्जावज्जसावक्कुसोक्कुसाइच्छाईअवहरावसेहवडअवरिअलवरिअल्लवोल्लणिरिणासवच्छड्डणिणणिम्महपच्छन्दणिलुक्करम्भणिणिवहान् ।। ९७ ।।

'गम्लृ गतौ'मेंसे गम् धातुको अणुवज्ज, अवज्जस, अक्कुस, उक्कुस, अइच्छ, अई, अवहर, अवसेह, वडअ, वरिअल, वरिअल्ल, वोल्ल, णिरिणास, वच्छड्ड, णिण, णिम्मह, पच्छन्द, णिलुक्क, रम्भ, णि, णिवह, ऐसे इक्किस आदेश विकल्पसे प्राप्त होते हैं। उदा.-अणुवज्जइ। अवज्जसइ। अक्कुसइ। उक्कुसइ। अइच्छइ। अईइ। अवहरइ। अवसेहइ। वडअइ। वरिअलइ। वरिअल्लइ। वोल्लइ। णिरिणासइ। वच्छड्डइ। णिणइ। णिम्महइ। पच्छन्दइ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णिलुक्कइ। रम्भइ। णिइ। णिवहइ। विकल्पपक्षमें-गच्छइ। पर हम्मइ, णिहम्मइ, आहम्मइ, इत्यादि रूप मात्र, 'हम्म गतौ' मेंसे हम्म् धातुके होंगे ॥ ९७ ॥

प्रत्यागमागमाभ्यागमां पल्लोट्टाहिपच्चुअोम्मच्छाः ॥ ९८ ॥

प्रत्यागम्, आगम् और अभ्यागम् धातुओंको यथाक्रम, पल्लोट्ट, अहिपच्चुअ, उम्मच्छ ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-पलोट्टइ, पच्चागमइ, प्रत्यागच्छति। अहिपच्चुअइ, आअच्छइ, आगच्छति। उम्मच्छइ, अब्भागच्छइ, अभ्यागच्छति ॥ ९८ ॥

रिहरिग्गौ प्रविशेः ॥ ९९ ॥

प्रविशति धातुको रिह और रिग्ग ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-रिहइ। रिग्गइ। (विकल्पपक्षमें)-पविसइ ॥ ९९ ॥

संगमोऽब्भिडः ॥ १०० ॥

संगच्छति धातुको अब्भिड ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-अब्भिडइ। (विकल्पपक्षमें)-संगच्छइ ॥ १०० ॥

डिप्पणिड्डुहौ विगलेः ॥ १०१ ॥

वि (उपसर्ग) पीछे होनेवाले गलति धातुको डिप्प, णिड्डुह ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-डिप्पइ। णिड्डुहइ। विकल्पपक्षमें-विगलइ ॥ १०१ ॥

णिवहणिरिणासणिरिणिज्जरोञ्चचड्डाः पिषेः ॥ १०२ ॥

'पिष्लृ संचूर्णने' मेंसे पिष् धातुको णिवह, णिरिणास, णिरिणिज्ज, रोञ्च, चड्ड ऐसे पाँच आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-णिवहइ। णिरिणासइ। णिरिणिज्जइ। रोञ्चइ। चड्डइ। विकल्पपक्षमें-पिसइ ॥ १०२ ॥

वलेर्वम्फः ॥ १०३ ॥

वलति धातुको वम्फ ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-वम्फइ। (विकल्पपक्षमें)-वलइ ॥ १०३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भ्रंशेः पिड्डपिट्टछुक्कछुल्लपुट्टपुडाः ॥ १०४ ॥

भ्रंश् (भ्रंशि) धातुको पिड्ड, पिट्ट, छुक्क, छुल्ल, पुट्ट, पुढं ऐसे ये छः आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-पिड्डइ। पिट्टइ। छुक्कइ। छुल्लइ। पुट्टइ। पुडइ। (विकल्पपक्षमें)-भंसइ ॥ १०४ ॥

भषेर्बुक्कः ॥ १०५ ॥

भषति धातुको बुक्क ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.—बुक्कइ। (विकल्पपक्षमें)—भसइ ॥ १०५ ॥

पुरग्घवाग्घोडाहिरेमाग्गुमाध्दुमाः ॥ १०६ ॥

'पृ पालनपूरणयोः'मेंसे पृ धातुको अग्घव, अग्घोड, अहिरेम, अग्गुम, अध्दुम ऐसे पाँच आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-अग्घवइ। अग्घोडइ। अहिरेमइ। अग्गुमइ। अध्दुमइ। विकल्पपक्षमें-पूरइ ॥ १०६ ॥

आहाहिलंघवच्चाहिलक्खमहसिहचिल्लुम्पचम्पाः कांक्षेः ॥ १०७ ॥

कांक्षति धातुको आह, अहिलंघ, वच्च, अहिलक्ख, मह, सिह, चिल्लुम्प, चम्प ऐसे आठ आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-आहइ। अहिलंघइ। वच्चइ। अहिलक्खइ। महइ। सिहइ। चिल्लुम्पइ। चम्पइ। विकल्पपक्षमें—कंखइ ॥ १०७ ॥

नशिरवहरावसेहणिवहपडिसासेहणिरिणासान् ॥ १०८ ॥

नश्यति धातुको अवहर, अवसेह, णिवह, पडिसा, सेह, णिरिणास ऐसे छः आदेश विकल्पसे प्राप्त होते हैं। उदा.-अवहरइ। अवसेहइ। णिवहइ। पडिसाइ। सेहइ। णिरिणासइ। विकल्पपक्षमें-णासइ ॥ १०८ ॥

साअड्ढाणच्छकड्ढाच्छाअञ्छाणञ्छाः कृषेः ॥ १०९ ॥

'कृष विलेखने'मेंसे कृष् धातुको साअड्ढ, अणच्छ, कड्ढ, अच्छ, आअञ्छ, आणञ्छ ऐसे छः आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-साअड्ढइ। अणच्छइ। कड्ढइ। अच्छइ। आअञ्छइ। आणञ्छइ। विकल्पपक्षमें—करिसइ ॥ १०९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

असावक्खोडः ।। ११० ।।

असि विषयके बारेमें कर्षति धातुको अक्खोड ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-अक्खोडइ (यार्न) असिं कोषात् कर्षति ॥ ११० ।।

उल्लसेरूसलोसुम्भारोअणिल्लसगुञ्जोल्लपुलआआः ।। १११ ।।

'लष कान्तौ'मेंसे लस् धातुके पीछे उत् (उपसर्ग) होनेपर, उसको ऊसल, ऊसुम्भ, आरोअ, णिल्लस, गुञ्जोल्ल, पुलआअ ऐसे छः आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-ऊसलइ। ऊसुम्भइ। आरोअइ। णिल्लसइ। गुञ्जोल्लइ। ह्रस्व होनेपर-गुञ्जुल्लइ। पुलआअइ। विकल्पपक्षमें-उल्लसइ ॥ १११ ॥

संदिशोऽप्पाहः ।। ११२ ।।

'दिश अतिसर्जने'मेंसे दिश् धातुके पीछे सम् (उपसर्ग) होनेपर, उसको अप्पाह ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.—अप्पाहइ। (विकल्पपक्षमें)-संदिसइ ।। ११२ ।।

ग्रसेर्घिसः ।। ११३ ॥

'ग्रस अदने'मेंसे ग्रस् धातुको घिस ऐसा आदेश (विकल्पसे) होता है। उदा.–घिसइ। (विकल्पपक्षमें)–गसइ ॥ ११३ ॥

भासेर्भिसः ॥ ११४ ।।

'भासृ दीप्तौ'मेंसे भास् धातुको भिस ऐसा आदेश (विकल्पसे) होता है। उदा.—भिसइ। (विकल्पपक्षमें)-भासइ ।। ११४ ।।

प्रतीक्षेर्विहिरविरमालसामआः ।। ११५ ।।

'ईक्ष दर्शने'मेंसे ईक्ष् धातुके पीछे प्रति (उपसर्ग) होनेपर, उसको विहिर, विरमाल, सामअ ऐसे तीन आदेश विकल्पसे होते ह। उदा.—विहिरइ। विरमालइ। सामअइ। विकल्पपक्षमें-पडिक्खइ ।। ११५ ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्रंसेर्ल्हसडिम्भौ ॥ ११६ ॥

'स्रंसु अवस्रंसने'मेंसे स्रंस् धातुको ल्हस, डिम्भ ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-ल्हसइ। परिल्हसइ। परिल्हसणं। डिम्भइ। (विकल्पपक्षमें)-संसइ ॥ ११६ ॥

मृक्षेश्चोप्पडः ॥ ११७ ॥

मृक्षति धातुको चोप्पड ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-चोप्पडइ। (विकल्पपक्षमें)-मक्खइ ॥ ११७ ॥

विसट्टो दलेः ॥ ११८ ॥

दलति धातुको विसट्ट ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.—विसट्टइ। (विकल्पपक्षमें)-दलइ ॥ ११८ ॥

त्रसेर्वज्जडरौ ॥ ११९ ॥

त्रसति धातुको वज्ज, डर ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.—वज्जइ। डरइ। (विकल्पपक्षमें)-तसइ ॥ ११९ ॥

वोज्जो वीजेश्च ॥ १२० ॥

'वीज व्यजने'मेंसे वीज् धातुको, और (सूत्रमेंसे) चकारके कारण त्रस् (त्रसि) धातुको, वोज्ज ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-वोज्जइ। विकल्पपक्षमें-वीजइ। तसइ ॥ १२० ॥

गवेषेर्घत्तगमेसडुण्डुल्लडण्डोलाः ॥ १२१ ॥

गवेष् धातुको घत्त, गमेस, डुण्डुल्ल, डण्डोल ऐसे चार आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-घत्तइ। गमेसइ। डुण्डुल्लइ। डण्डोलइ। विकल्पपक्षमें-गवेसइ ॥ १२१ ॥

तक्षेश्चञ्छरम्परम्फाः ॥ १२२ ॥

'तक्ष् तनूकरणे'मेंसे तक्ष् धातुको चञ्छ, रम्प, रम्फ ऐसे तीन आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-चञ्छइ। रम्पइ। रम्फइ। विकल्पपक्षमें—तक्खइ। स्पृहादिगणमें (तक्ष होनेसे, क्ष का) छ होनेपर-तच्छइ ॥ १२२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हसेर्गुञ्जः ॥ १२३ ॥

हसति धातुको गुञ्ज ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-गुञ्जइ। (विकल्पपक्षमें)-हसइ ॥ १२३ ॥

दहिरहिऊलालुक्खौ ॥ १२४ ॥

'दह भस्मीकरणे'मेंसे दह् धातुको अहिऊल, आलुक्ख ऐसे आदेश (विकल्पसे) प्राप्त होते हैं। उदा.-अहिऊलइ। आलुक्खइ। (विकल्पपक्षमें)—दहइ ॥ १२४ ॥

विकसेः कोआसवोसग्गौ ॥ १२५ ॥

विकसति धातुको कोआस,वोसग्ग ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-कोआसइ। वोसग्गइ। (विकल्पपक्षमें)-विअसइ ॥ १२५ ॥

श्लिष्षोऽवआससामग्गपरिअन्ताः ॥ १२६ ॥

'श्लिष आलिङ्गने'मेंसे श्लिष् धातुको अवआस, सामग्ग, परिअन्त ऐसे तीन आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-अवआसइ। सामग्गइ। परिअन्तइ। (विकल्पपक्षमें)-सिलिसइ ॥ १२६ ॥

जुगुप्सतेर्दुगुञ्छझूणदुगुच्छाः ॥ १२७ ॥

जुगुप्सति धातुको दुगुञ्छ, झूण, दुगुच्छ ऐसे तीन आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-दुगुञ्छइ। झूणइ। दुगुच्छइ। (विकल्पपक्षमें)-जुउच्छइ ॥ १२७ ॥

वलग्गचडमारुहेः ॥ १२८ ॥

'रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च'मेंसे रुह् धातुके पीछे आ (आङ्) उपसर्ग होनेपर, उसको वलग्ग, चड ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-वलग्गइ। चडइ। (विकल्पपक्षमें)-आरुहइ ॥ १२८ ॥

हुल्लो लक्ष्यात् स्खलेः ॥ १२९ ॥

लक्ष्य विषयके बारेमें स्खलति धातुको हुल्ल ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-हुल्लइ (यानी) लक्ष्यात् स्खलति, ऐसा अर्थ ॥ १२९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गाहोऽवाद्वाहः ॥ १३० ॥

'गाहू विलोडने'मेंसे गाह् धातु अव (उपसर्ग) के आगे होनेपर, उसको वाह ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-ओवाहइ। (विकल्पपक्षमें)-ओगाहइ ॥ १३० ॥

गुम्मगुम्मडौ मुहेः ॥ १३१ ॥

'मुह् वैचित्ये'मेंसे मुह धातुको गुम्म, गुम्मड ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.-गुम्मइ। गुम्मडइ। (विकल्पपक्षमें)-मुज्झइ ॥ १३१ ॥

अपुण्णगाः क्तेन ॥ १३२ ॥

क्त प्रत्ययके साथ अपुण्ण, इत्यादि शब्द निपातके रूपमें आते हैं। उदा.-(१) अपुण्णं आक्रान्तम्। (२) उम्मच्छं (यानी) असंबद्धं क्रोधेन-भङ्ग्या च यद् भणितम्। (३) उल्लुक्को (४) ओसण्णो (५) मुरुओ (यानी) त्रुटितः। (६) पहट्ठं अविरतदृष्टम्। (७) गुज्जणिअं (८) पेज्जलिअं (यानी) संघटितम्। (९) सउलिओ (१०) गलत्थलिओ (११) उरुसोट्टो (यानी) प्रेरितः। (१२) उक्खिण्णं अवकीर्णम्। (१३) वोसट्टो (१४) विहिमिहिओ (यानी) विकसितः। (१५) उद्धरिअं अर्दितः। (१६) कमिओ उपसर्पितः। (१७) कडंतरिअं छिन्नं छिद्रितं च। (१८) सुढिओ श्रान्तः। (१९) परिहाइअं परिक्षीणम्। (२०) णिक्कज्जो (२१) अणिक्कज्जो (२२) उक्कग्गो (२३) तडहडिओ (यानी) अनवस्थितः। (२४) उद्धओ श्रान्तः। (२५) उब्भग्गो मुण्डितः। (२६) उच्चुल्लो उद्विग्नः। (२७) उच्छूरणं उच्छिष्टम्। (२८) उव्विल चकितं क्लान्तं वा। (२९) पहोइअं (३०) अकासिअं (यानी) पर्याप्तम्। (३१) णालं (३२) गोरिहिअं (३३) हित्थो (३४) डड्ढो (यानी) त्रस्तः। (३५) उप्पिथो क्रुद्धः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(३६) णिविड्डो सुप्तोत्थितः। (३७) ओमिसं अप्रवृत्तम्। (३८) उग्घक्कं प्रलपितम्। (३९) उप्पिअं हृतं रोषितं विमुक्तं च। (४०) ओहरणं (४१) जिग्घिअं (४२) ओअग्घिअं (यानी) आघ्रातम्। (४३) ऊसविअं उद्भ्रान्तम्। (४४) आहित्थो रुद्धः गलितः च। (४५) णिसुड्ढो निपातितः। (४६) णिव्वूठो (४७) उम्मण्डो (यानी) उद्धतः। (४८) उल्लुण्डिअं (४९) जूसिअं (यानी) क्षिप्तम्। (५०) णिज्जो (५१) लवओ (५२) लिहओ (५३) लुक्को (यानी) सुप्तः। (५४) उज्जणिअ वक्रितं निम्नीकृतं च। (५५) ऊढं त्यक्तम्। (५६) उज्जरिअ शुष्कं निम्नीकृतं च। (५७) फुड्डं स्पृष्टम्। (५८) डिढओ जलान्तःपातितः। (५९) ओसरिओ आकीर्णः अक्षिनिकोचात् संकुचितः च। (६०) गुलिअं मथितम्। (६१) उम्मरिअं (६२) गुत्थिअं (यानी) उन्मूलितम्। (६३) उड्डाहिअं (६४) परिच्चूडं (६५) उग्गाहिअ (यानी) उत्क्षिप्तम्। (६६) हासिअं दत्तम्। (६७) हेसिअं (६८) दुंदुमिअं (यानी) रक्षितम्। (६९) चित्तविओ परितोषितः। (७०) पल्लोट्टं (७१) झसिअं (७२) पल्हत्थं (यानी) पर्यस्तम्। (७३) पम्हुट्ठो प्रमुषितः प्रमृष्टः च। (७४) ओलेहडो प्रवृद्धः अन्यसक्तः च। (७५) ओट्टअं (७६) ओआमिअं (यानी) अभिभूतम्। (७७) रुमिल्लं अभिलषितम्। (७८) पच्चुडरिअं प्रत्युद्गतम्। (७९) अकन्तो प्रवृद्धः। (८०) ओअल्लो छन्नः। (८१) करमो क्षीणः। (८२) कडो उपरतः क्षीणः च। (८३) पेक्किअं वृषरटितम्। (८४) अंकिअं आलिंगितम्। (८५) अविअं उक्तम्। (८६) उद्धुसिअं (८७) उल्लुसिअं (८८) च्चिमिणं (८९) उल्लकुसिअं (९०) ऊसलिअं (यानी) रोमाञ्चितम्। (९१) असंगिओ सक्तः। (९२) आरेइअं मुकुलितं मुक्तं भ्रान्तं पुलकितं च। (९३) उच्छण्डिअं शरादिव्यथित अपहृतं च। (९४) चण्टिअं छन्नम्। (९५) ऊससिअं (९६) ऊसअं (यानी) उपधानीकृतम्। (९७) आविअं प्रोतम्। (९८) अवहट्ठो दर्पितः। (९९) आरद्धो वृद्धिगतः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गृहायातः च। (१००) घुत्तिअं (१०१) घुसिणिअं (यानी) अन्विष्टम्। (१०२) घुग्घुस्सिअं अशंकं भणितम्। (१०३) उल्लूढो (१०४) उच्चप्पो (यानी) आरूढः। (१०५) खत्रलिओ कुपितः। (१०६) चक्कडिअं प्रीणितम्। (१०७) उव्वत्तो गलितः विरक्तः च। (१०८) गुडिओ संनद्धः। (१०९) गुम्मइओ आपूरितः स्खलितः आमूलात् संवलितः मूढः विघटितः च। (११०) पडिरिग्गअं भग्नम्। (१११) परिअड्डिअं प्रकटितम्। (११२) परिअट्टलिअं परिच्छिन्नम्। (११३) ओप्पं मृष्टम्। (११४) कोज्जरिअं पूरितम्। (११५) उम्मलं घनीभूतम्। (११६) वेल्लाइअं (११७) खडइअं (यानी) संकुचितम्। (११८) झण्टिअं प्रहृतम्। (११९) अणुअज्झिओ प्रयातः प्रतिजागरितः च। (१२०) णज्झरं दलितम्। (१२१) उलुहुलिओ अवितृप्तः। (१२२) वप्पिअं (खप्पिअं?) (१२३) आरोग्गिअं (यानी) भुक्तम्। (१२४) उब्भालणं (१२५) उच्छुण्णं (१२६) अहिरेइअं (१२७) उद्दुमाअं (१२८) अप्पुण्णं (यानी) परिपूर्णम्। (१२९) पच्चावेणिओ संमुखं आगतः। (१३०) दुग्गुच्छं भ्रमितम्। (१३१) वट्टाविअं समापितम्। (१३२) पारद्धं अभिपीडितम्। (१३३) उद्दालिअं रणद्रुतम्। (१३४) उज्झमाणं पलायितम्। (१३५) विडत्तं अर्जितम्। (१३६) छिक्कं स्पृष्टम्। (१३७) थेणिल्लअं हृतम्। (१३८) विउलो आविग्नः। (१३९) साणिअं (१४०) तिक्खालिअं (यानी) शातम्। (१४१) सोहिल्लं (१४२) पक्कं (१४३) ममराइअं (१४४) आइप्पणं (यानी) पिष्टम्। (१४५) ओत्थअं (१४६) ओसविअं (यानी) अवसन्नम्। (१४७) पडिसारिअं स्मृतम्। (१४८) पेण्डइअं पिण्डितम्। (१४९) उग्गहिओ निपुणगृहीतः विरचितः च। (१५०) गमिअं अवधूतम्। (१५१) उद्दच्छिओ निषिद्धः। (१५२) णिग्गिण्णो निर्गतः। (१५३) किवाडो स्खलितः। (१५४) लोट्टो अत्यासक्तः स्मृतः च। (१५५) पविरंजिओ स्निग्धः। (१५६)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दुरुहुण्डिअं (१५७) उध्दूलिअं (१५८) ओसत्तं (यानी) अवनतम्।(१५९) ओज्झरिअं प्रक्षिप्तं विक्षिप्तं च। (१६०) विस्सुओ (१६१) क्वहिओ (यानी) उन्मत्तः। (१६२) परिक्खाइअअं परिक्षीणम। (१६३) छिक्कं (१६४) हेलुअं (यानी) क्षुतम्। (१६५) थमिअं विस्मृतनम्। (१६६) अज्झसिअं (१६७) अवडाहिअं (१६८) उक्कासं (यानी) उत्कृष्टम्। (१६९) हल्लप्फलिअं त्वरितम्। (१७०) उद्दारिअं उत्खातम्। (१७१) अट्टो यातः। (१७२) उल्लिक्कं दुश्चेष्टितम्। (१७३) उच्छड्डिअं मुषितम्। (१७४) वोग्गिण्णं (१७५) परिअम्मिअं (यानी) अलंकृतम्। (१७६) उक्किअ प्रसृतम। (१७७) झत्थो (१७८) ल्हिक्को (१७९) मोओ (१८०) सत्थो (यानी) गतः। (१८१) खसिअं (१८२) उच्छुरिअं (१८३) पडिहत्थो (यानी) आपूर्णम्। (१८४) णिज्जरं जीण खिन्नं च। (१८५) उज्जल्लो (१८६) उच्छुल्लो (१८७) उव्वालो (१८८) अवाहिओ (१८९) उत्तप्पो (यानी) अध्यासितम्। (१९०) ओइल्लअं (१९१) उक्कुण्डं (यानी) विप्रलब्धः। (१९२) उद्धच्छो लिप्तम्। (१९३) छूहिअं पार्श्वपरावृत्तम (१९४) अणग्गपल्लट्टं पुनरुक्तम्। (१९५) अण्णसअं आस्तृतम्। (१९६) उप्पड्डिअं नष्टम्। (१९७) अणहप्पणअं भर्त्सितम्। (१९८) उज्झरिओ (१९९) उग्घओ (२००) विमइओ (२०१) मइओ (२०२) पइओ (यानी) विस्तीर्णः। (२०३) कुद्दो (२०४) वामो (२०५) अवगदो (२०६) पइण्णो (२०७) धुत्तो यानी आक्रान्तम। (२०८) ओक्खलिअं (२०९) ओरम्पिअं (२१०) उक्खण्डिअं (यानी) त्रुटितम् (यानी) खण्डितम् ऐसा अर्थ। (२११) अण्णं (२१२) कप्परिअं (यानी) आरोपितम्। (२१३) आहम्मिओ चूर्णितम्। (२१४) उल्लुण्टिअं (२१५) दुहअं (२१६) उत्थिअं (२१७) उक्कासिअं (२१८) ओत्थारिअं (यानी) रणलब्धम्। (२१९) ओमहिअं पुरस्कृतम्। (२२०) वक्खलिअं उत्संगितम्। (२२१) उअक्किअं पुञ्जीकृतम। (२२२) पिण्डइअं प्रशान्तम्। (२२३)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उलुहुण्डिअं हेषितम्। (२२४) हेक्किअं (२२५) हीसमण (यानी) उन्नतं, उत्तमं चुम्बितं च। (२२६ मुम्मिअं (२२७) मुल्लिअं (यानी) शीलितम्। (२२८) महुरालिअं (२२९) णिस्सीमिओ (यानी) निर्वासितः। (२३०) विक्खिण्णो अवकीर्णः। (२३१) णिरित्तो नतः। (२३२) गुम्मिओ मूलोत्सन्नम्। (२३३) णिरुत्तं निश्चितम्। (२३४) पक्कड्डिअं प्रस्फुटितम्। (२३५) खण्डिओ मद्यासक्तः। (२३६) वेट्टिओ वेष्टितः। (२३७) वोलीणो अतिक्रान्तः। (२३८) णिम्मिओ स्थापितः। (२३९) लक्खिओ(२४०) मिओ (यानी) विघटितः। (२४१) णिच्चणिओ जलधौतः। (२४२) चक्खिअं आस्वादितम्। (२४३) तुच्छअं रंजितम्। [२४४] रेक्किअं आक्षिप्तम्। (२४५) परट्टो भीतः पतितः पीडितः च। (२४६) पडिअग्गिअं वर्धापितं परिभुक्तं च। (२४७) उच्छुल्लो विधारितः। (२४८) णडिओ वञ्चितः। (२४९) ओसक्किओ (२५०) सग्गओ (२५१) फंसुलो (यानी) मुक्तः। {२५२) गुमिलो मूढः स्खलितः आपूर्णः च। (२५३) संसोसिओ चूर्णितः भीतः आरूढः उद्विग्नः च। (२५४) उच्चल्लो (२५५) अज्झंसिअ (यानी) दृष्टम्। इत्यादि ॥ १३२ ॥

धातवोऽर्थान्तरेष्वपि ॥ १३३ ॥

कहे हुए अर्थसे भिन्न अर्थोंमेंभी धातु होते हैं। उदा.-वल् (वलि) प्राणन अर्थमें कहा है, वह खादन अर्थमेंभी है। वलइ, खादति प्राणनं करोति वा। इसी प्रकार कल् (कलि) धातु संख्यान और संज्ञान अर्थोंमें है। कलइ, जानाति संख्यानं करोति वा। गिर् [गिरि] गति और प्रवेश अर्थोंमें है। गिरइ प्रविशति गच्छति वा। काङ्क्षति को प्राकृतमें पम्फ आदेश होता है। पम्फइ, इच्छति खादति वा। पङ्क्ति (?) धातुको थक्क आदेश होता है। थक्कइ नीचां गतिं करोति विलम्बयति वा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विलप्, उपालम्भ्, संतप् और निःश्वस् धातुओंको झंख आदेश होता है। झंखइ, विलपति उपालभते संतपति निःश्वसिति वा। कुछ धातु नित्य कुछ उपसर्गोंके साथ होते हैं। पहरइ युध्यते। संहरइ संवृणोति। अणुहरइ सदृशो भवति। णीहरइ पुरीषोत्सर्गं करोति। विहरइ क्रीडति। आहरइ खादति। पडिहरइ पुनः पूरयति। परिहरइ त्यजति। उपहरइ पूजयति। वाहरइ आह्वयति। पवसइ देशान्तरं गच्छति। उच्छुवइ चोरयति। उल्लुहइ निःसरति ॥ १३३ ॥

— तृतीय अध्याय प्रथम पाद समाप्त —

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

द्वितीयः पादः

दस्तस्य शौरसेन्यामखावचोऽस्तोः ॥ १ ॥

शौरसेनी भाषामें अखु (अनादि होनेवाला), स्वरके आगे होनेवाला, अस्तु (असंयुक्त) ऐसे तकारका दकार होता है। उदा.-तदो पूरिदपदिण्णेण मारुदिणा मन्तिदो। एतस्मात् एदाहि। सततम् सददं। अखु, ऐसा क्यों कहा है? (कारण तकार आदि होनेपर, ऐसा वर्णान्तर नहीं होता)। उदा.-तया तहा। तधा करेध। तरइ। स्वरके आगे होनेवाला, ऐसा क्यों कहा है? (कारण स्वरके आगे तकार न हो तो यह वर्णान्तर नहीं होता)। उदा.-चिन्ता। मन्तिदं। अस्तु, ऐसा क्यों कहा है? (कारण तकार संयुक्त हो तो ऐसा वर्णान्तर नहीं होता)। उदा.—मन्तो। अय्यउत्तो। असंभाविदसक्कारं। हला सउन्तले॥ १ ॥

अधः क्वचित् ॥ २ ॥

(इस सूत्रमें ३.२.१ से) तस्य पदकी अनुवृत्ति है। शौरसेनीमें संयोगमें (संयुक्ताक्षरमें) अनंतर (=बादमें) (अधो) होनेवाले त का दकार क्वचित् लक्ष्यानुसार होता है। उदा.-महन्दो। अन्देउरं ॥ २ ॥

तावति खोर्वा ॥ ३ ॥

शौरसेनीमें तावत् शब्दमें खु यानी आद्य होनेवाले तकारका द विकल्पसे होता है। उदा.—दाव। ताव ॥ ३ ॥

थो धः ॥ ४ ॥

(इस सूत्रमें ३.२.३ मेंसे) वा पदकी अनुवृत्ति है। शौरसेनीमें थ-का ध विकल्पसे होता है। उदा.—कधेदि कहेदि, कथयति। कधं कहं, कथम्। पिधं पिहं, पृथक्। कधा कहा, कथा। (थ) अखु (=अनादि) होनेपरही (ऐसा वर्णान्तर होता है, अन्यथा नहीं होता)। उदा.—थामं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

थेवं। (थ) स्वरके आगे होनेपरही, (ऐसा वर्णान्तर होता है, अन्यथा नहीं)। उदा.-कन्या। (थ) अस्तु [=असंयुक्त] होनेपरही ऐसा वर्णान्तर होता है [अन्यथा नहीं]। उदा.-तित्थं तीर्थम् ॥ ४ ॥

इहहचोर्हस्य ॥ ५ ॥

शौरसेनीमें इह शब्दमेंसे ह का, और 'थध्वमित्थाहचौ' [२.४.५] सूत्रसे कहा हुआ जो हच् प्रत्यय उसमेंसे हकारका, धकार विकल्पसे होता है। उदा.-इध इह। होध होह। परित्ताअध परित्ताअह ॥ ५ ॥

भुवो भः ॥ ६ ॥

[इस सूत्रमें ३.२.५ मेंसे] हस्य पदकी अनुवृत्ति है। शौरसेनीमें भू धातुके आदेशके रूपमें आनेवाले हकारका भकार विकल्पसे होता है। उदा.—भोदि होदि, भुवदि हुवदि हवदि ॥ ६ ॥

अन्त्यादिदेति मो णः ॥ ७ ॥

शौरसेनीमें इत् और एत् यानी इकार और एकार आगे होनेपर, अन्त्य मकारके आगे णकारका आगम विकल्पसे होता है। उदा.-जुत्तं णिमं जुत्तमिणं, युक्तमिदम्। सरिसं णिमं सरिसमिणं, सदृशमिदम्। किं णेदं किमेदं, किमेतत्। एवं णेदं एवमेदं, एवमेतत् ॥ ७ ॥

र्यो य्यः ॥ ८ ॥

शौरसेनीमें र्य के स्थानपर य्य ऐसा यह (वर्णान्तर) विकल्पसे होता है। उदा.—अय्यउत्तो। पय्याउलीकिद म्हि। सुय्यो। कय्यपरवसो। विकल्पपक्षमें-अज्जउत्तो। पज्जाउलीकिद म्हि। सुज्जो। कज्जपरवसो ॥ ८ ॥

पूर्वस्य पुरवः ॥ ९ ॥

शौरसेनीमें पूर्व शब्दको पुरव ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-अपुरवमेदं। विकल्पपक्षमें-अपुव्वमेदं ॥ ९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इअदूणौ क्त्वः ॥ १० ॥

शौरसेनीमें क्त्वा प्रत्ययको इअ और दूण ऐसे आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.—भविअ होदूण। पढिअ पढिदूण। रमिअ रमिदूण। होत्ता, भोत्ता, पढित्ता, रन्ता ये रूप सिद्धावस्थाके रूपोंमें व का लोप होकर, हुए हैं ॥ १० ॥

कृगमोर्डदुअः ॥ ११ ॥

कृ (कृञ्) और गम् धातुओंके आगे क्त्वा प्रत्ययको डित् अदुअ ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.—कदुअ। गदुअ। (विकल्पपक्षमें)—करिअ। गमिअ। करिदूण। गमिदूण ॥ ११ ॥

इदानीमो ल्दाणिं ॥ १२ ॥

शौरसेनीमें इदानीम् के स्थानपर दाणिं ऐसा लित् (=नित्य) आदेश होता है। (सूत्रमेंसे ल्दाणिं में) ल् इत् होनेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.—अणन्दरकरणिज्जं दाणिं आणवेदु अय्यो। 'तद्व्यत्ययश्च' (३.४.६९) सूत्रानुसार, प्राकृतमेंभी (दाणिं आदेश दिखाई देता है)। उदा.—अण्णं दाणिं होइ ॥ १२ ॥

तस्मात्ता ॥ १३ ॥

शौरसेनीमें तस्मात् शब्दको ता ऐसा आदेश प्राप्त होता है। उदा.-ता जाव पविसामि। ता अलं एदिणा माणेग ॥ १३ ॥

णं नन्वर्थे ॥ १४ ॥

शौरसेनीमें ननु के अर्थके लिए णं ऐसा निपात प्रयुक्त करें। उदा.-णं अफलोदअं। णं अय्यमिस्सेहिं पुढमं एव आणत्तं। णं भवं मे अग्गदो चलदि ॥ १४ ॥

अम्महे हर्षे ॥ १५ ॥

शौरसेनीमें अम्महे ऐसा निपात हर्ष दिखाते समय प्रयुक्त करें। उदा.-अम्महे एदाए उम्मिलाए सुपरिखडिदो भवं ॥ १५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हीही वैदूषके ।। १६ ।।

शौरसेनीमें विदूषकसे संबंधित हर्ष दिखाते समय, हीही ऐसा निपात प्रयुक्त करें। उदा.-संपण्णा मणोरहा पिअवअस्सस्स ॥ १६ ॥

हीमाणहे निर्वेदविस्मये ।। १७ ।।

शौरसेनीमें हीमाणहे ऐसा निपात निर्वेद और विस्मय दिखाते समय प्रयुक्त करें। उदा.-निर्वेदमें—हीमाणहे परिस्सन्ता अम्हे एदेण णिअविहिणो दुव्विलसिदेण, परिश्रान्ता वयमनेन निजविधेर्दुर्विलसितेन। विस्मयमें—हीमाणहे जीवन्तवच्छा मे जणणी ॥ १७ ॥

एवार्थे एव्व ।। १८ ।।

शौरसेनीमें एव अर्थमें एव्व ऐसा निपात प्रयुक्त करें। उदा.—मह एव्व भणन्तस्स। सो एव्व देसो ॥ १८ ॥

हञ्जे चेटयाह्वाने ।। १९ ।।

शौरसेनीमें हञ्जे ऐसा निपात चेटीको बुलाते समय प्रयुक्त करें। उदा.-हञ्जे चदुरिए ।। १९ ।।

अतो ङसेर्दुदोश् ।। २० ।।

शौरसेनीमें (शब्दमेंसे अन्त्य) अकारके आगे ङसि (प्रत्यय)को दु और दो ऐसे शित् आदेश होते हैं। (श् इत् होनेसे, पिछला स्वर दीर्घ होता है)। उदा.-दूरादु। दूरादो एव्व ॥ २० ॥

आत्साव्रामन्त्र्य इनो नः ।। २१ ।।

शौरसेनीमें (शब्दके अन्त्य) इन्‌मेंसे नकारका, आमंत्रण अर्थमें होनेवाला सु आगे होनेपर, विकल्पसे आ होता है। उदा.-हो कञ्चुइआ हो तवस्सिआ। हो मणस्सिआ ।। २१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मः ॥ २२ ॥

शौरसेनीमें आमंत्रण अर्थमें होनेवाला सु आगे होनेपर, नकारका मकार विकल्पसे होता है। उदा.-हो राअं। हो पिअवम्मं। हो सुकम्मं। भअवं कुसुमाउह। विकल्पपक्षमें-सअल्लोअन्तआरि भअवं हुदवह ॥२२॥

भवताम् ॥ २३ ॥

आमन्त्र्ये पदकी निवृत्ति हो गयी। शौरसेनीमें सु (प्रत्यय) आगे होनेपर, भवत् प्रकारके शब्दोंमेंसे नकारका म होता है। उदा.-किं भवं हिअएण चिन्तेदि, किं भवान् हृदयेन चिन्तयति। एदु भवं, पज्जलिदो भअवं हुदासणो, एतु भवान्, प्रज्वलितो भगवान् हुताशनः। मघवं पाकसासणो, मघवान् पाकशासनः। कअवं करेमि काहं च, कृतवान् करोमि करिष्यामि च ॥ २३ ॥

भविष्यति स्सिः ॥ २४ ॥

शौरसेनीमें भविष्य (कालके) अर्थमें कहा हुआ प्रत्यय आगे होनेपर, स्सि ऐसा होता है। हि, स्सा, इत्यादि होते हैं, इस नियमका (देखिए २.४.२५-२७) यह नियम अपवाद है। उदा.-भविस्सिदि। करिस्सिदि। गच्छिस्सिदि ॥ २४ ॥

इचेचोर्दट् ॥ २५ ॥

'लटस्ति[म]ाविजेचू' (२.४.१) सूत्रानुसार, वर्तमानकालमें प्रथम-पुरुष एकवचनके स्थानपर कहे हुए इच् और एच् (प्रत्ययों)में दकारका आगम होता है। (सूत्रमेंसे दट् में) ट् इत् होनेसे, (दकारागम) आदि—प्रथम-होता है। उदा.-रमदि रमदे। हसदि हसदे। गच्छदि गच्छदे। होदि। देदि। णेदि ॥ २५ ॥

शेषं प्राकृतवत् ॥ २६ ॥

इस प्रकरणमें, शौरसेनीमें (होता है ऐसा) जो कार्य कहा है, उसके अतिरिक्त इतर कार्य (शौरसेनीमें) प्राकृतकी तरहही होता है। (अभिप्राय यह-)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

'दिहौ मिथः से' (१.१.१८) इस सूत्रसे 'दस्तस्य शौरसेन्यामखावचोऽस्तोः' (३.२.१) सूत्रतक जो सूत्र और उनमें जो उदाहरण कहे गए हैं, वे उसी अवस्थामेंही शौरसेनीमें होते हैं, ऐसा विभाग प्रतिसूत्रके बारेमें देखें। उदा.—अन्तावेई। जुवईजणो। मणसिला। इत्यादि ॥ २६ ॥

मागध्यां शौरसेनीवत् ॥ २७ ॥

(इस सूत्रमें ३.२.२६ से) शेषम् पद (अध्याहृत) है। मागधीमें जो (होता है ऐसा) कहा जाएगा, उसके अतिरिक्त अन्य, शौरसेनीकी तरह होता है,ऐसा समझें। (अभिप्राय यह-) 'दस्तस्य शौरसेन्यामखावचोऽस्तोः' (३.२.१) सूत्रानुसार-विशदु आउत्ते शामिपशादाअ। 'अधः क्वचित्' (३.२.२) सूत्रानुसार-अले क्किं एशे महन्दे कलकले, किमेष महान् कलकलः। 'तावति खोर्वा' (३.२.३) सूत्रानुसार-मालेध वा मुंचेध वा, अयं दाव से आगमे। 'थो धः' (३.२.४) सूत्रानुसार-अले कुम्भीलआ कधेहि। 'इहहचोर्हस्य' (३.२.५) सूत्रानुसार-ओशलध अय्या ओशलध। 'भुवो भः' (३.२.६) सूत्रानुसार-भोदि। 'अन्त्यादिदेति मो णः'[३.२.७] सूत्रानुसार-जुत्तं णिमं। शलिशं णिमं। 'र्यो य्यः' [३.२.८] सूत्रानुसार-अय्य एशे खु कुमाले मलअकेदू। 'पूर्वस्य पुरवः' [३.२.९] सूत्रानुसार-एशे अपुलवे। 'इअदूणौ क्त्वः' [३.२.१०] सूत्रानुसार-किं खु शोहणे बम्हणे त्ति कलिअ लञ्ञा पदिग्गहे दिण्णे। 'कृगमोर्डदुअः' [३.२.११] सूत्रानुसार-कदुअ। गदुअ। 'इदानीमो ल्दाणिं' [३.२.१२] सूत्रानुसार-शुणध दाणिं। हगे शक्कावदालतित्थवाशी धीवले। 'तस्मात्ता' [३.२.१३] सूत्रानुसार—ता जाव उवविशामि। 'णं नन्वर्थे' [३.२.१४] सूत्रानुसार-णं अवशलोवशप्पणीआ लाआणो शुणीअन्ते। 'अम्महे हर्षे' [३.२.१५] सूत्रानुसार—अम्महे एदाए उम्मिलाए शुपलिघडिदे भवं। 'हीही वैदूषके' [३.२.१६] सूत्रानुसार-हीही कोशम्बाणअरी एशा। 'हीमाणहे निवदविस्मये' [३.२.१७ सूत्रानुसार, निर्वेदके लिए उदाहरण, विक्रान्तभीम (नाटक)में

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

राक्षस कहता है-हीमाणहे पलिश्शन्ता हगे एदेण णिअविहिणो दुव्विल-शिदेण। विस्मयके लिए उदाहरण, उदात्तराघव (नाटक) में राक्षस कहता है-हीमाणहे जीवन्तवच्छा मे जणणी। 'एवार्थे य्येव' [३.२.१८] सूत्रानुसार-मए य्येव। 'हञ्जे चेटयाह्वाने' [३.२.१९] सूत्रानुसार-हञ्जे चदुलिए। 'अतो ङसेर्दुदोश्च' [३.२.२०] सूत्रानुसार-अहं पि भागुलाअणादो मुद्दं पावेमि। 'आत्सावामन्त्र्य इनो नः' [३.२.२१] सूत्रानुसार-हे कञ्चुइआ। 'मः' [३.२.२२] सूत्रानुसार-हे लाअं। 'भवताम्' [३.२.२३] सूत्रानुसार-एदु भवं शमणे भअवं महावीले। 'भविष्यति स्सिः' [३.२.२४] सूत्रानुसार-कहिं णु एदे लुहिलप्पिए भविश्शिदि। 'इचे चोर्दट्' [३.२.२५] सूत्रानुसार-अमच्चलक्कशे पेक्खिदुं इदो य्येव आअच्छदि। अले किं एशे महन्दे कलकले शुणीअदि। 'शेषं प्राकृतवत्' [३.२.२६] सूत्रानुसार, मागधीमेंभी, 'दिहौ मिथः से' [१.१.१८] इस सूत्रसे 'दस्तस्य शौरसेन्या-मखात्वचोऽस्तोः' [३.२.१] सूत्रतक जो सूत्र (और) उनमें जो उदाहरण होते हैं, उनमें ये (अमुक) उसी अवस्थामें (मागधीमें आते हैं), ऐसा विभाग स्वयं करके देखें॥ २७ ॥

त्वाड्डाहो ङसः ॥ २८ ॥

(इस सूत्रमें ३.२.२७ से) मागध्याम् पदकी अनुवृत्ति है। मागधीमें आत् यानी अ-वर्णके आगे ङस् को डित् आह ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-हगे न एलिशाह कम्माह काली, अहं न ईदृशस्य कर्मणः कारी। भअदत्तशोणिदाह कुम्भे, भगदत्तशोणितस्य कुम्भः। विकल्पपक्षमें-भीमशेणश्श पश्चादो आहिण्डीअदि। हिडिम्बाए घडुक्कअशोए ण उवश-मदि॥ २८॥

आमो डाहञ् ॥ २९ ॥

मागधीमें अवर्णके आगे आम् को डाह ऐसा ङित् आदेश विकल्पसे होता है। (सूत्रमेंसे डाहञ्में) ञ् इत् होनेसे, (ह का) उच्चार सानुनासिक

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

होता है। उदा.-शअणाहँ मुहं, स्वजनानां मुखम्। विकल्पपक्षमें-णलिन्दाणं। शअणाणं। व्यत्ययके कारण (देखिए ३.४.७०), प्राकृतमेंभी डाहड् (आदेश दिखाई देता है)। उदा.—तुम्हाहं। अम्हाहं। सरिसाहं। कम्माहं ॥ २९ ॥

सौ पुंस्येलतः ॥ ३० ॥

मागधीमें पुल्लिंगमें (होनेवाले शब्दोंका अन्त्य) अकारका, सु (प्रत्यय) आगे होनेपर, एकार होता है। (सूत्रमेंसे एल् में) ल् इत् होनेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.—एष: मेष:, एशे मेशे। एष: पुरुष:, एशे पुलिशे। (शब्दोंके अन्त्य) अकारका, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्यथा ऐसा वर्णान्तर नहीं होता।) उदा.—निधि: णिही। पुल्लिंगमें, ऐसा क्यों कहा है? (कारण अन्य लिंगोंमें ऐसा नहीं होता)। उदा.-जं। जलं ॥ ३० ॥

हगेऽहंवयमोः ॥ ३१ ॥

मागधीमें अहं और वयं इनके स्थानपर हगे ऐसा आदेश होता है। उदा.-हगे शक्कावआलतित्थवाशी धीवले। हगे शंपत्ता, वयं संप्राप्ता:॥३१॥

छोऽनादौ श्चः ॥ ३२ ॥

मागधीमें अनादि होनेवाले छकारका शकारसे आक्रान्त चकार (=श्च) होता है। उदा.-गच्छ गच्छ, गश्च गश्च। उच्छलति उश्चलदि। पिच्छिल: पिश्चिले। व्याकरणके नियमानुसार आनेवाले अनादि छकाभी श्च होता है। उदा.-आपन्नवत्सल: आवण्णवच्छलो आवण्णवश्चले। तिर्यक् प्रेक्षते तिरिच्छि पेच्छइ तिलिश्चि पेश्चदि। अनादि (होनेवाला), ऐसा क्यों कहा है? (कारण अनादि न होनेपर, ऐसा वर्णान्तर नहीं होता)। उदा.—छाले ॥ ३२ ॥

क्षः ᳵकः ॥ ३३ ॥

मागधीमें अनादि होनेवाले क्षकारका जिव्हामूलीयसे आक्रान्त ककार (ᳵक) होता है। उदा.-यक्ष: यᳵके। राक्षस: लᳵकशे। (क्ष) अनादि होनेपरही (ऐसा होता है, अन्यथा नहीं)। उदा.-खए ॥ ३३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्कः प्रेक्षाचक्षेः ॥ ३४ ॥

मागधीमें प्रेक्ष् और आचक्ष् धातुओंमेंसे क्ष का सकारसे आक्रान्त ककार (=स्क) होता है। 'क्षः ×कः'(३.२.३३) इस नियमका यह नियम अपवाद है। उदा.-पेस्कदि। आअस्कदि ॥ ३४ ॥

सः सषोः संयोगेऽग्रीष्मे ॥ ३५ ॥

मागधीमें संयोगमें होनेवाले सकार और षकार इनका सकार होता है; किन्तु अग्रीष्मे यानी ग्रीष्म शब्दमें नहीं होता। (श्, ष्, स् ये)प्रथम स्थानपर (ऊर्ध्व) होनेपर, उनका लोप होता है [देखिए– १.४ ७७], इत्यादि नियमोंका प्रस्तुत नियम अपवाद है। उदा.—स-पस्खलदि। हस्ती। बहस्पदी। मस्कली। विस्मये। ष-शुष्कदारु शुस्कदालु। कष्टं कस्तं। शष्पकवल: शस्पकवले। धनुष्काण्डं धणुस्कण्डं। अग्रीष्मे (ग्रीष्म शब्दको छोडकर), ऐसा क्यों कहा है? (कारण ग्रीष्ममें ष का स नहीं होता)। उदा.-गिम्हवाशले ॥ ३५ ॥

स्रोः श्लौ ॥ ३६ ॥

मागधीमें स्रोः यानी सकार और रेफ इनके यथाक्रम शकार और लकार होते हैं। उदा.-स-समः शमे। हंसः हंशे। श्रुतिः शुदी। शोभनम् (सोहणं) शोहणं। र-नरः नले। करः कले। दोनों (स और र)-सारसः शालशे। पुरुषः पुलिशे ॥ ३६ ॥

न्यण्यज्ञञ्जां ञ्ञ् ॥ ३७ ॥

मागधीमें न्य, ण्य, ज्ञ और ञ्ज इनका ञ यानी ञकार होता है। (सूत्रमेंसे ञ्ञ् में) ञ् इत् होनेसे, (ञ का) द्वित्व होता है। उदा.-न्य— अभिमन्युकुमारः अहिमञ्ञुकुमाले। कन्यका कञ्ञाआ। सामान्यं शामञ्ञं। ण्य-पुण्यवान् पुञ्ञवन्ते। अब्रह्मण्यम् अब्बम्हञ्ञं। ज्ञ-प्रज्ञा पञ्ञा। ञ्ज-अञ्जलिः अञ्ञली। धनञ्जयः धणञ्ञए। पातञ्जलः पाअञ्ञले ॥ ३७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जो व्रजेः ॥ ३८ ॥

मागधीमें व्रजति धातुमेंसे जकारका ञ्‌ होता है। (जकारका) य होता है (देखिए ३.२.३९), इस नियमका प्रस्तुत नियम अपवाद है। उदा.—वञ्जदि। वञ्जदे ॥ ३८ ॥

जयद्यां यः ॥ ३९ ॥

मागधीमें जकार, यकार और द्यकार इनका यकार होता है। उदा.—ज-जानाति याणादि। जनपदः यणवए। दुर्जनः दुय्यणे। गर्जति गय्यदि। य-यानपात्रम् याणवत्तं। द्य-मद्यं मय्यं। अद्य किल विद्याधरः आगतः, अय्य किल विय्याहले आअदे। (यहाँ) यका य होता है, यह कहनेका कारण 'आदेर्जः' (१.३.७४) सूत्रमेंसे नियमका बाध हो ॥ ३९ ॥

ष्ठट्टौ स्टम् ॥ ४० ॥

मागधीमें षकारसे आक्रान्त ऐसा जो ठकार (=ष्ठ) और द्विरुक्त टकार [=ट्ट), इनका सकारसे आक्रान्त टकार [=स्ट] होता है। उदा.—ष्ठ-सुष्ठु कृतम्, शुस्टु कदं। कोष्ठागारम् कोस्टागालं। ट्ट-पट्टम् पस्टं। भट्टारिका भस्टालिआ। भट्टः भस्टे। भट्टिनी भस्टिणी ॥ ४० ॥

स्थर्थौ स्तम् ॥ ४१ ॥

मागधीमें स्थ और र्थ इनका सकारसे आक्रान्त तकार (=स्त) होता है। उदा.-स्थ-उपस्थितः उवस्तिदे। सुस्थितः शुस्तिदे। र्थ-अर्थपतिः अस्तवदी। सार्थवाहः शस्तवाहे ॥ ४१ ॥

चिष्ठस्तिष्ठस्य ॥ ४२ ॥

मागधीमें, स्था धातुका जो तिष्ठ ऐसा आदेश है, उसको चिष्ठ ऐसा आदेश होता है। उदा.-चिष्ठदि। चिष्ठदे ॥ ४२ ॥

नो नणोः पैशाच्याम् ॥ ४३ ॥

पैशाची भाषामें नकार और णकार इनका नकार होता है। उदा.—पनमत पनयप्पकुवितं, प्रणमत प्रणयप्रकुपितम्। गुनगनजुत्तो, गुणगणयुक्तः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुनेन गुणेन। नकारका नकार होता है, यह उस नकारका ण न हो इसलिए कहा है ॥ ४३ ॥

न्यण्यज्ञां ञ्ञर् ॥ ४४ ॥

पैशाचीमें न्य, ण्य और ज्ञ इनका ञकार होता है। (सूत्रमेंसे ञ्ञर् में) र् इत् होनेसे, (ञका) द्वित्व होता है। उदा.-न्य-कन्यका कञ्ञका। अभिमन्युः अभिमञ्ञू। ण्य-पुण्यकर्मा पुञ्ञकम्मो। पुण्याहम् पुञ्ञाहं। ज्ञ-प्रज्ञा पञ्ञा। सर्वज्ञः सव्वञ्ञो। विज्ञः विञ्ञो। संज्ञानम् सञ्ञाणं ॥ ४४ ॥

राज्ञो ज्ञो वा चिञ् ॥ ४५ ॥

पैशाचीमें राजन् शब्दसे संबंधित होनेवाले ज्ञकारको चिञ् ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-राचिञा लपितं। रञ्ञा लपितं। राचिञो धनं। रञ्ञो धनं। ज्ञकारको, ऐसा क्यों कहा है? (कारण ज्ञ न हो, तो ऐसा वर्णान्तर नहीं होता)। उदा.-राजा ॥ ४५ ॥

तल्तदोः ॥ ४६ ॥

पैशाचीमें तकार और दकार इनका तकार होता है। (सूत्रमेंसे तल्-में) ल् इत् होनेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.-त-भगवती भअवती। सततम् सततं। द-मतनपरवसो। तामोतरो। वतनकं। मालातो। मालातु। सिरीतो सिरीतु। तरीतो तरीतु। तरूतो तरूतु। वधूतो वधूतु। होतु। रमतु। तकारका तकार होता है ऐसा विधान करनेका कारण (तकारको होनेवाले)अन्य आदेशोंका बाध हो। इसी कारण पताका, वेतिसो, इत्यादि (रूप) सिद्ध होते हैं ॥ ४६ ॥

शषोः सः ॥ ४७ ॥

पैशाचीमें शकार और षकार इनका स होता है। उदा.-श-सोभनं। ससी। संखो। संका। सक्को। ष-विसमो। किसनो कृष्णः। विसेसो। 'न प्रायो लुकादिच्छल्षट्ठम्यन्त सूत्रोक्तम्' (३.२.६३) इस बाधक सूत्रका बाध हो, इसलिए प्रस्तुत नियम (योग) कहा है ॥ ४७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लो ळः ॥ ४८ ॥

पैशाचीमें लकारका ळकार होता है। उदा.–सीळं। कुळं। जळं। फळं। कमळं ॥ ४८ ॥

दुस्तिर्यादृशगे ॥ ४९ ॥

पैशाचीमें यादृश, इत्यादि शब्दोंमेंसे दृ के स्थानपर ति ऐसा आदेश होता है। उदा.-यादृशः यातिसो। भवादृशः भवातिसो। तादृशः तातिसो। अस्मादृशः अम्हातिसो। अन्यादृशः अञ्ञातिसो। ईदृशः ईतिसो। कीदृशः केतिसो। एतादृशः एतातिसो। इत्यादि ॥ ४९ ॥

र्यस्नष्टां रिअसिनसिटाः क्वचित् ॥ ५० ॥

पैशाचीमें र्य, स्न और ष्ट इनको यथाक्रम रिअ, सिन और सिट ऐसे आदेश क्वचित् होते हैं। उदा.-भार्या भारिआ। स्नानम् सिनानं। कष्टम् कसिटं। क्वचित्, ऐसा क्यों कहा है? (कारण सर्वत्र ऐसा वर्णान्तर नहीं होता)। उदा.-अय्यो। सुसा। भट्ठो ॥ ५० ॥

टोस्तु तु ॥ ५१ ॥

पैशाचीमें टु इसका तु ऐसा विकल्पसे होता है। उदा.-कुटुम्बकम् कुतुम्बकं ॥ ५१ ॥

यः पो हृदये ॥ ५२ ॥

पैशाचीमें हृदय शब्दमें य का प होता है। उदा.-हितपकं। किंपि हितपके अत्थं चिन्तयमानी ॥ ५२ ॥

टा नेन तदिदमोः ॥ ५३ ॥

पैशाचीमें, टा-वचनके साथ तद् और इदम् इनके स्थानपर नेन ऐसा आदेश होता है। उदा.-नेन, तेन अनेन वा ॥ ५३ ॥

नाए स्त्रियाम् ॥ ५४ ॥

पैशाचीमें, तद् और इदम् इनको टा-वचनके साथ नाए ऐसा आदेश स्त्रीलिंगमें होता है। उदा.-पूचितो च नाए पातवकुसुमपतानेन। नाए, तया अनया वा ॥ ५४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ङसेस्तोतुशतः ॥ ५५ ॥

पैशाचीमें (शब्दोंके अन्त्य) अकारके आगे ङसिको तो और तु ऐसे (आदेश) होते हैं। (सूत्रमेंसे तोतुश् में) श् इत् होनेसे, पिछला स्वर दीर्घ होता है। उदा.-ताव तीए तूरातो एव्व तिट्ठो। तुवातो तुवातु। ममातो ममातु ॥ ५५ ॥

तडिजेचः ॥ ५६ ॥

पैशाचीमें, वर्तमानकालमेंसे प्रथमपुरुष एकवचनके इच् और एच् इनमें, तकारका टित् आगम होता है। (सूत्रमेंसे तट् में) टकार कहा है, कारण वह प्रथम हो इसलिए। उदा.-रमति रमते। हसति हसते। गच्छति गच्छते। होति। नेति ॥ ५६ ॥

एय्य एव भविष्यति ॥ ५७ ॥

पैशाचीमें इच् और एच् इनके स्थानपर भविष्यकालमें एय्य ऐसा (आदेश) होता है, किन्तु स्सि ऐसा (आदेश) नहीं होता। उदा.–तं तट्ठून चिन्तितं रञ्ञा का एसा हुवेय्य, तां दृष्ट्वा चिन्तितं राज्ञा कैषा भविष्यति ॥ ५७ ॥

इय्यो यकः ॥ ५८ ॥

पैशाचीमें यक् प्रत्ययको इय्य ऐसा आदेश होता है। उदा.-निय्यते। गिय्यते। रमिय्यते। पठिय्यते ॥ ५८ ॥

कृञो डीरः ॥ ५९ ॥

पैशाचीमें कृ (कृञ्) के आगे यक् प्रत्ययको डित् ईर ऐसा आदेश होता है। उदा.-पुथुमतंसने सव्वस्स य्येव संमानं कीरते, प्रथमदर्शने सर्वस्यैव संमानः क्रियते ॥ ५९ ॥

क्त्वां तूनं ॥ ६० ॥

पैशाचीमें क्त्वा प्रत्ययको तूनं ऐसा आदेश प्राप्त होता है। उदा.-गन्तूनं। रन्तूनं। मन्तूनं। मसितूनं। पठितूनं। कथितूनं ॥ ६० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ष्ट्वः ट्टूनत्थूनौ ॥ ६१ ॥

पैशाचीमें, ष करनेपर ष्ट्वा इसप्रकार सिद्ध होनेवाले क्त्वा प्रत्ययके स्थानपर ट्टून और त्थून ऐसे आदेश प्राप्त होते हैं। उदा.—तट्टून तत्थून। नट्ठून नत्थून ॥ ६१ ॥

शेषं शौरसेनीवत् ॥ ६२ ॥

पैशाचीमें जो (होता है ऐसा) कहा है, उसके अतिरिक्त अन्य, शौरसेनीकी तरह (पैशाचीमें) होता है। उदा.—अथ ससरीरो भगवं मकरद्धजो एत्थ परिभमन्तो हुवेय्य। एवंविधाए भगवतीए कथं तापसवेसगहनं कतं। ईतिसं अतिट्ठपुरवं महाधनं तट्ठून भअवं अक्किमं वरं अच्छसे राअस्स। चंदावलोकातो रचनीए तूरातो एव्व तिट्ठो सो आगच्छमानो राजा ॥ ६२ ॥

न प्रायो लुक्कादिच्छल्षट्शम्यन्तसूत्रोक्तम् ॥ ६३ ॥

पैशाचीमें, 'प्रायो लुक्कगचजतदपयवाम्' (१.३.८) इस सूत्रसे 'छल्षट्छमीसुधाशावसप्तपर्णे'(१.३.९०) सूत्रतक जो सूत्र और उनमें कहा हुआ जो कार्य, वह (पैशाचीमें) नहीं होता। उदा.—मकरकेतू। मगधपुत्त-वचनं। विजयसेनेन लपितं। मतं। पापं। आयुधं। देवरो। इसीप्रकार अन्य सूत्रोंके बारेमें उदाहरण देखें ॥ ६३ ॥

रो लस्तु चूलिकापैशाच्याम् ॥ ६४ ॥

चूलिकापैशाची भाषामें रेफका लकार विकल्पसे होता है। उदा.-पनमत पनयप्पकुपितगोलीचलनक्कलक्कपतिबिंबं। तसस्सु नखतप्पनेसुं एकातस-सतनुधलं लुत्तं ॥ नलो नरो। सलो सरो ॥ ६४ ॥

गजडदबघझढधभां कचटतपखछठथफाल् ॥ ६५ ॥

चूलिकापैशाचिकमें ग, ज, ड, द, ब, घ, झ, ढ, ध, भ इनके यथाक्रम क, च, ट, त, प, ख, छ, ठ, थ, फ ऐसे लित् (=नित्य) (वर्णविकार) होते हैं। उदा.-नगरम् नकलं। मार्गणः मक्कनो। मेघः मेखो। घनः खनो।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

व्याघ्रः वक्खो। राजा राचा। जीमूतः चीमूतो। जर्जरं चच्चलं। निर्झरः निच्छलो। झर्झरः छच्छलो। तडागम् तटाकं। डमरुकः टमलुको। मण्डलम् मण्टलं। गाढम् काढं। ढक्का ठक्का। षण्डः सण्टो। मदनः मतनो। दामोदरः तामोतलो। मन्दरः मन्तलो। मधुरम् मथुलं। धारा थाला। बान्धवः पन्थवो। बालकः पालको। रभसः रफसो। रम्भा लम्फा। भगवती फकवती। नियोजितम् नियोचितं। क्वचित् व्याकरणके नियमानुसार आनेवाले वर्णोंमेंभी ऐसा वर्णान्तर होता है। उदा.-प्रतिमा पडिमा पटिमा। दंष्ट्रा दाढा ताठा ॥ ६५ ॥

अन्येषामादियुजि न ॥ ६६ ॥

अन्य आचार्योंके मतानुसार, ग, ज, ड, द, ब, घ, झ, ढ, ध, भ ये वर्ण आदि होनेपर, और युज् (युजि) धातुमें, क, च, ट, त, प, ख, छ, ठ, थ, फ नहीं होते। उदा.-गती। घम्मो। जनो। झल्लरी। डमरुको। ढक्का। दानं। धूळी। बालो। फालं। युज्-नियोजितं। अन्य आचार्योंके मतानुसार, ऐसा क्यों कहा है? (कारण उनके कथित वर्णान्तरसे भिन्न वर्णान्तर दिखाई देता है)। उदा.—कती। नियोचितं ॥ ६६ ॥

शेषं प्राग्वत् ॥ ६७ ॥

चूलिकापैशाचिकमें 'रो लस्तु' (३.२.६४) इत्यादि सूत्रोंमें जो कहा गया है, उसके अतिरिक्त अन्य (कार्य), प्राग्वत् यानी पहले कहे हुए पैशाचिक (भाषा) की तरह होता है। उदा.-'नो णनो' (३.२.४३) सूत्रानुसार—नयनं। फनी। इसीप्रकार अन्य (वर्णान्तर) भी ॥ ६७ ॥

— तृतीय अध्याय द्वितीय पाद समाप्त —

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तृतीयः पादः

प्रायोऽपभ्रंशेऽचोऽच् ॥ १ ॥

अपभ्रंशमें अच् के अर्थात् स्वरके स्थानमें प्रायः दूसरा अच् अर्थात् स्वर आता है। उदा.–कउ काउ। वेणा वेणी। बाह बाहा, बाहुः। पट्ठं पुट्ठं, पृष्ठम्। तणु तिणु तुणं, तृणम्। सुकिदु सुक्रदु सिकिउ, सुकृतम्। लिह लिहा लेह, लेखा। गउरं गोरं। (सूत्रमें) प्रायः ऐसा कहा जानेसे, अपभ्रंशमें जो विशेष (ऐसे) कहे जायेंगे, उनके बारेमेंभी प्राकृतवत् और शौरसेनीवत् कार्य होता है ॥ १ ॥

अचोऽस्तवो खौ कखतथपफा गघदधबभान् ॥ २ ॥

(इस सूत्रमें ३.३.१ से) अपभ्रंशे पदकी अनुवृत्ति है। अपभ्रंशमें स्वरके आगे रहनेवाले, अस्तु यानी असंयुक्त, अखु यानी अनादि होनेवाले, जो क, ख, त, थ, प, फ वर्ण (होंगे), उनको प्रायः यथाक्रम ग, घ, द, ध, ब, भ ऐसे ये (वर्णविकार) प्राप्त होते हैं। ॥ २ ॥ उदा.-क का ग—

जं दिट्ठउँ सोमग्गहणु असइहिं हसिउँ णिसंकु।
पियमाणुसविच्छोहगरु गिलि गिलि राहु मियंकु ॥ १ ॥ (=हे.३९६.१)
(यद् दृष्टं सोमग्रहणमसतीभिर्हसितं निःशङ्कम्।
प्रियमनुष्यविक्षोभकरं गिल गिल राहो मृगाङ्कम् ॥)

असतियों (कुलटाओं)ने जो चंद्रग्रहण देखा तो निःशंक भावसे हँसा (और कहा)--प्रिय जनको विक्षुब्ध करनेवाले चंद्रको, हे राहु, निगलो रे निगलो।

ख का घ—

अम्मिएँ सत्थावत्थेहिं सुधिँ चिंतिज्जइ माणु।
पिएँ दिट्ठे हल्लोहलेण को चेअइ अप्पाणु ॥ २ ॥ (=हे. ३९६.२)
(अम्ब स्वस्थावस्थैः सुखेन चिन्त्यते मानः।
प्रिये दृष्टे सुखपारवश्येन कश्चेतयत्यात्मानम् ॥)

हे माँ, आराममें रहनेवालेसे सुखसे मानका विचार किया जाता है। (किंतु) जब प्रियकर दृष्टिगोचर होता है तब सुखपरवश्यतासे कौन अपना विचार करता है?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त, थ, प, और फ के द, ध, ब और भ—

सबधु करेप्पिणु कधिदुँ मइँ तसु पर सभलउँ जम्मु ।
जासु न चाउ न चारभडी न य पम्हट्ठउ धम्मु ॥ ३ ॥ (=हे. ३९६-३)

(शपथं कृत्वा कथितं मया तस्य परं सफलं जन्म ।
यस्य न त्यागो न चारभटी न च प्रमुष्टो धर्मः ॥)

शपथ करके मैंने कहा—जिसका त्याग (दानशूरता), पराक्रम (आरभटी) और धर्म नष्ट नहीं हुए हैं, उसका जन्म संपूर्णतः सफल हुआ है ।

स्वरके आगे, ऐसा क्यों कहा है ? (कारण स्वरके आगे न हो, तो यह वर्णान्तर नहीं होता) । उदा.—गिलि गिलि राहु मियंकु [१] । असंयुक्त, ऐसा क्यों कहा है ? (कारण वे वर्ण असंयुक्त नहीं होते, तो ऐसा वर्णान्तर नहीं होता ।) उदा.—एक्कहिं अक्खिहिं सावणु (हे. ३९७.२) । अनादि होनेवाले, ऐसा क्यों कहा है ? (कारण अनादि न होनेपर, ऐसा वर्णान्तर नहीं होता) । उदा.—सबधु करेप्पिणु [३] । प्रायःका अधिकार होनेसे, क्वचित् (ऐसा वर्णान्तर) नहीं होता । उदा.—

जइ केवँइ पावीसु पिउ अकिआ कोड्ड करीसुं ।
पाणिउँ नवइ सरावि जिवँ सव्वंगे पइसीसुँ ॥ ४ ॥ (=हे. ३९६.४)

(यदि कथंचित् प्राप्स्यामि प्रियमकृतानि कौतुकानि करिष्यामि ।
पानीयं नवे शरावे यथा सर्वांगे प्रवेक्ष्यामि ॥)

यदि कथंचित् प्रियकरको प्राप्त कर लूँ, तो पहले कभीभी न किया हुआ कौतुक मैं कर लूँ । नये कसोरेमें जैसे पानी सर्वत्र प्रवेश करता है, वैसे मैं सर्वांगसे (प्रियकरमें) प्रवेश करूँगी ।

उअ कणिआरु पफुल्लिअउ कंचणकंतिपयासु ।
गोरीवयणविणिज्जिअउ णं सेवइ वणवासु ॥ ५ ॥ (=हे. ३९६.५)

(पश्य कर्णिकारः प्रफुल्लितः काञ्चनकान्तिप्रकाशः ।
गौरीवदनविनिर्जितो ननु सेवते वनवासम् ॥)

देख, कांचनकी तरह कांतिसे चमकनेवाला कर्णिकार प्रफुल्लित हुआ है । सुंदरीके मुखसे पराजित होकर मानो वनवास सेवन करता है ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तु मो ङ्वम् ॥ ३ ॥

अपभ्रंशमें स्वरके आगे, असंयुक्त, अनादि होनेवाले मकारको वत्व विकल्पसे प्राप्त होता है। (सूत्रमेंसे ङ्वम् में) ङ् इत् होनेसे, (यह वकार) सानुनासिक (=वँ) होता है। उदा.-कवँलु कमलु। भवँरु भमरु। व्याकरणके नियमानुसार आनेवाले मकारकाभी (सानुनासिक वकार होता है)। उदा.— जिवँ। आवँ। तिवँ। स्वरके आगे (मकार होनेपरही वकार होता है, अन्यथा नहीं)। उदा.-संमाणेइ लोउ। (मकार) असंयुक्त (होनेपरही वकार होता है, अन्यथा नहीं)। उदा.-तसु पर सभलउँ जम्मु [३]। (मकार) अनादि होनेपरही (वकार होता है, अन्यथा नहीं)। उदा.-मअणु॥ ३॥

ह्मो म्हम् ॥ ४ ॥

अपभ्रंशमें ह्म ऐसा यह (संयुक्ताक्षर) मकारसे आक्रान्त हकारको (=म्ह) विकल्पसे प्राप्त करता है। 'श्मष्मस्मह्मामस्मरश्मौ म्हः' (१.४.६७) सूत्रानुसार प्राकृतके लक्षणमें कहा गया म्ह यहाँ लिया जाता है, कारण संस्कृतमें उसका असंभव है। उदा.-गिम्हो गिह्मो। बम्हणो बह्मणो॥ ४॥

बम्ह तेँ विरला केवि नर जे सव्वंगछइल्ल।
जे वंका ते वंचयर जे उज्जुअ तेँ बइल्ल॥ ६॥ (=हे. ४१२.१)
(ब्रह्मंस्ते विरलाः केऽपि नरा ये सर्वांगच्छेकाः।
ये वक्रास्ते वञ्चकतरा ये ऋजुकास्ते बलीवर्दाः॥)

हे ब्राह्मण, जो सर्वांगतः निपुण हैं वे विरल हैं; जो बाँके हैं वे अधिक वंचक हैं; जो सीधे हैं वे बैल हैं॥

रो लुकमधः ॥ ५ ॥

अपभ्रंशमें संयोगमें अनंतर रहनेवाले रेफका लुक् यानी लोप विकल्पसे होता है। उदा.-पिउ प्रिउ प्रियः। जइ केवँइ पावीसु पिउ [४]॥ ५॥

विकल्पपक्षमें—

जइ भग्गा पारक्कडा तो सहि मज्झु प्रिएण।
अह भग्गा अम्हहंतणा तो तेँ मारिअडेण॥ ७॥ (=हे. ३७९.२)
(यदि भग्नाः परकीयास्ततः सखि मम प्रियेण।
अथ भग्ना अस्मदीयास्ततस्तेन मारितेन॥)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हे सखी, यदि शत्रुओंका पराभव हुआ होगा तो मेरे प्रियसे; यदि हमारे पक्षवालोंका पराभव हुआ होगा, तो उसके (मेरे प्रियकरके) मारे जानेपर ॥

क्वचिदभूतोऽपि ॥ ६ ॥

अपभ्रंशमें क्वचित् (जहाँ मूल शब्दमें) रेफ नहीं है (वहाँभी) रेफ आता है। उदा.-व्रासु व्यासः ॥ ६ ॥

व्रासु महारिसि एँउँ भणइ जइ सुइसत्थु पमाणु।
मायहँ चलण नवंताहं दिवेँ दिवेँ गंगाण्हाणु ॥ ८ ॥ (=हे. ३९९.१)
(व्यासो महर्षिरेतद् भणति यदि श्रुतिशास्त्रं प्रमाणम्।
मातॄणां चरणौ नमतां दिवा दिवा गंगास्नानम् ॥)

व्यास महर्षि ऐसा कहते हैं—यदि वेद और शास्त्र प्रमाण हो, तो माताओंके चरणोंको नमन करनेवालोंको प्रतिदिन गंगास्नान होता है।

(सूत्रमें) क्वचित्, ऐसा क्यों कहा है? (कारण कभी ऐसा रेफ नहीं आता)। उदा.-वासेण वि भारहखंभि बद्धु, व्यासेनापि भारतस्तम्भे बद्धम् (=हे. ३९९)।

व्यासनेभी भारतस्तंभमें कहा है।

विपदापत्संपदि द इ ॥ ७ ॥

अपभ्रंशमें विपद्, आपद् और संपद् शब्दोंमें दकारका इकार होता है। उदा.-विवइ। आवइ। संपइ। प्रायःका अधिकार होनेसे, (कभी ऐसा वर्णान्तर नहीं होता)। उदा.-गुणहिँ न संपय कित्ति पर [४५] ॥ ७ ॥

कथं यथा तथा डिहडिधडिमडेमास्थादेः ॥ ८ ॥

अपभ्रंशमें कथं, यथा, तथा इन शब्दोंमें थादि-अवयवको इह, इध, इम, एम ऐसे ये चार डित् आदेश होते हैं। उदा.-किह किध किम केम, कथम्। जिह जिध जिम जेम, यथा। तिह तिध तिम तेम, तथा ॥ ८ ॥

बिंबाहरि तणु रअणवणु किह ठिउ सिरिआणंद।
निरुवमरसु पिएं पिअवि जणु सेसहोँ दिण्णी मुद्द ॥९॥ (=हे. ४०१.३)
(बिम्बाधरे तनू रदनव्रणः कथं स्थितः श्रियानन्द।
निरुपमरसं प्रियेण पीत्वेव शेषस्य दत्ता मुद्रा ॥)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हे श्रीआनंद, (सुंदरीके) बिंबाधरपर छोटासा दंतव्रण कैसा स्थित है? मानो प्रियकरने उत्कृष्ट रस पीकर अवशिष्टपर मुद्रा दे दी है ॥

केम समप्पउ दुट्ठु दिणु किध रअणी छुडु होइ।
णववहुदंसणलालसउ वहइ मणोरह सो इ ॥ १० ॥ (=हे. ४०१.१)
(कथं समाप्यतां दुष्टं दिनं कथं रजनी क्षिप्रं भवति।
नववधूदर्शनलालसो वहति मनोरथान् सोऽपि ॥)

दुष्ट दिवस कैसे समाप्त हो! रात कैसे शीघ्र आए! (अपनी) नव वधूको देखनेकी इच्छा रखनेवाला वह भी ऐसे मनोरथ करता है।

ओ गोरीमुहणिज्जिअउ वद्दलि लुक्कु मिअंकु।
अन्नु वि जो परिहविअतणु सो किम भमइ निसंकु ॥ ११ ॥ (=हे. ४०१.२)
(अहो गौरीमुखनिर्जितो मेघेषु निलीनो मृगाङ्कः।
अन्योऽपि यः परिभूततनुः स कथं भ्रमति निःशंकम् ॥)

अहो, सुंदरीके मुखसे पराजित हुआ चंद्र बादलोंमें छिप गया है। जिसका शरीर पराभूत हुआ है ऐसा दूसरा कोईभी निःशंकभावसे कैसे घूम सकता है?

भण सहि निहुअउँ तेम मइँ जइ पिउ दिट्ठु सदोसु।
जेम ण जाणइ मज्झु मणु पक्खावडिअं तासु ॥ १२ ॥ (=हे. ४०१.४)
(भण सखि निभृतं तथा मां यदि प्रियो दृष्टः सदोषः।
यथा न जानाति मम मनः पक्षपाति तस्य ॥)

हे सखी, मेरा प्रियकर यदि (मुझसे) सदोष होगा तो तू वह बात छिपकर (चुराकर) इस प्रकार मुझे बता कि जिससे, उसमें पक्षपाती रहनेवाला मेरा मन न जाने।

जिम जिम वंकिम लोअणहं णिरु सावँलि सिक्खेइ।
तिम तिम वम्महु णिअअ सर खरपत्थरि तिक्खेइ ॥ १३ ॥ (=हे. ३४४.१)
(यथा यथा वक्रिमाणं लोचनयोर्नितरां श्यामला शिक्षते।
तथा तथा मन्मथो निजान् शरान् खरप्रस्तरे तीक्ष्णयति ॥)

जैसे जैसे साँवरी नयनोंके बाँकापन सीखती है, तैसे तैसे मदन कठिन पत्थरपर अपने बाणोंको तीक्ष्ण करता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मइँ जाणिउँ पिअविरहिअहं क वि धर होइ विआलि।
णवर मिअंकु वि तिह तवइ जिह दिणयरु खयगालि ॥१४॥ (=हे. ३७७.१)

(मया ज्ञातं प्रियविरहितानां कापि धरा भवति विकाले।
केवलं मृगाङ्कोऽपि तथा तपति यथा दिनकरः क्षयकाले ॥)

मैं समझ रही थी कि प्रियसे विरही जनोंको 'संध्यासमयमें कुछ आधार (धरा–अवलंबन, दुःखनिवृत्ति) मिलता है। पर प्रलयकालमें जितना सूर्य उतना (इस समय) चंद्रमी ताप देता है।

इसीप्रकार जित्र और तिध इनके उदाहरण जानें।

दादेर्डेहो यादृक्तादृक्कीदृगीदृशाम् ॥ ९ ॥

अपभ्रंशमें यादृक्, इत्यादि शब्दोंके द-आदि अवयवको डित् एह ऐसा आदेश होता है। ड् इत् होनेसे, सर्वत्र टि का लोप होता है ॥ ९ ॥ उदा.–

मइं भणिअउ बलिराउ तुहुँ केहउ मग्गणु एहु।
जेहु तेहु नवि होइ वढ सइँ नारायणु एहु ॥ १५ ॥ (=हे. ४०२.१)

(मया भणितो बलिराज त्वं कीदृक् मार्गण ईदृक्।
यादृक् तादृक् न भवति मूढ स्वयं नारायण एषः ॥)

(शुक्राचार्य कहते हैं)–हे बलिराज, किस प्रकारका यह याचक है, वह मैंने तुझसे कहा था। रे मूर्ख, यह जैसा-तैसा कोई नहीं है, (केवल) स्वयं नारायण है।

डइसोऽताम् ॥ १० ॥

अपभ्रंशमें यादृश, इत्यादि अकारान्त अर्थात् यादृश, तादृश, कीदृश ईदृश ऐसे रूपोंके द-आदि-अवयवको डित् अइस ऐसा आदेश होता है। उदा.— जइसु। तइसु। कइसु। अइसु ॥ १० ॥

यावत्तावत्युंमहिमा वादेः ॥ ११ ॥

अपभ्रंशमें यावत् और तावत् इन अव्ययोंके वकारादि अवयवको उं, महिं, म ऐसे तीन आदेश होते हैं ॥ ११ ॥ उदा.–

तिलहँ तिलत्तणु ताउँ पर जाउँ न नेह गलंति।
नेहि पणट्ठइ ते ज्जि तिल तिल फिट्टवि खल होंति ॥१६॥ (=हे. ४०६.२)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(तिलानां तिलत्वं तावत्परं यावन्न स्नेहा गलन्ति।
स्नेहे प्रनष्टे त एव तिलास्तिला भ्रष्ट्वा खला भवन्ति ॥)

जबतक तैल निकाला नहीं है तबतक तिलोंका तिलत्व है। तैलके निकल जानेपर वे तिल, तिल न रहकर खल (खली, दुष्ट) हो जाते हैं।

जामँ विसमी कज्जगइ जीवहँ मज्झे एइ।
तामहँ अच्छउ इयरु जणु सुयणु वि अंतरु देइ ॥१७॥ (=हे.४०६.२)

(यावद् विषमा कार्यगतिर्जीवानां मध्ये एति।
तावदास्तामितरो जनः सुजनोऽप्यन्तरं ददाति ॥)

जब जीवोंपर विषम कार्यगति आती है, तब इतर जनकी बातही छोडो (किंतु) सज्जनभी अंतर देता है।

जाम न निवडइ कुंभअडि सीहचवेडचडक्क।
ताम समत्तहँ मयगलहँ पइ पइ वज्जइ ढक्क ॥ १८ ॥ (=हे. ४०६.१)

(यावन्न निपतति कुम्भतटे सिंहचपेटादृढाघातः।
तावत्समस्तानां मदकलानां पदे पदे वाद्यते ढक्का ॥)

जबतक सिंहके चपेटेका दृढ प्रहार गंडस्थलपर नहीं पडा, तबतक सभी (मदोन्मत्त) गजोंका ढोल पगपगपर बजता है।

डेत्तुलडेवडावियत्कियति च व्यादेर्वतुपः ॥ १२ ॥

इयत् और कियत् इनके, तथा (सूत्रमेंसे) चकारके कारण यावत् और तावत् इनके बारेमें परिमाण अर्थमें जो वतुप् प्रत्यय कहा है, उनके व्यादिको अर्थात् वकारादि और यकारादि अवयवको एत्तुल, एवड ऐसे डित् आदेश होते हैं। उदा.—एत्तुलो। केत्तुलो। एवडो। केवडो ॥ १२ ॥

जेवडु अंतरु पट्टणगामहं तेवडु अंतरु रावणरामहं ॥१९॥ (=हे. ४०७.१)
(यावदन्तरं पत्तनग्रामयोः तावदन्तरं रावणरामयोः।)

जितना अंतर नगर और गाँव इनमें है, उतनाही अंतर राम और रावण इनमें है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

डेत्तहे त्रलः ॥ १३ ॥

अपभ्रंशमें सर्वादि (शब्दों)के आगे सप्तमीके अर्थमें (कहे हुए) त्रल् प्रत्ययको डित् एत्तहे ऐसा आदेश होता है। उदा.-जेत्तहे। तेत्तहे ॥ १३ ॥

जेत्तहे तेत्तहे वारि घरि लच्छि विसंठुल धाइ।
पिअपब्भट्ठ व गोरडी णिच्चल कहिँ वि ण ठाइ ॥१९॥ (=हे. ४३६.१)

(यत्र तत्र द्वारे गृहे लक्ष्मीर्विसंष्ठुला धावति।
प्रियप्रभ्रष्टेव गौरी निश्चला कुत्रापि न तिष्ठति ॥)

यहाँ, वहाँ, दरवाजेपर, घरमें (इस प्रकार) चंचल लक्ष्मी दौडती है। प्रियकरसे वियुक्त सुंदरीके समान वह निश्चल रूपसे कहीं नहीं ठहरती ॥

यत्तदोर्डेत्तु ॥ १४ ॥

(इस सूत्रमें ३.३.१३ से) त्रल् पदकी अनुवृत्ति है। यत् और तत् इनके आगे होनेवाले त्रल् प्रत्ययको डित् एत्तु ऐसा यह आदेश होता है। उदा.-जेत्तु ठिदो, यत्र स्थितः। तेत्तु ठिदो, तत्र स्थितः ॥ १४ ॥

कुत्रात्रे च डेत्थु ॥ १५ ॥

अपभ्रंशमें कुत्र और तत्र इनमें रहनेवाला (त्रल्), और (सूत्रमेंसे) चकारके कारण यद् और तद् इनके आगे आनेवाला त्रल् प्रत्यय, उस त्रल् प्रत्ययको डित् एत्थु ऐसा आदेश होता है। उदा.-केत्थु। एत्थु। जेत्थु। तेत्थु ॥ १५ ॥

जइ सो घडिदि प्रयावदी केत्थु वि लेप्पिणु सिक्खु।
जेत्थु वि तेत्थु वि एत्थु जगि भण तो तहि सरिक्खु ॥२०॥ (=हे.४०४.१)

(यदि स घटयति प्रजापतिः कुत्रापि लात्वा शिक्षाम्।
यत्रापि तत्राप्यत्र जगति भण तर्हि तस्याः सदृक्षः ॥)

यदि वह प्रजापति कहींसे शिक्षा लेकर (प्रजा) निर्माण करता है, तो इस जगत्में जहाँ-तहाँ उस (सुंदरी)के समान कौन है, बताओ।

त्वतलौ प्पणम् ॥ १६ ॥

अपभ्रंशमें भाव अर्थमें जो त्व और तल् प्रत्यय कहे गये हैं, उनको प्पण ऐसा आदेश प्राप्त होता है। उदा.-पडुप्पणं, पटुत्वं पटुता वा। सुक्कप्पणं, शुक्लत्वं शुक्लता वा ॥ १६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

साहु वि लोउ तडप्फडइ वड्डुप्पणहा तणेण।
वड्डुप्पणु परि पाविअइ हत्थि मोक्कलडेण ॥ २१ ॥ (=हे.३६६.१)
(सर्वोऽपि लोकः उत्ताम्यति बृहत्त्वस्यार्थे।
बृहत्त्वं परं प्राप्यते हस्तेन मुक्तेन ॥)

बडप्पनके लिए सभी लोग तडफडते हैं। पर बडप्पन मुक्त हाथसे (दान देनेपर) मिलता है।

(यहाँ) तडप्फडइ यह देशी धातु औत्सुक्य-बोधक शब्दानुकरणी है।

तव्यस्य एव्वइएव्वउएव्वाः ॥ १७ ॥

अपभ्रंशमें तव्य प्रत्ययको एव्वइ, एव्वउ, एव्व तेसे तीन आदेश होते हैं। उदा.–जेव्वइ जेव्वउ जेव्व, जेतव्यः ॥ १७ ॥

एउं गृण्हेप्पिणु ध्रुं मईं जइ प्रिउ उव्वारिज्जइ।
महु करिएव्वउँ किं पि न वि मरिएव्वउँ पर देज्जइ ॥२२॥ (=हे. ४३८.१)
(एतद् गृहीत्वा यन्मया यदि प्रिय उद्वार्यते।
मम कर्तव्यं किमपि नापि मर्तव्यं परं दीयते ॥)

यह लेकर यदि मैं प्रियकरको छोड देती हूँ तो मुझे मरनाही कर्तव्य रहता है, दूसरा कुछ भी नहीं।

देसुच्चाडणु सिहिकढणु घणकुट्टणु जं लोइ।
मंजिट्ठएँ अइरत्तिए सव्वु सहेव्वउँ होइ ॥२३॥ (=हे. ४३८.२)
(देशोच्चाटनं शिखिकथनं घनकुट्टनं यल्लोके।
मञ्जिष्ठयातिरक्तया सर्वं सोढव्यं भवति ॥)

जगत्में अतिरक्त मंजिष्ठा (वनस्पति)को (अपने) देशसे (जमीनसे) उच्चाटन (उखाडा जाना), अग्निमें औटा जाना, और घनसे कूटा जाना, यह सहन करना पडता है।

सोएव्वा पर वारिआ पुप्फवईहिँ समाणु।
जग्गेवा पुणु को धरइ जइ सो वेउ पमाणु ॥ २४ ॥ (=हे. ४३८.३)
(स्वपितव्यं परं वारितव्यं पुष्पवतीभिः समम्।
जागर्तव्यं पुनः को धरति यदि स वेदः प्रमाणम् ॥)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यद्यपि वह वेद प्रमाण है, तथापि रजस्वला स्त्रीके साथ सोनेकी मनाही है, पर जागे रहनेको किसने मना किया है ?

क्त्व इ इउ इवि अवि ॥ १८ ॥

अपभ्रंशमें क्त्वा प्रत्ययको इ, इउ, इवि, अवि ऐसे चार आदेश होते हैं। उदा.—करइ करिउ करिवि करवि, कृत्वा ॥ १८ ॥

इ (आदेशका उदाहरण)—

हिअडा जइ वेरिअ घणा तो किं अब्भि चडाहुं ।
अम्हहं बे हत्थडा जइ पुणु मारि मराहं ॥ २९ ॥ (=हे. ४३९.१)
(हृदय यदि वैरिणो घनास्तत्किमभ्रे आरोहामः ।
अस्माकं द्वौ हस्तौ यदि पुनर्मारयित्वा म्रियामहे ॥)

हे हृदय, यद्यपि मेघ (अपने) वैरी हैं तो हम आकाशपर चढेंगे क्या ? हमारे दो हाथ हैं; (यदि मरनाही है तो उन्हें) मारकरही मरेंगे।

इउ (आदेशका उदाहरण)—

अम्मि पओहर वज्जमा निच्चु ज संमुह ठन्ति ।
महु थक्कहा समरंगणि गयघड भंजिउ जन्ति ॥ २६ ॥ (=हे. ३९५.५)
(मातः पयोधरौ वज्रमयौ नित्यं यौ संमुखं तिष्ठतः ।
मम स्थितस्य समराङ्गणे गजघटा भङ्क्त्वा यान्ति ॥)

हे माँ, (ये) मेरे स्तन वज्रमय हैं, (कारण) वे नित्य मेरे (प्रियकरके) सामने होते हैं, (और) समरांगणमें गजसमूह भग्न करनेके लिए जाते हैं।

इवि (आदेशका उदाहरण)—

रक्खइ सा विसहारिणी बे कर चुंबिवि जीउ ।
पडिबिंबिअमुंजालु जलु जेहिँ अडोहिउँ पीउँ ॥२७॥ (=हे. ४३९.२)
(रक्षति सा विषहारिणी द्वौ करौ चुम्बित्वा जीवम् ।
प्रतिबिम्बितमुञ्जालं जलं याभ्यामनवगाह्य पीतम् ॥)

जिसमें मुंजका प्रतिबिंब पडा है ऐसा पानी, पानीमें प्रवेश न करते हुए, जिन हाथोंसे पिया गया है उन हाथोंका चुंबन लेकर, वह जलवाहक बाला जीवकी रक्षा करती है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अवि (आदेशका उदाहरण)–

बाह विछोडवि जाहि तुहुँ हउँ तेवँइ को दोसु।
हिअअट्ठिउ जइ नीसरहि जाणउँ मुंज सरोसु ॥२८॥ (=हे. ४३९.३)

(बाहू विच्छोड्य यासि त्वं भवतु तथा को दोषः।
हृदयस्थितो यदि निःसरसि जानामि मुञ्ज सरोषः ॥)

हाथोंको छोडकर तू जा। ऐसा होने दो। उसमें क्या दोष है? (किंतु) यदि तू मेरे हृदयसे निकल जाएगा तो समझूँगी कि मुंज रोषयुक्त है।

एप्प्येप्पिण्वेव्येविणु ॥ १९ ॥

अपभ्रंशमें क्त्वा प्रत्ययको एप्पि, एप्पिणु, एवि, एविणु ऐसे चार आदेश होते हैं। उदा.—करेप्पि, करेप्पिणु, करेवि करेविणु, कृत्वा ॥ १९ ॥

जेप्पि असेसु कसाअबलु देप्पिणु अभउँ जअस्सु।
लेवि महव्वअ सिवु लहहिं झाएविणु तत्तस्सु ॥२९॥ (=हे. ४४०.१)

(जित्वाशेषं कषायबलं दत्त्वाभयं जगतः।
लात्वा महाव्रतानि शिवं लभन्ते ध्यात्वा तत्त्वम् ॥)

कषायरूप संपूर्ण सेनाको जीतकर, जगत्को अभय देकर, महाव्रत लेकर, तत्त्वका ध्यान करके (ऋषि, मुनि) आनंद (शिव) प्राप्त करते हैं।

(इस सूत्रका ३.३.१८ से) पृथक् कहना अगले सूत्रके लिए है।

तुम एवमणाणहमणहिं च ॥ २० ॥

अपभ्रंशमें तुमुन् प्रत्ययको एवं, अण, अणहं, अणहिं ऐसे ये चार, और (सूत्रमेंसे) चकारके कारण एप्पि, एप्पिणु, एवि, एविणु ऐसे ये चार, एवं (कुल) आठ आदेश (प्राप्त) होते हैं। उदा.-करेवं करण करणहं करणहिं करेप्पि करेप्पिणु करेवि करेविणु, कर्तुम् ॥ २० ॥

देवं दुक्करु निअअधणु करण न तउ पडिहाइ।
एमइ सुहुँ भुंजणहँ मणु पर भुंजणहिँ न जाइ ॥३०॥ (=हे. ४४१.१)

(दातुं दुष्करं निजकधनं कर्तुं न तपः प्रतिभाति।
एवमेव सुखं भोक्तुं मनः परं भोक्तुं न याति ॥)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अपना धन देना दुष्कर है। तप करना (किसीको) नहीं भाता। योंही सुख भोगनेका मन है, पर भोगना नहीं होता।

जेप्पि चएप्पिणु सअल धर लेविणु तउ पालेवि।
विणु संतें तित्थेसरेण को सक्कइ भुवणे वि ॥३१॥ (=हे. ४४१.२)
[जितुं त्यक्तुं सकलां धरां लातुं तपः पालयितुम्।
विना शान्तिना तीर्थेश्वरेण कः शक्नोति भुवनेऽपि ॥]

संपूर्ण पृथ्वीको जीतना, (जीतकर उसका) त्याग करना, व्रत (तप) लेना और (लेकर उसका) पालन करना, यह [सब] शांति तीर्थेश्वरके बिना जगमें और कौन कर सकता है?

गमेस्त्वेप्प्येपिण्वोरेलुक् ॥ २१ ॥

अपभ्रंशमें गम् (गमि) धातुके आगे एप्पि और एप्पिणु इन आदेशोंके एकारका लोप विकल्पसे होता है। उदा.-गंपि गंपिणु गमेप्पि गमेप्पिणु, गत्वा ॥ २१ ॥

गंपिणु वाणारसिहि नर अह उज्जेणिहि गंपि।
मुअ पावुन्ति परम पउ दिव्वंतरइँ म जंपि ॥ ३२॥ (=हे.४४२.१)
(गत्वा वाराणस्यां नरा अथ उज्जयिन्यां गत्वा।
मृताः प्राप्नुवन्ति परमं पदं दिव्यान्तराणि मा जल्प ॥)

वाराणसीमें जाकर (पश्चात्) उज्जयिनीमें जाकर जो लोग मरते हैं, वे परम पद प्राप्त कर लेते हैं। अन्य तीर्थोंका नाम भी मत लो।

विकल्पपक्षमें-

गंग गमेप्पिणु जो मरइ जो सिवतित्थु गमेप्पि।
कीडदि तिदसावासगउ सअलउ लोउ जएप्पि ॥३३॥ (=हे. ४४२.२)
(गंगां गत्वा यो म्रियते यः शिवतीर्थं गत्वा।
क्रीडति त्रिदशावासगतः सकलं लोकं जित्वा ॥)

जो गंगा या काशी (शिवतीर्थ) जाकर मर जाता है, वह सब लोक जीतकर, देवलोकमें जाकर क्रीडा करता है।

तृनो णअल् ॥ २२ ॥

अपभ्रंशमें तृन् प्रत्ययको लित् (=नित्य) णअ ऐसा आदेश होता है। उदा.-होणउ भविता। सुणउ श्रोता ॥ २२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हत्थि मारणउ लोउ बोल्लणउ।
पडह वज्जणउ सुणउ भसणउ ॥ ३४ ॥ (=हे. ४४३.१)
[हस्ती मारयिता लोकः कथयिता।
पटहो वादयिता शुनको भषिता ॥]

मारनेवाला हाथी, कहनेवाला मनुष्य, बजनेवाला पटह, भूँकनेवाला कुत्ता ॥

छस्य युष्मदादेर्डारः ॥ २३ ॥

अपभ्रंशमें युष्मद्, इत्यादिके आगे आनेवाले छ को डित् आर ऐसा आदेश होता है। उदा.-तुम्हारु युष्मदीयः। अम्हारु अस्मदीयः ॥ २३ ॥

संदेसें काइँ तुम्हारेण जं संगहों न मिलिज्जइ।
सुविणंतरि पिएँ पाणिएँण पिअ पिआस किं छिज्जइ ॥ ३५॥ (=हे. ४३४.१)
(संदेशेन किं त्वदीयेन यत्संगस्य न मिल्यते।
स्वप्नान्तरे पीतेन पानीयेन प्रिय पिपासा किं छिद्यते ॥)

(तुम्हारा) संग नहीं मिलता, (फिर) तुम्हारे संदेशका क्या उपयोग? हे प्रिय, सपनेमें पिये जलसे क्या प्यास मिटती है?

दिक्खि अम्हारा कंतु। बहिणि अम्हारा कंतु (११९)।

जणि जणु नं नइ नावइ नाइ इवार्थे ॥ २४ ॥

अपभ्रंशमें इवके अर्थमें जणि, जणु, नं, नइ, नावइ, नाइ ऐसे छः आदेश होते हैं। उदा.—चंदु जणि, चंदु जणु, चंदु नं, चंदु नइ, चंदु नावइ, चंदु नाइ, चन्द्र इव ॥ २४ ॥

जणि (आदेशका उदाहरण)—

चंपअकुंपलमज्झि सहि भसलु पइट्ठउ।
सोहइ इंदनील जणि कणइ उवविट्ठउ ॥ ३६ ॥ (=हे. ४४४.४)
(चम्पककुड्मलमध्ये सखि भ्रमरः प्रविष्टः।
शोभते इन्द्रनील इव कनके उपविष्टः ॥)

हे सखी, चंपककुसुमके मध्यमें भ्रमर प्रविष्ट है। मानो कनकमें जडे दिये गये इंद्रनील मणि जैसा वह शोभता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जणु (आदेशका उदाहरण)-

निरुवमरसु पिएं पिअवि जणु [९]। यह पीछेही कहा गया है।

नं (आदेशका उदाहरण)—

मुहकवरिबंध तह सोह धरहिं
नं मल्लजुज्झु ससिराहु करहिँ।
तहँ सोहहिँ कुरल भमरउलतुलिअ
नं तिमिरडिंभ खेल्लंति मिलिअ ॥ २७ ॥ (=हे. ३८२.१)

(मुखकबरीबन्धौ तस्याः शोभां धरतः
इव मल्लयुद्धं शशिराहू कुरुतः।
तस्याः शोभन्ते कुरला भ्रमरकुलतुलिता
इव तिमिरडिम्भाः क्रीडन्ति मिलित्वा ॥)

उस (सुंदरी)के मुँह और केशबंध (ऐसी) शोभा धारण करते हैं मानो चंद्र और राहु मल्लयुद्ध करते हैं। भ्रमरसमुदायके समान उसके धुँघराले बाल ऐसे शोभते हैं मानो अंधकारके बच्चे मिलकर खेल रहे हैं।

नइ (आदेशका उदाहरण)-

रविअत्थमणसमाउलेण कंठट्ठिअउ ण छिण्णु।
चक्कें खंडु मुणालिअहि नइ जीवग्गलु दिन्नु ॥३८॥ (=हे. ४४४.१)

(रव्यस्तमनसमाकुलेन कण्ठस्थितो न च्छिन्नः।
चक्रेण खण्डो मृणालिकाया इव जीवार्गलो दत्तः ॥)

सूर्यास्तके समय व्याकुल चक्रवाक (पंछी)ने मृणालिका (कमलके देठ)का टुकडा कंठमें डाला पर उसे नहीं तोडा (खाया)। मानो जीवको बाहर न निकल देनेके लिए अर्गला दे दी।

नावइ (आदेशका उदाहरण)-

पेक्खेविणु मुहुँ जिणवरहँ दीहरणअणसलोणु।
नावइ गरुमच्छरभरिउँ जलणि पवेसइ लोणु ॥३९॥ (=हे. ४४४.३)

(दृष्ट्वा मुखं जिनवराणां दीर्घनयनसलावण्यम्।
इव गुरुमत्सरभरितं ज्वलने प्रविशति लवणम् ॥)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिनवरोंके दीर्घ नयन और लावण्य इनसे युक्त मुँह देखकर, अति-मत्सरसे भरा हुआ लवण मानो अग्निमें प्रवेश करता है।

नाइ (आदेशका उदाहरण)–

वलआवलिनिवडणभएँण धण उद्धब्भुअ जाइ।

वल्लहविरहम्हादहहु गाह गवेसइ नाइ ॥४०॥ (=हे. ४४४.२)

(वलयावलीनिपतनभयेन धन्या ऊर्ध्वभुजा याति।

वल्लभविरहमहाह्रदस्य गाधत्वमन्विष्यतीव ॥)

कंकणसमूह गिरनेके डरसे, सुंदरी (धन्या) हाथ ऊपर करके जाती है मानो वल्लभके विरहरूपी महासरोवरका थाह ढूँढती है।

तणेण रेसिं रेसि तेहिं केहिं तादर्थ्ये ॥ २५ ॥

अपभ्रंशमें तादर्थ्य (उसके लिए, यह अर्थ) दिखानेके समयपर तणेण, रेसिं, रेसि, तेहिं, केहिँ ऐसे पाँच निपात प्रयुक्त करें। उदा.–रामतणेण रामरेसिं रामरेसि रामतेहिं रामकेहिँ णमोक्कारो, रामार्थं नमस्कारः ॥ २५ ॥

ढोल्ला एँह परिहासडी अइ भण कवणइ देसि।

हउँ झिज्जउँ तउकेहिँ पिअ तुहुँ पुणु अन्नहिरेसि ॥४१॥ (=हेम.४२५.१)

(विट एष परिहासः अयि भण कस्मिन् देशे।

अहं क्षीये तवार्थे प्रिय त्वं पुनरन्यस्या अर्थे ॥)

अरे प्रिय, किस देशमें यह परिहास (किया जाता) है, बताओ। हे प्रियकर, मैं तेरे लिए क्षीण होती हूँ, (पर) तू दूसरीके लिए (क्षीण होता है)।

वड्डप्पणहो तणेण [२१] इसी प्रकार तेहिं और रेसिं के उदाहरण लेने हैं।

स्वार्थे डुः पुनर्विनाध्रुवमः ॥ २६ ॥

अपभ्रंशमें पुनः, विना, ध्रुवम् इनके आगे स्वार्थे डित् उ ऐसा प्रत्यय होता है। उदा.-पुणु होइ, पुनर्भवति। पावु विणु, पापं विना। ध्रुवु जम्मु, ध्रुवं जन्म ॥ २६ ॥

सुमरिज्जइ तं वल्लहउँ जं वीसरइ मणाउँ।

जहिँ पुणु सुमरणु जाउँ गउँ तहा णेहहों किं णाउँ ॥ ४२॥ (=हे. ४२६.१)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(स्मर्यते तद्वल्लभं यद्विस्मरति मनाक् ।
यस्य पुनः स्मरणं जातं गतं तस्य स्नेहस्य किं नाम ॥)

जो थोडा भूलनेपरही स्मरण किया जाता है वह प्रिय है। पर जिसका स्मरण होता है और नाश होता है, उस प्रेमका नाम क्या।

चंचलु जीविउँ धवु मरणु पिअ रूसिज्जइ काइं ।
होसहिँ दिअहा रूसणा दिव्वइँ वरिससमाइं ॥४३॥ (=हे. ४१८.३)
(चञ्चलं जीवितं ध्रुवं मरणं प्रिय रुष्यते कथम् ।
भविष्यन्ति दिवसा रुषणा दिव्यानि वर्षशतानि ॥)

जीवित चंचल है, मरण निश्चित है। हे प्रियकर, क्यों रूठा जाय। जिन दिन रूटना है वे दिन सौ दिव्य वर्षोंके समान होंगे।

डेंडाववश्यमः ॥ २७ ॥

(इस सूत्रमें २.३.२६ से) स्वार्थे पदकी अनुवृत्ति है। अपभ्रंशमें अवश्यम् (शब्द)के आगे एं और अ ऐसे ये डित् प्रत्यय आते हैं। उदा.-अवसें अवस, अवश्यम् ॥ २७ ॥

जिब्भिदिउ नायउँ वसि करहुँ जसु अधिन्नइँ अन्नइँ ।
मूलि विणट्ठइ तुंबिणिह अवसें सुक्कहिँ पण्णइं ॥४४॥ (=हे. ४२७.१)
(जिह्वेन्द्रियं नायकं वशे कुरुत यस्य अधीनान्यन्यानि ।
मूले विनष्टे तुम्बिन्या अवश्यं शुष्यन्ति पर्णानि ॥)

जिसके अधीनमें अन्य इंद्रिय हैं उस प्रधान जिव्हेंद्रियको वशमें करो। मूलके नष्ट होनेपर तुंबिनीके पत्ते अवश्य सूख जाते हैं।

अवस न सुअहिँ सुहच्छिअइ [१४०]।

परमेकशसोर्डडि ॥ २८ ॥

अपभ्रंशमें परम् और एकशस् इनके आगे स्वार्थे अ और इ ऐसे ये डित (प्रत्यय) यथाक्रम आते हैं। उदा.-पर परम्। एक्कसि एकशः ॥ २८ ॥

गुणहिँ न संपइ कित्ति पर फल लिहिआ भुंजंति ।
केसरि लहइ न बोड्डिअ वि गय लक्खेहिँ घेप्पन्ति ॥४५॥ (=हे. ३३५.1)
(गुणैर्न सम्पत् कीर्तिः परं फलानि लिखितानि भुञ्जन्ति ।
केसरी न लभते कपर्दिकामपि गजा लक्षैर्गृह्यन्ते ॥)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणोंसे संपत्ति नहीं मिलती, कीर्ति मिलती है। नसीबसे (ललाटपर) लिखे हुए फल (लोग) भोगते हैं। सिंह एक कौडीभी नहीं प्राप्त करता, पर हाथी लाखों (रुपयों) से खरीदे जाते हैं।

एक्कसि सीलकलंकिअहं देज्जहिँ पच्छित्ताइं।
जो पुणु खंडइ अणुदिअहु तसु पच्छित्तें काइं ॥४६॥ (=हे. ४२८.१

(एकशः शीलकलंकितानां दीयन्ते प्रायश्चित्तानि।
यः पुनः खण्डयत्यनुदिवसं तस्य प्रायश्चित्तेन किम् ॥)

एकबार शील कलंकित होनेवालोंको प्रायश्चित्त दिये जाते हैं। पर जो प्रतिदिन (शील) खंडित करता है उसे प्रायश्चित (देने)का क्या उपयोग ?

अडडडुल्लाः स्वार्थिककलुक् च ॥ २९ ॥

अपभ्रंशमें संज्ञाके आगे अ ऐसा, तथा अड और उल्ल ऐसे ये डित् प्रत्यय होते हैं, और उनके सांनिध्यसे स्वार्थिक क-प्रत्ययका लोप होता है। उदा.-बलउ बलडु बलुल्लु, बलम् ॥ २९ ॥

विरहाणलजालकरालिअउ पहिउ पंथि जं दिट्ठउ।
तं मेलवि सव्वहिँ पंथिअहिँ सो ज्जि किअउ अग्गिट्ठउ ॥४७॥
(=हे. ४२९.१)

(विरहानलज्वालाकरालितः पथिकः पथि यदा दृष्टः।
तदा मिलित्वा सर्वैः पथिकैः स एव कृतोऽग्निष्ठः ॥)

जब विरहाग्निकी ज्वालासे जलाभुना हुआ पथिक मार्गपर दिखाई पडा, तब सब पथिकोंने मिलकर उसको अग्निपर रख दिया (कारण वह मर गया था)।

महु कंतहु बे दोसडा हेल्लि म जंपहि आलु।
देंतहों हउँ पर उव्वरिअ जुज्झंतहा करवालु ॥४८॥ (=हे. ३७९.१)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(मम कान्तस्य द्वौ दोषौ हे सखि मा जल्प मिथ्या।
ददतोऽहं परमुर्वरिता युध्यमानस्य करवाल: ।।)

हे सखी, मेरे प्रियकरके दो दोष हैं। झूठ मत बोल। जब वह दान देता है तो (केवल) मैं अवशिष्ट रहती हूँ, और जब वह युद्ध करता है तब केवल तरवार (अवशिष्ट रहती है)।

एक्क कुडुल्ली पंचहिँ रुद्धी [७६] ।।

तद्योगजाश्च ।। ३० ।।

अपभ्रंशमें अ, अड और उल्ल इनके परस्परसंयोगसे जो अड, डुल्लअ डुल्लड, इत्यादि बनते हैं, वे भी प्राय: स्वार्थे (प्रत्यय) होते हैं ।।३०।।

उदा.-अड (प्रत्ययका उदाहरण)—

फोडेंति जे हिअडउँ अप्पणउँ ताहँ पराई कवण घिण।
रक्खेज्जहो तरुणहो अप्पणा बालहें जाया विसम थण ।। ४९ ।।
(=हे. ३५०.२)

(पाटयतो यौ हृदयकमात्मन: तयो: परकीया का घृणा।
रक्ष्यन्तां तरुणा आत्मा बालाया जातौ विषमा स्तना ।।)

जो अपनाही हृदय फोडते हैं (ऐसे स्तनोंको) दूसरेके बारेमें क्या दया (होगी)? हे तरुण लोगो, उस बालासे अपनी रक्षा करो। (उसके) स्तन (अभी) संपूण (विषम, हृदय फोडनेवाले) हो गए हैं।

डुल्लअ (प्रत्ययका उदाहरण)—

चूडुल्लउ चुण्णीहोइसइ [१५५]।

डुल्लड (प्रत्ययका उदाहरण)-

सामिपसाअ सलज्जु पिउ सीमासंधिहि वासु।
देक्खिअ बाहुबलुल्लडउ धण मुंचइ नीसासु ।।५०।।(=हे.४३०.१)

(स्वामिप्रसादं सलज्जं प्रियं सीमासन्धौ वासम्।
प्रेक्ष्य बाहुबलं धन्या मुञ्चति नि:श्वासम् ।।)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(अपने प्रियकरके ऊपर) स्वामिका प्रसाद, सलज्ज प्रियकर, सीमा-संधिपर वास और (प्रियकरका) बाहुबल देखकर (सुखी) सुंदरी निश्वास छोडती है।

इसी प्रकार बाहुबलुल्ल, इत्यादि ॥

ङीतः स्त्रियाम् ॥ ३१ ॥

अपभ्रंशमें स्त्रीलिंगमें रहनेवाली संज्ञाके आगे, इससे पूर्व दो सूत्रोंमें (३.३.२९-३०) कहे गए प्रत्ययोंके आगे ङी प्रत्यय होता है ॥ ३१ ॥

उदा.—

पहिआ दिट्ठी गोरडी दिट्ठी मग्गु निअंत।
अंसूसासें कंचुअं तिंतुव्वाण करंत ॥ ५१॥ (=हे. ४३१.१)
(पथिक दृष्टा गौरी दृष्टा मार्गं पश्यन्ती।
अश्रूच्छ्वासैः कञ्चुकं तिमितोद्वातं कुर्वती ॥)

(एक पथिक दूसरे पथिकसे अपनी प्रियाके बारेमें पूछता है)—'हे पथिक, (मेरी) प्रिया (तुमसे) देखी गई?' (दूसरा उत्तर करता है)—'(तेरा) रास्ता देखनेवाली तथा आँसू और उच्छ्वास इनसे कंचुकको गीला करती और सुखाती हुई देखी गई'।

अदन्ताड्डा ॥ ३२ ॥

अपभ्रंशमें अ, डड, डुल्ल इनमेंसे जो अकारान्त प्रत्यय हैं, उनसे अन्त पानेवाली, स्त्रीलिंगमें रहनेवाली, संज्ञाको डा प्रत्यय लगता है। ङी (प्रत्यय लगता है इस) नियमका (३.३.३१) प्रस्तुत नियम अपवाद है ॥ ३२ ॥

पिउ आगअउ पत्तहों झुणि कण्णडइ पइट्ठ।
तहा विरहहों नासंतहा धूलडिआ वि न दिट्ठ ॥५२॥ (=हे. ४३२.१)
(प्रियः आगतः प्राप्तस्य ध्वनिः कर्णे प्रविष्टः।
तस्य विरहस्य नश्यतः धूलिरपि न दृष्टा ॥)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रियकर आया; आये हुए उसकी ध्वनि कर्णमें प्रविष्ट हो गयी। नष्ट होनेवाले उस विरहकी धूलभी न देखी गई ॥

इदतोऽति ॥ ३३ ॥

अपभ्रंशमें स्त्रीलिंगमें रहनेवाली संज्ञाका जो अकार, उसका अत् अर्थात् अकार प्रत्यय आगे होनेपर, इकार होता है। उदा.–धूलडिआ वि न दिट्ठ [५२]। स्त्रीलिंगमें (रहनेवाली संज्ञाके बारेमेंही ऐसा होता है, अन्यथा नहीं। उदा.-) झुणि कण्णडइ पइट्ठ [५२] ॥ ३३ ॥

इदानीमेव्वहि ॥ ३४ ॥

अपभ्रंशमें इदानीम्‌के स्थानपर एव्वहि ऐसा होता है। उदा.-एव्वहि होइ, इदानीं भवति ॥ ३४ ॥

हरि नच्चाविउ पंगणइ विम्हइ पाडिउ लोउ।
एव्वहि राहपओहरहँ जं भावइ तं होउ ॥५३॥ (=हे. ४२०.२)
(हरिर्नर्तितः प्राङ्गणे विस्मये पातितो लोकः।
इदानीं राधापयोधरयोर्यद् भवति तद् भवतु ॥)

हरिको आँगनमें नचाया गया; लोगोंको आश्चर्यमें डाला गया। अभी राधाके स्तनोंका जो होता है वह होने दो।

एव जि ॥ ३५ ॥

अपभ्रंशमें एव शब्दके स्थानपर जि ऐसा होता है। उदा.-रामु जि, राम एव ॥ ३५ ॥

जाउ म जंतउ पल्लवह देक्खउँ कइ पय देइ।
हिअइ तिरिच्छी हउँ जि पर पिउ डंबरइँ करेइ ॥५४॥ (=हे. ४२०.१)
(यातु मा यान्तं पल्लवथ पश्यामि कति पदानि ददाति।
हृदये तिरश्चीना अहमेव परं प्रियो डम्बराणि करोति॥)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जाने दो (उसे); उस जानेवालेको (पीछे) मत बुलाओ। देखती हूँ (वह) कितने पैर (आगे) डालता है। उसके हृदयमें मैं टेढी होकर (गडी) हूँ। परंतु (मेरा) प्रियकर (जानेका केवल) आडंबर करता है।

एवमेम ॥ ३६ ॥

एवं ऐसा अव्यय एम ऐसा होता है। उदा.–एम रामु कुणइ, एवं रामः करोति ॥ ३६ ॥

पियसंगमि कउ निद्दडी पियहों परोक्खहों केम।
मह बिण्णि वि विण्णासिअ निद्द न एम न तेम ॥५५॥ (=हे. ४१८.१)

(प्रियसंगमे कुतो निद्रा प्रियस्य परोक्षस्य कथम्।
मम द्वे अपि विनाशिते निद्रा न एवं न तथा ॥)

प्रियसंगमके समय निद्रा कहाँसे (आयेगी)? प्रियतम संनिध न होनेपर कैसी निद्रा? दोनों (प्रकारकी निद्राएँ) मेरे (बारेमें) नष्ट हुई हैं। मुझे नींद न यों आती है और न त्यों आती है।

नहि नाहि ॥ ३७ ॥

नहि ऐसा अव्यय नाहि ऐसा होता है। उदा.-नाहि धम्मु, न हि धर्मः ॥ ३७ ॥

एत्तहें मेह पिअन्ति जलु एत्तहें वडवाणलु आवट्टइ।
पेक्खु गहीरिम साअरहों एक्क वि कणिअ नाहि ओहट्टइ ॥ ५६ ॥
(=हे. ४१९.४)

(इतो मेघाः पिबन्ति जलं इतो वडवानल आवर्तते।
पश्य गभीरत्वं सागरस्य एकापि कणिका नहि अपहीयते ॥)

इधर मेघ पानी पीते हैं, इधर (उधर) वडवानल क्षुब्ध हुआ है। सागरके गांभीर्य देखो, (जलका) एक कणभी कम नहीं हुआ है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रत्युत पच्चलिउ ॥ ३८ ॥

प्रत्युत ऐसा अव्यय पच्चलिउ ऐसा होता है। उदा.-पच्चलिउ सुघु, प्रत्युत सुखम् ॥ ३८ ॥

सावसलोणी गोरडी नवखी क वि विसगंठि।
भडु पच्चलिउ सो मरइ जासु न लग्गइ कंठि ॥५७॥ (=हे.४२०.३)
(सर्वसलावण्या गौरी नवीना कापि विषग्रन्थिः।
भटः प्रत्युत स म्रियते यस्य न लगति कण्ठे॥)

सर्वाङ्गसुंदर गौरी नये विषकी गाँठ (के समान) है। परंतु जिसके कंठमें वह नहीं लगती वह वीर मर जाता है।

ग्रन्थिः इस शब्दमें, 'लिङ्गमतन्त्रम्' (३.४.६७) सूत्रानुसार स्त्रीलिंग (हो गया है)।

एवमेव एमइ ॥ ३९ ॥

एवमेव ऐसा अव्यय एमइ ऐसा हो जाता है। उदा.-एमइ लोगु, एवमेव लोकः ॥ ३९ ॥

अंगहिँ अंगु न मिलिउँ हलि अहरें अहरु न पत्तु।
पिअ जोअन्तिहेँ मुहकवँलु एमइ सुरउ समत्तु ॥ ५८ ॥ (=हे. ३३२.२)
(अङ्गैरङ्गं न मिलितं सखि अधरेण अधरो न प्राप्तः।
प्रियस्य पश्यन्त्या मुखकमलं एवमेव सुरतं समाप्तम् ॥)

हे सखी, (प्रियकरके) अंगोंसे (मेरा) अंग न मिला, अधरसे अधर नहीं चिपटा। प्रियकरके मुखकमल देखते देखतेही (हमारी) सुरतक्रीडा समाप्त हो गई ॥

समं समाणु ॥ ४० ॥

समं ऐसा अव्यय समाणु ऐसा हो जाता है। उदा.-रामेण समाणु, रामेण समम् ॥ ४० ॥

कंतु जं सीहहों उवमिअइ तं महु खंडिउ माणु।
सीहु अरक्खअ गअ हणइ पिउ पयरक्खसमाणु ॥५९॥ (=हे. ४१८.२)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(कान्तो यत् सिंहस्योपमीयते तन्मम खण्डितो मानः।
सिंहोऽरक्षकान् गजान् हन्ति प्रियः पदरक्षैः समम् ।।)

(मेरे) प्रियकरकी तुलना जो सिंहसे की जाती है उससे मेरा मान खंडित हो जाता है। (क्योंकि) सिंह बिना रक्षकके हाथियोंको मारता है, (पर मेरा) प्रियकर रक्षकोंके साथ (उनको) मारता है।

किल किर ।। ४१ ।।

अपभ्रंशमें किल ऐसा अव्यय किर ऐसा हो जाता है।। ४१ ।।

उदा.-न किर खाइ न पिअइ न विद्दवइ धम्मि न वेच्चइ रूअडउ।
इह किवणु न जाणइ जह जमहा खणण पहुच्चइ दूअडउ ।। ६० ।।
(=हे. ४१९.१)

(न किल खादति न पिबति न विद्रवति धर्मे न व्ययति रूपकम्।
इह कृपणो न जानाति यथा यमस्य क्षणेन प्रभवति दूतः ।।)

सचमुच कृपण न खाता है, न पीता है, (मनमें) नहीं पिघलता, और धर्मके लिए एक रुपयाभी नहीं खर्च करता। (पर) कृपण यह तो नहीं जानताही है कि यमका दूत एक क्षणमें प्रभावी होगा ।।

पग्गिम प्राइम प्राउ प्राइव प्रायसः ।। ४२ ।।

प्रायस् ऐसा अव्यय अपभ्रंशमें पग्गिम, प्राइम, प्राउ, प्राइव ऐसे चार प्रकारसे प्रयुक्त करें। उदा.-पग्गिम चवलु, प्रायश्चपलः। इत्यादि ।। ४२ ।।

एसी पिउ रूसेसुँ हउँ रुट्ठी मइँ अणुणेइ।
पग्गिम एइँ मणोरहइँ दुक्करु दइवु करेइ ।।६१।। (=हे. ४१४.४)
(एष्यति प्रियः रुष्याम्यहं रुष्टां मामनुनयति।
प्राय एतान् मनोरथान् दुष्करं दैवं कारयति ।।)

प्रियकर आएगा। मैं रूठ जाऊँगी। रूठी हुई मुझे वह मनाएगा (मेरा अनुनय करेगा)। दुष्ट (दुष्कर) दैव प्रायः ऐसे मनोरथ कराता है।

प्राइम मुणिहँ वि भंतडी ते मणिअडा गणन्ति।
अखइ निरामइ परमपइ अज्ज वि पउ न लहन्ति ।।६२।। (=हे. ४१४.२)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(प्रायो मुनीनामपि भ्रान्तिः ते मणीन् गणयन्ति।
अक्षये निरामये परमपदे अद्यापि पदं न लभन्ते ।।)

प्रायः मुनियोंकोभी भ्रांति है। वे (केवल) मणि गिनते हैं। (पर) अबभी अक्षर, निरामय, परमपदमें वे स्थान नहीं प्राप्त करते।

अन्ने ते दीहर लोअण अन्नु तं भुअजुअलु।
अन्नु सु घणथणहारु अन्नु जि मुहकमँलु।
अन्नु सु केसकलाउ अन्नु जि प्राउ विहि।
जेण णिअंबिणि घडिअ स गुणलाअण्णणिहि ।।६३।। (=हे. ४१४.१)

(अन्ये ते दीर्घे लोचने अन्यत्तद् भुजयुगलम्।
अन्यः स घनस्तनभारः अन्यदेव मुखकमलम्।
अन्यः स केशकलापः अन्य एव प्रायो विधिः।
येन नितम्बिनी घटिता सा गुणलावण्यनिधिः ।।)

वे दीर्घ लोचन दूसरेही हैं। वे दोनों भुजाएँ कुछ औरही हैं। वह घन स्तनोंका भार निरालाही है। वह मुखकमलभी निराला है। केशकलापभी निराला है। और गुण तथा लावण्य इनका निधि ऐसी उस सुंदरी (नितम्बिनी)को निर्माण करनेवाला वह विधि (ब्रह्मदेव) भी निराला है।

अंसुजलें प्राइव गोरिअह सहि उव्वत्ता नअणसर।
ते संमुह संपेसिआ देंति तिरिच्छी घत्त पर ।।६४।। (=हे.४१४.३)

(अश्रुजलेन प्रायो गौर्याः सखि उद्वान्ते नयनसरसी।
ते संमुखं संप्रेषिते ददतस्तिर्यग् घातं परम् ।।)

हे सखी, (मुझे भाता है कि) सुंदरीके नयनरूपी सरोवर अश्रुजलसे प्रायः लबालब भरे हुए हैं। परंतु वे नयन जब (किसीके) सामने (देखनेके लिए) मुडते हैं तब वे तिरछी चोट करते हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दिवा दिवे ॥ ४३ ॥

दिवा ऐसा अव्यय दिवे ऐसा हो जाता है। उदा.-दिव दिवें गंगण्हाणु [८] ॥ ४३ ॥

सह सहुं ॥ ४४ ॥

सह ऐसा अव्यय सहुं ऐसा हो जाता है ॥ ४४ ॥

जइ पवसंतें सहुँ न गय न मुअ विओएं तस्सु।
लज्जिज्जइ संदेसडा देंती सुहअजणस्सु ॥६५॥ (=हे. ४१९.३)
(यदि प्रवसता सह न गता न मृता वियोगेन तस्य।
लज्जते संदेशान् ददती सुभगजनस्य ॥)

चूँकि प्रवासको जाते हुए प्रियकरके साथ (मैं) न गई और न उसके वियोगसे मरी। (इसलिए उस) प्रियकरको (सुभगजन) संदेश देती हुई मैं शरमाती हूँ ॥

मा मं ॥ ४५ ॥

मा ऐसा अव्यय मं ऐसा हो जाता है। उदा.-

मं धणि करहि विसाउ (=हे. ३८५.१)।

(मा धन्ये कुरु विषादम्)। हे सुंदरी विषाद मत कर ॥४५॥

प्रायोग्रहण होनेसे, (मा ऐसा भी रूप प्रयोगमें पाया जाता है)। उदा.-

माणि पणट्ठइ जइ ण तणु तो देसडा चइज्ज।
मा दुज्जणकरपल्लवेंहिँ दंसिज्जन्तु भमेज्ज ॥६६॥ (=हे. ४१८.४)
(माने प्रनष्टे यदि न तनुं ततो देशं त्यजेत्।
मा दुर्जनकरपल्लवैर्दर्श्यमानो भ्रमेत् ॥)

मान नष्ट होनेपर यदि शरीर नहीं तो देशको छोड दे। दुर्जनोंके करपल्लवोंसे दिखाये जाते न घूमे।

कुतः कउ कहंतिहु ॥ ४६ ॥

अपभ्रंशमें कुतः ऐसा अव्यय कउ और कहंतिहु ऐसा हो जाता है। उदा.—कउ गदु कहंतिहु गदु, कुतो गतः ॥ ४६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

महु कंतहों गुट्ठट्ठिअहों कउ झुंपडा वलन्ति।
अह रिउरुहिरें उल्लवइ अह अप्पणें न भंति ।।६७।। (=हे.४१६.१)
(मम कान्तस्य गोष्ठस्थितस्य कुतः कुटीरकानि ज्वलन्ति।
अथ रिपुरुधिरेणार्द्रयति अथात्मीयेन न भ्रान्तिः ।।)

मेरा प्रियकर घरमें स्थित होनेपर, झोपडे कहाँसे (कैसे) जल रहे हैं (जलेंगे)? शत्रुके या अपने रक्तसे (वह) ठंडा करेगा, इसमें शक नहीं है।

धूम कहंतिहु उट्ठिअउ [७०]।

अथवा मनागहवइ मणाउं ।। ४७ ।।

अथवा और मनाक् ये (अव्यय) अहवइ (और) मणाउं ऐसे हो जाते हैं। उदा--अहवइ ण सुहं ताहु, अथवा न सुखं तस्य। किंपि मणाउं महु पिअहों [६९], किमपि मनाङ् मम प्रियस्य ।। ४७ ।।

जाइज्जइ तहिं देसडइ लब्भइ पिअहों पमाणु।
जइ आवइ तो आणिअइ अहवइ तं जि निवाणु ।।६८।। (=हे. ४१९.२)
(गम्यते तत्र देशे लभ्यते प्रियस्य प्रमाणम्।
यद्यागच्छति तदानीयते अथवा तदेव निर्वाणम् ।।)

उस देशमें चला जाय जहाँ प्रियकरका पत्ता (प्रयाण) मिले। यदि वह आता है तो लाया जाय। (अन्यथा वहींपर) मरा जाय।

विहवि पणट्ठइ वंकुडउ रिद्धिएँ जणसामण्णु।
किंपि मणाउं महु पिअहों ससि अणुहरइ न अण्णु ।।६९।।(=हे.४१८.६)
(विभवे प्रनष्टे वक्रः ऋद्धौ जनसामान्यः।
किमपि मनाङ् मम प्रियस्य शशी अनुहरति नान्यः ।।)

वैभव नष्ट होनेपर बाँका, वैभवमें जनसामान्य (हमेशाकी तरह) होनेवाला चंद्रही, और न दूसरा कोई, मेरे प्रियकरका कुछ अनुकरण करता है।

इतसेत्तहे ।। ४८ ।।

इतस् ऐसा अव्यय एत्तहे ऐसा हो जाता है। उदा.-एत्तहें मेह पिअन्ति जलु [५६] ।। ४८ ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पश्चात्पच्छइ ॥ ४९ ॥

अपभ्रंशमें पश्चात् ऐसा अव्यय पच्छइ ऐसा हो जाता है। उदा.—पच्छइ होइ विहाणु [१२८] ॥ ४९ ॥

ततस्तदा तो ॥ ५० ॥

ततस् (और) तदा ये (अव्यय) तो ऐसे हो जाते हैं। उदा.—तो गदु, ततो गतः तदा गतः वा। जइ भग्गा पारक्कडा तो सहि मज्झु पिएण [७] ॥ ५० ॥

त्वनुसाहावन्यथासर्वौ ॥ ५१ ॥

अन्यथा (और) सर्व ये (शब्द) यथाक्रम अनु (और) साह ऐसे विकल्पसे हो जाते हैं। उदा.-अनु कदु, अन्यथा कृतम् ॥ ५१ ॥

विरहाणलजालकरालिअउ पहिउ कोवि बुड्डिवि ठिअउ।
अनु सिसिरकालि सीअलजलहु धूमु कहं तिहु उट्ठिअउ॥७०॥(=हे.४१५.१)

(विरहानलज्वालाकरालितः पथिकः कोऽपि निमज्य स्थितः।
अन्यथा शिशिरकाले शीतलजलाध्दूमः कुत उत्थितः ॥)

विरहाग्निकी ज्वालासे प्रदीप्त कोई पथिक (जलमें) डूबकर स्थित है। अन्यथा शिशिरकालमें शीतल जलसे धूम कहाँसे उठा?

विकलपपक्षमें—अन्नहा। साहु वि लोउ तडप्फडइ [२१]।

किं काइंकवणौ ॥ ५२ ॥

अपभ्रंशमें किम् शब्दको काइं और कवण ऐसे आदेश प्राप्त होते हैं ॥ ५२ ॥

जइ सु न आवइ दूइ घरु काँइ अहो मुहु तुज्झु।
वअणु जु खंडइ तउ सहिए सो पिउ होइ न मज्झु ॥७१॥(=हे.३६७.१)

(यदि स नायाति दूति गृहं किमधो मुखं तव।
वचनं यः खण्डयति तव सखि स प्रियो न भवति मम ॥)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हे दूती, यदि वह (प्रियकर) घर नहीं आता तो तुम्हारा मुख क्यों नीचे झुका है? हे सखी, जो तुम्हारा वचन तोडता है वह मुझे प्रिय नहीं है।

काँइं न दूरे पेक्खइ। (=हे. ३४९.१)

(किं न दूरे पश्यति।)

क्यों न दूरतक देखती?

ताहँ पराई कवण घिण [४८]॥

उन्नविच्चवुत्ता विषण्णवर्त्मोक्ताः ॥ ५३ ॥

विषण्ण, वर्त्म (और) उक्त ये (शब्द) यथाक्रम, उन्न, विच्च तथा वुत्त ऐसे हो जाते हैं ॥ ५३ ॥

मइँ वुत्तउँ तुहुँ धुरु धरहि कसुरेसि विमुक्कइ।
पइँ विणु धवल न चडइ भरु एमइ उन्नउ कांइं ॥७२॥ (=हे.४२१.१)

(मया उक्तं त्वं धुरं धर कस्य कृते विमुच्यते।
त्वया विना धवल न आरोहति भरः एवमेव विषण्णः किम् ॥)

मैंने कहा—हे धवल (बैल), तू धुराको धारण कर। (वह) किसलिए (तुमसे) छोडी जाती है? तेरे बिना बोझ नहीं चलेगा, (पर) अभी तू विषण्ण क्यों है?

जं मणु विच्चि न माइ [११८]॥

अत्खुः परस्परस्य ॥ ५४ ॥

अपभ्रंशमें परस्पर शब्दको खु यानी आदि अ हो जाता है (अर्थात परस्पर शब्दके पूर्व अ आता है) ॥ ५४ ॥

ते मुग्गडा हराविआ जे परिविट्ठा ताहं।
अवरोप्परु जोअंताह सामिउ गंजिउ जाहं ॥७३॥ (=हे. ४०९.१)

(ते मुद्गा हारिता ये परिविष्टास्तेषाम्।
परस्परं पश्यतां स्वामी परिभूतो येषाम् ॥)

परस्परको देखनेवाले जिन (सेवकों)का स्वामी परिभूत हो गया उनके बारेमें जो मूँग (अन्न) परोसे गए थे वे नष्ट हो गए।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्यादृशस्याण्णाइसावराइसौ ॥ ५५ ॥

अपभ्रंशमें अन्यादृशको अण्णाइस, अवराइस ऐसे आदेश हो जाते हैं। उदा.-अण्णाइसु। अवराइसु ॥ ५५ ॥

वहिल्लगाः शीघ्रादीनाम् ॥ ५६ ॥

अपभ्रंशमें शीघ्र, इत्यादि (छब्दों)को वहिल्ल, इत्यादि आदेश प्रायः हो जाते हैं ॥ ५६ ॥

शीघ्रको वहिल्ल (आदेश)—

एक्कु कइह वि न आवहि अन्नु वहिल्लउ जाहि।
मइँ मित्तडा प्रमाणिअउँ पइँ जेहउ खलु नाहि ॥७४॥ (=हे.४२२.१)

(एकं कदाचिदपि नायासि अन्यत् शीघ्रं यासि।
मया मित्र प्रमाणितं त्वं यथा खलो नहि ॥)

एक तू कभीभी नहीं आता, दूसरे (आया तोभी) शीघ्रही जाता है। हे मित्र, मैंने जाना है कि तेरे जैसा दुष्ट (अन्य कोई भी) नहीं है।

इस गणमें (स्वार्थे) क (प्रत्यय) का किं होता है। उदा.-

झकटकको घग्घल (आदेश)—

जिम सुउरिस तिम घग्घलइँ जिम नइ तिम वलणाइं।
जिम डोंगर तिम कोट्टरइँ हिआ विसूरहि काइँ ॥७५॥ (=हे.४२२.२)

(यत्र सुपुरुषास्तत्र झकटकाः यत्र नदी तत्र वलनानि।
यत्र पर्वतास्तत्र कोटराणि हृदय खिद्यसे किम् ॥)

जहाँ सत्पुरुष हैं वहाँ झगडाल्भी हैं। जहाँ नदी वहाँ (नदीका) घुमाव है। जहाँ पर्वत वहाँ कंदराएँभी हैं। (तो फिर हे हृदय, तुम क्यों खेद करते हो ?

रम्य को रवण्ण (आदेश)—

सरिहिँ न सरेहिँ सरवरहिँ नवि उज्जाणवणेहिँ।
देस रवण्णा होंति वढ निवसंतेंहिँ सुअणेहिँ ॥७६॥ (=हे.४२२.१०)

(सरिद्भिर्न सरोभिर्न सरोवरैः नापि उद्यानवनैः।
देशा रम्या भवन्ति मूढ निवसद्भिः सज्जनैः ॥)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रे मूर्ख, न सरिताओंसे, न सरोंसे, न सरोवरोंसे, न उद्यानोंसे और न वनोंसे देश रमणीय होते हैं, (किन्तु) सुजनोंके निवाससे (देश रम्य होते हैं)।

यद्यद् दृष्टं तत्तद् इसको जाइट्ठिआ (आदेश)—

अह रच्चसि जाइट्ठिअएँ हिअडा मुद्धसहाव।
लोहें फुट्टणएण जिम घणा सहेसहि ताव ॥७७॥ (=हे.४२२.१७)

(अथ रज्यसे यद्यद् दृष्टं तत्र हृदय मुग्धस्वभाव।
लोहेन स्फुटता यथा घना सहिष्यसे तावत् ॥)

हे पगले हृदय, जिसे जिसे देखते हो उस उसपर अनुरक्त हो जाते तो फूटनेवाले लोहेको जैसे घनके प्रहार वैसा ताप तुम्हें सहन करना पडेगा।

पृथक् पृथक् इसको जुअंजुअ (आदेश)—

एक कुडुल्ली पंचहिँ रुद्धी तहँ पंचहँ वि जुअंजुअ बुद्धी।
वहिणिएँ तं घरु कह किवँ नंदउ जेत्थु कुडुंबउँ अप्पणछंदउ ॥७८॥
(=हे.४२२.१२)

(एका कुटी पञ्चभी रुद्धा तेषां पञ्चानामपि पृथक् पृथक् बुद्धिः।
भगिनि तद् गृहं कथय कथं नन्दतां यत्र कुटुम्बकं आत्मच्छन्दकम् ॥)

एक (शरीररूपी) कुटी (झोपडा) है। उसपर पाँचोंका अधिकार है (रुद्ध)। पांचोंकी बुद्धि पृथक् पृथक् है। हे बहिन, बता कैसे वह घर सानंद रहेगा जहाँ कुटुंब अपनी इच्छासे चलता है।

भय को द्रवक्क (आदेश)—

दिवेंहिँ विढत्तउँ खाहि वढ संचि म एक्कु वि द्रम्मु।
को वि द्रवक्कउ सो पडइ जेण समप्पइ जम्मु ॥७९॥ (=हेम. ४२२.४)

(दिवसैरार्जितं खाद मूढ संचिनु मा एकमपि द्रम्मम्।
किमपि भयं तत्पतति येन समाप्यते जन्म ॥)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अरे मूर्ख, दिनोंमें जो प्राप्त किया है उसे खा। एक दाम (द्रम्म, पैसा) भी मत संचित कर। कारण कोई भय ऐसा आता है कि जिससे जीवनकाही अन्त होता है।

मा भैषीः इसका स्त्रीलिंगमें (प्रयुक्त) मब्भीसडी (आदेश)—

सत्थावत्थहँ आलवणु साहु वि लोउ करेइ।
आदन्नहं मब्भीसडी जो सज्जणु सो देइ ॥८०॥ (=हे.४२२.१६)
(स्वस्थावस्थानामालपनं सर्वोऽपि लोकः करोति।
आर्तानां मा भैषीरिति यः सज्जनः स ददाति ॥)

स्वस्थ अवस्थामें रहनेवालोंसे वार्तालाप (आलपन) सभी (लोग) करते हैं। (पर) पीडित लोगोंसे 'डरो मत' ऐसा केवल जो सज्जन है वहीं कहता है।

अवस्कन्दको दडवड (आदेश)—

चलेंहिँ चलंतहिँ लोअणेंहिँ जे तइँ दिट्ठा बालि।
तहिँ मअरद्धअदडवडउ पडइ अपूरइ कालि ॥८१॥ (=हे.४२२.१४)
(चलैश्चलद्भिर्लोचनैर्ये त्वया दृष्टा बाले।
तेषु मकरध्वजावस्कन्दः पतत्यपूर्णे काले ॥)

हे बाले, तेरे घूमनेवाले चंचल कटाक्षोंसे जो देखे गए हैं उनपर असमयही मदनका हमला हो जाता है।

आत्मीयको अप्पण (आदेश)—

फोडेंति जे हिअडउँ अप्पणउँ [४९]।

गाढको निच्चट्ट (आदेश)—

विहवे कस्सु थिरत्तणउँ जोव्वणि कस्सु मरट्टु।
सो लेखडउ पठाविअउ जो लग्गइ निच्चट्टु ॥ ८२ ॥ (=हे. ४२२.६)
(विभवे कस्य स्थिरत्वं यौवने कस्य गर्वः।
स लेखः प्रस्थाप्यतां यो लगति गाढम् ॥)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वैभवमें स्थिरता किसकी? यौवनमें गर्व किसका? (तो) वह लेख भेजा जा रहा है जो गाढरूपसे लगे।

क्रीडाको खेड्ड (आदेश)–

खेड्डयं कयमम्हेहिं निच्छयं किं पयंपह।
अणुरत्ताउ भत्ताउ अम्हे मा चय सामिअ ।। ८३ ।। (=हे. ४२२.९)
(क्रीडा कृतास्माभिर्निश्चयं किं प्रजल्पत।
अनुरक्तान् भक्तानस्मान् मा त्यज स्वामिन् ।।)

हे स्वामिन्, हमने क्रीडा की। आप ऐसा क्यों बोलते हैं? अनुरक्त ऐसे हम भक्तोंको मत छोडिए।

असाधारणको असड्ढल (आदेश)–

कहिँ ससहरु कहिँ मअरहरु कहिँ बरिहिणु कहिँ मेहु।
दूरठिआहँ वि सज्जणहं होइ असड्ढलु नेहु ।। ८४ ।। (=हे. ४२२.७)
(कुत्र शशधरः कुत्र मकरगृहं कुत्र बर्हिणः कुत्र मेघः।
दूरस्थितानामपि सज्जनानां भवत्यसाधारणः स्नेहः ।।)

कहाँ चंद्र कहाँ सागर। कहाँ मयूर कहाँ मेह। यद्यपि सज्जन दूर रहनेवाले हों तोभी उनका स्नेह असाधारण होता है।

नवको नवख (आदेश)–

नवखी क वि विसगंठि [५७]।

मूढको नालिअ और वढ (आदेश)—

जो पुणु मणि जि खसिफसिहूअउ चिंतइ देइ न द्रम्मु न रूअउ।
रइवसभमिरु करग्गुल्लालिउ घरहि जि कोंतु गुणइ सो नालिउ ।। ८५ ।।
(=हे. ४२२.१३)
(यः पुनर्मनस्येव व्याकलीभूतश्चिन्तयति ददाति न द्रम्मं न रूपकम्।
रतिवशभ्रमणशीलः कराग्रोल्लालितं गृहेष्वेव कुन्तं गुणयति स मूढः ।।)

जो मनमेंही व्याकुल होकर चिंता करता है पर एकभी दाम या रुपया नहीं देता (वह एक मूर्ख)। रतिवश होकर घूमनेवाला और घरमेंही अंगुलियोंसे भालेको नचानेवाला वह (एक) मूर्ख।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दिवँहिँ विढत्तउँ खाहि वढ [७७]।

अस्पृश्यसंसर्गको विट्टाल (आदेश)–

जे छड्डेविणु रअणनिहि अप्पउँ तडि घल्लन्ति।
तहँ संखहँ विट्टालु पर फुक्किज्जंत भमन्ति ॥ ८६ ॥ (=हे.४२२.३)

(ये त्यक्त्वा रत्ननिधिमात्मानं तटे क्षिपन्ति।
तेषां शंखानामस्पृश्यसंसर्गः परं फूत्क्रियमाणा भ्रमन्ति ॥)

जो सागरको छोडकर अपनेको तटपर फेंक देते हैं, उन शंखोंका अस्पृश्यसंसर्ग है। (वे) केवल (दूसरोंसे) फूँके जाते हुए घूमते हैं।

अद्भुतस्य ढक्करि (आदेश)–

हिअडा पइँ बहु बोल्लिअउँ महु अग्गइ सयवार।
फुट्टिसु पिएँ पवसंति हउँ भंडय ढक्करिसार ॥८७॥ (=हे. ४२२.११)

(हृदय त्वया बहु उक्तं ममाग्रे शतवारम्।
स्फुटिष्यामि प्रिये प्रवसति अहं भण्डक अद्भुतसार ॥)

हे अद्भुतशक्तियुक्त शठ हृदय, तूने मेरे आगे सैंकडों बार बहुत कहा था कि प्रियकर यदि प्रवासपर जायेगा तो मैं फूट जाऊँगा।

कौतुकको कोड्ड (आदेश)—

कुंजरु अन्नहँ तरुवरहं कोड्डेण घल्लइ हत्थु।
मणु पुणु एक्कहिँ सल्लइहिं जइ पुच्छह परमत्थु ॥ ८८ ॥ (=हे.४२२.८)

(कुञ्जरोऽन्येषु तरुवरेषु कौतुकेन क्षिपति हस्तम्।
मनः पुनरेकस्यां शल्लक्यां यदि पृच्छत परमार्थम् ॥)

अन्य अच्छे तरुपर हाथी अपनी सूँढ कौतुकसे (खेलके लिए) रगडता है। पर सच पूछो तो उसका मन केवल सल्लकी (वृक्ष) में (लगा रहता) है।

हे सखि इसको हेल्लि (आदेश)–

हेल्लि म जंपहि आलु [४८]॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यदि को छुडु (आदेश)—

विहि विणडउ पीडन्तु गह मं धणि करहि विसाउ।
संपइ कड्ढउँ वेस जिम छुडु अग्घइ ववसाउ ॥८९॥ (=हे.३८५.१)

(विधिर्विनटतु पीडयन्तु ग्रहाः मा धन्ये कुरु विषादम्।
संपदं कर्षामि वेश्येव यदि अर्घति व्यवसायम् ॥)

दैव विमुख होने दो। ग्रह पीडा दें। हे सुंदरी, विषाद मत कर। यदि व्यवसाय मिलेगा तो संपत्तिको वेश्याके समान खींच लाऊँगा।

संबंधिन् को केर और तण (आदेश)—

गअउ सु केसरि पिअहु जलु निच्चिंतइ हरिणाइं।
जसु केरएँ हुंकारडएं मुहहु पडन्ति तिणाइं ॥ ९० ॥ (=हे. ४२२.१५)

(गतः स केसरी पिबत जलं निश्चिन्ता हरिणाः।
यस्य संबंधिना हुंकारेण मुखात् पतन्ति तृणानि ॥)

हे हरिणो, वह सिंह चला गया जिसकी हुंकारसे मुखोंसे तृण गिर पड़ते हैं। (अब) निश्चिंतरूपसे जल पिओ।

जइ भग्गा अम्हहं तणा [७] ॥

दृष्टिको द्रेहि (आदेश)—

एक्कमेक्कउँ जइ वि पेक्खइ हरि सुट्ठु सव्वायरेँण।
तो वि द्रेहि जहिँ कहिँ वि राही।
को सक्कइ संवरेवि दड्ढनअणा नेहें पलुट्टा ॥ ९१ ॥ (=हे. ४२२.५)

(एकमेकं यद्यपि प्रेक्षते हरिः सुष्ठु सर्वादरेण।
तथापि दृष्टिर्यत्र कुत्रापि राधा।
कः शक्नोति संवरीतुं दग्धनयने स्नेहेन पर्यस्ते ॥)

यद्यपि अच्छी तरहसे सर्वादरपूर्वक हरि एकेक (गोपी) को देखता है, तथापि उसकी दृष्टि वहाँ है जहाँ कहाँ राधा है। स्नेहसे भरे हुए नयनोंको रोकनेके लिए कौन समर्थ है?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हुहुरुघिग्घिगाः शब्दचेष्टानुकृत्योः ॥ ५७ ॥

अपभ्रंशमें हुहुरु, इत्यादि शब्द शब्दानुकरणमें, और घिग्घिग, इत्यादि शब्द चेष्टानुकरणमें यथाक्रम प्रयुक्त करें ॥ ५७ ॥

मइँ जाणिउँ बुड्डीसुँ हउँ पेम्मद्रहि हुहुरु त्ति।

णवरि अचिंतिअ संपडिअ विप्पिअनाव झडत्ति। ९२ ॥ (=हे. ४२३.१)

(मया ज्ञातं मंक्ष्यामि अहं प्रेमह्रदे हुहुरुत्ति।

केवलमचिन्तिता संपतिता विप्रियनौः झटिति ॥)

मैंने समझा कि हुहुरु शब्द करके मैं प्रेमरूपी सरोवरमें डूब जाऊँगी। पर बिना सोचेही (अकस्मात्) वियोगरूपी नौका (मुझे) मिल गई।

आदि शब्दके ग्रहणसे (ऐसेही अन्य शब्दानुकारी शब्द जानें। उदा.-)

खज्जइ न कसरक्केंहिं पिज्जइ नउ घुंटेहिं।

एमइ होइ सुहच्छडी पिएँ दिट्ठे नअणेहिं ॥ ९३ ॥ (=हे. ४२३.२)

(खाद्यते न कसरत्कैः पीयते न घुण्टैः।

एवमेव भवति सुखासिका प्रिये दृष्टे नयनाभ्याम् ॥)

आँखोंसे प्रियकर देखे जानेपर, (वह) कसर कसर करके नहीं खाया जाता है, न घूँटोंसे पिया जाता है, तथापि सुखस्थिति रहती है।

इत्यादि शब्दानुकरण (के उदाहरण)।

अज्जु वि नाहु महु जि घरि सिद्धत्था वंदेइ।

ताउँ जि विरहु गवक्खेंहिं मक्कडघिग्घिउ देइ ॥ ९४ ॥ (=हे. ४२३.३)

(अद्यापि नाथो ममैव गृहे सिद्धार्थान् वन्दते।

तावदेव विरहो गवाक्षेभ्यो मर्कटविभीषिकां ददाति ॥)

मेरा नाथ जिन प्रतिमाओंको वंदन करता अभी घरमेंही है, (प्रवासपर नहीं गया है), तबतकही विरह झरोखेसे मर्कट-विभीषिका दे रहा है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

—आदि शब्दके ग्रहणसे (ऐसे अन्य चेष्टानुकारी शब्द जानें। उदा.-)
सिरि जर खंडी लोअडी गलि मणिअडा न वीस।
तो वि गोट्ठडा कराविआ मुद्धऍ उट्ठबईस ।। ९५ ।। (=हे. ४२३.४)

(शिरसि जरा खण्डिता लोमपुटी गले मणयो न विंशतिः।
तथापि गोष्ठस्थाः कारिता मुग्धया उत्तिष्ठोपविश ॥)

(यद्यपि) सिरपर फटी पुरानी कमलीकी टुकडी और गलेमें बीस मनियाँ भी नहीं थीं, तथापि सुंदरीने सभागृहके सभासदोंको उठकबैठक करा दिया।

ऐसे चेष्टानुकरण (के उदाहरण)।

अनर्थका घइमादयः ।। ५८ ।।

अपभ्रंशमें घइं, इत्यादि निपात निरर्थक (विशेष अर्थ अभिप्रेत न होनेपरभी) प्रयुक्त किए जाते हैं ।। ५८ ।।

पेम्मडि पच्छायावडा पिउ कलहिअउ विआलि।
घइं विवरीरी बुद्धडी होइ विणासहों कालि ।।९६।। (=हे. ४२४.१)

(प्रेम्णि पश्चात्तापः प्रियः कलहायितः विकाले।
खलु विपरीता बुद्धिर्भवति विनाशस्य काले ।।)

प्रेममें पश्चात्ताप (और) सायंकालमें प्रियकरसे झगडा (हुआ)। सचमुच विनाशकालमें बुद्धि विपरीत होती है।

(सूत्रमें) आदि शब्दके ग्रहणसे, खाइं, इत्यादि (निपात निरर्थक प्रयुक्त किए जाते हैं)।

— तृतीय अध्याय तृतीय पाद समाप्त —

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चतुर्थः पादः

दिहौ सुपि ॥ १ ॥

(इस सूत्रमें) अपभ्रंशे पदकी अनुवृत्ति है। अपभ्रंशमें, सुप् (=विभक्तिप्रत्यय) आगे रहनेपर, संज्ञाके अन्त्य स्वरके दिहौ यानी दीर्घ और ऱ्हस्व प्रायः होते हैं। उदा.-रामु रामू, रामः ॥ १ ॥

सु (प्रत्यय आगे होनेपर)-

ढोल्ला सावँला धण चंपअवण्णी।

णाइ सुवण्णरेह कसवट्टइ दिण्णी ॥९७॥ (=हेम. ३३०.१)

(विटः श्यामलो धन्या चम्पकवर्णा।

इव सुवर्णरेखा कषपट्टे दत्ता॥)

प्रियकर श्यामलवर्ण है (और) प्रिया चंपकवर्णकी है। (वह ऐसे लगती है कि) मानो कसौटीपर सुवर्णकी रेखा खिंची हो।

संबोधन (प्रत्यय आगे होनेपर)-

ढोल्ला मइँ तुहुँ वारिआ मा करु दीहा माणु।

निद्दएँ गमिही रत्तडी दडवड होइ विहाणु ॥९८॥ (=हे. ३३०.२)

(विट मया त्वं वारितो मा कुरु दीर्घं मानम्।

निद्रया गमिष्यति रात्रिः शीघ्रं भवति प्रभातम्॥)

हे प्रियकर, मैंने तुझे बरजा कि दीर्घ (काल) मान मत कर। (कारण) नींदमें रात बीत जायेगी और झटपट प्रभात हो जायेगा।

स्त्रीलिंगमें—

बिट्टिए मइँ भणिय तुहुँ मा करु वंकी दिट्ठी।

पुत्ति सकण्णी भल्लि जिम मारइ हिअइ बइट्ठि ॥९९॥ (=हे. ३३०.३)

(पुत्रि मया भणिता त्वं मा कुरु वक्रां दृष्टिम्।

पुत्रि सकर्णा भल्लिर्यथा मारयति हृदये प्रविष्टा॥)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हे बिटिया, मैंने तुझसे कहा था कि बाँकी दृष्टि मत कर। (कारण) हे बिटिया, (यह बाँकी दृष्टि) नोकदार भालेके समान (दूसरोंके) हृदयमें बैठकर (पैठकर) मारती है।

जस् (प्रत्यय आगे रहनेपर)–

एइ ति घोडा एह थलि एइ ति निसिआ खग्ग।
एत्थु मुणीसिम जाणिअइ जे णवि वालइ वग्ग ॥१००॥ (=हे.३३०.४)

(एते ते घोटका एषा स्थली एते ते निशिताः खड्गाः।
अत्र मनुष्यत्वं ज्ञायते ये नापि वलयन्ति वल्गाः ॥)

ये वे घोडे। यह (वह युद्ध–) भूमि। ये वे तीक्ष्ण खड्ग। यहींपर उनके पौरुषकी परीक्षा होती है जो घोडेकी बाग पीछे नहीं खींचता।

इसीप्रकार अन्य विभक्तियोंमें उदाहरण लेने हैं।

स्वम्यत उत् ॥ २ ॥

अपभ्रंशमें सु और अम् प्रत्यय आगे होनेपर, (शब्दोंके अन्त्य) अ का उकार होता है। उदा.-रामु। घडु। पडु ॥ २ ॥

दहमुहु भुवणभअंकरु तोसिअसंकरु
णिग्गउ रहवरि चडिअउ।
चउमुहु छम्मुहु झाइवि एक्कहिँ
लाइवि णावइ दइवें घडिअउ ॥१०१॥ (=हे. ३३१.१)

(दशमुखो भुवनभयंकरस्तोषितशंकरो
निर्गतो रथोपरि आरूढः।
चतुर्मुखं षण्मुखं ध्यात्वा एकत्र
लगित्वा इव दैवेन घटितः ॥)

भुवनभयंकर रावण शंकरको संतुष्ट करके रथपर आरूढ होकर निकला। मानो देवोंने ब्रह्मदेव और कार्तिकेय इनका ध्यान करके तथा उन (दोनों)को एकत्र करके उसे (रावणको) बनाया था।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ओत्सौ पुंसि तु ॥ ३ ॥

अपभ्रंशमें पुल्लिंगमें होनेवाली संज्ञाके (अन्त्य) अकारका, सु (प्रत्यय) आगे रहनेपर, ओ विकल्पसे होता है। उदा.-रामो। घडो। पडो ॥ ३ ॥

अगलिअनेहनिवट्टाहं जोअणलक्खु वि जाउ।
वरिससएण वि जो मिलइ सहि सो सोक्खहँ ठाउ ॥ १०२ ॥ (=हे. ३३२.१)

(अगलितस्नेहनिर्वृतानां योजनलक्षमपि यातु।
वर्षशतेनापि यो मिलति सखि स सौख्यानां स्थानम् ॥)

जिनका स्नेह नष्ट नहीं हुआ है ऐसे स्नेहसे पूर्ण व्यक्तियोंके बीच लाख योजनोंका अंतर होने दो। हे सखी, (स्नेह नष्ट न होनेपर) सैंकड़ों वर्षोंपरभी जो मिलता है वह सौख्योंका स्थान है।

पुंसि (पुल्लिंगमें रहनेवाले), ऐसा क्यों कहा है? (कारण पुल्लिंगमें न होनेपर यहाँ कहा हुआ ओ नहीं होता)। उदा.-अंगहिँ अंगु न मिलिउँ हलि [५८] ॥

ए भिसि ॥ ४ ॥

अपभ्रंशमें भिस् प्रत्यय आगे होनेपर, (शब्दोंके अन्त्य) अकारका ए विकल्पसे होता है। उदा.-रामेहिं। घडेहिं। (विकल्पपक्षमें)-गुणहिँ न संपइ कित्ति पर [४५] ॥ ४ ॥

टि ॥ ५ ॥

अपभ्रंशमें टा-वचन आगे होनेपर, (शब्दोंके अन्त्य) अ का ए होता है। (यह सूत्र ३.४.४ से) पृथक् कहा जानेसे, यहाँ विकल्प नहीं होता। उदा.-रामेण। घडेण ॥ ५ ॥

जे महु दिण्णा दिअहडा दइएँ पवसंतेण।
ताण गणन्तिएँ अंगुलिउ जज्जरिआउ नहेण ॥ १०३ ॥ (=हे. ३३३.१)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(ये मम दत्ता दिवसा दयितेन प्रवसता।
तान् गणयन्त्या अङ्गुल्यो जर्जरिता नखेन ॥)

प्रवासपर निकलते समय प्रियकरने जो दिन (मुझे अवधिरूपमें) दिए (=कहे) थे, उन्हें गिनते हुए मेरी अंगुलियाँ नखोंसे जर्जरित हो गई हैं।

ङिनेच्च ॥ ६ ॥

अपभ्रंशमें (शब्दोंके अन्त्य) अकारके ङि (प्रत्यय)के साथ इकार और एकार होते हैं। उदा.-रामि रामे। घडि घडे ॥ ६ ॥

साअरु उप्परि तणु धरइ तलि घल्लइ रयणाइं।
सामि सुभिच्चु वि परिहरइ संमाणेइ खलाइं ॥१०४॥ (=हे.३३४.१)

(सागर उपरि तृणं धरति तले क्षिपति रत्नानि।
स्वामी सुभृत्यमपि परिहरति संमानयति खलान् ॥)

सागर तृणको ऊपर धारण करता है और रत्नोंको तलमें ढकेलता है। (उसीप्रकार) स्वामी अच्छे सेवकको छोड देता है और खलोंका सम्मान करता है।

ङसेर्हें हु ॥ ७ ॥

(अब अत् शब्दका) अतः ऐसा पंचम्यन्त परिणाम हो जाता है। अपभ्रंशमें (शब्दोंके अन्त्य) अकारके आगे अ नेवाले ङसिको हे और हु ऐसे आदेश होते हैं ॥ ७ ॥

वच्छहें गिण्हइ फलइँ जणु कडु पल्लव वज्जेइ।
तो वि महद्दुमु सुअणु जिम ते उच्छंगि करेइ ॥१०५॥(=हे ३३६.१)

(वृक्षाद् गृह्णाति फलानि जनः कटून् पल्लवान् वर्जयति।
तथापि महाद्रुमः सुजनो यथा तानुत्सङ्गे करोति ॥)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लोग वृक्षसे फल लेते हैं और कटु पल्लवोंको छोडते हैं। तथापि सुजनके समान महान् वृक्ष उन्हें अपने उत्संगपर (धारण) करता है।

वच्छहु गेण्हइ, वृक्षाद् गृह्णाति ॥

भ्यसो हुं ॥ ८ ॥

अपभ्रंशमें (शब्दोंके अन्त्य) अकारके आगे आनेवाले भ्यस् को यानी पंचमी बहुवचन-प्रत्ययको हुं ऐसा आदेश होता है ॥ ८ ॥

दूरुड्डाणें पडिउ खलु अप्पणु जणु मारेइ।
जिह गिरिसिंगहुँ पडिअ सिल अन्नु वि चूरुकरेइ ॥१०६॥(=हे.३३७.१)

(दूरोड्डाणेन पतितः खलः आत्मानं जनं (च) मारयति।
यथा गिरिशृङ्गेभ्यः पतिता शिला अन्यदपि चूर्णं करोति ॥)

ऊँचा उड्डाण करके (बादमें नीचे) गिरा हुआ खल मनुष्य अपनेको (और) औरोंको भी मारता है। जैसे, गिरिशिखरोंसे गिरी हुई शिला (अपने साथसाथ) अन्यकोभी चूर चूर कर देती है।

ङसः सुस्सुहो ॥ ९ ॥

अपभ्रंशमें (शब्दोंके अन्त्य) अ के आगे आनेवाले ङस् को सु, स्सु और हो ऐसे तीन आदेश होते हैं। उदा.-रामसु। रामस्सु। रामहो॥९॥

जो गुणु गोवइ अप्पणा पअडा करइ परस्सु।
तसु हउँ कलिजुगि दुल्लहहों बलि किज्जउ सुअणस्सु ॥१०७॥
(=हे. ३३८.१)

(यो गुणान् गोपायत्यात्मनः प्रकटान् करोति परस्य।
तस्याहं कलियुगे दुर्लभस्य बलिं करोमि सुजनस्य ॥)

जो अपने गुणोंको छिपाता है और दूसरोंके गुणोंको प्रकट करता है, ऐसे कलियुगमें दुर्लभ सज्जनोंकी मैं पूजा करता हूँ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आमो हं ॥ १० ॥

अपभ्रंशमें (शब्दोंके अन्त्य) अकारके आगे आनेवाले आम् को हं ऐसा आदेश होता है ॥ १० ॥

तणहँ तइज्जी भंगि नवि तें अवडयडि वसन्ति।
अह जणु लग्गिवि उत्तरइ अह सह सइँ मज्जन्ति ॥१०८॥(=हे.३३९.१)

(तृणानां तृतीया भंगिर्नापि तेनावटतटे वसन्ति।
अथ जनो लगित्वा उत्तरति अथ सह स्वयं मज्जन्ति ॥)

तृणोंको तीसरी भंगी (दशा, मार्ग) नहीं होती। वे अवटके (आडके) तटपर उगते हैं। उसे पकडकर लोग (आडके पार) उतर जाते हैं या उसके साथ स्वयंही डूब जाते हैं।

टो णानुस्वारौ ॥ ११ ॥

अपभ्रंशमें (शब्दोंके अन्त्य) अकारके आगे आनेवाले टा-वचनके ण और अनुस्वार होते हैं। उदा.–दइएं पवसन्तेण [१०३] ॥ ११ ॥

एं चेदुतः ॥ १२ ॥

अपभ्रंशमें (शब्दोंके अन्त्य) इकार और उकार इनके आगे आनेवाले टा-वचनको एं ऐसा, और (सूत्रमेंसे) चकारके कारण ण और अनुस्वार हो जाते हैं ॥ १२ ॥

एं (का उदाहरण)—

अग्गिएं उण्हउँ होइ जगु वाएं सीअलु तेवँ।
जो पुणु अग्गिएं सीअला तसु उण्हत्तणु केवँ ॥१०९॥ (=हे.३४३.१)

(अग्निना उष्ण भवति जगत् वातेन शीतलं तथा।
यः पुनरग्निना शीतलस्तस्य उष्णत्वं कथम ॥)

अग्निसे जगत् उष्ण होता है। वायुसे शीतल होता है। परंतु जो अग्निसेभी शीतल होता है उसे उष्णत्व कैसे?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ण और अनुस्वार (के उदाहरण)—

विप्पिअआरउ जइ वि पिउ तों वि तं आणहि अज्जु।
अग्गिण दड्ढा जइ वि घरु तो तें अग्गि कज्जु ।। ११० ।। (=हे. ३४३.२)

(विप्रियकारको यद्यपि प्रियः तथापि तं आनयाद्य।
अग्निना दग्धं यद्यपि गृहं तथापि तेनाग्निना कार्यम् ।।)

यद्यपि प्रियकर अप्रिय करनेवाला है तथापि उसे आज ले आ। अग्निसे यद्यपि गृह जल जाता है तथापि उससे (अपना) काम पड़ता ही है।

इसी प्रकार उकारके आगे ण और अनुस्वार इनके उदाहरण होते हैं।

हि हे ङिङस्योः ।। १३ ।।

अपभ्रंशमें (शब्दोंके अन्त्य) इ और उ के आगे (आनेवाले) ङि और ङसि इनको हि और हे ऐसे आदेश क्रमसे होते हैं ।। १३ ।।

ङिको हि (आदेश)—

अह विरलपहाउ जि कलिहि धम्मु ।। १११ ।। (=हे. ३४१.३)

(अथ विरलप्रभाव एव कलौ धर्मः।)

अब कलियुगमें धर्म कम प्रभावी है।

ङसिको हे (आदेश)—

गिरिहे सिलायलु तरुहें फलु घेप्पइ नीसावन्नु।
घरु मेल्लेप्पिणु माणुसहं तो वि न रुच्चइ रन्नु ।। ११२ ।। (=हे. ३४१.१)

(गिरेः शिलातलं तरोः फलं गृह्यते निःसामान्यम्।
गृहं मुक्त्वा मनुष्याणां तथापि न रोचतेऽरण्यम् ।।)

किसी भेदभावके बिना (अरण्यमें) पर्वतसे शिला और वृक्षसे फल ग्रहण किए जाते हैं। तथापि घरको छोडकर अरण्य(-वास) मनुष्योंको अच्छा नहीं लगता।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हुं भ्यसः ॥ १४ ॥

(शब्दोंके अन्त्यइ) और उ इनके आगे (आनेवाले) भ्यस् को हुँ ऐसा आदेश हो है ॥ १४ ॥

तरुहुँ वि वक्कलु फलु मुणि वि परिहणु असणु लहन्ति।
सामिहुँ एत्तिउँ अग्गलउँ आअरु भिच्च गृहन्ति ॥११३॥ (=हे.३४१.२)

(तरुभ्योऽपि वल्कलं फलं मुनयोऽपि परिधानमशनं लभन्ते।
स्वामिभ्य एतावदधिकं आदरं भृत्या गृह्णन्ति ॥)

मुनिभी तरुओंसेभी वल्कल और फल इनको परिधान और भोजन इनके रूपसे प्राप्त कर लेते हैं। (परंतु वस्त्र और भोजनके साथ साथ) आदरको सेवक स्वामियोंसे अधिक (जादा) प्राप्त कर लेते हैं।

आमो हं च ॥ १५ ॥

अपभ्रंशमें (शब्दोंके अन्त्य) इ और उ इनके आगे (आनेवाले) आम् को हं, और (सूत्रमेंसे) चकारके कारण हुं, ऐसे आदेश हो जाते हैं ॥ १५ ॥

दइवु घडावइ वणि तरुहुँ सउणिहँ पक्कफलाइं।
सो वरि सुक्खु पइट्ठ णवि कण्णहिँ खलवअणाइं ॥१४॥ (=हे.३४०.१)

(दैवं घटयति वने तरूणां शकुनीनां पक्कफलानि।
तद्वरं सुखं प्रविष्टानि नापि कर्णयोः खलवचनानि ॥)

पक्षियोंके लिए वनमें वृक्षोंके फलोंको दैव निर्माण करता है। (उनके उपभोगका) वह सुख अच्छा है; पर कानोमें खलोंके वचन प्रविष्ट होना (अच्छा) नहीं।

प्रायोग्रहणसे क्वचित् सुप् को (भी) हुं ऐसा आदेश हो जाता है। उदा.)-

धवलु विसूरइ सामिअहों गरुआ भरु पिक्खेवि।
हउँ किँ न जुत्तउ दुहुँ दिसिहिँ खंडइँ दोण्णि करेवि ॥११५॥
(=हे.३४०.२)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(धवलो विषीदति स्वामिनो गुरुं भारं प्रेक्ष्य।
अहं किं न युक्तो द्वयोर्दिशोः खण्डे द्वे कृत्वा ।।)

स्वामीका बडा (गुरु) भार देखकर धवल (बैल) खेद करता है (और अपनेसे कहता है–) मेरे दो खंड करके क्यों न मुझे जुएँके दोनों ओर जोत दिया गया?

ङसो लुक् ।। १६ ।।

अपभ्रंशमें ङस् का यानी षष्ठी विभक्तिका प्रायः लोप होता है। उदा.–राम, रामा, रामस्य रामाणां वा ।। १६ ।।

संगरसएँहिँ वि जो वण्णिअइ देक्खु अम्हारा कंतु।
अइमत्तहं चत्तंकुसहं गअ कुंभइँ दारन्तु ।।११६।।(=हे.३४५.१)
(संगरशतेष्वपि यो वर्ण्यते पश्यास्माकं कान्तम्।
अतिमत्तानां त्यक्ताङ्कुशानां गजानां कुम्भान् दारयन्तम् ।।)

सैंकडों युद्धोंमें, अत्यंत मत्त तथा अंकुशकी भी परवाह न करनेवाले गजोंके कुंभस्थलोंका विदारण करनेवाला ऐसा जिसका वर्णन किया जाता है उस मेरे प्रियकरको देख।

सुसोः ।। १७ ।।

सुस् यानी प्रथमा (विभक्ति), अस् (यानी) द्वितीया (विभक्ति), इनका अपभ्रंशमें नित्य लोप होता है। उदा. राम रामा, रामः रामाः, रामं रामान् इति वा। एइ ति घोडा [१००], यहाँ, सु, अम् और जस् इनका लोप हुआ है। जिम 'जम वंकिम लोअणहं [१३], यहाँ सु, अम् और शस् इनका लोप हुआ है ।। १७ ।।

हो जसामन्त्र्ये ।। १८ ।।

अपभ्रंशमें आमंत्रण (संबोधन)के अर्थमें रहनेवाली संज्ञाके आगे (आनेवाला) जस् (प्रत्यय) हो ऐसा हो जाता है। (सुस् का) लोप होता है

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इस नियमका (देखिए ३.४.१७) प्रस्तुत नियम अपवाद है। उदा.—
हे रामहो, हे रामाहो, हे रामाः ॥ १८ ॥

तरुणहो तरुणिहो मुणिउँ मइँ करहु न अप्पहों घाउ ॥११७ ॥
(=हे. ३४६.१)

(हे तरुणाः हे तरुण्यः ज्ञातं मया मा कुरुतात्मनो घातम।)

ह तरुणो और हे तरुणियो, मैने जाना, अपना घात मत करो।

हिं भिस्सुपोः ॥ १९ ॥

अपभ्रंशमें भिस् और सुप् इन (प्रत्ययों)को हिं ऐसा आदेश होता है। उदा.—(भिस् को हिं आदेश)—गुणहिँ न संपइ [४५] इत्यादि॥१९॥

सुप् (को हिं आदेश)——

भाईरहि जिम भारइ मग्गेंहिँ तिहिँ वि पअट्टइ ॥११८॥ (=हे.३४७.१)

(भागीरथी यथा भारते मार्गेषु त्रिष्वपि प्रवर्तते।)

जिस प्रकार गंगा भारतमें तीन मार्गोंसे जाती है।

स्त्रियां ङेर्हि ॥ २० ॥

अपभ्रंशमें स्त्रीलिंगमें रहनेवाली संज्ञाके आगे (आनेवाले) ङि-वचनका हि होता है ॥ २० ॥

वायसु उड्डावंतिअएँ पिउ दिट्ठउ सहस त्ति।
अद्धा वलया महिहि गअ अद्धा फुट्ट तडत्ति ॥ ११९॥ (=हे. ३५२.१)

(वायसमुड्डापयन्त्याः प्रियो दृष्टः सहसेति।

अर्धानि वलयानि मह्यां गतानि अर्धानि स्फुटितानि तडिति ॥)

कौएको उडाती हुई (विरहिणी) स्त्रीने सहसा (अचानक) प्रियकरको देखा। (उसकी) आधी चूडियाँ जमीनपर गिर गईं और (अवशिष्ट) आधी (चूडियाँ) तडतड करके टूट गई।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ङसङस्योर्हे ॥ २१ ॥

(इस सूत्रमें ३.४.२० से) स्त्रियाम् पदकी अनुवृत्ति है। अपभ्रंशमें स्त्रीलिंगमें रहनेवाली संज्ञाके आगे आनेवाले ङस् और ङसि यानी षष्ठी एकवचन और पंचमी एकवचन इनको हे ऐसा आदेश प्राप्त होता है ॥२१॥

ङस् (को हे आदेश)—

तुच्छमज्झहें तुच्छरोमावलिहें तुच्छराय तुच्छयरहासहें।
पिअवयणु अलहन्तिहें तुच्छकाय वम्महनिवासहें।
अन्नु जु तुच्छउँ तहें धणहें तं अक्खणह न जाइ।
कडरि थणंतरु मुद्धहें जं मणु विच्चि न माइ ॥१२०॥ (=हे.३५०. १)

(तुच्छमध्यायाः तुच्छरोमावल्यास्तुच्छरागायास्तुच्छतरहासायाः।
प्रियवचनमलभमानायास्तुच्छकायायास्तुच्छमन्मथनिवासायाः।
अन्यद्यत्तुच्छं तस्या धन्यायास्तदाख्यातुं न याति।
कूटं स्तनान्तरं मुग्धाया यन्मनो वर्त्मनि न माति ॥)

(सुंदरीका) मध्यभाग कटिभाग तुच्छ[१] है, रोमावली सुंदर है, प्रेम तुच्छ है, हास्य तुच्छ है। प्रियकरकी कोई वार्ता न पानेसे उसका शरीर तुच्छ हुआ है। वह (मानो) मदनका निवास है। उस सुंदरीका अन्यभी जो कुछ तुच्छ है वह कहा नहीं जा सकता। आश्चर्य (गूढ) है कि उस मुग्धाके स्तनोंके बीचका भाग इतना तुच्छ है कि उस मार्गपर मनभी नहीं समाता।

ङसि (को हे आदेश)—

बालहें जाया विसम थण [४८] ॥

---

१ पतला, नाजूक, सूक्ष्म, कृश, इत्यादि अर्थोंमें यहाँ तुच्छ शब्दका प्रयोग किया गया है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हुमाम्भ्यसोः ।। २२ ।।

अपभ्रंशमें स्त्रीलिंगमें रहनेवाली संज्ञाके आगे आनेवाले आम् और भ्यस् इनको हुं ऐसा आदेश होता है। उदा.-वअंसाहुं जइ भट्टु, वयस्यानां यदि भर्ता, वयस्याभ्यः वा ।। २२ ।।

भल्ला हुआ जु मारिआ बहिणि महारा कंतु ।
लज्जिज्जंत वअंसिअहुँ जइ भग्गा घरु एन्तु ।। १२१ ।। (=हे.३५१.१)

(सम्यग्भूतं यन्मारितो भगिनि मदीयः कान्तः ।
अलज्जिष्यं वयस्याभ्यो यदि भग्नो गृहमैष्यत् ।।)

हे बहिन, भला हुआ जो मेरा प्रियकर (युद्धमें) मारा गया। (कारण) यदि पराभूत होकर वह घर वापस आता तो (मेरे) वयस्याओंसे मैं लजाई जाती (अथवा—सखियोंके बीच वह शरमा जाता) ।

उदोतौ जश्शसः ।। २३ ।।

अपभ्रंशमें स्त्रीलिंगमें रहनेवाली संज्ञाके आगे आनेवाले जस् और शस् इनको प्रत्येकको उत् और ओत् ऐसे विकार होते हैं। (जस् और शस् का) लोप होता है (देखिए ३.४.१७) इस नियमका प्रस्तुत नियम अपवाद है ।। २३ ।।

जस् (के बारेमें)—

अंगुलिउ जज्जरिआओं नहेण [१०१] ।।

शस् (के बारेमें) —

सुंदरसव्वंगाउ विलासिणीओं पेच्छन्ताण ।। १२२ ।। (=हे. ३४८.१)

(सुन्दरसर्वाङ्ग्यो विलासिनीः प्रेक्षमाणानाम् ।)

सर्वांगसुंदर विलासिनियोंको देखनेवालोंका ।

उदोतौ ऐसा द्विवचन और जश्शसः ऐसा षष्ठी एकवचन ऐसा वचनभेद होनेके कारण (यहाँके विकार) क्रमशः नहीं होते (किंतु जस् और शस् इन दोनोंमें होते हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इं नपि ॥ २४ ॥

(इस सूत्रमें ३.४.२३ से) जश्शसः पद (अध्याहृत) है। अपभ्रंशमें नपि यानी नपुंसकलिंगमें रहनेवाली संज्ञाके आगे आनेवाले जस् और शस् इनको इं ऐसा आदेश होता है ॥ २४ ॥

कमलइँ मेल्लवि अलिउलइं करिगंडाइँ महन्ति।
असुलहमेच्छण जाहँ भलि ते णवि दूर गणन्ति ॥ १२३॥ (=हे. ३५३.१)

(कमलानि मुक्त्वा अलिकुलानि करिगण्डानि कांक्षन्ति।
असुलभं वाञ्छितुं येषां अभ्यासः ते नापि दूरं गणयन्ति ॥)

कमलोंको छोडकर भ्रमरसमूह हाथियोंके गंडस्थलकी इच्छा करते हैं। दुर्लभ (वस्तु) प्राप्त करनेका जिसका निर्बंध-अभ्यास-है, वे दूरीका विचार नहीं करते।

कान्तस्यात उं स्वमोः ॥ २५ ॥

(इस सूत्रमें ३.४.२४ से) नपि पद (अध्याहृत) है। अपभ्रंशमें नपुंसकलिंगमें रहनेवाली संज्ञाके आगे जो ककार, उसके अन्त्य अकारके आगे सु और जस् होनेपर, उसको उं ऐसा आदेश होता है। उदा.-अन्नु जु तुच्छउँ तहेँ [१२०] ॥ २५ ॥

भग्गउं देक्खिवि निअय बलु बलु पसरिअउँ परस्सु।
उम्मिल्लइ ससिरेह जिम करि करवालु पिअस्सु ॥ १२४ ॥
(=हे. ३५४.१)

(भग्नं दृष्ट्वा निजं बलं बलं प्रसृतं परस्य।
उन्मीलति शशिरेखा यथा करे करवालः प्रियस्य ॥)

अपनी सेनाको पराभूत हुई और शत्रुकी सेनाको फैलती हुई देखकर प्रियकरके हाथमें तरवार चंद्ररेखा की तरह चमचमाने लगती है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सर्वगात् ङि हिं ॥ २६ ॥

अपभ्रंशमें सर्वग यानी सर्व, इत्यादि अकारान्त (शब्दों)के आगे ङि—वचन हिं ऐसा हो जाता है ॥ २६ ॥

जहिँ खंडिज्जइ सरिण सरू विज्झइ खग्गिण खग्गु ।
तहिँ तहविहि भडघडनिवहि कंतु पयासइ मग्गु ॥ १२९ ॥ (=हे. ३५७.१)

(यस्मिन् खण्ड्यते शरेण शरो विध्यते खड्गेन खड्गः ।
तस्मिंस्तथाविधे भटघटानिवहे कान्तः प्रकाशयति मार्गम् ॥)

जहाँ बाणसे बाण काटा जाता है, जहाँ खड्गसे खड्गका वेध किया जाता है, वहाँ उसप्रकारके भटोंके समुदायमें (मेरा) प्रियकर (योद्धोंके लिए) मार्गको प्रकाशित करता है ।

ङसिर्हं ॥ २७ ॥

अकारान्त सर्व, इत्यादिके आगे ङसि यानी पंचमी एकवचन हं ऐसा हो जाता है । उदा.–जहं होंतउ आगओ, तहं होंतउ आगओ, यस्माद् भवानागतः, तस्माद् भवानागतः ॥ २७ ॥

तु किमो डिह ॥ २८ ॥

अपभ्रंशमें अकारान्त किम् शब्दके आगे ङसि– (पंचमी एक–) वचन डित् इह ऐसा विकल्पसे हो जाता है । उदा.-किह आगओ । विकल्पपक्षमें–कहं आगओ, कस्मादागतः ॥ २८ ॥

जइ तुह तुट्टउ नेहडा मइँ सहुँ नवि तिलतार ।
तं किह वंकेँहिँ लोअणेँहिँ जोइज्जउँ सअवार ॥ १२६ ॥ (=हे. ३५६.१)

(यदि तव त्रुटितः स्नेहो मया सह नापि तिलमात्रः ।
तत्कस्माद् वक्राभ्यां लोचनाभ्यां त्रिलोक्ये शतवारम् ॥)

यदि तेरा मेरे साथ स्नेह टूट गया हो, तिलमात्रभी नहीं है, तो सैंकडों बार वक्र दृष्टिद्वारा मैं क्यों देखी / देखा जाता / जाती हूँ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ङसः सुश् यत्तत्किम्भ्यः ।। २९ ।।

अपभ्रंशमें अकारान्त यत्, तत्, किम् इनके आगे ङस् के स्थानपर सुश् ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। (सुशमें) श् इत् होनेसे पूर्व (पिछला) स्वर दीर्घ होता है ।। २९ ।।

कतु महारउ हलि सहिए निच्छइँ रूसइ जासु ।
अत्थिहिँ सत्थिहिँ वि ठाउ वि फेडइ तासु ।।१२७।। (=हे.३५८.१)
(कान्तोऽस्माकं हे सखि निश्चयेन रुष्यति यस्य ।
अस्त्रैः शस्त्रैर्हस्तैरपि स्थानमपि स्फोटयति तस्य ।।)

हे सखी, (मेरा) प्रियकर जिससे निश्चयरूपमें रुष्ट हो जाता है, उसका स्थान वह अस्त्र, शस्त्र (या) हाथोंके द्वारा फोडता है।

जीविउँ कासु न वल्लहउँ धणु पुणु कासु न इट्ठु ।
दोण्णि वि अवसरनिवडइं तिणसम गणइ विसिट्ठु ।।१२८।। (=हे.३५८.२)
(जीवितं कस्य न वल्लभं धनं पुनः कस्य नेष्टम् ।
द्वे अप्यवसरनिपातिते तृणसमे गणयति विशिष्टः ।।)

जीवित किसे प्रिय नहीं है? और धनकी इच्छा किसे नहीं है? तथापि (विशिष्ट) समय आनेपर विशिष्ट (श्रेष्ठ) व्यक्ति (इन) दोनोंको तृणके समान समझता है।

विकल्पपक्षमें—तसु हउँ कलिजुगि [१०७]। इत्यादि ।

स्त्रियां डहे ।। ३० ।।

अपभ्रंशमें स्त्रीलिंगमें रहनेवाले यद्, तद्, किम् के आगे ङस् को डित् अहे ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-जहे केरउं,यस्याः संबंधि ।।३०।।

यत्तदः ध्रुं त्रं स्वमोः ।। ३१ ।।

अपभ्रंशमें, सु और अम् (प्रत्यय) आगे होनेपर, यद् और तद् इन (दोनों) को यथाक्रम ध्रुं और त्रं ऐसे आदेश प्राप्त होते हैं ।। ३१ ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रंगणि चिट्ठदि नाहु ध्रुं त्रुं रणि करदि न भ्रंति ॥१२९॥(=हे.३६०.१)

(प्रांगणे तिष्ठति नाथो यत्तद् रणे करोति न भ्रान्तिः।)

क्योंकि (मेरा) नाथ आँगनमें खडा है, अतः वह रणक्षेत्रपर भ्रमण नहीं करता है।

विकल्पपक्षमें–तं बोल्लिअइ जु निव्वहइ। (=हे. ३६०)

(तत् जल्प्यते यन्निर्वहति।)

वही कह जाता है जो निभता है।

इदम इमु नपुंसके ॥ ३२ ॥

अपभ्रंशमें नपुंसकलिंगमें रहनेवाले इदम् शब्दको, सु और अम् (प्रत्यय) आगे होनेपर, इमु ऐसा आदेश होता है। इमु कुलु तुह तणउं। इमु कुलु देक्ख। इदं कुलं तव संबंधि। इदं कुलं पश्य ॥ ३२ ॥

एतदेहएहोएहु स्त्रीनृनपि ॥ ३३ ॥

अपभ्रंशमें स्त्रीनृनपि यानी स्त्रीलिंग, पुल्लिंग और नपुंसकलिंग, इनमें रहनेवाला एतद् शब्द, सु और अम् (प्रत्यय) आगे होनेपर, यथाक्रम एह, एहो, एहु ऐसा हो जाता है ॥ ३३ ॥

एह कुमारी एहो वरु एहु मणोरहठाणु।

इअ वढहं चिंतंताहं पच्छइ होइ विहाणु ॥ १३० ॥ (=हे. ३६२.१)

(एषा कुमारी एष वरः एतन्मनोरथस्थानम्।

इति मूढानां चिन्तयतां पश्चाद् भवति विभातम् ॥)

यह कुमारी, यह (मैं) वर (पुरुष), यह मनोरथोंका स्थान; यही सोचते सोचते मूर्खोंके (बारेमें) सबेरा हो जाता है।

जश्शसोरेइ ॥ ३४ ॥

अपभ्रंशमें एतद् के आगे जस् और शस् होनेपर, उसका एइ ऐसा हो जाता है। उदा.-एइ ति घोडा [१००]। एइ पेच्छ, एतान् पश्य ॥३४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ओइ अदसः ॥ ३५ ॥

अपभ्रंशमें अदस् शब्दको, जस् और शस् आगे रहनेपर, ओइ ऐसा आदेश होता है। उदा.-ओइ, अमी अमून् वा ॥ ३५ ॥

जइ पुच्छह घर वड्डाहं तो वड्डा घर ओइ।

विहलिअजणअब्भुद्धरणु कंतु कुडीरइ जोइ ॥ १३१ ॥ (=हे. ३६४.१)

(यदि पृच्छत गृहान् बृहतां तद् बृहन्तो गृहा अमी।

विह्वलितजनाभ्युद्धरणं कान्तं कुटीरके पश्य ॥)

यदि तुम बडोंके घरके बारेमें पूच्छते हो तो बडे घर वे हैं। (परंतु) दुःखित लोगोंका उद्धार करनेवाला (मेरा) प्रियकर कुटीमें (है उसे) देखो।

इदम आअः ॥ ३६ ॥

अपभ्रंशमें इदम् को, विभक्तिप्रत्यय आगे होनेपर, आअ ऐसा आदेश होता है। उदा.-आउ पुरिसु, अयं पुरुषः ॥ ३६ ॥

आअइँ लोअहों लोअणइँ जाइ सरइँ न भंति।

अप्पिएँ दिट्ठइ मउलिअहिँ पिएँ दिट्ठइ विअसन्ति ॥ १३२ ॥ (=हे. ३६५.१)

(इमानि लोकस्य लोचनानि जातिं स्मरन्ति न भ्रान्तिः।

अप्रिये दृष्टे मुकुलयन्ति प्रिये दृष्टे विकसन्ति ॥)

लोगोंकी इन आँखोंको (पूर्व) जनमका स्मरण होता है, (इसमें) शक नहीं। (क्योंकि) अप्रिय (वस्तु) को देखकर वे संकुचित होती हैं और प्रिय (वस्तु) को देखकर वे विकसित होती हैं।

सोसउ म सोसउ च्चिअ उअही वडवाणलस्स किं तेण।

जं जलइ जले जलणो आएण वि किं न पज्जत्तं ॥ १३३ ॥ (=हे. ३६५.२)

(शुष्यतु मा शुष्यतु एव उदधिर्वडवानलस्य किं तेन।

यज्ज्वलति जले ज्वलन अनेनापि किं न पर्याप्तम् ॥)

सागर सूखे या न सूखे, इससे वडवानलको क्या? अग्नि जलमें जलती रहती है यही (उसका पराक्रम दिखानेके लिए) पर्याप्त नहीं क्या?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आअहों दड्ढकलेवरहों जं वाहिउ तं सारु ।

जइ उट्टब्भइ तो कुहइ अह डज्झइ तो छारु ॥१३४॥(=हे. ३६५.३)

(अस्य दग्धकलेवरस्य यद् वाहितं तत् सारम् ।

यद्युत्तभ्यते तत्कुथाति अथ दह्यते तत्क्षारः ॥)

इस तुच्छ (दग्ध) शरीरसे जो मिल जाय वही अच्छा है। यदि इसे ढका जाय तो दुर्गंध आने लगे। यदि जलाय जाय तो राख हो जाय।

सौ युष्मदस्तुहुं ॥ ३७ ॥

अपभ्रंशमें युष्मद् को सु (प्रत्यय) आगे होनेपर तुहुं ऐसा आदेश होता है। उदा.–तुहुं त्वम् ॥ ३७ ॥

भमर म रुणझुणि रण्णडइ सा दिसि जोइ म रोइ ।

सा मालइ देसंतरिअ जसु तुहुं मरहि विओइ ॥१३५॥(=हे. ३६८.१)

(भ्रमर मा रुणीहि अरण्ये तां दिशं पश्य मा रोदीः ।

सा मालती देशान्तरिता यस्यास्त्वं म्रियसे वियोगे ॥)

हे भ्रमर, अरण्यमें रुनझुन ध्वनि मत कर। उस दिशाको देख, मत रो। वह मालती दूसरे देशमें है जिसके वियोगसे तू मर रहा है।

तुम्हे तुम्हइं जश्शसोः ॥ ३८ ॥

अपभ्रंशमें युष्मद्को, जस् और शस् आगे रहनेपर, तुम्हे, तुम्हइं ऐसे आदेश होते हैं। वचनकी भिन्नता होनेसे, (ये आदेश) यथाक्रम नहीं होते। उदा.-तुम्हे तुम्हइं जाणह, यूयं युष्मान् जानीथ। तुहि तुम्हइं पेच्छह, यूयं युष्मान् पश्यत ॥ ३८ ॥

भिसा तुम्हेहिं ॥ ३९ ॥

अपभ्रंशमें युष्मद्को भिस् के साथ तुम्हेहिं ऐसा आदेश हो जाता है ॥ ३९ ॥ उदा.–

तुम्हेहिँ अम्हेहिँ जं किअउँ दिट्ठउँ बहुअजणेण ।

तं तेवड्डउ समरभरु णिज्जिउ एक्कखणेण ।.१३६॥ (=हे. ३७१.१)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(युष्माभिरस्माभिर्यत्कृतं दृष्टं तद् बहुजनेन।
तत्तावान् समरभरो निर्जित एकक्षणेन ॥)

तुमने हमने जो किया उसे बहुत लोगोंने देखा। उस समय उतना बडा समर (हमसे) एक क्षणमें जीता गया।

ङ्यम्टा पइं तइं ॥ ४० ॥

अपभ्रंशमें ङि, अम् और टा इनके साथ युष्मद्को पइं, तइं ऐसे आदेश हो जाते हैं। उदा.-पइं तइं, त्वां त्वया त्वयि वा ॥ ४० ॥

ङिप्रत्ययके साथ–

मइँ पइँ बेहिँ वि रणगयहिं को जयसिरि तक्केइ।
केसहिँ लेप्पिणु जमघरिणि भण सुहुँ को थक्केइ ॥१३७॥ (=हे.३७०.३)

(मयि त्वयि द्वयोरपि रणगतयोः को जयश्रियं तर्कयति।
केशेषु लात्वा यमगृहिणीं भण सुखं कस्तिष्ठति ॥)

तू और मैं दोनोंके रणक्षेत्रमें चले जानेपर (दूसरा) कौन विजयश्रीकी इच्छा करेगा? यमकी पत्नीके केश पकडनेपर कौन सुखसे रहता है, बता।

अम् प्रत्ययके साथ–

पइँ मेल्लन्तिहें महु मरणु मइँ मेल्लन्तहो तुज्झु।
सारस जसु जो वेग्गला सो वि किदन्तहो सज्झु ॥१३८॥(=हे. ३७०.४)

(त्वां मुञ्चन्त्या मम मरणं मां मुञ्चतस्तव।
सारस यस्य यो दूरं सोऽपि कृतान्तस्य साध्यः ॥

(सारस पक्षीकी तरह) यदि मैंने तुझे छोडा तो मैं मर जाऊँगी। तू मुझे छोडेगा तो तू मर जायेगा। (क्योंकि सारस पक्षीके बारेमें) जो सारस जिससे दूर रहेगा वह कृतान्तका भक्ष्य हो जाता है।

इसी प्रकार तइं।

टा-प्रत्ययके साथ—

पइँ मुक्काहं वि वरतरु फिट्टइ पत्तत्तणं न पत्ताणं।
तुह पुणु छाया जइ होज्ज कहवि तो तेहिँ पत्तेहिं ॥१३९॥ (=हे. ३७०.१)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(त्वया मुक्तानामपि वरतरो भ्रश्यति पत्रत्वं न पत्राणाम् ।
तव पुनश्छाया यदि भवेत् कथमपि तत्तैः पत्रैः ॥)

हे सुंदर तरु, तुझसे छुटकर भी पत्तोंका पत्तापन (पत्रत्व) नष्ट नहीं होता। किंतु तेरी किसी प्रकारकीभी छाया जो होती है वह उन्हीं पत्तोंसेही (होती है)।

महु हिअउँ तइं ताए तुह स वि अन्नें विनडिज्जइ।
पिअ काइँ करउँ हउँ काइँ तुहुँ मच्छें मच्छु गिलिज्जइ ॥१४०॥
(=हे. ३७०.२)

(मम हृदयं त्वया तया तव साप्यन्येन विनाट्यते ।
प्रिय किं करोम्यहं किं त्वं मत्स्येन मत्स्यो गिल्यते ॥

मेरा हृदय तूने (जीता है), उसने तेरा (हृदय जीता है)। वह (स्त्री) भी दूसरे (पुरुष) के द्वारा पीडित होती है। हे प्रियकर, मैं क्या करूँ? तू क्या करेगा? मछलीसे मछली निगली जाती है।

तुज्झ तुध्र तउ ङसिङसा ॥ ४१ ॥

अपभ्रंशमें युष्मद्को ङसि और ङस् इनके साथ तुज्झ, तुध्र, तउ ऐसे तीन आदेश होते हैं ॥ ४१ ॥ उदा.-तुज्झ होंतउ आगदो। तुध्र होंतउ आअदो। तउ होंतओ आगदो। ङस्के साथ—

तउ गुणसंपइ तुज्झ मदि तुध्र अणुत्तर खंति।
जइ उप्पत्तिं अन्न जण महिमंडलि सिक्खन्ति ॥१४१॥ (=हे.३७२-१)

(तव गुणसंपदं तव मतिं तवानुत्तरां क्षान्तिम् ।
यद्युपेत्यान्ये जना महीमण्डले शिक्षन्ते ॥)

महीमंडलपर पास आकर दूसरे लोग तेरी गुणसंपत्ति, तेरी बुद्धि, तेरी सर्वोत्तम क्षमा सीख लेते हैं॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुपा तुम्हासु ॥ ४२ ॥

युष्मद्‌को सुप् (प्रत्यय) के साथ तुम्हासु ऐसा आदेश होता है। उदा.- तुम्हासु ठिअं, युष्मासु स्थितम् ॥ ४२ ॥

तुम्हहमाम्भ्यस्भ्याम् ॥ ४३ ॥

युष्मद्‌को आम् और भ्यस् के साथ तुम्हहं ऐसा आदेश होता है। उदा. तुम्हहं केरउ धणु, युष्माकं संबंधि धनम्। तुम्हहं होंतउ आगदो, युष्मभ्यं भवन्नागतः ॥ ४३ ॥

अस्मदोऽम्हहं ॥ ४४ ॥

अपभ्रंशमें अस्मद् को आम् और भ्यस् के साथ अम्हहं ऐसा आदेश होता है। उदा.-अह भग्गा अम्हहं तणा [७]। अम्हहं होंतउ आगदो, अस्मद् भवन्नागतः ॥ ४४ ॥

सौ हउं ॥ ४५ ॥

(इस सूत्रमें ३.४.४४ से) अस्मदः पदकी अनुवृत्ति है। अपभ्रंशमें अस्मद् को सु आगे होनेपर हउं ऐसा आदेश हो जाता है। उदा.-तसु हउँ कलिजुगि दुल्लहहों [१०७] ॥ ४५ ॥

मइं ङ्यम्टा ॥ ४६ ॥

अस्मद्‌को ङि, अम् और टा इन (प्रत्ययों)के साथ मइं ऐसा आदेश होता है। उदा.-मइं, मयि मां मया वा। ङिके साथ-मइँ पइँ बेहिँ वि रणगयहिं [१३७]। अम् के साथ-मइँ मेल्लन्तहों तुज्झु [१३८]। टाके साथ-मइँ जाणिउँ पिअविरहिअहं [१४] ॥ ४६ ॥

ङस्ङसिना महु मज्झु ॥ ४७ ॥

अपभ्रंशमें अस्मद्‌को ङस् और ङसि इन (प्रत्ययों)के साथ महु, मज्झु ऐसे आदेश हो जाते हैं। वचनकी भिन्नता होनेसे, (ये आदेश) यथाक्रम नहीं होते। उदा.-महु कंतहों बे दोसडा [४८]। जइ भग्गा पारकडा तो सहि मज्झु

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पिएण [७]। महु होंतउ आगदो, मत् भवन्नागतः। मज्झु होंतओ आगदो, मद् भवन्नागतः ॥ ४७ ॥

अम्हइं अम्हे जश्शसोः ॥ ४८ ॥

अपभ्रंशमें अस्मद्‌को, जस् और शस् आगे होनेपर, प्रत्येकको अम्हइं, अम्हे ऐसे आदेश होते हैं ॥ ४८ ॥

अंबणु लाइवि जे गया पहिअ पराआ के वि।
अवस न सुअहिँ सुहच्छिअइ जिम अम्हइं तिम ते वि ॥१४२॥(=हे. ३७६.२)

(अम्लत्वं लगयित्वा ये गताः पथिकाः परकीयाः केऽपि।
अवश्यं न स्वपन्ति सुखासिकायां यथा वयं तथा तेऽपि ॥)

स्नेह (अम्लत्व) लगाकर जो कोई परकीय पथिक (प्रवासपर) चले गए हैं वे अवश्यही हमारे समान सुखसे नहीं सोते हैं।

अम्हे थोवा रिउ बहुअ कायर एम भणन्ति।
मुद्धि निहालहि गअणअलु कइ जण जोण्ह करन्ति ॥१४३॥(=हे. ३७६.१)

(वयं स्तोका रिपवो बहवः कातरा एवं भणन्ति।
मुग्धे निभालय गगनतलं कति जना ज्योत्स्नां कुर्वन्ति ॥)

हम थोडे हैं, शत्रु बहुत हैं, ऐसा कायर (लोग) कहते हैं। हे सुंदरि, गगनतलको देख। (वहाँ) कितने लोग ज्योत्स्ना देते हैं ?

अम्हे देक्खहुं, अम्हइं देक्खहुँ, वयं पश्यामः।

भिसाम्हेहिं ॥ ४९ ॥

अस्मद्‌को भिस् के साथ अम्हेहिं ऐसा आदेश होता है। उदा.–तुम्हेंहिं अम्हेंहिं जं किअउँ [१३६] ॥ ४९ ॥

सुपाम्हासु ॥ ५० ॥

अपभ्रंशमें अस्मद्‌को सुप् के साथ अम्हासु ऐसा आदेश होता है। अम्हासु ठिअं, अस्मासु स्थितम् ॥ ५० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लटो हिं वा झङ्योः ॥ ५१ ॥

लट् के यानी वर्तमानकालके परस्मैपद और आत्मनेपद इनके प्रथम पुरुष बहुवचनोंके स्थानपर अपभ्रंशमें हिं ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-होहिं हुवहिं हवहिं, भवन्ति। विकल्पपक्षमें-न्ति, न्ते और इरे (प्रत्यय होते हैं)। उदा.-मुहकवरिबंव तहें सोह धरहिँ [३७] ॥ ५१ ॥

हि थास्सिपोः ॥ ५२ ॥

लट् (वर्तमानकाल) के मध्यमपुरुष एकवचनके थास् और सिप् (प्रत्ययों)—को अपभ्रंशमें हि ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-होहि हवहि हुवहि, भवसि। विकल्पपक्षमें—से और सि (प्रत्यय होते हैं) ॥ ५२ ॥

बप्पीहा पिउपिउ करवि केत्तिउँ रुअहि हआस।
तुह जलि महु पुणु वल्लहइ बिहुँ वि न पूरिअ आस ॥ १४४ ॥
(=हे. ३८३.१)

(चातक 'पिउ पिउ' कृत्वा कियद् रोदिषि हताश।
तव जले मम पुनर्वल्लभे द्वयोरपि न पूरिता आशा ॥)

हे चातक, पीऊँगा पीऊँगा (और प्रिय प्रिय) (पिउ पिउ) ऐसा कहते हे हताश, कितना रोओगे ? (हम) दोनोंकी-जलके बारेमें तुम्हारी और प्रियकरके बारेमें मेरी-आशा पूरी नहीं होती है। (यहाँ) पिउ पिउ ये रूप पिबामि, शब्दसे अथवा प्रियप्रिय शब्दसे अपभ्रंशमें सिद्ध होते हैं।

आत्मनेपदमें-

बप्पीहा काइँ बोल्लिएण निग्घिण वार इ वार।
साअरि भरिअइ विमलजलि लहहि न एक्क वि धार ॥ १४५ ॥ (=हे. ३८३.२)

(चातक किमुक्तेन निर्घृण वारंवारम्।
सागरे भृते विमलजलेन लभसे नैकामपि धाराम् ॥)

हे निर्घृण चातक, बारबार (तुझे) कहनेसे क्या उपयोग। विमल जलसे सागरके भरे रहनेपरभी, एक भी बूंद (धारा) उसमेंसे तुझे नहीं मिलती।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सप्तम्याश्च ॥ ५३ ॥

अपभ्रंशमें सप्तमीके यानी लिङ् (विध्यर्थ)के मध्यमपुरुष एकवचनोंमें थास् और सिप् को हि ऐसा आदेश होता है ॥ ५३ ॥

आअहिँ जम्महिँ अन्नहिँ वि गोरि सु दिज्जहि कंतु ।
गअ मत्तहँ चत्तंकुसहं जो अब्भिडइ हसंतु ॥१४६॥ (=हे. ३८३.३)

(अस्मिन् जन्मनि अन्यस्मिन्नपि गौरि तं दद्याः कान्तम् ।
गजानां मत्तानां त्यक्ताङ्कुशानां यः संमुखं गच्छति हसन् ॥)

हे गौरी, इस जन्ममें तथा दूसरे जन्ममें (मुझे) वही प्रियकर देना जो हँसते हँसते मत्त और अंकुशकी परवाह न करनेवाले गजोंके आगे आकर भिडता है। विकल्पपक्षमें–हससि, इत्यादि ॥ ५३ ॥

हु थध्वमोः ॥ ५४ ॥

लट्के यानी वर्तमानकालके मध्यम पुरुषके बहुत्वमें रहनेवाले परस्मैपद और आत्मनेपद इनके थ और ध्वम् (प्रत्ययों) को हु ऐसा आदेश होता है। उदा.–होहु हवहु हुवहु, भवथ ॥ ५४ ॥

बलिअब्भत्थणि महुमहणु लहुईहूआ सोइ ।
जइ इच्छहु बड्डुत्तणउँ देहु म मग्गहु कोइ ॥१४७॥ (=हे. ३८४.१)

(बल्यभ्यर्थने मधुमथनो लघुकीभूतः सोऽपि ।
यदीच्छथ बृहत्त्वं दत्थ मा याचध्वं कमपि ॥)

बलिसे याचना करते समय वह विष्णु (मधुमथन) भी छोटा हो गया। (इसलिए) यदि महत्ता चाहते हो तो (दान) दो किसीसे (कुछ भी) मत माँगो। विकल्पपक्षमें–इच्छह, इत्यादि ॥

उँ मिबिटोः ॥ ५५ ॥

लट्के यानी वर्तमानकालके उत्तम पुरुषके एकवचनमें रहनेवाले परस्मैपद और आत्मनेपद इनके मिप् और इट् (प्रत्ययों)को उँ ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-संपइ कड्ढउँ वेस जिम [८७]। बलि किज्जउँ सुअणस्सु [१०७]। विकल्पपक्षमें–कड्ढमि, इत्यादि ॥ ५५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हुं मस्महिङोः ॥ ५६ ॥

लट् (वर्तमानकाल)के उत्तमपुरुषके बहुवचनमें रहनेवाले मस् और महिङ् (प्रत्ययों)को हुं ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.–होहुं हवहुं हवहुं, भवामः ॥ ५६ ॥

खग्गविसाहिउँ जहिँ लहहुँ पिअ तहिँ देसहिँ जाहुं।

रणदुब्भिक्खें भग्गाइं विणु जुज्झें न वलाहुं ॥१४८॥ (=हे.३८६.१)

(खड्गविसाधितं यस्मिन् लभामहे प्रिय तस्मिन् देशे यामः।

रणदुर्भिक्षेण भग्ना विना युद्धेन न वलामहे ॥)

हे प्रियकर, जहाँ खड्गका व्यवसाय प्राप्त करें उस देशमें चले जाएंगे। रणरूपी दुर्भिक्षके कारण हम पीडित हैं। युद्धके बिना हम (सुखी) नहीं रहेंगे। विकल्पपक्षमें—लहिमु, इत्यादि ॥

इदुदेत्स्वहेः ॥ ५७ ॥

पंचमी (आज्ञार्थ)के मध्यमपुरुष एकवचनके जो स्व और हि ऐसे आदेश है, उनको अपभ्रंशमें इ, उ और ए ऐसे ये तीन आदेश विकल्पसे होते हैं। उदा.–होइ होउ होए, भव। इत्यादि ॥ ५७ ॥

इ (आदेशका उदाहरण)–

कुंजर सुमरि म सल्लइउ सरला सास मं मेल्लि।

कवल जें पाविअ बिहिवसिण ते चरि माणु म मेल्लि ॥१४९॥ (=हे.३८७.१)

(कुंजर स्मर मा सल्लकीः सरलान् श्वासान् मा मुञ्च।

कवला ये प्राप्ता विधिवशेन तांश्चर मानं मा मुञ्च ॥)

हे गज, सल्लकी–वृक्षोंका स्मरण मत कर, दीर्घ साँस मत छोड। दैववशात् जो प्राप्त हुए हैं उसी कवलोंको खाओ; (अपना) मान मत छोड।

उ (आदेश का उदाहरण)—

भमरा एत्थु वि लिंबडइ कवि दियहडा विलम्बु।

घणपत्तलु छायाबहुलु फुल्लइ जाम कलम्बु ॥१५०॥ (=हे. ३८७.२)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(भ्रमर अत्रापि निम्बे कानपि दिवसान् विलम्बस्व ।

घनपत्रवान् छायाबहुलः फुल्लति यावत् कदम्बः ॥)

हे भ्रमर, यहाँ नीमपर कुछ दिन व्यतीत कर जबतक घने पत्तोंवाला और छायायुक्त कदंब (वृक्ष) नहीं फूलता ।

ए (आदेशका उदाहरण)–

प्रिय एवँ करें सेल्लु करि छड्डहि तुहु करवालु ।

जं कावालिय बप्पुडा लेहिँ अभग्गु कवालु ॥१५१॥ (=हे. ३८७.३)

(प्रिय इदानीं कुरु कुन्तं करे मुञ्च त्वं करवालम् ।

यत् कापालिका वराका लान्त्यभग्नं कपालम् ॥)

हे प्रियकर, अब हाथमें भाला रख, तू तलवार छोड दे, जिससे बेचारे कापालिक न टूटा हुआ कपाल (भीखके लिए) प्राप्त करेंगे ।

विकल्पपक्षमें–सुमरहि, इत्यादि ।

स्यस्य सो लृटि ॥ ५८ ॥

लृट्में यानी भविष्यकालमें जो स्यप् कहा है उसको स ऐसा (आदेश) होता है । उदा.-होसइ भविष्यति ॥ ५८ ॥

दिअहा जंति झडप्पडहिं पडहिँ मणोरह पच्छि ।

जं अच्छइ तं माणिअइ होसइ करतु म अच्छि ॥१५२॥ (=हे.३८८.१)

(दिवसा यान्ति झटिति पतन्ति मनोरथाः पश्चात् ।

यदस्ति तन्मान्यते भविष्यति (इति) कुर्वन् मास्स्व ॥)

दिन झटपट जा रहे हैं । मनोरथ पीछे रह जाते हैं । (इसलिए) जो (कुछ) है उसीका स्वीकार करे । होगा ऐसा कहते हुए न (स्वस्थ) ठहरो ।

विकल्पपक्षमें—होहिइ ।

पर्याप्तौ भुवः पहुच्चः ॥ ५९ ॥

अपभ्रंशमें पर्याप्ति अर्थमें होनेवाले भू धातुको पहुच्च ऐसा आदेश होता है ॥ ५९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अइतुंगत्तणु जं थणहं सो छेयउ न हु लाहु
सहि जइ केवँइ तुडिवसण अहरि पहुच्चइ नाहु ॥१९३॥ (=हे.३९०.१)

(अतितुंगत्वं यत् स्तनयोः स च्छेदो न खलु लाभः।
सखि यदि कथमपि त्रुटिवशेनाधरे प्रभवति नाथः ॥)

स्तनोंकी जो अत्यंत ऊंचाई है वह लाभ नहीं है, हानिही है। (क्योंकि) हे सखी, (मेरा) प्रियकर बहुत कष्टसे और देरसे अधरतक पहुँच सकता है।

व्रजेर्वञ्जः ॥ ६० ॥

अपभ्रंशमें व्रज् (व्रजि) धातुको वञ्ज ऐसा आदेश होता है। उदा.—वञ्जइ। वञ्जेप्पि। वञ्जेप्पिणु ॥ ६० ॥

ब्रूञो बुवः ॥ ६१ ॥

अपभ्रंशमें ब्रू (ब्रूञ्) धातुको बुव ऐसा आदेश विकल्पसे होता है। उदा.-न सुहासिउ किं पि बुवइ, न सुभाषितं किमपि ब्रवीति ॥ ६१ ॥

विकल्पपक्षमें—

एत्तउँ बोप्पिणु सउणि ठिउ पुणु दूसासणु बोप्पि।
तो हउँ जाणउँ एहों हरि जइ महु अग्गइ बोप्पि ॥१९४॥ (=हे.३९१.१)

(एतावदुक्त्वा शकुनिः स्थितः पुनर्दुःशासन उक्त्वा।
ततोऽहं जानामि एष हरिर्यदि ममाग्रे उक्तवान् ॥)

(दुर्योधन कहता है)-इतना कहकर शकुनि चुप रहा। (उतनाही-बोलकर दुःशासन (चुप रहा)। तब मैं समझा कि (जो बोलना था वह) बोलकर यह हरि (श्रीकृष्ण) मेरे सामने (खडा है)।

क्रियेः कीसु ॥ ६२ ॥

क्रिये ऐसे क्रियापदका अपभ्रंशमें कीसु ऐसा आदेश होता है ॥ ६२ ॥ उदा.—

सन्ता भोग जु परिहरइ तसु कंतहों बलि कीसु।
तसु दइवेण जि मुण्डियउँ जसु खल्लिहडउँ सीसु ॥१९५॥ (=हे.३८९.१)

(सतो भोगान् यः परिहरति तस्य कान्तस्य बलिं क्रिये (करोमि)।
तस्य दैवेनैव मुण्डितं यस्य खल्वाटं शीर्षम् ॥)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विद्यमान भोगोंको त्याग जो करता है उस प्रियकरकी मैं पूजा करती हूँ। जो खल्वाट (गंजा) है उसका तो दैवनेही मुंडन कर दिया है।

विकल्पपक्षमें—व्रलि किज्जइ सुअणस्सु [१०५]।

(यहाँ) साध्यमान अवस्थामें (होनेवाले) क्रिये ऐसे संस्कृत शब्दसेही यह प्रयोग है।

पस्सगण्हौ दृशिग्रहोः ॥ ६३ ॥

अपभ्रंशमें दृश् (दृशि) और ग्रह् इन धातुओंको पस्स और गण्ह ऐसे आदेश यथाक्रम होते हैं। उदा.–पस्सदि, पश्यति। पढ गण्हेप्पिणु व्रतु, पठ गृहीत्वा व्रतम् ॥ ६३ ॥

तक्षाद्याश्छोल्लादीन् ॥ ६४ ॥

अपभ्रंशमें तक्ष् (तक्षि), इत्यादि धातुओंको छोल्ल, इत्यादि आदेश प्राप्त होते हैं ॥ ६४ ॥ उदा.—

जिम जिम तिक्खा लेवि कर जइ ससि छोल्लिज्जन्तु।
तो जइ गोरिहि मुहकमलि सरिसिम का वि लहन्तु ॥ १५६ ॥
(= हे. ३९५. १)

(यथा तथा तीक्ष्णान् लात्वा करान् यदि शशी अतक्षिष्यत।
ततो जगति गौर्या मुखकमलेन सदृशतां कामप्यलप्स्यत ॥)

किसी भी प्रकारसे यदि तीक्ष्ण किरणोंको ले (निकाल) कर चंद्रको छीला जाता तब इस जगतमें गौरीके मुखकमलसे कुछ सादृश्य उसको मिल जाता।

(सूत्रमें) आदिशब्द का ग्रहण होनेसे, देशी (भाषा) में जो क्रियावाचक शब्द उपलब्ध होते हैं वे उदाहरणके रूपमें लिए जाय। उदा.—

चूडुल्लउ चुण्णीहोइसइ मुद्धि कवोलि निहित्तउ।
सासाणलजालझलक्किअउ बाहसलिलसंसित्तउ ॥ १५७ ॥
(= हे. ३९५.२)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(चूडकश्चूर्णीभविष्यति मुग्धे कपोले निहितः ।
श्वासानलज्वालादग्धो बाष्पसलिलसंसिक्तः ॥)

हे सुंदरी, कपोलपर रखा, श्वासरूपी अग्निके ज्वालासे तप्त, और अश्रुजलसे भीगा कंगन (स्वयंही) चूर चूर हो जाता है।

हिंअइ खुडुक्कइ गोरडी गयणि घुडुक्कइ मेहु ।
वासारत्तपवासुअहं विसमा संकडु एहु ॥ १५८ ॥ (=हे. ३९५.४)

(हृदये खुट् शब्दं करोति गौरी गगने घडघडायते मेघः ।
वर्षारात्रिप्रवासिनां विषमं संकटमेतत् ॥)

हृदयमें सुंदरी खुट् शब्द करती है; गगनमें बादल घडघड (शब्द) करते हैं। वर्षाकी रातमें प्रवासियोंके लिए यह बडा संकट है।

अम्मि पओहर वज्जमा [२६]।

पुत्तें जाएं कवणु गुणु अवगुणु कवणु मुएण ।
जा बप्पीकी भुंहडी चंपिज्जइ अवरेण ॥ १५९ ॥
(= हे. ३९५.३)

(पुत्रेण जातेन को गुणोऽवगुणः को मृतेन ।
यत् पैतृकी भूमिराक्रम्यतेऽपरेण ॥)

यदि बापकी भूमि (संपत्ति) दूसरेके द्वारा चांप (अपहृत कर) ली जाय तो पुत्र होनेसे क्या लाभ? और उसके मरनेसे क्या हानि?

तं तेत्तिउँ जलु सायरहों सो तेवडु वित्थारु ।
तिसहें निवारणु पलु वि न वि पर घुट्ठुअइ असारु ॥ १६० ॥
(= हे. ३९५.७)

(तत् तावज्जलं सागरस्य स तावान् विस्तारः ।
तृषाया निवारणं पलमपि नैव परं शब्दायतेऽसारः ॥)

सागरका वह उतना पानी और वह उतना विस्तार। पर तृषाका थोडा भी निवारण नहीं होता। वह व्यर्थ घू घू करता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ह्रोः स्तोरुच्चारलाघवम् ॥ ६५ ॥

संयुक्त होनेवाले ह्रोः यानी हकार और रेफ इनका अपभ्रंशमें प्रायः लघु उच्चार होता है। उदा–बहिणि अम्हारा कंतु (११९)। सिरु ल्हसिउं खंधस्सु (१६२)। जइ सो घडिदि प्रयावदी (२०)। अन्नु जि प्राउं (६३)। चंचलु जीविदु ध्रुवु मरणु (४३) ॥ ६५ ॥

बिन्दोरन्ते ॥ ६६ ॥

अपभ्रंशमें पदके अन्तमें रहनेवाले बिंदु (अनुस्वार) का उच्चार प्रायः लघु होता है। उदा.–अन्नु जु तुच्छउँ तहेँ धणहेँ (१२०)। बलि किज्जउँ सुअणस्सु (१०७)। दइवु घडावइ वणि तरुहुँ (११४)। तरुहुँ वि वक्कलु (११३)। खग्गविसाहिउँ जहिँ लहहुँ (१४८)। तणहं तइज्जी भंगि न वि (१०८) ॥ ६६ ॥

हलूस्थैङः ॥ ६७ ॥

अपभ्रंशमें व्यंजनोंमें स्थित (व्यंजनोंसे संयुक्त) ऐसे एङ् का यानी ए और ओ इनका उच्चार प्रायः लघु होता है। उदा.–सुघेँ चिंतिज्जइ माणु [२]। तसु हउँ कलिजुगि दुल्लहहोँ [१०५] ॥ ६७ ॥

लिङ्गमतन्त्रम् ॥ ६८ ॥

अपभ्रंशमें (शब्दोंका) लिंग अनिश्चित, प्रायः व्यभिचारी (अर्थात् स्त्रीलिंगका पुल्लिंग होना, पुल्लिंगका स्त्रीलिंग होना, इ.) होता है। उदा.–गयकुम्भइँ दारन्तु [११६ । यहाँ पुल्लिंगका नपुंसकलिंग] (हो गया है) ॥ ६८ ॥ (अधिक उदाहरण)–

अब्भा लग्गा डुंगरिहिँ पहिउ रडन्तउ जाइ।
जो एहो गिरिगिलणमणु सो किं धणहेँ घणाइ ॥ १६१ ॥
(= हे. ४४५-१)

(अभ्राणि लग्नानि पर्वतेषु पथिको रुदन् याति।
य एष गिरिगिलनमनाः स किं धन्याया घृणायते ॥)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बादल पर्वतोंसे लगे हैं। पथिक रोता हुआ जाता है। जो यह पर्वतको निगलनेवाला है वह क्या सुंदरी (के प्राण) पर दया करेगा ?

यहाँ अब्भामें नपुंसकलिंगका पुल्लिंग (हो गया है)।

पाइ विलग्गी अंत्रडी सिरु ल्हसिउं खंधस्सु।
तो वि कडारइ हत्थडउ बलि किज्जउँ कंतस्सु ॥ १६२ ॥
(= हे. ४४५.२)

(पादे विलग्नमन्त्रं शिरः स्रस्तं स्कन्धात्।
तथापि कटारे हस्तः बलिं करोमि कान्तस्य ॥)

पैरपर अंतडी लगी है। शिर कंधेसे स्रस्त हुआ है। फिरभी (जिस का) हाथ (अद्यापि अपने) कटारीपर है (ऐसे) कांतकी मैं पूजा करती हूँ। यहाँ अंत्रडीमें नपुंसकलिंगका स्त्रीलिंग (हो गया है)।

सिरि चडिआ खंति फलइँ पुणु डालइँ मोडंति।
तो वि महद्दुम सउणाहँ अवराहिउ न करन्ति ॥ १६३ ॥
(= हे. ४४५.३)

(शिरसि आरूढा खादन्ति फलानि पुनः शाखा भञ्जन्ति।
तथापि महाद्रुमाः शकुनीनामपराधितां न कुर्वन्ति ॥)

पंछी शिरपर चढकर फल खाते हैं और शाखाओंकोभी तोडते हैं। तथापि महावृक्ष उनका (कुछभी) अपराध नहीं गिनते। यहाँ डालइं में स्त्रीलिंगका नपुंसकलिंग (हो गया है)।

शौरसेनीवत् ॥ ६९ ॥

अपभ्रंशमें प्रायः शौरसेनीके समान कार्य होता है ॥६९॥ उदा.—

सीसि सेहरु खणु विणिम्मविदु
खणु कंठि पालंबु किदु रदिएँ।
विहिदु खणु मुंडमालिअ जं पणएँण
तं नमहु कुसुमदामकोदंडु कामहों ॥ १६४ ॥ (= हे. ४४६.१)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(शीर्षे शेखरः क्षणं विनिर्मापितः
क्षणं कण्ठे प्रालम्बः कृतो रत्या।
विहितं क्षणं मुण्डमालिका यत्प्रणयेन
तन्नमत कुसुमदामकोदण्डं कामस्य ॥)

जिसको रतिने क्षणभर शिरपर शेखर बना दिया, क्षणभर कंठमें लटकनेका हार बना दिया, क्षणभर (अपने) गलेमें लगा दिया, उस कामके पुष्पधनुष्यको प्रणाम करो।

तद्व्यत्ययश्च ॥ ७० ॥

[सूत्रमेंसे] तद् शब्द प्राकृत (भाषाओं) का द्योतक है। और उनका–प्राकृत, इत्यादि भाषाओंके लक्षणोंका--व्यत्यय (उलटापलटी) प्रायः होता है। (उदा.–) जैसे मागधीमें तिष्ठ को चिष्ठ (आदेश होता है), ऐसा जो कहा है वैसे प्राकृत, पैशाची, शौरसेनी इनमेंभी होता है। उदा. चिष्ठदि। अपभ्रंशमें रेफका जो अधोलोप विकल्पसे कहा है, वह मागधीमेंभी होता है। उदा.–शदमाणुशमंशभालके कुंभशहश्रवशाहे शंचिदे, शतमानुषमांसभारकं कुंभसहस्रं वसायाः संचितम्। इत्यादि दूसरे (उदाहरण) देखे जायँ। केवल भाषालक्षणोंकाही नहीं अपितु धातुओंको लगनेवाले प्रत्ययोंके आदेशोंकाभी व्यत्यय होता है। जो प्रत्यय वर्तमानकालके (ऐसे) प्रसिद्ध हैं वे भूतकालमेंभी होते हैं। उदा.–अह पेच्छइ रहुतणओ, अथ प्रेक्षांचक्रे रघुतनयः। (अनंतर रघुतनयने देखा)। आभासइ रयणीअरे, आबभाषे रजनीचरान्। (राक्षसोंको बोला)। भूतकालमें प्रसिद्ध (ऐसे) प्रत्यय वर्तमानकालमेंभी होते हैं। उदा.–सोहीअ एस चण्डो, शृणोत्येष चण्डः ॥ ७० ॥

शेषं संस्कृतवत् ॥ ७१ ॥

शेष अर्थात् इन द्वादश पादोंमें जो प्राकृत, इत्यादि भाषाओंका लक्षण निबद्ध है उससे अन्य (सब कुछ) संस्कृतके समान होता है। उदा.–रामाअ पोप्फाणि, रामाय पुष्पाणि।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हेट्ठट्ठियसूरनिवारणाय छत्तं अहो इव वहन्ती।
जअइ ससेसा वराहसासदूरुक्खया पुहवी ॥ (= हे. ४४८·१)
(अधःस्थितसूर्यनिवारणाय छत्रमध इव वहन्ती।
जयति सशेषा वराहश्वासदूरोत्क्षिप्ता पृथिवी ॥)

नीचे स्थित सूर्यसे निवारण करनेके लिए मानो नीचे छत्र धारण करनेवाली और वराहके श्वाससे दूर फेंकी गयी, ऐसी शेषके साथ होनेवाली पृथ्वी विजयी है।

यहाँ (इस ग्रंथमें) चतुर्थी (विभक्ति) का आदेश नहीं कहा गया है; वह संस्कृतके समानही होता है। उरसि, सरसि, सिरसि, इत्यादि रूप (उन संस्कृत शब्दोंके) सिद्ध अवस्थासे (प्राप्त) होते हैं ॥ ७१ ॥

झाडगास्तु देश्याः सिद्धाः ॥ ७२ ॥

झाड, इत्यादि शब्द देश्य अर्थात् देशविशेषके व्यवहारसे उपलब्ध होनेवाले सिद्ध यानी निष्पन्न या प्रसिद्ध हैं, ऐसा जाना जाय। उदा.— (१) झाडं लतादिगहनम्। (२) गोप्पी। (३) सप्पत्तिआ (यानी) बाला। (४) गोंडी (५) गांडी (६) गोंजी (यानी) मञ्जरी। (७) एक्कंगं (८) ओहंसं (९) भद्दसिरी (यानी) चन्दनम्। (१०) आडोरो (११) मोरत्तओ (१२) मोरो (१३) पाणाअओ (यानी) श्वपचः। (१४) डुल्लरअं भूषा कपर्दानाम् अर्थात् कपर्दोंसे किया हुआ आभरण ऐसा अर्थ। (१५) सोमालं (१६) सोल्लं (यानी) मांसम्। (१७) छट्टो मर्म। (१८) भोट्टणो भृतकः। (१९) गोड्डं, स्तनयोः उपरि रचितः वासोग्रन्थिः। (२०) भावई गृहिणी (२१) दुक्खित्तो कम्पः। (२२) परिहालो जलनिर्गमः। (२३) पडं ग्रामसीमास्थानम्। (२४) गोजा कलशी। (२५) पडिपल्लिओ विहितपूजः। (२६) गन्धपिसाओ गान्धिकः। (२७) ओहिअं अधोमुखम्। (२८) असारा कदली। (२९) करइल्लो शुष्कमहीजः। (३०) बपंझओ भारः। (३१) दुप्परिअल्लं अशक्यम्। (३२) वेडूणी (३३)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पिच्छल्लं (३४) विद्दूणा (३५) सारोत्रहि (३६) सिणी (३७) वेल्लरी (३८) मंतक्खरं (यानी) लज्जा। (३९) कोण्णाअं म्लानम्। (४०) खन्दजी स्थूलेन्धनवह्निः। (४१) ऊसाअत्तो, खेदेन शिथिलः। (४२) उत्ताणफलं एरण्डः। (४३) चदुरूढो (४४) हालो (यानी) शातवाहनः। (४५) पउलिअं, शूलप्रोतं मांसम्। (४६) माडा समकालम्। (४७) खडरिअं कलुषम्। (४८) बहुराणो असिधारा। (४९) बव्वाडो, दक्षिणो हस्तः। (५०) खब्बणो दक्षः। (५१) खड्डं (५२) वेडो (५३) बोड्डरं (यानी) श्मश्रु। (५४) उइत्तणं निवसनम्। (५५) सअराहं झटिति। (५६) खल्लिरी (५७) खल्लिरिआ (यानी) संकेतः। (५८) रद्धी (५९) वड्डुअं (यानी) प्रधानम्। (६०) गअणरई मेघः। (६१) तिंगच्छी (६२) तिंगआ (यानी) पुष्परजः। (६३) तंडं शिरोहीनम्। (६४) पादुग्गो सभ्यः। (६५) तिविडी सूची। (६६) पत्तलं तीक्ष्णम्। (६७) कूरं भक्तम्। (६८) गोड्डं (६९) चिक्खल्लं (७०) कच्छरं (७१) महिडं (७२) बहलं (७३) रेणं (७४) पणओ (७५) डंडरिआ (७६) डंडा (७७) दोहणी (यानी) पङ्कः अर्थात् कर्दम ऐसा अर्थ। (७८) छिविओ (७९) छोहो (८०) पग्गेज्झो (८१) विछ्डो (यानी) चयः अर्थात् समूह ऐसा अर्थ। (८२) निअत्थं, परिहितं वस्त्रम्। (८३) निड्डुरिआ, भाद्रपदसितदशम्यां कश्चित् उत्सवविशेषः। (८४) खोड्डी (८५) तालफली (यानी) दासी। (८६) छिच्छिणरमणं (८७) ओलुक्की (८८) हद्धिणं (यानी) चक्षुःस्थगनक्रीडा। (८९) पुंसुलं विसंवादः। (९०) अवअण्हं उलूखलम्। (९१) सराहओ (९२) किक्किडी (यानी) सर्पः। (९३) सइल्लंतं (९४) सइदिट्ठं (यानी) मनोरथेनैव संघटना। (९५) ओसा (९६) ओग्गिवो (९७) सिण्हा (यानी) नीहारः। (९८) णिअंसणं परिधानम्। (९९) झुत्ति स्रोतः। (१००) सिट्टा (१०१) सिहडो, ह्रस्वनासिकानादः। (१०२) वणेच्छणं (१०३) णिवच्छणं (यानी) अवतारणम्। (१०४) अल्लुओ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कृतपरिचयः। (१०५) अडा (१०६) सडा (यानी) प्रलम्बाः केशाः। (१०७) घग्घन्थणं खेदः। (१०८) चंदवडाआ अर्धप्रावृतदेहा। (१०९) तलप्फलं शालिः। (११०) तरिडी, अनुष्णो वायुः। (१११) वेप्पो (११२) संपुओ (यानी पिशाचाक्रान्तः। (११३) कीला (११४) कुकुला (११५) अद्धघरणी (११६) बहुधारिणी (यानी) नववधूः। (११७) वत्ती (११८) वई (११९) वेला (यानी) मर्यादा। (१२०) णिग्घट्टो कौशलोपेतः। (१२१) वज्जा (१२२) पज्जा (यानी) अधिकारः। (१२३) झडी (१२४) झल्लरी (यानी) गुल्मः। (१२५) मुकुंडी (१२६) मुचमुंडो (यानी) जूटः। (१२७) णिक्कसरिओ गलितसारः। (१२८) झंटिलिआ चंक्रमणम् (१२९) संखोडी व्यतिकरः। (१३०) सिलिंपो (१३१) चिल्लो (१३२) चुल्लो (१३३) चेडो (१३४) लिंको (१३५) डहरो (यानी) बालः। (१३६) हणं दूरम्। (१३७) विड्डिरिआ (१३८) तुंगी (यानी) रात्रिः। (१३९) कुहिणं कूर्परम्। (१४०) विआलो (१४१) वेल्लु (१४२) दट्टहणो (१४३) लम्मिक्को (१४४) कमलो (१४५) कुविलो (१४६) णिरिक्को (१४७) ओच्छल्लो (१४८) कुसुमालो (यानी) दस्युः अर्थात् चोर ऐसा अर्थ। (१४९) अहेल्लो ईश्वरः। (१५०) घणी पर्याप्तिः गुप्तिः वा। (१५१) कंकअसुकओ अल्पसुकृतलभ्यः। (१५२) पझामुरो प्रत्रयाः अर्थात् वृद्ध ऐसा अर्थ। (१५३) पुंडरिका उत्कलिका। (१५४) हत्थं शीघ्रम्। (१५५) पिडिल्लिको क्रूरः। (१५६) संचुल्लो पिशुनः। (१५७) जोव्वणजोअं (१५८) जोव्वणिरं (१५९) जोव्वणणी (यानी) जरा। (१६०) पडिणिअंसणं, निशि प्रावरणम्। (१६१) पडित्रेसो विक्षेपः। (१६२) पडिक्किआ प्रतिकृतिः। (१६३) पडुज्जइणी तरुणी। (१६४) कुणिआ (१६५) कुच्छिगी (१६६) कंडदिगारो (यानी) वृतिविवरम्। (१६७) देवरिअं, सुतजन्मान तूर्यम् अर्थात् पुत्रोत्सवमें बजाया जानेवाला तूर्य ऐसा अर्थ। (१६८) अक्खवाआ दिक्। (१६९) मेक्खं पार्श्वक्षेत्राघम्।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(१७०) पाहिआवडी ललना। (१७१) पीडरई, चौर्येण वधूः अर्थात् छिपकर (चुराकर) स्वीकृत पत्नी ऐसा अर्थ। (१७२) ओरल्ली गभीरदीर्घरवः। (१७३) पोअग्गो निर्भयः। (१७४) उक्कट्टी (१७५) णेलच्छिआ (१७६) डोक्को (यानी) कूपतुला अर्थात् जलाशयसे पानी ऊपर खींचनेका यंत्र। (१७७) काअंजी (१७८) काणड्डी (१७९) बक्करो (यानी) परिहासः। (१८०) खोडो धार्मिकः। (१८१) उच्छलओ (१८२) पउडं (१८३) मेठिअं (१८४) उप्पदं (१८५) थेट्टो (यानी) गृहम्। (१८६) उलुहंतो (१८७) डंको (१८८) वसतुंडो (१८९) बुक्कणो (यानी) काकः। (१९०) मामा (१९१) मामी (यानी) मातुलभार्या। (१९२) चंचुप्परं मिथ्या। (१९३) चुक्को मुष्टिः। (१९४) पुल्ली (१९५) अल्ली (१९६) चित्तओ (यानी) व्याघ्रः। (१९७) चडआणा (१९८) लुच्छी (यानी) कुन्तलाः। (१९९) गणसमो, रतो गोष्ठ्याम्। (२००) तित्ती सारः। (२०१) डाली शाखा। (२०२) ठाणो अहंकारः (२०३) पामुक्कसिअं कार्यम्। (२०४) पेआलं (२०५) पिंजलं (यानी) प्रमाणम्। (२०६) गहणी (२०७) गहेरो (२०८) मुद्दुलो (यानी) बन्दी। (२०९) लाइल्लो बलीवर्दः। (२१०) मुंकुरुडो (२११) मुंगुरुडो (२१२) घुग्घुरुडो (यानी) राशिः। (२१३) आवसणं (२१४) आअलणं (यानी) रतिगृहम्। (२१५) उवसट्टो सारथिः। (२१६) उवसेरो रथार्हः। (२१७) उणिआ कृसरा। (२१८) अवरिज्जं (२१९) अहोरणं (यानी) उत्तरीयम्। (२२०) अविरिक्कं (२२१) अजणिक्कं (२२२) दोडि (२२३) दोवेलि (यानी) सायंभोजनम्। (२२४) अइरिप्पो, कथाबन्धः। (२२५) पिंडरवो, तैलादीनां विक्रेता वणिक्। (२२६) सुदुम्मणिआ रूपवती। (२२७) उम्मल्ला तृष्णा। (२२८) वेंडं सुरापिष्टम्। (२२९) चडिआसो आटोपः। (२३०) माला ज्योत्स्ना। (२३१) दरंदरो उल्लासः। (२३२) उव्वेलं कौशलम्। (२३३) ओसाओ पीडा अर्थात् प्रहारसे उत्पन्न पीडा ऐसा अर्थ। (२३४) णिच्छड्डो (२३५) णिग्घोरो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(यानी) निर्दय:। (२३६) आरंतिओ मालाकार:। (२३७) लास-अविम्हओ (२३८) सिण्ठो (२३९) आलत्थओ (यानी) केकी। (२४०) उड्डो कूपादिखनकः। (२४१) ऊसारो गर्तः। (२४२) उवलंडंतो चूडा-वलयम्। (२४३) हिल्ला सिकताः। (२४४) हिक्का (२४५) उर्ध्वक्किआ (यानी) रजकी। (२४६) हिंडोली, रक्षणयंत्रं केदारस्य। (२४७) आलसो (२४८) अलिणो (यानी) वृश्चिकः। (२४९) आरिछो बन्धः। (२५०) जमणं बालशिखा। (२५१) मरट्टो गर्वः। (२५२) किलिणी (२५३) कुहणी (२५४) साही (२५५) पाणट्टी (२५६) पत्तण्णी (यानी) प्रतोली अर्थात् रथ्या ऐसा अर्थ। (२५७) मलओ गिर्येकदेशः (२५८) उग्गालो (२५९) छिछोली (यानी) तनुस्रोतः अर्थात् अत्यंत थोडे पानीका स्रोत ऐसा अर्थ। (२६०) कडं (२६१) पडोहरं (यानी) पश्चिमाङ्गणम्। (२६२) सरिवओ (२६३) सरेवाओ (यानी) हंसः। (२६४) कुट्टमिओ महिषः। (२६५) पहणी संमुखागतिनिरोधः। (२६६) केआ केली। (२६७) तित्ती (२६८) कीलं (यानी) स्तोकम्। (२६९) उक्कासारो भीरुः। (२७०) भाउलं, आषाढे कात्यायन्या उत्सवविशेषः। (२७१) भग्गलअं अप्रियम्। (२७२) कोत्थुअवत्थं (२७३) कोसलो (२७४) कणआ (यानी) नीवी। (२७५) छिइंडहिल्लो (२७६) आअं (यानी) दधि। (२७७) हडुवं कलहः। (२७८) छवडा चर्म। (२७९) कहोडो तरुणः। (२८०) फेणवडो वरुणः। (२८१) उअहारी दोहनकारी। (२८२) खट्टंगो छाया। (२८३) जोइओ व्याधः। (२८४) कोलंबं पिठरम्। (२८५) वेखासो (२८६) वेखासओ (यानी) विरूपः। (२८७) सरली (२८८) अरलं (यानी) चीरी। (२८९) संगा (२९०) संडो (यानी) वल्का अर्थात् प्रग्रह ऐसा अर्थ। (२९१) कराइणी (२९२) णिउत्तउ (यानी) शाल्मलि ऐसा अर्थ। (२९३) मोडी भगिनी। (२९४) कुंतो शुकः। (२९५) णिडो (२९६) विच्छुओ (यानी) पिशाचः। (२९७) कउहं नित्यम्। (२९८) पसंडी कनकम्। (२९९) अलमंजुलो (३००)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चंचुमालिओ (३०१) मट्ठो (यानी) अलसः। (३०२) सिअणअं (३०३) कडसी (यानी) पितृवनम् अर्थात् श्मशान ऐसा अर्थ। (३०४) अवडओ (३०५) अडो (यानी) आरामः। (३०६) वाहुंबी, भूषा अश्वस्य। (३०७) मल्लुंकी (३०८) खिंखिणी (३०९) मुरुंडी (३१०) मसआ (३११) बहुरा (३१२) सअली (यानी) क्रोष्ट्री। (३१३) जाई (३१४) मब्भक्खरं (३१५) मई (३१६) सबिसं (३१७) पच्चुच्छाहणं (यानी) मदिरा अर्थात् सुरा ऐसा अर्थ। (३१८) पडिच्छिरो (३१९) सच्छिओ (यानी) सदृशः। (३२०) तारत्तरो मुहूर्तः। (३२१) पडड्डाली (३२२) डेड्डुरी (यानी) क्रीडा। (३२३) पंडरो गोपः। (३२४) पेंडलो रसः। (३२५) पसवडक्कं अवलोकः। (३२६) बोल्लो (३२७) हलबोलो रोलो (३२९) वअलो (३३०) मलहलो (३३१) मअलं (यानी) कलकलः। (हलबोल शब्द) दैवादि-पाठमें होनेके कारण, द्वित्व होनेपर (३३८) हल्लबोलो। (३३३) एक्कघरिल्लो देवरः। (३३४) ओसिक्खओ गतिविघातः। (३३५) खंडीधारा अत्युष्णोदकधारा। (३३६) पडंसुगा (३३७) पत्थरं (३३८) वलिअं (३३९) विहलो यानी ज्या अर्थात् मौर्वी (धनुष्यकी डोरी) ऐसा अर्थ। (३४०) पाणाओ पाणिद्वयाघातः (३४१) णिहसो वल्मीकम्। (३४२) पड्डल्लो अधनः। (३४३) वलविओ (३४४) वडलसरो (यानी) जपवान्। (३४५) पिंजुरुओ मेरुण्डः। (३४६) णिहलं कूलम्। (३४७) अलिअल्लिका कस्तूरी। (३४८) अणरामअं अरतिः। (३४९) छिविअं (३५०) अंगुलिजं (यानी) इक्षुशकलम्। (३५१) अण्णोलो दिनमुखम्। (३५२) अवअणिओ अन्यः। (३५३) सढअं (३५४) गद्दहो (३५५) संफं (यानी) कुमुदम्। (३५६) गमरोट्टं (३५७) छुप्पलअं (यानी) शेखरकम्। (३५८) पिहुणं पुच्छम्। (३५९) अंजणिआ (३६०) अंजणइसिआ (यानी) तापिच्छम्। (३६१) करलं अवशुष्कम्। (३६२) डंडसिओ ग्रामतरुः। (३६३) पव्वंचलक्को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अशक्तः। (३६४) उच्चंतो गाढः। (३६५) गोरप्पडिआ (३६६) रंभडिआ (३६७) बम्हाणी (यानी) गोधा। (३६८) छाहो गगनम् (३६९) अणत्तं निर्माल्यम्। (३७०) पत्थणं (३७१) करअडी (यानी) स्थूलवस्त्रम्। (३७२) अडउष्झअं विपरीतरतम्। (३७३) णज्झरं विमलम्। (३७४) अलिसारं (३७५) विउलं (यानी) क्षीरम्। (३७६) चुच्चुलिअं (३७७) चुंचुलिआरो (यानी) चुलुकम्। (३७८) मोरडं (३७९) मोरअं (३८०) अवंगो (यानी) अपामार्गः। (३८१) पाहुडं अपमृत्युः। (३८२) कामकिसोरो गर्दभः। (३८३) छाइल्लो (३८४) जुण्णो (यानी) वैदग्ध्यवान्। (३८५) छेओ, ऐसा शब्द मात्र विदग्ध अर्थमें होनेवाले छेक शब्दसे होगा। (३८६) सुलंसो कौसुम्भनिवसनम्। (३८७) अहिरिओ त्रिच्छायः। (३८८) फलसं कार्पासः। (३८९) चुल्लहओ ज्येष्ठः। (३९०) थोओ (३९१) सुज्झुओ (यानी) रजकः। (३९२) आअरं (३९३) कडंतं (३९४) अवहडं (यानी) मुसलम्। (३९५) णिहुणं व्यापारः। (३९६) भित्तं (३९७) भित्तरं (यानी) गृहद्वारम्। (३९८) चक्कग्गहो मकरः। (३९९) भंहलओ (४००) जंभलो (४०१) परिअडी (यानी) मूर्खः। (४०२) अक्को दूतः। (४०३) कल्लो हीः। (४०४) कण्णारामं अवतंसः। (४०५) सरिवाओ आसारः। (४०६) मादलिआ (४०७) सुन्त्रिजा (यानी) माता। (४०८) सोअं स्वापः। (४०९) सोआलो, उपयाचितकं अभीष्टसिद्धये दत्तम् अर्थात्:—'मेरा यह मनोरथकी वस्तु (अर्थ) पूरी होनेपर, यह पूजादि करूंगा / करूंगी ऐसा कहकर उद्दिष्ट पदार्थ प्राप्त होनेतक जो कुछ द्रव्य, इत्यादि दूसरोंके हाथमें दिया जाता है वह', ऐसा अर्थ। (४१०) अड्डिम्मं अतिरिक्तम्। (४११) वउवलओ, विषरहितः भुजगः। (४१२) सिंहलओ, यंत्रं वस्त्रादेर्धूपस्य। (४१३) सोअणो मल्लः। (४१४) सिंदूरिआ राज्यम्। (४१५) सोवणं अन्तःपुरम्। (४१६) असंगअं प्रावरणम्। (४१७) उच्चंडं, शौर्येण क्रियते यच्चरितम्। (४१८) दंडवणं आज्यम्। (४१९)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उप्पिगरिआ हस्तोत्क्षेपः। (४२०) भंगोठणं व्रणितम्। (४२१) उप्पा, मण्यादेः मार्जनम्। (४२२) उप्फुलपोलिअं, त्वरा कौतुकेन। (४२३) अहिहरअं देवगृहम्। (४२४) संविड्डाणा आभिजात्यम्। (४२५) अगिला (४२६) हेला (४२७) उव्वत्तालं (यानी) अविच्छिन्नस्वररोदनम्। (४२८) अवसरिओ विरहः। (४२९) उप्पालओ रणरणकम्। (४३०) माला डाकिनी। (४३१) विड्डप्पो राहुः। (४३२) अब्भपिसाओ (४३३) गहकल्लोलो ऐसे ये (दो शब्द) अभ्रपिशाच और ग्रहकल्लोल (इन शब्दों) से होते हैं। (४३४) उत्तिरिविडिअं उपर्युपरिस्थानम्। (४३५) सणिगअं (४३६) विरणिअं (यानी) आर्द्रम्। (४३७) वण-पक्कसावओ शरभः। (४३८) विच्छेओ विलासः। (४३९) उस्सा गात्रः। (४४०) लसुअं तैलम्। (४४१) वाउत्तो विटः। (४४२) उप्पिणिरं शून्यम्। (४४३) डुब्भो (४४४) दमदंडो (यानी) भ्रमरः। (४४५) मुहिअं, यत् मृषा क्रियते। (४४६) आमेलो (४४७) आअल्लो (४४८) आलोलं (यानी) केशबन्धनम्। (४४९) वालप्पं पुच्छम्। (४५०) कइलवइल्लो स्वेच्छोत्थायी बलीवर्दः। (४५१) डंडरं ईर्ष्याकलहः। (४५२) कोचप्पं अलीकहितकरणम्। (४५३) पेट्टं (४५४) मज्झिमगंडं (यानी) उदरम्। (४५५) झंको तृणमनुष्यः। (४५६) खोहत्तं, आहतं पाणि-भ्यां जलम्। (४५७) अट्टक्को अनपराधः। (४५८) उरणि पशुः। (४५९) खरुण्गा, विषमा भूः। (४६०) खप्परो (४६१) खरडिओ (यानी) रूक्षः। (४६२) कुंभी (४६२ अ) पोट्टलिकं (यानी) सुवर्णादिकं अन्तर्निधाय बहिर्बद्धं कर्पटकखण्डम् (बाहर बांधा हुआ कपडेका टुकडा जिसके अंदर सुवर्ण, इत्यादि रखा है) ऐसा अर्थ। (४६३) गजगसद्दो मृगनिषेवरवः। (४६४) चुप्पो मेदुरः। (४६५) उज्झं अरम्यम्। (४६६) पारमरो रक्षः। (४६७) उत्तालो (४६८) वालिओ (४६९) णाओ (४७०) मड्डल्लो (४७१) वित्तई (४७२) पूणो (यानी) गर्वितः। (४७३) चुडुली उल्का। (४७४) महई पितृमन्दिरम्। (४७५) झंडुली

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(४७६) झंडली (४७७) हित्तं (४७८) मुरई (यानी) असती। (४७९) कुई (४८०) डेंटी (यानी) बलाका। (४८१) णीसारो (४८२) थलओ (यानी) मण्डपः। (४८३) पलं (४८४) मलो (४८५) णिवाओ (यानी) प्रस्वेदः। (४८६) मरो केशसंचयः। (४८७) चारवाओ ग्रीष्मवातः। (४८८) गिंडिली, ऐक्षवं दलम्। (४८९) इंदग्गिधूमं तुहिनम्। (४९०) पाडुंकी (४९१) रोहिआ (यानी) त्रणिशिबिका। (४९२) रोरली, कृष्णश्रावणचतुर्दशी। (४९३) भाअलो जात्यतुरगः। (४९४) वेडिओ (४९५) वहओ (यानी) मणिकारः। (४९६) रोप्पलो (४९७) पारावरो (यानी) वातायनम्। (४९८) तलपत्तं, योनिः वराङ्गम्। (४९९) छिच्छणओ असोढा। (५००) अणिभं मुखम्। (५०१) दिरिआ (५०२) जीविअमई (यानी) कामुकाकर्षिणी मृगी। (५०३) धम्मअं 'धम्मअं पुरुषं दुर्गापुरो हत्वासृजो बली', दुर्गापुरसे पुरुषको नष्ट कर किया जानेवाला रक्तबलि, ऐसा अर्थ। (५०४) मुग्गुओ (५०५) मुग्गुसो (५०६) वग्गोवओ (यानी) नकुलः। (५०७) दूसलं उद्वेगः। (५०८) चप्फलं मिथ्यावचः। (५०९) उज्जोगलं भटः। (५१०) घग्घरं, जघने वस्त्रविशेषः (घागरा)। (५११) घणवाहिओ इन्द्रः। (५१२) सेआलिआ दूर्वा। (५१३) राडी (५१४) वग्घसिअं (यानी) रणम्। (५१५) मुंडी नीरंगी। (५१६) अवकुम्माणिका (५१७) धमो (यानी) विलासः। (५१८) सिधुवणओ हताशः। (५१९) तोमरी लता। (५२०) वक्कड (५२१) वद्दलं (यानी) मेघतिमिरम्। (५२२) हरणं (५२३) महारअणं (यानी) वस्त्रम्। (५२४) आणक्को तिर्यक्। (५२५) भंडो, सुतासुतो दौहित्रः। (५२६) णिआणिको (५२७) णिंदणिआ (यानी) कुतृणलुञ्चनम् अर्थात् खेतमेंसे बुरा तृण दूर करना ऐसा अर्थ। (५२८) छेलिआ, अल्पपुष्पा स्रक्। (५२९) अक्कोडो (५३०) बंकडो (यानी) अजः (अर्थात्) छागः। (५३१) कुल्हो शृगालः। (५३२) सणिओ साक्षी। (५३३) पडअसाइमा (५३४) पसाइमा, (यानी) पत्रपुटी शबरमूर्धनि।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(५३५) अंबडो निष्ठुरः। (५३६) जवो (५३७) कालणो (५३८) तोलणो (यानी) पुमान्। (५३९) पल्सू सेवा। (५४०) राअल्लो (५४१) रल्ला (५४२) राला (यानी) प्रियंगवः। (५४३) वीलणी पिच्छिलम्। (५४४) खेआलुअं, हासा हासे सति, हँसना ऐसा अर्थ। (५४५) धारा रणमुखम्। (५४६) गेड्डा यवः। (५४७) यक्को प्रसञ्जनम्। (५४८) अइराणी (५४९) धुंधुमारा (५५०) एराणी (यानी) शक्रवल्लभा अर्थात् इन्द्राणी ऐसा अर्थ। (५५१) अवआरो लोकयात्रा (५५२) गोविओ अल्पजल्पनः। (५५३) तामरो सुन्दरः। (५५४) गोत्तण्हाणं, पित्रोः जलाञ्जलिः। (५५५) खट्टिको (५५६) पोलिओ (५५७) सोरि (यानी) सौनिकः। (५५८) पऊढं दीर्घमन्दिरम्। (५५९) सेआलो (५६०) कुंडिओ (५६१) सेट्ठी (यानी) ग्रामेशः। (५६२) चिरिआ कुटी। (५६३) पुअई (५६४) पुइओ (५६५) पाणो (५६६) वाणो (यानी) चाण्डालः। (५६७) इक्कुसी नीलाब्जम् अर्थात् नील कमल ऐसा अर्थ। (५६८) थसलो (५६९) थासो (५७०) घसलं (५७१) घुरिअं (यानी) पृथु। (५७२) पच्चूहो (५७३) णेसरो (यानी) सूर्यः। (५७४) गोहो ग्राम्यजनाग्रणीः। (५७५) अंगुत्थलं अंगुलीयकम्। (५७६) अहद्धो स्नेहरहितः। (५७७) वप्पिवअं (५७८) पल्लवाअं (यानी) क्षेत्रम्। (५७९) अज्झोलिआ, पुनः पुनः या दुह्यते। (५८०) खुड्डं (५८१) खुड्डिआ (यानी) स्वल्पकं रतम्। (५८२) चिरिक्का, चार्मणं वारिभाण्डम्। (५८३) डोबरुओ गुरुहारिकः। (५८४) पच्चुअं दीर्घम्। (५८५) पोइओ ज्योतिरिङ्गणः। (५८६) मत्तल्ली (५८७) मिलाओ (५८८) मड्डा (५८९) पिगाओ (५९०) दरमत्ता (५९१) अक्कसालो (यानी) बलात्कारः। (५९२) बलअणी वृतिः। (५९३) पाडिग्गहो (५९४) पोग्वग्गो (यानी) विश्राम। (५९५) णंदणो (५९६) परिअंभओ (यानी) कर्मकृत्। (५९७) अवज्झमो (५९८) दोहासल (यानी) कटिः। (५९९) पाडअज्झो,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पतिगृहात् नेता पितृगृहं वधूम्। (६००) झुत्ती रजस्वला। (६०१) तग्गं सूत्रम्। (६०२) कुंडं हव्यधमः। (६०३) हुलुविआ प्रसवपरा। (६०४) चिरओ कुल्या अर्थात् छोटी कृत्रिम नदी। (६०५) हेआलं अहिभोगाहस्तेन विनिवारणम्। (६०६) गड्डणं निर्जलस्थानम्। (६०७) चलुंकी कर्कटी। (६०८) कली शात्रवः। (६०९) अमलो ध्वस्ततेजाः। (६१०) ववडओ द्विजः अर्थात् ब्राह्मण। (६११) रोलो दरिद्रः। (६१२) वेआलं अन्धकारः। (६१३) हरं तृणम्। (६१४) वल्लकं भीषणम्। (६१५) रिंग्गो प्रवेशः। (६१६) वअलो वटः। (६१७) लल्लं स्पृहान्वितम्। (६१८) पट्टं अंशुकम्। (६१९) सेओ विनायकः। (६२०) लसअं विटपिक्षीरम्। (६२१) पडिहत्थो प्रतिक्रिया। (६२२) कारा रेखा। (६२३) सुई बुद्धिः। (६२४) काहिलो वत्सपालकः। (६२५) मणिणाअइरो वार्धिः। (६२६) पडीरो चोरसंहतिः। (६२७) पेलवं मार्दवम्। (६२८) हूमो लोहकारः। (६२९) मुहत्थडी, मुखेन पतनम्। (६३०) कंठो सूकरः। (६३१) माअली मृदुः। (६३२) लिञ्जो यज्ञः। (६३३) कंठमल्लं यानपात्रम्। (६३४) मुरारुणी चण्डाली। (६३५) मरुलो भूतः। (६३६) ओसत्थो परिरम्भणम्। (६३७) पाडळं अब्जम्। (६३८) परिआली भोजनभाण्डम्। (६३९) आदओ आदर्शः। (६४०) वासुली (६४१) संफाली (यानी) पंक्तिः। (६४२) गोचअं प्रतोदः। (६४३) कोसिओ कुविन्दः। (६४४) कंडपडवं तिरस्करिणी। (६४५) अवऊढं व्यलीकम्। (६४६) अंगवलिज्जं तनुचलनम्। (६४७) णेव्वं तीव्रम्। (६४८) पहम्मो देवखातम्। (६४९) कंठिओ द्वाःस्थः। (६५०) किंजुक्खो शिरीषः। (६५१) तहल्ली अपसृतिः। (६५२) हत्थरं साहाय्यम्। (६५३) गुप्पी इच्छा। (६५४) गोंजलं ग्रैवेयम्। (६५५) णढरी क्षुरिका।—(६५६) संकटम् आरंदरं। (६५७) अग्निविशेषः पप्फाडो। (६५८) बलम् थोहं। (६५९) गोमयखण्डम् कउलं। (६६०) गण्डः गंजं। (६६१) प्रकामम्

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अणुअत्थं। (६६२) वामकर: पड्डो (६६३) डव्वो (६६४) डिवओ।। (६६५) शशी अमअणिग्गमो। (६६६) गृध्र: सरवरो। (६६७) सुवर्णकार: झरओ। (६६८) पथिक: तिमिच्छाहो। (६६९) प्रतिहत-गमनम् खवडिअं। (६७०) आज्ञा मप्पा। (६७१) निरन्तरम् तित्तिरिओ। (६७२) शूर्पादिजीर्णभाण्डम् कडंतरं। (६७३) यन्त्रवाहक: भूयो। (६७४) दर्पोद्धुर: सराहो। (६७५) निद्रालु: सोज्झिओ। (६७६) पताका हुडुमा। (६७७) पश्चात् मग्गो (६७८) ओरिल्लं। (६७९) य: सममुषित: एक्कसाहिल्लो। (६८०) यत्र एकं पदं उत्क्षिप्य शिशु: क्रीडति, हिंबिआ। (६८१) या वध्वा उपरि परिणीयते, वहुहाडिणी। (६८२) कुमारी चुंदिणी। (६८३) धर्म: पिहुरी। (६८४) यौवनोत्कट: अगंडिगेहो। (६८५) सुरतम् तत्तुडिल्लं। (६८६) पतद्ग्रह: णिलापा (६८७) णिल्लंको। (६८८) क्षेत्रजागर: छेत्तसोवर्णा। (६८९) वप्पओ (६९०) वप्पीहो, चातक और कुमार इन अर्थोंमें। (६९१) डवखेरो (६९२) सइसिलिप्पो, युवन् और तरुण इन अर्थोंमें। (६९३) कहेडो (६९४) महालक्खो (६९५) वोद्दही (६९६) पुअंडो (६९७) पेंडओ (६९८) पुआई, तरुण अर्थमें। (६९९) आमल्लअं (७००) बब्बरी, धम्मिल्लरचना अर्थमें। (७०१) सिंदीरं नूपुर अर्थमें। (७०२) उंडलं मञ्च अर्थमें। (७०३) वडुइओ (७०४) कुट्टारो, चर्मकार अर्थमें। (७०५) चुट्टी (७०६) वासी, शिखा अर्थमें। (७०७) कंपरं (७०८) कोत्थरं, विज्ञान अर्थमें। (७०९) णिक्खो, चोर और सुवर्ण इन अर्थोंमें। (७१०) पडिओ, बंदिन् और आचार्य अर्थोंमें। (७११) कमढो, दधिकलशी और पिठर अर्थोंमें। (७१२) अग्गडुअं, उलूखल और विसंस्थुल अर्थोंमें। (७१३) गोला, गो और नदी अर्थोंमें। (७१४) अक्खणवेलं, निधुवन और प्रदोष अर्थोंमें। (७१५) णिज्जाओ, उपकार और पुष्पप्रकार अर्थोंमें। (७१६) काहल्ली, व्यकरण और भ्राष्ट्र अर्थोंमें (७१७) करंडो, शार्दूल और वायस अर्थोंमें। (७१८) एक्कमुहो, निर्धर्म और अधन अर्थोंमें। (७१९) अंतल्ली, उदर और ऊर्मिमध्य अर्थोंमें। (७२०) उअआरो, ग्राम

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

और संघ अर्थोंमें । (७२१) महल्लो, मुखर, राशि और विस्तीर्ण अर्थोंमें । (७२२) कव्वालं, कर्मस्थान और वेश्मन् अर्थोंमें । (७२३) वेल्लरं, विलास और लता अर्थोंमें । (७२४) आअट्टिआ, परायत्ता और नववधू अर्थोंमें । (७२५) सत्तप्पं, आर्द्र, अल्प, चाप, प्रचुर अर्थोंमें । (७२६) करोडो, काक, नालिकेर और वृष अर्थोंमें । (७२७) रोहं (७२८) रोडी, इच्छा और मति अर्थोंमें । (७२९) काडिवअं, शरीर और अम्बुद अर्थोंमें । (७३०) केंजू, असती रज्जू और कन्द अर्थोंमें । (७३१) गिआरं, रिपु, ऋजु और प्रकट अर्थोंमें । (७३२) कुरुलो (७३३) कुरुढो, ये दोनों भी अनघ और निपुण अर्थोंमें । (७३४) आअं, अतिदीर्घ, विषम, मुसल और कालायस अर्थोंमें । (७३५) किण्हं, सित अंशुक और सूक्ष्म अर्थोंमें । (७३६) लाइअ, अजिरार्ध, भूषण और गृहीत अर्थोंमें । (७३७) कालिआ, ऋणवृद्धि, काय और अम्बुद अर्थोंमें । (७३८) कडअल्ली, कण्ड और कर्णिका अर्थोंमें । (७३९) उद्दाणो, कुरर, सगर्व और प्रतिशब्द अर्थोंमें । (७४०) ओलअणं, दयितीभूता और नववधू अर्थोंमें (७४१) खव्वो, वामहस्त और गर्दभ अर्थोंमें । (७४२) डोंगी, रथ्या और स्थासक अर्थोंमें । (७४३) चेंडा (७४४) सीहली, शिखा और नवमालिका अर्थोंमें । (७४५) उद्दो, ककुद्, जलपुंस् और दान्तपृष्ठ अर्थोंमें । (७४६) कोट्टी, स्खलना और दोहविषमा अर्थोंमें । (७४७) तमणी, लता और व्यधिकरण अर्थोंमें । (७४८) सत्ती, बंधन, वचन, इच्छा और शिरःस्रज् अर्थोंमें । (७४९) उप्पिञ्जलं, रत, काक और रजस् अर्थोंमें । (७५०) णड्डुलं, विनत और दुर्दिन अर्थोंमें । (७५१) उच्चाडणं, उपवन और शीत अर्थोंमें । (७५२) दावो, दास और गर्दभ अर्थोंमें । (७५३) बोंदी, रूप और वचन अर्थोंमें । (७५४) उग्मल्लो, सान्द्र और भूपति अर्थोंमें । (७५५) बोडो, धार्मिक और यतिन् अर्थोंमें । (७५६) उच्चंडिगो, अधिक्रमान और निःसीमन् अर्थोंमें । (७५७) इल्ली

त्रि.वि....२०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वर्षत्राण, व्याघ्र और सिंह अर्थोंमें। (७५८) पत्तणं, बाणफल और शरपुंख अर्थोंमें (७५९.) अकंडतलिमो, अपरिणीत और निष्प्रेमन् अर्थोंमें। (७६०) दअं, उदक और शोक अर्थोंमें। (७६१) घोलिअं, शिलातल और हठात्कृत अर्थोंमें। (७६२) जवणं, हय और शशिवदन अर्थोंमें। (७६३) खंजणो, खञ्जरीट और कर्दम अर्थोंमें। (७६४) तलिमो, गृहोर्ध्वभूमि, वासगृह, कुट्टिम, भ्राष्ट्र और शय्या अर्थोंमें। (७६५) झसो, गम्भीर, तटस्थ, अयशस् और दीर्घ अर्थोंमें। (७६६) वप्पो, भूतगृहीत और बलाधिक अर्थोंमें। (७६७) वल्लरो, मरु, महिष, तरुण, क्षेत्र और अरण्य अर्थोंमें। (७६८) मरालो, सुंदर, अलस और मसृण अर्थोंमें। (७६९) मम्मक्को, गर्व और उत्कण्ठा अर्थोंमें। (७७०) विसिट्ठो, विरत और विसंस्थुल अर्थोंमें। (७७१) बलवट्टी, व्यायामसहाया और सखी अर्थोंमें। (७७२) सुज्झसो, रजक और नापित अर्थोंमें। (७७३) वेड्ढो, तनु, शिथिल, आविद्ध, ऊर्ध्वीकृत और विसंस्थुल अर्थोंमें। (७७४) मलइओ, हत और तीक्ष्ण अर्थोंमें। (७७५) वडप्पं, लतागृह, सततपवन और हिमवर्ष अर्थोंमें। (७७६) राहो, प्रिय, शोभित, मलिन, सनाथ और विसंस्थुल अर्थोंमें। (७७७) वंठो, निःस्नेह, अकृतविवाह और भृत्य अर्थोंमें। (७७८) मंथर, कुटिल, बहु और कुसुम्भ अर्थोंमें। (७७९) लअणं, तनु और कोमल अर्थोंमें। (७८०) मम्मणं, अव्यक्तवचस् और रोष अर्थोंमें। (७८१) तुण्हिक्कं, मृदु और निश्चल अर्थोंमें। (७८२) ठेणो, स्थासक, चर और चोर अर्थोंमें। (७८३) तुंबिल्लि, मधुपटल और उलूखल अर्थोंमें। (७८४) पत्थरी, शयन और संहति अर्थोंमें। (७८५) णिव्विट्ठं, रत्यारभट. और समुचित अर्थोंमें (७८६) दअरो, पिशाच और ईर्ष्या अर्थोंमें। (७८७) झसुरं, ताम्बूल और अर्थ अर्थोंमें। (७८८) पिंजरो (७८९) पाडलो, हंस और वृष अर्थोंमें। (७९०) बिंबोवणअं, क्षोभ, उपधान और विकार अर्थोंमें। (७९१) कुल्लो, असमर्थ, ग्रीवा या

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विच्छिन्नपुच्छ अर्थोंमें। (७९२) चुंणुगिआ, मुष्टिद्यूत, यूका और समर्थ अर्थोंमें। (७९३) टंको, खड्ग, छिन्न, जंघापात, तट और खनित्र अर्थोंमें। (७९४) कोणो, गर्वित और निर्दय अर्थोंमें। (७९५) णेलच्छो, षण्ढ और पण्डित अर्थोंमें। (७९६) खुलुखी, मिथ्या और अघटमान अर्थोंमें। (७९७) अण्णओ, धूर्त, युवन और देवर अर्थोंमें। (७९८) दूणावेढं, अशक्य और तडाग अर्थोंमें। (७९९) अरलो (८००) अरल्लाओ, चिरिका और मशक अर्थोंमें। (८०१) अच्छं, अत्यर्थ और शीघ्र अर्थोंमें। (८०२) अल्लिआ, पितृष्वसा और कनिष्ठ सगे बंधूकी वधू अर्थोंमें। (८०३) पक्कणं, अतिशोभावत, भग्न और श्लक्ष्ण अर्थोंमें। (८०४) पब्भारो, संघात और गिरिगुहा अर्थोंमें। (८०५) पव्वज्जो, काण्ड, नख और शिशुमृग अर्थोंमें। (८०६) पासण्णो, वेश्मद्वार और तिरश्चीन अर्थोंमें। (८०७) विप्पओ, उन्मत्त और चीरी अर्थोंमें। (८०८) कोप्परो, वर्णसंकर और जालक अर्थोंमें। (८०९) केड्डो, व्यापन, फेन, श्याल और दुर्बल अर्थोंमें। (८१०) ओहट्टं, नीवी और अवगुंठन अर्थोंमें, (८११) ओहित्थं, रभस और विषाद अर्थोंमें। (८१२) तोल्लो (८१३) तड्डो, पिशाच और शलभ अर्थोंमें। (८१४) डसरी, उष्णजल और स्थाली अर्थोंमें। (८१५) णिउक्कणो, वायस और मूक अर्थोंमें। (८१६) पइरेक्कं, एकान्त पृथक् इस अर्थमें और शून्य अर्थमें। (८१७) तुरी, उपकरण, तूलिका और शून्य अर्थोंमें। (८१८) वोक्कअं, अनिमित्त और तात्पर्यार्थि अर्थोंमें। (८१९) पसुलो, काकोल और जार अर्थोंमें। (८२०) कित्तडी, पार्श्वद्वार और पश्चिमाङ्गण अर्थोंमें। (८२१) छाआ भ्रमरी। (८२२) सिप्पं, तिलक, और सरके भूषणविशेष अर्थोंमें। (८२३) णलुअं, वृतिविवर, कर्दमित, निमित्त और प्रयोजन अर्थोंमें। (८२४) इच्छाउत्तो, योगिनीसुत और ईश्वर अर्थोंमें। (८२५) पेहणअं, उत्सव और भोज्य अर्थोंमें। (८२६) चारो, इच्छा और बंधन अर्थोंमें (८२७)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जच्चंदणं, अगुरु और कुंकुम अर्थोंमें। (८२८) डिखा, आतंक और त्रास अर्थोंमें। (८२९) दलिअं, अंगुलि, दारु और कूणिताक्ष अर्थोंमें। (८३०) चिप्पडी (८३१) विप्पत्ती, व्रत और उत्सवविशेष अर्थोंमें। (८३२) उंचाइइओ हुंकृत और गर्जन अर्थोंमें। (८३३) पच्चलं, असहन और समर्थ अर्थोंमें। (८३४) साहुली, वस्त्र, शाखा भ्रू, सखी, रुद्दश, और बाहु अर्थोंमें। (८३५) लुंबी, लता और स्तबक अर्थोंमें। (८३६) रंजणं, घट और कुण्ड अर्थोंमें। (८३७) धुड्की, मुखसंभेद और मौन अर्थोंमें। (८३८) छुड्इद्धिआ, द्वेष्या और अस्पृश्या अर्थोंमें। (८३९) मरी, प्रशस्ताकृति और दीर्घ अर्थोंमें। (८४०) गोरो, ग्रीवा, अक्षि और सीता अर्थोंमें। (८४१) भमत्तो, वह्नि और दीप्त अर्थोंमें। (८४२) भेली, चेटी और आज्ञा अर्थोंमें। (८४३) कणगोत्रिआ, चञ्चु और अवतंस अर्थोंमें। (८४४) अल्लत्थी, अंगद और जलार्द्रा अर्थोंमें। (८४५) अमारो, नदीमध्यद्वीप और कमठ अर्थोंमें। (८४६) उप्फेसो, भीति और सद्भाव अर्थोंमें॥ इत्यादि।

अब — (१) आडम्बरो पटहः। (२) ओन्दुरो मूषिकः। (३) वामलूरो वल्मीकम्। (४) किरी वराहः। (५) लहरी तरंगः प्रवाहः वा। (६) तल्लं कासारः। (७) महाबिलं गगनम्। (८) पाढा शोभा। (९) खेडं ग्रामस्थानम्। (१०) महानडो रुद्रः। (११) पुडइणी नलिनी। (१२) जयणं भयसंनहनम्। (१३) पाडलं कमलम्। (१४) कमडो भिक्षापात्रम्। (१५) कल्लं कल्यम्। (१६) गन्धुत्तमा सुरा, इत्यादि शब्द तत्सम / तद्भव होनेके कारण प्रयोगमें प्राप्त हो(सक)ते हैं।

(सूत्रमेंसे) सिद्धाः पद मंगलार्थक है॥ ७२॥

— तृतीय अध्याय चतुर्थ पाद समाप्त —

———

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अक्षरानुक्रमेण

सूत्रपाठः

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
अइ तु वैरादौ	१.२.१०२	३९
अक्ष्यर्थकुलाद्या वा	१.१.'५१	१७
अच्चुक्कवोक्कौ विज्ञापेः	२.४.१११	१७७
अचोऽच्चाम्	२.४.७१	१६९
अचोऽस्तयोऽखौ करवतपफा	३.३.२	२२५
अट्टः क्वथेः	३.१.६८	१९३
अडडल्लाः स्वार्थिक-	३.३.२९	२४१
अण णाइं नञर्थे	२.१.६१	११५
अत एवैच् से	२.४.७	१५२
अतिङि तुरः	२.४.१४९	१८१
अतो ङसेर्डुडोग्	३.२.२०	२१३
अतो डो विसर्गः	२.२.१२	१२२
अत्खुः परस्परस्य	३.३.५४	२५२
अत्थुसिंसहिस्से	२.२.७८	१३८
अथवा मनागहवइ-	३.३.४७	२५०
अदन्ताड्डा	३.३.३२	२४३
अदेल्लुक्यात्थोरतः	२.४.१५	१५४
अद्दुमे कदल्याम्	१.३.४३	५२
अधः क्वचित्	३.२.२	२१०
अनर्थका घइमादयः	३.३.५८	२६०
अनिदमेतदस्तु कियत्तदः-	२.२.६४	१३६
अनुक्तमन्यशब्दानुशासनवत्	१.१.२	४
अनुव्रजतेः पडिअग्गः	३.१.४६	१९०
अन्तरि च नाच्चि	१.१.२७	१०

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
अन्त्यस्य वचिमुचिरुदिश्रु-	२.४.४५	१६३
अन्त्यस्य हनखनोः	२.४.७५	१७०
अन्त्यहलोऽश्रदुदी	१.१.२५	१०
अन्यादिदेति मो णः	३.२.७	२११
अन्यादृशस्याण्णाइसावराइसौ	३.३.५५	२५३
अन्येषामादियुजि न	३.२.६६	२२४
अपतौ घरो गृहस्य	१.३.९६	६२
अपुण्णगाः क्तेन	३.१.१३२	२०४
अपेः पदात्	१.२.५	१९
अव्वो पश्चात्ताप-	२.१.४१	१११
अमः	२.२.२	११९
अमा तुमे तुए च	२.३.२	१४२
अम्महे हर्षे	३.२.१५	२१२
अम्हं मज्झं मज्झ-	२.३.२५	१४६
अम्हइं अम्हे जश्शसोः	३.४.४८	२८२
अम्ह मम म्ह्यसि	२.३.२४	१४६
अम्ह मम मज्झ-	२.३.२७	१४७
अम्हे अम्हो अम्ह	२.३.१७	१४५
अम्हे अम्हो अम्हाण	२.३.२६	१४६
अम्हो आश्चर्ये	२.१.४०	१११
अयि पे	२.१.७४	११७
अर उः	२.४.६६	१६८
अररी अरिज्जमाश्चर्ये	१.४.५६	७८
अरि वृषाम्	२.४.६७	१६८
अर्जेर्विढप्पः	२.४.८२	१७१
अर्थपरे तो युष्मदि	१.३.७३	५७

त्रि.वि....२१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
अपेरल्लिवपणाम-	२.४.९९	१७५
अर्हत्युच्च	१.४.१०५	९०
अलाहि निवारणे	२.१.६५	११६
अल् दुकूले	१.२.६७	३३
अल्लिअ उपसर्पेः	३.१.८६	१९६
अवहेडमेल्लणिलु-	३.१.४१	१८९
अविद्युति स्त्रियामाल्	१.१.२९	११
अव्ययम्	२.१.३१	११०
असावक्खोडः	३.१.११०	२०१
अस्टासोर्ङिप्	२.३.३९	१४९
अस्तोरखोरचः	१.३.७	४३
अस्मत्सुना अम्हि-	२.३.१५	१४४
अस्मदोऽम्हहहं	३.४.४४	२८१
अहह्वा सुना	२.२.९१	१४१
अहेस्यासीं तेनास्तेः	२.४.२४	१५७
आक्रामिरोहावोत्था-	३.१.९४	१९८
आघ्राक्षिस्नामाइग्घ-	३.१.६	१८५
आचार्ये चो हश्च	१.२.३५	२६
आत्सावामन्त्र्य-	३.२.२१	२१३
आदिः खुः	१.१.९	६
आदीतः सोश्च	२.२.३३	१२७
आदेः	१.२.२	१९
आदेर्जः	१.३.७४	५८
आदेस्तु	१.३.५३	५४
आद्वा मृदुत्वमृदुक-	१.२.७४	३४
आनन्तर्ये णवरिअ	२.१.४५	११२
आ भूतभविष्यति-	२.४.२७	१६४
आम अभ्युपगमे	२.१.३२	११०
आमन्त्रणे वेव्वे च	२.१.५७	११५
आमां ङेसिं	२.२.६५	१३६
आमो डाहङ्	३.२.२९	२१६
आमो हं	३.४.१०	२६६
आमो हं च	३.४.१५	२६८
आरः सुपि	२.२.४९	१३२
आरभ आढप्पः	२.४.८३	१७२
आरोलवमालौ-	३.१.५३	१९१
आर्यायां र्यः श्वश्र्वा-	१.२.२१	२४
आलीङोल्लिः	२.४.१२१	१७८
आश्लिष्टे लधौ	१.४.७१	८०
आसंघः संभावेः	२.४.९८	१७५
आसारे तु	१.२.२२	२४
आ सौ वा	२.२.५२	१३३
आहाहिलंघ-	३.१.१०७	२००
इं नपि	३.४.२४	२७३
इअदूणौ क्त्वः	३.२.१०	२१२
इआऔ म्मौ	२.२.९२	१४१
इकः पथो णस्य	२.१.४	९८
इचेचोर्दट्	३.२.२५	२१४
इजेराः पादपूरणे	२.१.७६	११८
इणममामा	२.२.५७	१३४
इतसेत्तहे	३.३.४८	२५०
इतेः	१.२.६	२०
इतौ तो वाक्यादौ	१.२.४५	२८
इत्तु सदादौ	१.२.३४	२६
इदतोऽति	३.३.३३	२४४
इदम आअः	३.४.३६	२७७
इदम इमः	२.२.७६	१३८
इदम इमु नपुंसके	३.४.३२	२७६
इदमेकतत्किंयत्तद्भ्य-	२.२.७३	१३८
इदानीमेव्वहि	३.३.३४	२४४
इदानीमो इदाणि	३.२.१२	२१२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
इदुतोर्दिः	२.२.२२	१२४
इदुदेत्स्वहेः	३.४.५७	२८५
इदुन्मातुः	१.२.८२	३६
इदेन्नूपुरे	१.२.७१	३४
इन्धौ	१.४.२९	७३
इन्मयटि	१.३.६९	५७
इय्यो यकः	३.२.५८	२२२
इरः शीलाद्यर्थस्य	२.१.२८	१०३
इल् कृपणे	१.२.६५	३४
इहरा इतरथा	२.१.७२	११७
इहह्चोर्हस्य	३.२.५	२११
इहेणं ङ्यमः	२.२.८०	१३९
ईअइज्जौ यक्	२.४.९१	१७३
ईतः काश्मीरह्रीत-	१.२.५०	३७
ईतः सेसार्	२.२.६८	१३७
ईदुद्व्यूढे	१.२.६८	३३
ईधैर्ये	१.२.१०८	४०
ईर् ह्रक्तृज्ञाम्	२.४.८१	१७१
ईल् खल्वाटस्त्यान-	१.२.३३	२६
ईल् ज्यायाम्	१.४.११०	९१
उअ पश्य	२.१.७५	११७
उ ओ उपेः	२.१.६८	११६
उच्चैर्नीचैसोरअः	१.२.१०७	४०
उत्करवल्लीद्वारमात्रचः	२.४.२५	२४
उत्क्षिपिरुत्थग्घो-	३.१.८०	१९५
उत्थल उच्चलेः	२.४.१४१	१८१
उत्सवऋक्षोत्तुक-	१.४.१९	१७१
उदूदोल् मृषि	१.२.८५	३६
उद्वतां त्वस्वमामि	२.२.४८	१३१
उद्दोतौ जश्शसः	३.४.२३	२७२
उद्ध ओरुम्मावसुऔ	३.१.३२	१८८
उद् वृषभे वुः	१.२.७८	३५
उन्नविच्चवुत्ता-	३.३.५३	२५२
उपरेः संव्याने ल्लल्	२.१.१९	१०१
उब्भावबेल्लणिसर-	३.१.९१	१९७
उभयाग्यसोरवहहेट्ठौ	१.३.९८	६३
उँ मिविटोः	३.४.५५	२८४
उम्होय्हतुय्हतुब्भ-	२.३.११	१४४
उ युधिष्ठिरे	१.२.४७	२९
उल् कण्डूयहनूम-	१.२.६९	३४
उल् जीर्णे	१.२.५३	३१
उल् ध्वनिगवयविष्वचो वः	१.२.१६	२३
उल्लसेरूसलो- सुंभारो-	३.१.१११	२०१
उवर्णस्यावः	२.४.६४	१६७
ऊ गर्हाविस्मयसूच-	२.१.५२	११४
ऊत्वे दुर्भगसुभगे वः	१.३.१८	४६
ऊर्ध्वे भो वा	१.४.५०	७७
ऊ स्तेने वा	१.२.९९	३९
ऋतुऋजुऋणऋषि-	१.२.९१	३७
ऋतुगे	१.२.८०	३५
ऋतोऽत्	१.२.७३	३४
ऋदन्ताड्डुः	२.२.४३	१३०
एं चेदुतः	३.४.१२	२६६
एकस्मिन् प्रथमादे-	२.४.३५	१६१
एकाच्चि श्वः स्वे	१.४.१०८	९१
एकाद्दः सिसिआ-	२.१.१५	१००
एक्कसरिअं झटिति संप्रति	२.१.७१	११७
एङः	१.१.२१	९
एच्च क्त्वातुंतव्य-	२.४.१९	१५६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
एण्हि एत्ताहे इदानीमः	१.३.१०३	६२
एतदेह एहोएहु–	३.४.३३	२७६
एतदो स्मावदितौ वा	२.२.८७	१४०
एत्तो एत्ताहे ङसि–	२.२.८५	१४०
एत् साज्झला त्रयो–	१.३.१	४२
एप्प्येप्पिण्वेव्येविणु	३.३.११	२३५
ए भिसि	३.४.४	२६३
एय्य एव भविष्यति	३.२.५७	२२२
एल्ल पीठनीडकीदृश–	१.२.५६	३१
एव जि	३.३.३५	२४४
एवमम	३.३.३६	२४५
एवमेव एमइ	३.३.३९	२४६
एवमेवदेवकुलप्रावा–	१.३.९४	६२
एवार्थे एव्व	३.२.१८	२१३
ऐच एङ्	१.२.१०१	३९
ओअग्गसमाणौ–	३.१.७७	१९५
ओअन्दोद्दालौ छिदे–	३.१.६६	१९३
ओइ अदसः	३.४.३५	२७७
ओत्सौ पुंसि तु	३.४.३	२६३
ओदाल्यां पङ्क्तौ	१.२.२९	२५
ओ पश्चात्तापसूचने	२.१.६०	११५
ओल्ल स्थूणातूण–	१.२.७२	३४
ओहरौसरावतरेस्तु	३.१.३६	१८९
ओहिरोंघौ निद्रः	३.१.३१	१८८
कः शक्तमुक्तदष्ट–	१.४.४	६९
कगटडतदप ≍ क ≍– पशोरुपर्यद्रे	१.४.७७	८१
कतिपये वहशौ	१.३.७२	५७
कथंयथा तथा डिह–	३.३.८	२२८
कथेर्वज्जरपज्जर–	३.१.६९	१९३

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
कदर्थिते खोर्वः	१.३.४४	५२
कदले तु	१.३.२	४२
कमवसलिसलोट्टाः– स्वपेः	३.१.८७	१९६
कम्पेर्विच्छोलः	२.४.१०६	१७६
कम्भवमुपभुजिः	३.१.५४	१९१
कर्णिकारे णो वा	१.४.८८	८६
कर्णिकारे फोः	१.३.३	४२
काणेक्षिते णिआरः	३.१.२१	१८७
कान्तस्यात उं स्वमोः	३.४.२१	२७३
कामुकयमुनाचामु–	१.३.११	४५
कार्षापणे	१.४.६२	७९
काश्मीरे म्भः	१.४.५३	७७
कासेरवाह्रासः	२.४.१५५	१८२
किं काइंकवणौ	३.३.५२	२५१
किं किं	२.२.८३	१३९
किंतद्भ्यां सास्	२.२.६६	१३६
किंयत्तदोऽस्वमामि	२.२.४०	१२९
कियत्तद्भ्यो ङस्	२.२.६७	१३६
किणो प्रश्ने	२.१.३७	१११
किमिदमश्च ङेत्तिअ–	२.१.३	९८
किमो डीस ङिणो	२.२.७१	१३७
किर इर हिर किलार्थे	२.१.३९	१११
किरिवेरे डः	१.३.७९	५९
किल किर	३.३.४१	२७७
कुतः कउ कहंतिहु	३.३.४६	२४९
कुत्रात्रे च डेत्थु	३.३.१५	२३२
कूरो गौणेषदः	१.३.१०२	६३
कूष्माण्ड्यां ण्डश्च–	१.४.६४	७९
कृगमोर्डेदुअः	३.२.११	२१२
कृञः कुणः	३.१.२०	१८६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ	सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
कृञो डीरः	३·२·५९	२२२	क्ष्मारत्नेऽन्तर-	१·४·९६	८८
कृदो हं	२·४·३२	१६०	क्ष्वेडकगे खलु	१·४·५	६९
कृपो णिजवहः	२·४·१२९	१७९	खउरपड्डुहौ क्षुभेः	३·१·८४	१९६
कृष्णे वर्णे	१·४·१०४	९०	खघथधभाम्	१·३·२०	४६
क्लृस इलिः	१·२·९२	३७	खस्य सर्वाङ्गात्	२·१·५	९९
केर इदमर्थे	२·१·८	९९	खादधावि लुक्	२·४·५८	१६६
केर् च वेः	२·४·१२३	१७८	खोः कन्दुकमरकत-	१·३·१५	४६
केवलस्य रिः	१·२·८९	३७	खोः करवीरे णः	१·३·८०	५९
केवलाअसार-	३·१·४४	१९०	खोऽपुष्पकुब्ज-	१·३·१२	४५
केवले णवर	२·१·४६	११२	गजडदवघझढधभां-	३·२·६५	२२३
कोक्कवोक्कौ व्याहुः	३·१·३४	१८८	गण्ठो ग्रन्थेः	२·४·१४७	१८१
कौक्षेयक उत्	१·२·९६	३८	गभीरग इत्	१·२·५१	३०
क्ते	२·४·१८	१५५	गमिरणुवज्जावज्ज-	३·१·९७	१९८
क्त्व इद्उदविअवि	३·३·१८	२३४	गमेस्त्वेप्येपि-	३·३·२१	२३६
क्त्वा तूनं	३·२·६०	२२२	गर्जेर्बुक्कः	३·१·५०	१९१
क्त्वासुपोस्तु सुणात्	१·१·४३	१४	गर्भिते	१·३·५१	५३
क्रियः कीणः	२·४·१२२	१७८	गवेषेर्घत्तगमेस-	३·१·१२१	२०२
क्रियेः कीसु	३·४·६२	२८७	गव्य उदाईत्	१·२·९८	३९
क्लीबे गुणगाः	१·१·५२	१७	गहिआद्याः	१·४·१२१	९३
क्लीबे स्वमेदमिण-	२·२·८२	१३९	गाहोऽवाद्गाहः	३·१·१३०	२०४
क्वचित्सुपि तदो णः	२·२·७४	१३८	गुण्ठ उद्धूलेः	२·४·११७	१७७
क्वचिद्भूतोऽपि	३·३·६	२२८	गुम्मगुम्मडौ मुहेः	३·१·१३१	२०४
क्वचिद्सादेः	३·३·३८	१४९	गुललञ्चाटौ	३·१·२६	१८७
क्विपः	२·४·४७	१३१	गुलुगुच्छोत्थङ्घो-	२·४·१००	१७५
क्षः	१·४·८	७०	गा गणपरः	१·१·१०	६
क्षः ऽ कः	३·२·३३	२१७	गोणाद्याः	१·३·१०५	६४
क्षण उत्सवे	१·४·२१	७२	गौणान्त्यस्य	१·२·८१	३६
क्षमायां कौ	१·४·२०	७२	गौरव आत्	१·२·१०५	४०
क्षिपिरड्डुक्खपरि-	३·१·७९	१९५	ग्मो मः	१·४·४७	७६
क्षुत ईत्	१·२·६०	३२	ग्रसंघिसः	३·१·११३	२०१
क्षुरे कम्मः	३·१·२८	१८७	ग्रहेर्घेप्पः	२·४·८७	१७२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
ग्रहेर्गिरुवारगेण्ह-	२·४·१५७	१८३
घञि वा	१·२·३८	२७
घटेर्गडः	३·१·५८	१९२
घुमलविरोलौ मन्थेः	३·१·६३	१९२
घूर्णेर्घुम्मपहल्लघोलघुलाः	२·४·१४२	१८१
घेत् तुंतव्यक्त्वासु-	२·४·४४	१६३
ङसः सुग् यत्त-	३·४·२९	२७५
ङसिर्हं	३·४·२७	२७४
ङसिसङ्घाश्च	२·३·४०	१५०
ङसिसो ह्वि	२·२·१७	१२३
ङसेः शशाशिशे	२·२·३४	१२८
ङसेः श्लुक्	२·२·१५	१२२
ङसेर्हेहु	३·४·७	२६४
ङसेस्तोतुशतः	३·२·५५	२२२
ङसो लुक्	३·४·१६	२६९
ङसोऽस्त्रियां सर्	२·२·१०	१२१
ङस्ङसिटां णोणो-	२·२·५९	१३४
ङस्ङसिना महुमज्झु	३·४·४७	२८१
ङसूङस्योर्हें	३·४·२१	२७१
ङिटाभ्यां तुमए तुइ-	२·३·६	१४२
ङि नेच्च	३·४·६	२६४
ङिपोऽस्	२·३·४१	१५०
ङिरिम्मा डाहे-	२·२·६९	१३७
ङीप्प्रत्यये	२·२·३८	१२९
ङेर्डे	२·२·१६	१२३
ङोमर	२·२·११	१२२
ङेस्त्थस्सिम्मि	२·२·६३	१३५
ङेसो ङम्.	२·३·३५	१४८
ङ्यम्टा पइ तइ	३·४·४०	२७९
ङ्वयौ कबन्धे	१·३·६२	५६

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
चः कृत्तिचत्वरे	१·४·१६	७१
चच्चारवेलवाबु-	३·१·८३	१९६
चण्डखण्डिते णा वा	१·२·१९	२३
चतुरो जश्शस्भ्यां-	२·३·२८	१४७
चतुरो वा	२·२·२३	१२४
चपेटाकेसरदेवर-	१·२·९३	३८
चर् नृतिमदिव्रजाम्	२·४·४९	१६४
चलयोरचलपुरे	१·४·११६	९२
चलस्फुटे	२·४·६२	१६७
चिष्ठस्तिष्ठस्य	३·२·४२	२१९
चोः खचितपिशाचयोः सल्लौ	१·३·२२	४७
छर् गमिष्यमासाम्	२·४·५०	१६५
छल् षट्शमीसुधा-	१·३·९०	६१
छस्य युष्मदादेर्डारः	३·३·२३	२३७
छस्यात्मनो णअः	२·१·६	९९
छागशृङ्खलकिराते-	१·३·१३	४५
छादेर्नूमनुमोम्वाल	२·४·११०	१७६
छायायां होऽकान्तौ	१·३·७०	५७
छिदिभिदो न्दः	२·४·५४	१६५
छिप्पः स्पृशतेः	२·४·८८	१७३
छोऽनादौ श्चः	३·२·३२	२१७
जणि जणु नं नइ	३·३·२४	२३७
जनो जाजम्मौ	२·४·१४०	१८०
जयद्यां यः	३·२·३९	२१९
जर् स्विदाम्	२·४·५३	१६५
जश्शसोरेइ	३·४·३४	२७६
जश्शस्ङसिङसां-	२·२·५५	१३३
जसा भे तुब्भे तुम्हे-	२·३·३	१४२
जाग्रेर्जग्गः	३·१·१५	१८६
जाणमुणौ ज्ञः	२·४·१३०	१७९

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
जुञ्जजुज्जजुप्पा युजेः	२.४.१३९	१८०
जुगुप्सतेर्दुगुच्छ-	३.१.१२७	२०३
जूरः क्रुधेः	३.१.७२	१९४
जृम्भेऽवेर्जम्भा	२.४.१३८	१८०
जो व्रजेः	३.२.३८	२१९
ज्जा ज्ञे	२.४.२१	१५६
ज्ञस्नोः	१.४.३७	७५
ज्ञो ञ्ञोऽविज्ञाने	१.४.८२	८३
ज्ञा णोऽभिज्ञादौ	१.२.१७	२३
ज्योर्दनुजवधराज-	१.३.९५	६२
झरझूरसुमरविम्हर-	३.१.१२	१८५
झरपज्झरपच्चड्ड-	२.४.१५४	१८२
झाडगास्तुदेश्याः सिद्धाः	३.४.७२	२९३
झिझौ न्ति न्ते इरे	२.४.४	१५१
झो जटिले	१.३.२३	४७
टल् त्रसरवृन्ततूबर-	१.३.३७	५१
टाङिङसाम्	२.२.३५	१२८
टा ने न तदिदमोः	३.२.५३	२२१
टापो डे	२.२.४५	१३०
टा भे ते दे ङि-	२.३.१	१४२
टाससि णः	२.२.५९	१३९
टि	३.४.५	२६३
टो डः	१.३.३१	४९
टो डणल्	२.२.१८	१२३
टो णा	२.२.२८	१२६
टो णा	२.२.५४	१३३
टो णानुस्वारौ	३.४.११	२६६
टोर्वडिशादौ लः	१.३.२४	४७
टो वात्मनो णिआ-	२.२.६१	१३५

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
टोस्तु तु	३.२.५१	२२१
ठः	१.३.२८	४८
ठढौ स्तब्धे	१.४.७२	८०
डं मेश्छात्ततः	२.४.३१	१६०
ढः सादपति	२.४.६०	१६६
डंसोऽताम्	३.३.१०	२३०
डच्छ दृशिगम-	२.४.२८	१५८
डल् फोर्मर्दितविच्छर्द-	१.४.३३	७४
डवो उतः	२.२.२५	१२५
डिक्को वृषे	३.१.५१	१९१
डिप्पणिड्डुहौ-	३.१.१०१	२०९
डीतः स्त्रियाम्	३.३.३१	२४३
डुण्डुल्लडुमडण्डल्ल-	३.१.९६	१९८
डुमअऽम औल भ्रुवः	२.१.३५	१०२
डेडाववश्यमः	३.३.२७	२४०
डेच्चओयुष्मदस्म- दोऽणः	२.१.१०	९९
डे तु किंशुके	१.१.४६	१५
डेत्तहे त्रलः	३.३.१३	२३२
डेत्तुलडेवडावियत्-	३.३.१२	२३१
डेरो ब्रह्मचर्यसौन्दर्यं च	१.४.[illegible]७	७८
डोच्छ वचिमुचि-	२.४.३०	१५९
डो तदस्तु	२.२.७२	१३७
डो दीपि	१.३.४६	५२
डोश्लुकौ तु संबुद्धेः	२.२.४२	१३०
ड्मक्मोः	१.४.४३	७६
ढंसोत्थंघौ विवृति-	३.१.६४	१९२
ढः कैटभशकटसटे	१.३.२७	४८
ढः ष्कवधिषर्धाम्	२.४.५५	१६५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूत्र	ङ्क	पृष्ठ
ढः पृथिव्यौषधनिशीथे	१.२.४७	५२
ढिराद्दते	१.२.८७	३७
ढोऽर्धर्द्धिश्रद्धा-	१.४.३४	७४
णं नन्वर्थे	३.२.१४	२१२
णइ चेअ चिअच्च-	२.१.३४	११०
णप्पणज्जौ ज्ञः	२.४.८४	१७२
णर्दिना रुदिते	१.३.४९	५३
णवि वैपरीत्ये	२.१.५५	११४
णशामः	२.२.४	११९
णिजदेद्दावावे	२.४.११	१५३
णिव्वलो मुचेर्दुःखे	३.१.४०	१८९
णिरवो बुभुक्ष्याक्षिप्योः	३.१.७८	१९५
णिलुञ्छो निष्पाताच्छोटे	३.१.२९	१८८
णिहूर ल्हरणिव्वर-	३.१.६७	१९३
णिवहणिरिगाम-	३.२.१०२	१९९
णिव्वोलो मन्युनौष्ठमालिन्ये	३.१.२५	१८७
णिहर आक्रन्देः	३.१.६५	१९३
णिहुवः कमेः	२.४.१०२	१७५
णे च शसा	२.३.१८	१४५
णेऽम्हे ह्यम्हाह्यम्हे—	२.३.२२	१४६
णोणाङ्ष्विदना जः	२.२.५६	१२३
णो वातिमुक्तके	१.३.५०	५३
णो शसश्च	२.२.२६	१२५
णो ह्रश्च न्हिजिपृक्षु-	२.४.७२	१६९
ण्ह ण्हं संख्याया—	२.३.३२	१४८
तं वाक्योपन्यासे	२.१.३३	११०
तक्षाद्याश्छोल्लादीन्	३.४.६४	२८८

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
तक्षेश्चञ्छरम्परम्फाः	३.१.१२२	२०२
तडिजेचः	३.२.५६	२२२
तडेराहोडविहोडौ	२.४.११८	१७७
तड्डुवविरल्लतडतड्डा-	३.१.७४	१९४
तणेणरेसिरेसितेहिं-	३.३.२५	२३९
ततस्तदा तो	३.३.५०	२५१
तदिदमेतदां सेसिं-	२.२.८४	१३९
तद्योगजाश्च	३.३.३०	२४२
तद्व्यत्ययश्च	३.४.७०	२९२
तन्व्याभे	१.४.१०६	९०
तल् तदोः	३.२.४६	२२०
तव्यस्य एव्वइएव्वउएव्वाः	३.३.१७	२३३
तस्मात्ता	३.२.१३	२१२
तस्सौ सोऽक्लीबे-	२.२.८९	१४०
ता ड्डा दशः	२.४.४६	१६४
तादर्थ्ये ङेस्तु	२.३.३६	१४९
ताम्राम्रयोर्म्बः	१.४.४९	७७
तावति खोर्वा	३.२.३	२१०
तिङः	१.१.२३	९
तिङात्थि	२.४.१०	१५३
तिजेरोसुक्कः	३.१.५२	१९१
तिण्णि त्रेः	२.३.२९	१४७
ति त्रेः	२.३.३२	१४८
तिर्यक् पदातिशुक्ते	१.३.१०४	६४
तीर्थे हयूल्	१.२.५४	३१
तु किमो डिह	३.४.२८	२७४
तुच्छे चच्छौ	१.३.३६	५०
तुज्झ तुम्र तउ—	३.४.४१	२८०
तुडेस्तुक्कणिलुक्को-	३.१.६२	१९२
तु ढो विषमे	१.३.६७	५६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
तु तुइ ङिप्ङसौ	२·३·८	१४३
तु निर्झरद्विधाकृञो-	१·२·४९	३०
तु बृहस्पतौ	१·२·८४	३६
तुब्भ तुहिंतो-	२·३·७	१४३
तुब्भोब्भोय्हतइ-	२·३·१२	१४४
तुम एवमणाण-	३·३·२०	२३५
तुमत्तुआणतूणाः क्त्वः	२·१·२९	१०३
तु मयूरचतुर्थ-	१·३·५	४२
तु मो ङ्वम्	३·३·३	२२७
तु मौ	२·३·१६	१५५
तुम्हहमारम्भ्यस्भ्याम्	३·४·४३	२८१
तुम्हाणतुब्भंतुब्भाण-	२·३·१३	१४४
तुम्हे तुम्हइ-	३·४·३८	२७८
तुलिडोल्योरोहाम-	२·४·९७	१७४
तुव तुम तुह तुब्भ	२·३·९	१४३
तुवरजअडौ त्वरेः	२·४·१४८	१८१
तु वसतिभरते	१·३·३९	५१
तु विकल्पे	१·१·१३	६
तु सक्खिणभवन्त-	१·१·२७	१२
तु समृद्ध्यादौ	१·२·१०	२१
तूरः शतृतिङि	२·४·१५०	१८२
तूर्यदशाहर्शौण्डीर्ये	१·४·६०	७८
तृनो णअल्	३·३·२२	२३६
तैलस्यानङ्कोलाड्डेल्लः	२·१·१२	१००
तैलादौ	१·४·९३	८७
तोऽचः	१·२·७	२०
तो ढो रब्धारब्धे तु	१·४·७३	८१
तोऽन्तर्येल्	१·२·२३	२४
त्योऽचैत्ये	१·४·१७	७१
त्रतसि च किमो क्कः	२·२·७५	१३८

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
त्रसेर्वज्जडरा	३·१·११९	२०२
त्वतलौ प्पणम्	३·३·१६	२३२
त्वत्सरोरुहमनोहर-	१·२·९५	३८
त्वथ्वद्वध्वां क्वचिच्चछजझाः	१·४·६५	७९
त्वदुत उपरि गुरुके	१·२·५७	३१
त्वनतः	२·४·७०	१६८
त्वनुत्साहावन्यथासवौं	३·३·५१	२५१
त्वभिमन्यौ जञौं	१·४·२५	७३
त्वभिमन्यौ मः	१·३·६५	५६
त्वपौं	१·२·३२	२६
त्वस्तेर्म्हंम्होम्हि	२·४·८	१५३
त्वस्य तु डिमात्तणौ	२·१·१३	१००
त्वाड्डाहो ङसः	३·२·२८	२१६
त्वादेः सः	२·१·२७	१०२
त्वार्द्रे उदोत्	१·२·२७	२५
त्विजाल्लिङः	२·४·३४	१६१
त्वेदितः	१·२·४१	२८
त्वोदवापोताः	२·१·६७	११६
थध्वमित्थाद्वचौ	२·४·५	१५२
थलस्पन्दे	१·४·१२	७०
थिप्पस्तृपः	२·४·१३५	१८०
थो धः	३·२·४	२१०
थ्यश्चत्सप्सामनिश्चले	१·४·२३	७२
दंशदहोः	१·३·३४	५०
दग्धविदग्धवृद्धि—	१·४·३५	७५
दम्भदरदर्भगर्दभ-	१·३·३५	५०
दर अर्धेऽल्पे वा	२·१·३६	१११
दर्वीकरनिवहौ—	१·४·१२०	९३
दस्तस्य शौरसेन्या-	३·२·१	२१०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
दहिरहिऊलालुक्खौ	३·१·१२४	२०३
दहेर्झर्	२·४·७७	१७०
दादेर्दैहो यादृक्—	३·३·९	२३०
दिक् प्रावृषि	१·१·३५	१२
दिर्दीर्घः	१·१·६	५
दिर्दोत्तोदु ङसौ	२·२·८	१२१
दिर्वा भ्यसि	२·२·१९	१२३
दिवा दिवे	३·३·४३	२४९
दिहौ मिथः से	१·१·१८	७
दिहौ सुपि	३·४·१	२६१
दीर्घान्न	१·४·८७	८५
दीसल् दृशेः	२·४·८९	१७३
दुःखे णिव्वरः	३·१·७०	१९३
दुरो रलुकि तु	१·२·६२	३२
दुस्तियर्यादशगे	३·२·४९	२२१
दुहलिहवहरुहां—	२·४·७६	१७०
दृप्तेऽरि त्ता	१·२·८८	३७
दृशिरोअक्खणि—	२·४·१५३	१८२
दृशर्दावदक्ख-	२·४·११३	१७७
दृश्यक्सक्विपि	१·२·९०	३७
दे संमुखीकरणे	२·१·५९	११५
दैत्यादौ	१·२·१०३	४०
दैवगेषु	१·४·९२	८७
दोण्णि दुवे बेण्णि द्वे	२·३·३०	१४७
दो त्तो तसः	२·१·१४	१००
दोऽदोनुत्साहोत्सन्न—	१·२·६१	३२
दो वे टादौ च	२·३·३१	१४७
दोहदप्रदीपशात—	१·३·४१	५१
द्यय्यर्यां जः	१·४·२४	७३
द्वितीयः फुः	१·१·११	६
द्विनीक्षुप्रवासिषु	१·२·४८	२९

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
द्विवचनस्य बहुवचनम्	२·३·३४	१४८
द्वे गमिगे	२·४·८०	१७१
द्वोर्द्वारे	१·४·८३	८४
धः पृथकि तु	१·३·२१	४७
धनुषि वा	१·१·३२	११
धवलोद्घटोर्दुमोग्गौ	२·४·९४	१७४
धातवोऽर्थान्तरेष्वपि	३·१·१३२	२०८
धात्रीद्रे रस्तु	१·४·८०	८३
धुवो धूञः	३·१·१७	१८६
धू कुत्सायाम्	२·१·५१	११३
धृष्टद्युम्ने	१·४·८९	८६
धैर्ये रः	१·४·५९	७८
धो दहः श्रदः	२·४·१३१	१७९
ध्मो धुमोदः	२·४·१२५	१७८
ध्यह्योर्झल्	१·४·२६	७३
ध्वजे वा	१·४·२८	७३
नः	१·३·५२	५३
न त्थः	२·२·८१	१३९
न प्रायो लुक्कादि—	३·२·६३	२२३
नमोद्विजरुदां वः	२·४·४८	१६४
न यण्	१·१·२०	८
नवमालिकाबदर—	१·३·४	४२
न वा तीर्थदुःख—	१·४·६३	७९
न वाव्ययोत्खातादौ	१·२·३७	२६
नवैकाद्वा	२·१·२०	१०१
नशिरवहरावसेह—	३·१·१०८	२००
नशेर्विप्पगाल—	२·४·१०३	१७५
नहि नाहि	३·३·३७	२४५
नाप स्त्रियाम्	३·२·५४	२२१
नातः शा	२·२·२६	१२८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
नात्पः	१·३·९	४४
नात्स्वप्ने	१·४·१०२	९०
नापिते ण्हः	१·३·५४	५४
नाम्नि डरम्	२·२·४४	१३०
नाव्यावः	१·२·१०४	४०
निकषस्फटिक–	१·३·१९	४६
निना लिहक्कणिलुक्क–	३·१·८	१८५
निरः पद्यतेर्वलः	३·१·७५	१९४
निरर्थकठाचिट्ठाः	२·४·१२७	१७९
निर्दुरि वा	१·१·२६	१०
निर्मो निम्मवनिम्माणौ	२·४·१२०	१७८
निवृपतोर्णिहोडो वा	२·४·९३	१७४
निश्चयनिर्धारणे वले	२·१·६२	११६
निषण्ण उमः	१·३·६	४३
निषेधेर्हक्कः	३·१·७१	१९४
निष्टम्भे निट्ठुहः	३·१·२२	१८७
निष्प्रती ओत्परी–	१·२·१	१९
निस्सुर्णिहरनिलढा–	३·१·१४	१८६
नीपापीडे मो वा	१·३·५७	५५
नीवीस्वप्ने वा	१·३·८५	६०
नृनपि ङसिङसोः	२·२·२७	१२५
नेः सदेर्मज्जः	२·४·१४५	१८१
नो नणोः पैशाच्याम्	३·२·४३	२१९
न्मः	१·४·४८	७७
न्यण्यज्ञञ्जां ञ्ञ्	३·२·३७	२१८
न्यण्यज्ञां ञ्ञ्	३·२·४४	२२०
न्यसेर्णिमणुमौ	२·४·१५६	१८३
पअल्लो लम्बनशैथिल्ययोः	३·१·२७	१८७
पक्वाङ्गारललाटे तु	१·२·१२	२२

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
पक्ष्मणि	१·४·६८	८०
पग्गिम प्राइम प्राउ–	३·३·४२	२४७
पञ्चदशदत्तपञ्चाशति णः	१·४·३६	७५
पट्टघोट्टडल्लपिज्जाः–	३·१·१६	१८६
पडिसापरिसामौ–	३·१·९२	१९७
प मि	१·२·३१	२५
परमेवशसोर्डडि	३·३·२८	२४०
परिवाडो घटेः	२·४·११२	७७
पर्यसः पलट्टपल्लोट्ट–	२·४·१५१	१८२
पर्यस्ते टश्च	१·४·४१	७६
पर्याप्तौ भुवः पहुच्चः	३·४·५९	२८६
पश्चात् पच्छइ	३·३·४९	२५१
पस्सगण्हौ दृशिग्रहोः	३·४·६३	२८८
पारावते तु फोः	१·२·२४	२४
पिठरे हस्तु रश्च ढः	१·३·२९	४८
पीते ले वा	१·३·४५	५२
पुंसि सुना त्वयं–	२·२·७७	१३८
पुंसो जसो डउडओ	२·२·२४	१२४
पुंसोऽजातेर्ङीर्वा	२·२·३७	१२८
पुंस्याणो राजवच्चानः	२·२·६०	१३४
पुच्छेः पुच्छेः	२·४·१४६	१८१
पुणरुत्तं कृतकरणे–	२·१·५३	११४
पुन्नागभागिनी–	१·३·१६	४६
पुरग्घवाग्घोडाहिरे·	३·१·१०६	२००
पूर्वमुपार वर्गस्य युजः	१·४·९४	८७
पूर्वस्य पुरवः	३·२·९	२११
पृथक्स्पष्टे णिव्वडः	३·१·२	१८४
पृष्ठेऽनुत्तरपदे	१·२·७७	३५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
पो वः	१.३.५५	५४
पौरगे चाउत्	१.२.१०६	४०
प्यायाः	२.१.७७	११८
प्रकाशेर्णुव्वः	२.४.१०१	१७५
प्रतिगेऽप्रतीपगे	१.३.३३	४९
प्रतीक्षेर्विहिरविर-	३.१.११५	२०१
प्रत्यागमागमाभ्या-	३.१.९८	१९९
प्रत्युत पच्चलिउ	३.३.३८	२४६
प्रत्यूषदिवसदश-	१.३.८८	६०
प्रत्येकमः पडिएक्कं पाडिक्कं	२.१.६९	११७
प्रथमशिथिलमेथि-	१.३.४८	५२
प्रथमे प्थोः	१.२.२०	२३
प्रदीपेः संधुक्काब्बुत्त-	३.१.८५	१९६
प्रभूते वः	१.३.५९	५५
प्रभौ हुप्पः	३.१.३	१८४
प्रमुक्तगे	१.४.९१	८६
प्रवृत्तसंदष्टमृत्ति-	१.४.३१	७४
प्रसुरुवेल्लुवअल्लौ	३.१.१०	१८५
प्रस्थापेः पेट्ठवपेड्डवौ	२.४.११४	१७७
प्राक् श्लाघाप्लक्षशार्ङ्गे-	१.४.९५	८८
प्रायोऽपभ्रंशेऽचोऽच्	३.३.१	२२५
प्रायो लिति न विकल्पः	१.१.१४	६
प्रायो लुक्कगचजतदपयवाम्	१.३.८	४३
प्लावेरोव्वाल-	२.४.१०८	१७६
फः पाटिपरिघ-	१.३.५६	५४
फक्कस्थक्कः	२.४.१३३	१८०
फस्य भहौ वा	१.३.६०	५५

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
फोः परस्परनमस्कारे	१.२.३०	२५
बडबडो विलपेः	३.१.८८	१९६
बन्धो न्धः	२.४.७८	१७०
बहुलम्	१.१.१७	७
बहौ न्तु ह मो	२.४.३६	१६१
बाष्पे ह्योऽश्रुणि	१.४.६१	७८
बाहिंबाहिरौ बहिसः	१.३.१०१	६३
बिन्दुल्	१.१.४०	१३
बिन्दोरन्ते	३.४.६६	२९०
बिसिन्यां भः	१.३.६३	५६
बो मः शबरे	१.३.८४	६०
बो वः	१.३.६१	५५
ब्रूञो बुवः	३.४.६१	२८७
भञ्जेर्वेमअमुसुमूर-	३.१.४९	१९०
भन्द ग्रहणार्थे	२.१.४७	११३
भन्दि विकल्पविषाद-	२.१.४८	११३
भवताम्	३.२.२३	२१४
भविष्यति स्सिः	३.२.२४	२१४
भविष्यति हिरादिः	२.४.२५	१५७
भवे डिल्लोल्लडौ	२.१.१७	१०१
भस्म विह्वले	१.४.५२	७७
भषेर्बुक्कः	३.१.१०५	२००
भाराक्रान्ते नमेर्निसुडः	३.१.९०	१९७
भावकर्मणि तु-	२.४.७३	१६९
भासेर्भिसः	३.१.११४	२०१
भिदिविदिच्छिदो-	२.४.२९	१५८
भियो भाबिहौ	२.४.१३६	१८०
भिसा तुम्हेहिं	३.४.३९	२७८
भिसा भेतुब्भेह्युब्भे-	२.३.१०	१४३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
भिसाम्हेहिं	३·४·४९	२८२
भिस्भ्यसाम्सुप्स्वीत्	२·२·५८	१३४
भिस्भ्यस्सुपि	२·२·२१	१२४
भीष्मे	१·४·४५	७६
भुजिरण्णभुञ्ज-	२·४·१३७	१८०
भुवो भः	३·२·६	२११
भूतार्थस्य सी हीअ ही	२·४·२२	१५६
भ्यसो हुं	३·४·८	२६५
भ्यौ बृहस्पतौ तु वहोः	१·३·७५	५८
भ्रंशेः पिड्डुपिट्ट-	३·१·१०४	२००
भ्रमत्रेट्टयोस्ताअलिण्टपरिआलौ	२·४·९५	१७४
भ्रमेराडः	२·४·१३	१५४
मं णे णं मि मिमं	२·३·१९	१४५
मः	३·२·२२	२१४
मइं ङ्यस्टा	३·४·४६	२८१
मइ मम मह मज्झ-	२·३·२३	१४६
मङ्लुगसंयुद्धेर्नपः	२·२·३०	१२६
मणे विमर्शे	२·१·६३	११६
मण्डेश्चिविडिक्क-	३·१·६३	१९२
मध्यमकतमे च	१·२·३४	२२
मध्ये चाजन्तात्	२·४·४०	१६२
मनयाम्	१·४·७९	८२
मनाको डअं च वा	२·१·२३	१०२
मन्तमणवन्तमा-	२·१·१	२२
मन्मथे	१·३·६६	५६
ममं णे मआइ	२·३·२१	१४५
मर्चेः	२·४·७४	१६९
मलिनधृतिपूर्व-	१·३·९९	६३
मस्जेराउड्डुणिउड्डु-	३·१·४१	१९०

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
महमहो गन्धे	३·१·११	१८५
माइं मार्थे	२·१·६४	११६
मागध्यां शौरसेनीवत्	३·२·२७	२१५
माणन्तौल् च लङः	२·४·४१	१६३
मातुरा अरा	२·२·५०	१३२
मा मं	३·३·४५	२४९
मि मइ ममाइ	२·३·२०	१४५
मिरायां लित्	१·२·४२	२८
मिर्मिविटौ	२·४·३	१५१
मिवपित्र विव विअ	२·१·३८	१११
मिश्रालिअस्	२·१·२१	१०२
मिश्रेर्मीसालमेलवौ	२·४·१०९	१७६
मीलेः प्रादेर्द्वे तु	२·४·६१	१६७
मुकुलादौ	१·२·५८	३२
मुधा मोरउल्ला	२·१·७३	११७
मूषिकविभीतक-	१·२·४३	२८
मृक्षेश्चोप्पडः	३·१·११७	२०२
मृदूनातेर्मलपरिहट्ट-	२·४·१४२	१८२
मोऽचि वा	१·१·३९	१३
मो भे वअं जसा	२·३·१६	१४५
मो म मु मस्महिङ्	२·४·६	१५२
मोममुश्चिङ्च	२·४·१७	१५५
म्लैर्वापव्वाऔ	३·१·१९	१८६
म्हा ङसेः	२·२·७०	१३७
यः पो हृदये	३·२·५२	२२१
यत्तत्सम्यग्विष्वक्	१·१·३८	१३
यत्तदोर्डेत्तु	३·३·१४	२३२
यत्तद् धुं त्रुं स्वमोः	३·४·३१	२७५
यश्रुतिरः	१·३·१०	४४
यष्ट्यां लल्	१·३·७१	५७
यापेर्जवः	२·४·११५	१७७

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
यावत्तावत्युंमहिं-	३.३.११	२३०
युधबुधगृधक्रुध-	२.४.५२	१६१
युष्मत्स्तुना तुवं तुं-	२.३.१	१४२
यो जतीयानीयोत्त-	१.३.६८	५६
योरेङ्	२.४.६१	१६७
रः सृजि	२.४.५९	१६६
रचेर्विडविड्डाव-	३.१.४३	१९०
रभिराङ्गो रम्भडवौ	३.१.८९	१९७
रलोर्हरिताले	१.४.११९	९३
रल् पापर्द्धौ	१.३.५८	५५
रल् सतत्यादौ	१.३.४२	५१
रस्तिन्त्तिरौ	१.२.४४	२९
राजपराड्डिक्कडक्कौ	२.१.९	९९
राजेः सरेह-	३.१.५७	१९१
राज्ञः	२.२.५३	१३३
राज्ञो ज्ञो वा चिञ्	३.२.४	२२०
रात्रौ	१.४.८४	८४
रा वेर्लिंयः	३.१.७	१८१
रावो रञ्जयतेः	२.४.९६	१७४
रितो द्वित्वल्	१.४.८१	८४
रिहारिग्गो प्रविशेः	३.१.९९	१९९
रुध उपसमनोः	२.४.७२	१७१
रुधो न्धम्भौ	२.४.५१	१६५
रुवो रुञ्जरुण्टौ	३.१.३३	१८८
रुषगोऽन्त्रो रिः	१.४.६८	१६८
रो डा पर्याणे	१.३.७६	५८
रो दीर्घात्	२.१.२४	१०२
रो भ्रुकुटिपुरुषयो-	१.२.५९	३२
रोमन्थेरोग्गाल-	२.४.१०७	१७६
रो रा	१.१.३०	११
रो लस्तु चूलिका-	३.२.६४	२२३

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
रो लुकमधः	३.३.५	२२७
रोम्माणोत्तुमलुह-	३.१.४८	१९०
रो ह्रश्चोत्साहे	१.४.३९	७५
र्तस्याधूर्तादौ टः	१.४.३०	७३
र्थे डेल्	२.२.८६	१४०
र्यः सौकुमार्यपर्य-	१.४.५५	७८
र्यस्नष्टां रिअसिन-	३.२.५०	२२१
र्यों य्यः	३.२.८	२११
र्शर्षतप्तवज्रेष्वित्	१.४.९८	८८
र्सं	२.४.३३	१६०
लः पलितनिम्ब-	१.३.४०	५१
लक्षणे जेण तेण	२.१.६६	११६
लघुके लहोः	१.४.११८	९२
लज्जेर्जीहः	३.१.५६	१९१
लटस्तिप्ताविजेच्	२.४.१	१५१
लटो हिं वा झञ्योः	३.४.५१	२८३
लड्लटोश्च जर्जारौ	२.४.३९	१६२
लनोरालाने	१.४.११२	९२
लरङ्कोठे	१.३.२६	४८
ललाटे डलोः	१.४.११४	९२
लल् डोऽनुडुगे	१.३.३०	४८
लवरामधश्च	१.४.७८	८२
लादक्लीबेषु	१.४.१०१	८९
लिङ्गमतन्त्रम्	३.४.६८	२९०
लिम्पो लिपः	२.४.१४३	१८१
लुक् क्यङोर्यस्य तु	२.३.४२	१५०
लुक् पादपीठपाद-	१.३.९२	६१
लुगव्ययत्यदाद्या-	१.२.३	१९
लुगाविल् भाव-	२.४.१४	१५४
लुगिज्जहाज्जस्विज्जेऽतः	२.४.३८	१६१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
लुङ् मांसादौ	१.१.४४	१४
लुभेः संभावः	३.१.९२	१९७
लो जठर वठर—	१.३.७७	५८
लोपः	१.१.२४	९
लो ललाटे च	१.३.८१	५९
लो ळः	३.२.४८	२२१
लो वार्द्रे	१.४.५४	७७
लो वा विद्युत्पत्र—	२.१.२६	१०२
लोहललाङ्गल—	१.३.८२	५९
ल्हुक्तः कृत्वसुचः	२.१.१६	१००
वचेरुञ्चः	२.४.९०	१७३
वञ्चेर्वेहववेलव—	३.१.४७	१९०
वणे निश्चयानुकम्प्यविकल्पे	२.१.४३	११२
वतुपो डित्तिअ—	२.१.२	९८
वधाड्डाइ च	२.३.३७	१४९
वरइत्तगारत्नाद्यैः	२.१.३०	१०३
वर्गेऽन्त्यः	१.१.४७	१५
वर्ततेः	२.१.११	९९
वल आरोपे	२.४.१०४	१७६
वलग्गचडमारुहेः	३.१.१२८	२०३
वलेर्वम्फः	३.१.१०३	१९९
वह्निलिङ्गाः शीघ्रादीनाम्	३.३.५६	२५३
वा छद्मपद्ममूर्ख-	१.४.१०९	९१
वात्मभस्मान्त पः	१.४.४२	७६
वा न्तन्ध्रौ मन्यु—	१.४.३२	७४
वा पर्यन्ते	१.४.५८	७८
वा पानीयगे	१.२.५२	३०
वा पुआख्याद्याः	१.२.१०९	४१
वा भ्मो म्हज्झौ	२.३.१४	१४४
वा मधूके	१.२.७०	३४
वा रक्ते गः	१.४.२	६९
वाराणसीकरेण्वां-	१.४.११३	९२
वा लट्लोट्छतृषु	२.४.२०	१५६
वालाव्वरण्ये	१.२.४	१९
वा सख्या मामि—	२.१.५८	११५
वा से	१.४.९०	८६
वाहित्पो व्याहुः	२.४.८६	१७२
विंशतिषु त्या श्लोपश्च	१.१.४८	१६
विकसेः कोआस-	३.१.१२५	२०३
विकोशेः पक्खोडः	२.४.११६	१७७
विडवमार्जेः	३.१.५५	१९१
विपदापत्संपदि द इ	३.२.७	२२८
विरणडो गुपेः	३.१.८२	१९५
विरेचेरोलुण्डोल्लुण्डप—	२.४.१०५	१७६
विश्रमेणव्वा	३.१.९५	१९८
विसंस्थुलास्थ्यघनार्थे	१.४.१५	७१
विसट्टो दलेः	३.१.११८	२०२
विसूरश्च खिदेः	३.१.७३	१९४
विस्मरः पम्हस-	२.४.१२८	१७९
विहीनहीने वा	१.२.५५	३१
वीप्सार्थात्तदचि-	२.२.१	११९
वृश्च रुर्वृक्षे	१.४.७	७०
वृन्त ण्टेङ्	१.२.८६	३७
वृन्दारकनिवृत्तयोः	१.२.७९	३५
वृष्टिपृथङ्मृदङ्ग—	१.२.८३	३६
वेअडः खचेः	३.१.२९	१८९
वेङ्गुदशिथिलयोः	१.२.४६	२९
वेतस इति तोः	१.३.३२	४९
वेपेरायम्बायज्झौ	३.१.८१	१९५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
वेव्वे विषादभयवारणे	२.१.५६	११४
वेष्टेः	२.४.५६	१६६
वैकादौ गः	१.३.१४	४५
वैतत्तदः	२.२.१४	१२२
वोज्जो वीजेश्च	३.१.१२०	२०२
वो भस्य कैटभे	१.३.६४	५६
व्याकरणप्राकारा—	१.३.९३	६१
व्याप्रेराअड्डः	३.१.१३	१८६
व्रजेर्वञ्चः	३.४.६०	२८७
शकगे	२.४.६३	१६७
शकेस्तरतीरपार—	३.१.३७	१८९
शतृशानचोः	२.४.४२	१६३
शदेर्झडपक्खोडौ	२.४.१४४	१८१
शनैसो ल्डिअं	२.१.२२	१०२
शय्यादौ	१.२.२६	२५
शरत्प्रावृट्	१.१.५०	१६
शरदामत्	१.१.३६	१२
शषसाः शुः	१.१.७	५
शषोः सः	३.२.४७	२२०
शसा वो च	२.३.४	१४२
शस्येत्	२.२.२०	१२३
शिति दीर्घः	१.१.१५	७
शि श्लुङ् नपुनरि तु	१.१.२८	११
शीकरे तु भहौ	१.३.१७	४६
शुल्के ङ्गः	१.४.३	६९
शुष्यादेरत्रिर्वा	२.४.१२	१५४
शृः मृगाङ्कमृत्युधृष्ट—	१.२.७६	३५
शेषं प्राकृतवत्	३.२.२०	२१४
शेषं प्राग्वत्	३.२.६७	२२४
शेषं शौरसेनीवत्	३.२.६२	२२३
शेषं संस्कृतवत्	३.४.७१	२९२
शेषादेशस्याह्रोऽ—	१.४.८६	८४
शेषेऽच्यचः	१.१.२२	९
शोः सल्ल	१.३.८७	६०
शोर्लुक्खोः स्तम्ब—	१.४.७५	८१
शोर्लुप्तायवरशोर्दिः	१.२.८	२०
शो शु स्त्रियां तु	२.२.३२	१२७
शौण्डगेषु	१.२.९७	३८
शौरसेनीवत्	३.४.६९	२९१
श्चस्य हरिश्चन्द्रे	१.४.७६	८१
श्चेर्वृश्चिके ञ्चुर्वा	१.४.१८	७१
श्नष्ण ह्नन्ष्णक्ष्णां—	१.४.६९	८०
श्मिंशिशिङ्जश्शसोः	२.२.३१	१२७
श्नुगनपि सोः	२.२.२९	१२६
मष्मस्मह्लामस्मर—	१.४.६७	८०
श्यामाके मः	१.२.३६	२६
श्रमे वावम्फः	३.१.२३	१८७
श्लाघः सलाहः	२.४.१३४	१८०
श्लिषोऽवआस—	३.१.१२६	२०३
श्लुग्जश्शसोः	२.२.३	११९
श्लेष्मबृहस्पतौ—	१.४.४६	७६
ष्कस्कः नाम्नि	१.४.६	६९
ष्टः	१.४.१४	७१
ष्ट्वः ट्टूनत्थूनौ	३.२.६१	२२३
ष्टौ स्टम्	३.२.४०	२१९
ष्पस्पोः फः	१.४.४४	७६
संगमोऽभिडः	३.१.१००	१९९
संज्ञा प्रत्याहार—	१.१.३	५
संज्ञायामरः	२.२.५१	१३२
संतपां झङ्खः	३.१.७६	१९४
संदशोऽवष्टम्भे	३.१.२४	१८७
संदिशोऽप्पाहः	३.१.११२	२०१
संधिस्त्वपदे	१.१.१९	८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ	सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
संनाम आद्दङः	३.१.३५	१८८	सुनैस इणमो इणं	२.२.८८	१४०
संभावने अइ च	२.१.४४	११२	सुपा तुम्हासु	३.४.४२	२८१
संभाषणरति—	२.१.४९	११३	सुपाम्हासु	३.४.५०	२८२
संयुक्तं स्तु	१.१.१२	६	सुप्यदसोऽमुः	२.२.९०	१४१
संयोगे	१.२.४०	२७	सुप्स्वादिरन्त्यहला	१.१.४	५
संस्कृतसंस्कारे	१.१.४५	१५	सुभगमुसलयो	१.२.६३	३३
सः समासः	१.१.८	६	सुससोः	३.४.१७	२६९
सः सषोः संयोगे—	३.२.२५	२१-	सुस्तुहो ङस	३.४.९	२६५
स आयुरप्सरसोः	१.१.३४	१२	सूक्ष्मे	१.४.७०	८०
सप्तपर्णे फोः	१.२.१३	२२	सूक्ष्मेऽद्धोतः	१.२.६६	३३
सप्तम्याश्च	३.४.५३	२८४	सैन्धवशनैश्चरे	१.२.९४	३८
समं समाणु	३.३.४०	२४६	सोः	२.२.१३	१२२
समुद्दो लट्	२.४.५७	१६६	सोच्छ्व	१.२.१००	३९
समो गलः	३.१.५९	१९२	सो बृहस्पतिवन—	१.४.७४	८१
सर्वगात् ङि हिं	३.४.२६	२७४	सोलुक्	२.२.९	१२१
सर्वादेर्जसोऽतो डे	२.२.६२	१३५	सोल्लपउल्लौ पचेः	३.१.३८	१८९
सशाशिषि	१.१.२३	१२	सोस्तु हि	२.४.३७	१६१
सह सहुं	३.३.४४	२४९	सौ पुंस्येलतः	३.२.३०	२१७
साअड्ढाणच्छक—	३.१.१०९	२००	सौ युष्मदस्तुहुं	३.४.३७	२७८
साध्वसे	१.४.२७	७३	सौ हउं	३.४.४५	२८१
सानुना सिकोच्चारं—	१.१.१६	७	स्कः प्रेक्षाचक्षेः	३.२.३४	२१८
सारः प्रहुः	३.१.९	१८५	स्कन्दतीक्ष्णशुष्के—	१.४.१०	७०
साहट्टसाहरौ संवुः	३.१.३०	१८८	स्तः	१.४.४०	७५
सिञ्चसिम्पौ सिचेः	३.१.४२	१८९	स्तम्भे	१.४.११	७०
सिद्धिर्लोकाच्च	१.१.१	४	स्तवे थो वा	१.४.३८	७५
सिनालिस	२.४.९	१५३	स्तावकसास्ने	१.२.१८	२३
सिप्थास्सेसि	२.४.२	१५१	स्तोः	१.४.१	६९
सिप्पः सिचिस्निहोः	२.४.८५	१७२	स्तौ	१.२.६५	३३
सिरायां वा	१.३.९१	६१	स्त्यः समः खा	२.४.१२४	१७८
सुंतो भ्यसः	२.२.७	१२०	स्त्यानचतुर्थे—	१.४.१३	७०

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
स्त्रियां ङेर्हिं	३·४·२०	२७०
स्त्रियां डहे	३·४·३०	२७५
स्त्रियामिमाञ्जलिगाः	१·१·५३	१७
स्त्रियामी च	२·४·४३	१६३
स्त्रीभगिनीदुहितृ-	१·३·९७	६२
स्थर्थौ स्तम्	३·२·४१	२१९
स्थष्ठकुकुरौ	२·४·१२६	१७८
स्थाणावहरे	१·४·९	७०
स्थूले ल्लृतश्चौत्	१·३·८३	६०
स्नमदामशिरो—	१·१·४९	१६
स्निग्धे त्वदितौ	१·४·१०३	९०
स्नुषायां ण्हः फोः	१·३·८९	६१
स्नेहाग्न्योर्वा	१·४·९७	८८
स्पृशिरिछवालु-	२·४·१३२	१७९
स्पृहद्ग्रोः सिह-	२·४·९२	१७३
स्पृहादौ	१·४·२२	७२
स्फटिके	१·३·२५	४८
स्मरकट्वोरीसरकारौ	१·३·१००	६३
स्यस्य सो ल्टि	३·४·५८	२८६
स्याद्भव्यचैत्यचौर्य-	१·४·१००	८९
स्रंसेर्ल्हसडिम्भौ	३·२·११६	२०२
स्रुघ्ने रात्	१·४·१०७	९१
स्तोः श्लौ	३·२·३६	२१८
स्वपि	१·२·२८	२५
स्वप्नादाविल्	१·२·११	२२
स्वस्यत उत्	३·४·२	२६२
स्वयमोऽर्थे अप्पणा	२·१·७०	११७
स्वरस्य बिन्द्वमि	१·२·२३९	२७
स्वरेभ्यो वक्रादौ	१·१·४२	१३
स्वसृगात् डाल्व	२·२·४१	१२९

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
स्वार्थे डुः पुनर्विना-	३·३·२६	२३९
स्वार्थे तु कश्च	२·१·१८	१०१
हः कातरककुद—	१·३·३८	१५
हः क्षुत्ककुभि	१·१·३१	११
हगेऽहंवयमोः	३·२·३१	२१७
हङ्गे चेह्याहूवार	३··१९	२१३
हणः शृणोतेः	३·१·१८	१८६
हद्धि निर्वेदे	२·१·३५	१११
हरिद्राच्छाये	२·२·३९	१२९
हरिद्रादौ	१·३·७८	५८
हरे क्षेपे च	२·१·५०	११३
हरे त्वी	१·२·१५	२२
हर्षामर्षश्रीह्री-	१·४·९९	८९
हल ईअ	२·४·२३	१५७
हलि ङञणनाम्	१·१·४१	१३
हलोऽक्रू	२·४·६९	१६८
हल्स्थैङः	३·४·६७	२९०
हश्च महाराष्ट्रे-	१·४·१११	९१
हश्चौत्कुतूहले	१·२·६४	३३
हसेर्गुञ्जः	३·१·१२३	२०३
हस्य घो बिन्दोः	१·३·८६	६०
हस्य मध्याह्ने	१·४·८१	८३
हा र्या मिमोमुमे	२·४·२६	१५७
हासेन स्फुटतेर्मुरः	३·१·६०	१९२
हि भिस्सुपोः	३·४·१९	२७०
हिं हिँ हिं भिसः	२·२·५	१२०
हिंतोत्तोदोदु ङसिस्	२·२·६	१२०
हित्थहास्त्वलः	१·२·७	१९
हि थास्सिपोः	३·४·५२	२८३
हिस्सा हित्था-	२·४·२७	१५७

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूत्र	क्रमाङ्क	पृष्ठ
हि हे ङिङस्योः	३·४·१३	२६७
हीमाणहे निर्वेद-	३·२·१७	२१३
ही ही वैदूषके	३·२·१६	२१३
हुं पृच्छादान-	२·१·४२	११२
हुं भ्यसः	३·४·१४	२६८
हुं मस्महिङोः	३·४·५६	२८५
हु क्ते	३·१·४	१८४
हु खु निश्चयविस्मय-	२·१·५४	११४
हु थध्वमोः	३·४·५४	२८४
हुमाम्भ्यसोः	३·४·२२	२७२
हुरचिति	३·१·५	१८४
हुल्लो लक्ष्यात् स्खलेः	३·१·१२९	२०३
हुहुरुग्रिग्घिगाः—	३·३·५७	२५९
हे दक्षिणेऽस्य	१·२·९	२१
हो जसामन्त्र्ये	३·४·१८	२६९
होहुवहवा भुवेस्तु	३·१·१	१८४
हो ह्रस्वः	१·१·५	५
ह्मो म्हम्	३·३·४	२२७
ह्यो ह्योर्वा	१·४·११७	१२
ह्रदे दहयोः	१·४·११५	९१
ह्व वलीदूतः	२·२·४६	१३१
ह्वोः स्तोरुच्चार-	३·४·६५	२९०
ह्लादेखअच्छल--	२·४·११९	१७८
ह्लो ल्हः	१·४·६६	७९
ह्वः	१·४·५१	७७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

टिप्पणियाँ

१·१

१·१·१ **ऋलृवर्ण**—ऋवर्ण और लृवर्ण। ऋवर्ण–ऋ और ॠ ये स्वर। लृवर्ण–लृ स्वर। **ऐकार**–प्राकृतमें ऐकार चलता है, ऐसा २·१·७४ से ज्ञात होता है। **असंयुक्तङञकाराभ्याम्**—प्राकृतमें ङ् और ञ् अनुनासिक स्वतंत्ररूपमें नहीं आते; परंतु स्ववर्गीय व्यंजनोंसे संयुक्त रहनेवाले ङ् और ञ् प्राकृतमें चलते हैं (देखिए १·१·४१)। **द्विवचनादिना**—यहाँ आदिशब्दसे चतुर्थी विभक्तिका अनेकवचन अभिप्रेत दिखाई देता है। **देश्याश्च शब्दाः**—देश्य अथवा देशी शब्द। हेमचंद्र देशीनाममालामें (१·३) कहता है–जे लक्खणे ण सिद्धा ण पसिद्धा सक्कयाहिहाणेसु। ण य गउणलक्खणा-सत्तिसंभवा ते इह णिबद्धा।

१·१·२ **संज्ञा**—सूत्र १·१·३ देखिए। **संधिप्रभृति**—संधि, इत्यादि। जिनका परम निकट सांनिध्य हुआ है ऐसे वर्णोंका जो संधान उसे संधि कहते हैं। **अन्यशब्दानुशासन**—अन्य व्याकरण। **कौमार... व्याकरणेषु**—प्राचीन कालमें संस्कृत व्याकरणके अनेक संप्रदाय प्रचलित थे। उनमेंसे कौमार, जैनेन्द्र और पाणिनीय ये तीन संप्रदाय थे। कौमार व्याकरणको कातंत्र, कालाप नाम हैं। ऐसा कहा जाता है कि जिनने यानी जिन महावीरने इंद्रको व्याकरणका उपदेश किया, इस आख्यायिकासे जैनेन्द्र नाम प्रचलित हुआ। किंतु सचमुच पूज्यपाद रचित व्याकरणका नाम जैनेन्द्र व्याकरण है। पाणिनिका व्याकरण प्रमाणभूत माना जाता है।

१·१·३ **संज्ञा**—प्रत्येक शास्त्रमें कुछ पारिभाषिक संज्ञाएँ होती हैं। कुछ विशिष्ट शब्द विशिष्ट अर्थमें प्रयुक्त किये जाते हैं, वे सब संज्ञाएँ होती हैं। उनका उद्देश बहुत अर्थ संक्षेपमें कहना ऐसा होता है (लघ्वर्थं हि संज्ञाकरणम्)। कुछ संज्ञाएँ स्वतःस्पष्ट (उदा–लोप, ह्रस्व) होती हैं, तो कुछ भिन्न अर्थ रखनेवाली संज्ञाएँ (उदा–गुण, वृद्धि) होती हैं, तो और कुछ कृत्रिमरूपमें सिद्ध की हुई (उदा–इ, दि) संज्ञाएँ होती हैं। **प्रत्याहार**–प्रत्याह्रियन्ते (संक्षिप्यन्ते) वर्णा अस्मिन् इति। जिसमें संक्षिप्तरूपमें वर्ण कहे जाते हैं वह। उदा–अच्। **स्वरः अच्**—अच् प्रत्याहार सब स्वर सूचित करता है। **ए ओ एङ्**–एङ् प्रत्याहार ए और ओ स्वर बोधित करता है। **ऐ औ ऐच्**–ऐच् प्रत्याहार ऐ तथा औ स्वर सूचित करता है। **व्यञ्जनं हल्**–हल् प्रत्याहार सर्व व्यंजन बोधित करता है। **स्वादिः सुप्**–सुप् प्रत्याहार सु, इत्यादि विभक्ति-प्रत्यय सूचित करता है। **त्यादिः तिङ्**–तिङ् प्रत्याहार ति, इत्यादि धातुमें लगनेवाले प्रत्यय बोधित करता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१.१.४ सुप्सु स्वादिषु विभक्तिषु—सुप् इत्यादि विभक्तिप्रत्यय इस प्रकार होते हैं—

विभक्ति	ए. व.	द्वि. व.	ब. व.
प्रथमा	सु	औ	जस्
द्वितीया	अम्	औट्	शस्
तृतीया	टा	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी	ङे	भ्याम्	भ्यस्
पंचमी	ङसि	भ्याम्	भ्यस्
षष्ठी	ङस्	ओस्	आम्
सप्तमी	ङि	ओस्	सुप्

इत्—इत्को अनुबंध ऐसाभी कहते हैं। एति (गच्छति) इति इत (स्वकार्यं कृत्वा विनश्यत इत्यर्थः)। इत्का अधिक स्पष्टीकरण १.१.१४ के नीचे देखिए **टास् ङिप्**—ये सर्व प्रत्याहार सिद्ध किए गए हैं। **पञ्चम्या...संदेहार्थम्**-पंचमी विभक्तिके प्रत्ययोंका प्रत्याहार ङस् ऐसा हो जाता; परंतु ङस् षष्ठी एकवचनका प्रत्यय है उसकी भ्रान्ति न हो, इसलिए ङसिस् ऐसा प्रत्याहार यहाँ निर्दिष्ट किया है।

१.१.५-६ मात्रा, ह्रस्व, दीर्घ—मात्रा यानी अक्षिस्पन्दनप्रमाणः कालः। ह्रस्व स्वरकी एक मात्रा और दीर्घ स्वर की दो मात्राएँ होती हैं (एकमात्रो भवेद् ह्रस्वः द्विमात्रो दीर्घ उच्यते।)

१.१.९ अ द्विर्वर्णः—एकाध शब्दमेंसे वर्ण विभक्त करके क्रमसे आदि, द्वितीय, इत्यादि स्थान निश्चित किये जाते हैं। उदा-राम—र् + आ + म् + अ। इसमें र् आदिवर्ण, आ द्वितीय वर्ण, इत्यादि।

१.१.१० गण—सदृश रूप होनेवाले शब्दोंका वर्ग बनाकर, उनमेंसे एक (प्रधान) शब्द प्रथम देकर, उस नामसे गण बनाया जाता है। उदा—गुणादि (गण)।

१.२.१३ विभाषा—विकल्प (न वेति विभाषा। पा. १.१.४४)।

१.१.१४. इत् अनुबन्ध—विशिष्ट प्रयोजनके लिए शब्दके आगे अथवा पीछे जोडे जानेवाले एक / अनेक वर्ण यानी अनुबंध। अनुबंध वर्णोंकोही इत् कहते हैं उदा-श्लुङ (१.१.२८) में श् इत् है। **लकारः**—वर्णका निर्देश करते समय उसके आगे 'कार' जुडाया जाता है (वर्णात्कारः)।

१.१.१६ सानुनासिकोच्चार—अनुनासिकके साथ उच्चार। मुँह और नासिका द्वारा उच्चारित वर्णको अनुनासिक कहते हैं (मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः। पा. १.१.८)। ऐसा उच्चार लेखनमें ँ चिन्हसे दिखाया जाता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१·१·१७ **अधिकार**—जिस पदका / पदोंका संबंध आगे आनेवाले अनेक सूत्रोंसे जाता है उस पदका / पदोंका निर्देश करनेवाला सूत्र अधिकारसूत्र होता है। अनुवृत्तिसे अधिकारका क्षेत्र अधिक व्यापक होता है। **बहुल** – इसका स्पष्टीकरण ऐसा दिया जाता है –

क्वचित्प्रवृत्तिः क्वचिदप्रवृत्तिः क्वचिद् विभाषा क्वचिदन्यदेव।
शिष्टप्रयोगाननुसृत्य लोके विज्ञेयमेतद् बहुलग्रहेषु ॥

१·१·१८ **समास**—(समसन, संक्षेप)। अनेक पदोंका अर्थकी दृष्टिसे एक पद होना यानी समास। उदा – रामका मंदिर, राममंदिर।

१·१·१९ **पद**—विभक्तिप्रत्यय और धातुमें लगनेवाले प्रत्ययोंसे अन्त होनेवाला शब्द (सुप्तिङन्तं पदम्। पा. १·४·१४)।

१·१·२० **अनुवर्तते**—अनुवृत्ति होती है। अनुवृत्ति यानी एक / अनेक पदोंकी अनन्तरवर्ति सूत्र / सूत्रोंमें होनेवाली आवृत्ति। अनन्तरवर्ति सूत्रोंका अर्थ करनेमें यह अनुवृत्ति आवश्यक होती है। **इको यणाच** – इस पाणिनिके सूत्रका अर्थ इसप्रकार है–संहिता होनेपर, आगे स्वर हो तो, इक् प्रत्याहारमेंसे वर्णोंके स्थानपर यण् प्रत्याहारमेंसे वर्ण क्रमसे आते हैं। इक् प्रत्याहारमें इ – ई, उ – ऊ, ऋ – ॠ, ऌ वर्ग हैं। ण् प्रत्याहारमें य्, व्, र्, ल् वर्ण होते हैं। **यणादेशः सन्धिः**—जिस संधिमें यण् आदेश होता है वह। 'इको यणचि' सूत्र यणादेश संधि बताता है। **आदेश**—शब्दमें एक / अनेक वर्णोंके स्थानपर अन्य एक / अनेक वर्णोंका आना। **यत्व वत्व**—(इवर्णका) य् होना, (उवर्णका व् होना।

१·१·२१ **एदोतौ**—(एत् + ओत्) – यहाँ **ए** और ओके आगे तकार लगाया है। जिसके आगे तकार लगाया है अथवा तकारके आगे उच्चारित ऐसा जो वर्ण वह उसका उच्चार करनेके लिए उतनाही समय लगनेवाले सवर्ण वर्णोंका निर्देश करता है (तपरस्तत्कालस्य। पा. १·१·७०)। संक्षेपमें, अत् = अ, इत् = इ, इत्यादि कहा जा सकता है।

१·१·२२ **लोप**—प्रसंगवशात् उच्चारमें प्राप्त हुए वर्ण, इत्यादिका श्रवण–अभाव (अदर्शन, यानी ` (अदर्शनं लोपः। पा. १·१·६०; प्रसक्तस्य अदर्शन लोपसंज्ञं स्यात्)।

१·१·२३ **तिङ्**—धातुमें लगनेवाले प्रत्ययोंका निर्देश करनेवाला तिङ् प्रत्याहार है। **तिबादि**— तिङ्प्रत्याहारमें तिप् पहला प्रत्यय है (तिप्तस्झिसिप्थस्थमिब्वस्मस्तातांझथासाथांध्वमिड्वहिमहिङ्। पा. ३·४·७८ में ये प्रत्यय दिये हैं)।

१·१·२४ **उपसर्ग**—जिन अव्ययोंका धातुओंसे योग होता है उन्हे उपसर्ग कहते हैं। ये उपसर्ग इसप्रकार —प्रपरापसमन्ववनिर्दुरभिव्याधिसुदतिनिप्रतिपर्यपयः। उप आङिति विंशतिरेष सखे उपसर्गगणः कथितः कविना ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१·१·२९ **आत्व**—१·१·२१ ऊपरकी टिप्पणी देखिए। **ईषत्स्पृष्टयश्रुति**- १·३·१० देखिए। **विज्जुला**—२·१·२६ देखिए।

१·१·३० **रेफ**—र्वर्गको रकार कहनेके बजाय रेफ ऐसा कहा जाता है।

१·१·३५ **योगविभागात्**--योगके विभागसे। योग यानी व्याकरणका नियम। परंपरासे प्राप्त हुए एक नियमके, कुछ शब्दोंकी रूपसिद्धिके लिए, दो नियम करके बताना यानी योगविभाग करना।

१·१·३७ **निपात्यन्ते**—निपातके रूपमें दिये जाते हैं। निपातन—व्युत्पत्ति देनेका प्रयत्न न करके अधिकृत ग्रंथोंमें जैसा शब्द दिखाई देता है वैसाही देना।

१·१·३८ **अव्यय**—तीन लिंग, सर्व विभक्ति और वचनोंमें जिसका रूप विकार प्राप्त न कर वैसाही रहता है वह अव्यय।

सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु सर्वासु च विभक्तिषु।
वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम्॥

१·१·४३ **क्त्वाप्रत्ययस्य**—क्त्वाप्रत्ययका। पूर्वकालवाचक धातुसाधित अव्यय सिद्ध करनेका क्त्वा-प्रत्यय है। उदा- कृ कृत्वा। प्राकृतमें क्त्वाप्रत्ययको चार आदेश (देखिए २·१·२९) होते हैं; उनमेंसे दोनोंमें णकार होता है। **सुप्**—यह विभक्तिप्रत्ययोंकी संज्ञा है। यहाँपर सुप् यानी सप्तमी बहुवचनका प्रत्यय ऐसाभी कहा जा सकता है। **सुकारात् णकारात् च**—प्राकृतमें सप्तमी अनेकवचन (देखिए २·२·२१), तृतीया एकवचन (देखिए २·२·१८) और षष्ठी अनेकवचन (देखिए २·२·४) प्रत्ययोंमें सुकार और णकार आते हैं। **करिअ**—यह प्राकृतमें क्त्वाप्रत्ययान्त रूप है (देखिए २·१·२९)।

१·१·४५ **लुक्**—लोप। (१·१·२२ ऊपरकी टिप्पणी देखिए)।

१·१·४८ (सूत्रमेंसे) **श्लोपल्**—श् + लोप + ल्।

१·१·५१ **अञ्जल्यादिपाठ**—अंजलि-आदि गणमें निर्देश। अंजल्यादिगणके लिए १·१·५३ देखिए।

१·१·५३ **इमान्ताः शब्दाः**—इमन् (इमनिच्) एक तद्धित प्रत्यय है। इस प्रत्ययसे अन्त होनेवाले शब्द यानी इमान्ताः शब्दाः। **त्वादेशस्य डिमा**—भाववाचक संज्ञा सिद्ध करनेका त्व प्रत्यय है। उसको प्राकृतमें डिमा (डित् इमा) आदेश होता है (देखिए २·१·१३)।

१·२

१·२·३ **त्यदादि**—त्यत्, इत्यादि सर्वनामोंको त्यदादि संज्ञा है। इसमें त्यद्, तद्, यद्, एतद्, इत्यादि सर्वनाम आते हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१.२.८ **संयोग**—बीचमें स्वर न होकर जब दो अथवा अधिक व्यंजन एकत्र आते हैं तब संयोग होता है। उदा - क्य, स्फ्य, त्स्र्य। संयोगमें उच्चारक्रमानुसार व्यंजनोंका पहला, दूसरा, इत्यादि क्रम निश्चित होता है। १.२.८ सूत्रमें श्, ष्, स् और श्, ष्, स् वर्णोंके आगे दिये गये संयोग अभिप्रेत हैं – श्य, श्व, श्र, श्श; ष्य, ष्व, र्ष, ष्ष; स्य, स्व, स्र, स्स।

१.२.११ **वेडिसो वेतसः**—वेतस शब्दमें अ क इ नित्य नहीं होता ऐसा आगे १.३.३२ के नीचे कहा है।

१.२.१६ **उत्वं लित् भवति**--सूत्रमेंसे उल् शब्दमें ल् इत् है। जब ल् इत् होता है तब प्रायः विकल्प नहीं होता है (देखिए १.१.१४)। लित् का कार्य नित्य होता है। यहाँ उत्व नित्य होता है, ऐसा अर्थ अभिप्रेत है।

१.२.२१ **अज्जा माता**—आर्या शब्दका माता अर्थ होनेपर, (ऊ होनेके बजाय) अज्जा ऐसा वर्णान्तर होता है।

१.२.२५ **मात्रच् प्रत्यय**—मात्रच् प्रत्यय परिमाणवाचक है। उदा – प्रस्थ–मात्रम्। **मात्रशब्द** – यह मात्र शब्द सिर्फ अथवा केवल अर्थमें है।

१.२.२६ **पृथग्योगात्**—१.१.३५ सूत्रकी टिप्पणीमें योगविभाग देखिए।

१.२.३१ **मकार परे**—आगे मकार होनेपर। इसका अभिप्राय – पद्म शब्दमें वर्णान्तर होकर आगे मकार होनेपर।

१.२.३३ **क्तप्रत्ययान्त**—कर्मणि भूतकालवाचक धातुसाधित विशेषण सिद्ध करनेका क्त प्रत्यय है। उस प्रत्ययसे अन्त होनेवाला शब्द यानी क्तप्रत्ययान्त।

१.२.३८ **घञ्**—धातुसे संज्ञा सिद्ध करनेका घञ् (अ) एक कृत प्रत्यय है। उदा.–पच्–पाक। **वृद्धि**—अ, इ-ई, उ–ऊ, ऋ–ॠ, और ऌ इनका अनुक्रमसे आ, ऐ, औ, आर् और आल् होना यानी वृद्धि होना।

१.२.४० **स्वरूपेणैव ह्रस्वः**—'संयोगे' (१.२.४०) सूत्रानुसार आगे संयोग होनेपर, पिछले ए और ओ ह्रस्व होते हैं (और वे क्वचित् इ और उ ऐसे लिखे जाते हैं। (उदा–णरिन्दो, अहरुट्ठो)। क्वचित् वे मूलतःही ह्रस्व रहते हैं और वे ऍक्को थॉक्कं ऐसे लिखे जाते हैं। (कभी कभी ˘ यह चिन्हभी लिखा नहीं जाता है)।

१.२.५० (सूत्रमेंसे) **लालौ**—ल् + आ + ल् + अ = लाल; इसका द्विवचन लालौ। इसमें ल् इत् है।

१.२.५७ **कप्रत्यय**—शब्दोंको स्वार्थे लगनेवाला क-प्रत्यय। उदा–गुरु गुरुक।

१.२.६७ **लकारो नानुबन्धः**—सूत्रके अल्में ल् वर्ण अनुबंध अथवा इत् नहीं है; इसलिए ल् अनुबंधका कार्य यहाँ नहीं होता। अतएव दुकूल शब्दमें ऊको अल् ऐसाही आदेश होता है। उदा–दुकूलम्–दुअल्लं- दुअल्लं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१·२·८१ **गौणपद**—समासमेंसे गौणपद।

१·२·८६ **इदेङ्**—इत् + एङ्। एङ् प्रत्याहार है और वह ए और ओ स्वर निर्दिष्ट करता है।

१·२·९० **अक्**—एक प्रत्यय है। **क्स**—तद्, इत्यादि सर्वनाम पीछे होनेपर दृश् धातुको क्स प्रत्यय लगाया जाता है। **अक्सयोः .....परिगृह्यते**—(पाठभेदः- सक्क्विनोः साहचर्यात् त्यदादीत्यादिसूत्रविहितः कन् (पाठभेद-क्वप्, क्विन्) इह परिगृह्यते।)। प्रस्तुत क्विप् आचार अर्थमें लगनेवाले क्विपसे भिन्न है यह दिखानेके लिए प्रस्तुत वाक्य है। पाणिनिके त्यदादि (त्यदादिषु दृशोऽनालोचने कञ्च। ३·२·६०) सूत्रमें क्विप् प्रत्यय विहित नहीं है।

१·२·९३ **एचः संध्यक्षराणाम्**—एच् प्रत्याहारमें ए, ओ, ऐ, औ स्वर आते हैं। इन स्वरोंको हेमचद्र संध्यक्षर कहता है (एऐओऔ संध्यक्षरम्। १·१·८)। इनमेंसे प्रत्येक स्वर दो स्वरसे बना है; इसलिए इन्हें संयुक्त स्वरभी कहते हैं। **तत्समा**—प्राकृतमें तत्सम (= संस्कृतसम), तद्भव (=संस्कृतभव) और देश्य ऐसे तीन प्रकारके शब्द होते हैं।

१·२·९५ **साध्यमानसिद्धावस्थयोः** शब्दोंकी साध्यमान और सिद्ध अवस्था। संस्कृत व्याकरणानुसार जब कुछ शब्द पूर्ण रूपमें होता है तब वह उसकी सिद्ध अवस्था होती है। उदा.—संधि होकर बने हुए शिरोवेदना शब्दकी अवस्था। शब्दके पूर्णरूप बननेके पूर्वकी स्थिति यानी साध्यमान अवस्था। उदा—संधि होनेके पूर्व, शिरः + वेदना, यह स्थिति।

१·२·१०३ **विश्लेष**—व्यंजनोंके संयोगके बीचमें अधिक स्वर डालकर संयोग नष्ट करनेका एक प्रकार। इसे स्वरभक्तिभी कहते हैं। विश्लेषके लिए १·४·९५–११० देखिए।

१·३

१·३·१ **साज्झला**—स + अच् + हला। स्वर (अच्) और व्यंजन (हल्) इनके साथ।

१·३·९ **अवर्णात्**—अवर्ण यानी अ और आ स्वर।

१·३·१२ **उकारेणा ... परिगृह्यते**—कभी उकार अनुबंध अथवा इत् होता है। उकार अनुबंध रखनेवाले कु, चु, टु, तु तथा पु होते हैं। उकार अनुबंधसे स्ववर्गीय व्यंजनोंका स्वीकार किया जाता है। उदा-कु = कवर्गीय व्यंजन = क् ख् ग् घ् ङ्। इसीप्रकार चु, इत्यादिके बारेमें जानना।

१·३·२४ **णिजन्त**—णिच् + अन्त। धातुसे प्रेरक धातु सिद्ध करनेका णिच् प्रत्यय है। उस प्रत्ययसे अन्त होनेवाला यानी णिजन्त।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१·३·३२ अतएव ... वेदितव्यम्—स्वप्नादाविल् (१·२·११) सूत्रमें स्वप्न इत्यादि शब्दोंमें आद्य अवर्णका इ नित्य होता है ऐसा कहा गया, और वहाँ वेतस शब्दभी कहा गया था। अतः वेतस शब्दमेंभी अका इ नित्य होता है ऐसा निष्पन्न होता है। परंतु प्रस्तुत १·३·३२ सूत्रमें, 'वेतसमें अ का इ होनेपर' ऐसा कहा है। इस विधानसेही ऐसा जानना है कि यद्यपि वेतस शब्द स्वप्नादिगणमें होता है तथापि उसमें अ का इ विकल्पसे होता है।

१·३·४५ स्वार्थिकलकार—स्वार्थे आनेवाला लकार यानी ल प्रत्यय। पीत शब्दके आगे ल-प्रत्यय आता है (२·१·२६ देखिए)।

१·३·६० व्यवस्थितविभाषया—विभाषा यानी विकल्प। व्यवस्थित विभाषा यानी विकल्प कहनेवाले नियमके सभी उदाहरणोंको लागू न होनेवाला विकल्प; कुछ उदाहरणोंमें यह विकल्प आवश्यक रीतिसे लागू होता है तो अन्य उदाहरणोंमें उसका अधिकार नहीं होता।

१·३·६८ तीये अनीये च प्रत्यये—तीय और अनीय प्रत्ययोंमें। **तीय**-द्वि और त्रि संख्यावाचकोंको पूरणार्थमें लगनेवाला तीय प्रत्यय है। उदा – द्वितीय तृतीय। **अनीय** (अनीयर्) एक कृत् प्रत्यय है। वह धातुमें लगाकर विध्यर्थ कर्मणि धातु. विशेषण सिद्ध किए जाते हैं। उदा – कृ – करणीय। **कृद्विहितयप्रत्यय**—धातुसे अन्य शब्द सिद्ध करनेके लिए जो प्रत्यय लगाये जाते हैं उन्हें कृत् कहते हैं। कृत् प्रत्ययोंमेंसे य एक कृत् प्रत्यय है। यह प्रत्यय धातुमें लगाकर वि. क. धा. वि. सिद्ध किए जाते हैं। उदा–मा मेय।

१·३·६९ मयट् प्रत्यय—मयट् (मय) एक तद्धित प्रत्यय है। एकाध वस्तुका आधिक्य उससे सूचित होता है। उदा — विष विषमय।

१·३·१०५ अनुक्त...विकाराः—प्रकृति—शब्दका मूल रूप। **प्रत्यय**-शब्दकी प्रकृतिके प्रायः आगे आनेवाला। **लोप** — १·१·२२ देखिए। **आगम**—मूल शब्दसे कुछभी वर्ण न निकालकर, शब्दके आगे, बीच अथवा अंतमें जब कुछ वर्ण आता है तब उस वर्णका आगम हुआ ऐसा कहा जाता है। **वर्णविकार**—शब्दकी सिद्धि होते समय वर्णोंमें होनेवाला परिवर्तन।

१·४

१·४·७ स्पृहादित्वात्—स्पृहादिगणमें होनेसे। वृक्ष शब्द स्पृहादिगणमें है। स्पृहादिके लिए १·४·२२ देखिए।

१·४·२० लाक्षणिकस्यापि—व्याकरणके नियमानुसार होनेवाले शब्दकाभी। उदा – क्ष्मा – क्षमा–छमा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१·४·३१ संदष्टोष्ट्रे तु ठत्वापवादः—ष्टः (१·४·१४) सूत्रानुसार संदष्ट और उष्ट्र शब्दोंमे ष्ट का ठ हो जाता, किंतु उस नियमका अपवाद प्रस्तुत (१·४·३१) नियम है।

१·४·४९ मकाराक्रान्तो वकारः—मकारसे आक्रान्त वकार यानी म्व।

१·४·५७ (सूत्रमेंसे) डेर्—डित् एर। जिसमें ड् इत् होता है वह डित्। डित् प्रत्यय आगे होनेपर भके टिका लोप हो जाता है (डिति परे भस्य टेर्लोपः। पा. २·४·८५ ऊपर सि. कौ.)। भ यानी प्रत्ययोंके पूर्व होनेवाला शब्दका अंग। टि यानी शब्दमें अन्त्य स्वरके साथ अगले सर्व वर्ण। शब्दोंके अंगको डित् प्रत्यय लगते समय अंगमेंसे अन्त्य स्वरके साथ अगले सर्व वर्णोंका लोप हो जाता है। **डित्वात् टिलोपः**—डित् (प्रत्यय) होनेसे (भके) टिका लोप होता है।

१·४·६६ लकाराक्रान्तो हकारः—लकारसे आक्रान्त हकार यानी ल्ह।

१·४·७७ जिह्वामूलीयोपध्मानीययोः— ≍ क और ≍ ख इनमें क और ख् के पहले जो अर्ध विसर्गके समान उच्चारित किया जाता है वह जिह्वामूलीय और ≍ प तथा ≍ फ इनमें प् और फ् के पहले जो अर्ध विसर्गके समान उच्चारित किया जाता है वह उपध्मानीय। ये दोनों ≍ चिन्हसे सूचित होते हैं।

१·४·७९ सर्वत्र लवरामचन्द्रे (हेम. ८·२·७९)–सूत्रका अर्थ इसप्रकार—चंद्र शब्द छोडकर इतरत्र संयोगमें प्रथम अथवा अनंतर रहनेवाले ल्, व्, र् वर्णोंका सर्वत्र लोप होता है। (डॉ. वैद्य संपादित हेमचंद्रप्राकृतव्याकरणमें '० वन्द्रे' पाठभेद स्वीकृत किया गया है, और ० वन्द्रे तथा ० चन्द्रे पाठभेद फूटनोट्समें दिये गए हैं)।

१·४·८५ रेफानुबंधस्य—जिसमें रेफ यानी र् अनुबंध (इत्) होता है उसका।

१·४·८७ अलाक्षणिक—लाक्षणिक न होनेवाला। लाक्षणिकके लिए १·४·२० ऊपरकी टिप्पणी देखिए।

१·४·९१ आकृतिगणत्वात्—आकृतिगणमें होनेसे। गणपाठमें एकाध गणमें आनेवाले सर्व शब्द कहे जाते हैं। आकृतिगणमें कुछ शब्द दिये जाते हैं, और वैसीही प्रक्रिया होनेवाले शब्द उसमें अंतर्भूत करनेके लिए अवकाश रखा जाता है (प्रयोगदर्शनेन आकृतिग्राह्यो गणः आकृतिगणः)।

१·४·१२१ निर्वचनगोचर—स्पष्टीकरणकी कक्षामें आनेवाला।

२·१

२·१·१ मतुप्प्रत्यय—मतुप् (मतु) एक तद्धित प्रत्यय है। स्वामित्व दिखानेके लिए वह शब्दोंको लगाया जाता है (तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्। पा. ५·२·९४)। उदा. – गो गोमत्।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२·१·२ परिमाणार्थस्य वतुप्प्रत्ययस्य—वतुप् (वतु) एक तद्धित प्रत्यय है। परिमाण अर्थ दिखानेके लिए वह यद्, तद्, एतद्, किम् और इदम् सर्वनामोंको जोडा जाता है। उदा—यावत्, तावत्, इत्यादि।

२·१·३ डानुबन्धाः (आदेशाः)—जिनमें ड् अनुबंध (इत्) है (ऐसे आदेश)।

२·१·४ पथो ण नित्यम्—पाणिनिका सूत्र है पन्थो ण नित्यम् (५·१·७६)।

२·१·५ खप्रत्ययस्य—ख एक तद्धित प्रत्यय है। लगते समय उसका ईन ऐसा रूपांतर हो जाता है।

२·१·६ छप्रत्ययस्य—छ (ईय) एक तद्धित प्रत्यय है।

२·१·७ त्रल्प्रत्ययस्य—सप्तम्यन्त सर्वनामोंको लगनेवाला एक तद्धित प्रत्यय त्रल् है। उदा – यत्र, तत्र, इत्यादि।

२·१·८ इदमर्थे विहितस्य छप्रत्ययस्य—इदमर्थमें (अमुकका यह) अस्मद्, युष्मद्, इत्यादि शब्दोंको लगनेवाला छ एक तद्धित प्रत्यय है।

२·१·१० अण् प्रत्ययस्य—इदमर्थमें (अमुकका यह) लगनेवाला अण् एक तद्धित प्रत्यय है।

२·१·११ उपमानार्थे विहितस्य वतिप्रत्ययस्य—उपमान, तुलना, इत्यादि दिखानेके लिए जोडा जानेवाला वति प्रत्यय (तेन तुल्यं क्रिया चेद्वतिः। पा. ५·१·११५)।

२·१·१२ भावार्थे विहितस्य त्वप्रत्ययस्य—भाव दिखानेके लिए त्व ऐसा तद्धित प्रत्यय कहा गया है। उदा – अश्वत्व।

२·१·१४ तसिल्प्रत्ययस्य—सर्वनामोंको लगनेवाला तसिल् (तस्) एक तद्धित प्रत्यय है। उदा – कुतः, यतः, इत्यादि।

२·१·१५ दाप्रत्ययस्य—सर्व, एक, इत्यादिको जोडा जानेवाला एक तद्धित प्रत्यय दा है। उदा – सर्वदा, इत्यादि।

२·१·१६ कृत्वसुच्प्रत्ययस्य—पौनःपुन्यार्थ दिखानेके लिए संख्यावाचकोंको जोडा जानेवाला कृत्वसुच् (कृत्वस्) एक तद्धित प्रत्यय है। उदा – दशकृत्वः।

२·१·१७ भवार्थे—(अमुकसे / अमुकस्थानमें) हुआ इस अर्थमें।

२·१·२७ तस्य भावस्त्वतलौ—यह पाणिनिका सूत्र (५·१·११९) है।

२·१·२८ तृनोत्तरादिना—(तृना + उत्तरादिना)—कर्तृवाचक शब्द सिद्ध करनेका तृन् प्रत्यय है।

२·१·६० उतादेशेन ओकारेण—उतशब्दको ओ (ओकार) आदेश होता है (२·१·६७ देखिए)।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२·१·७१ **ओअच्छाद्य:**—दृश् धातुके आदेश २·४·१५३ में दिए हैं। उनमें ओअच्छ ऐसा आदेश नहीं दिया है, किंतु अवअच्छ आदेश दिया गया है; अवअच्छसे ओअच्छ रूप सहज रीतिसे सिद्ध हो जाता है।

२·२

२·२·२ **लुप्**—विभक्तिप्रत्ययोंकी तांत्रिक संज्ञाओंके लिए १·१·४ ऊपरकी टिप्पणी देखिए।

२·२·१५ **श्लुग्वा**—श् + लुक् + वा। श् इत् है; लुक् यानी लोप; वा विकल्प दिखानेके लिए है।

२·२·२९ **शानुबन्धो लुक्**—श् अनुबंध (इत्) रखनेवाला लोप। शानुबंधके कार्यके लिए १·१·१५ सूत्र देखिए।

२·२·३० **ङानुबन्धो लुक्**—ङ् अनुबंध रखनेवाला लोप। ङ् अनुबंध सानुनासिक उच्चार दिखाता है (देखिए १·१·१६)।

२·२·३४ आकारान्त स्त्रीलिंगमें होनेवाले शब्दोंके बारेमें (उदा – माला) शित् आ प्रत्यय न लगनेसे (देखिए २·२·३६), मालाआ ऐसा रूप नहीं होता।

२·२·३७ **अजातिवाचिन:**—अजातिवाचक शब्द, अवर्गवाचक शब्द। **ङीप्रत्यय**—विशिष्ट शब्दोंसे उनका स्त्रीलिंग रूप सिद्ध करनेका ङीप् (ई) प्रत्यय है।

२·२·३८ **टिड्ढाणञ्**—यह पाणिनिका सूत्र है। इसमें ङीप् प्रत्यय विहित किया है। **टाप्**—कुछ शब्दोंसे स्त्रीलिंग रूप सिद्ध करनेका टाप् (आ) प्रत्यय है।

२·२·४१ **टाबन्त**—टाप् प्रत्ययसे अन्त होनेवाला शब्द।

२·२·६२ **सर्वादे:**—सर्वादिका। सर्वादि यानी सर्वनाम (सर्वादीनि सर्वनामानि)। सर्वादिगणमें सर्व, अन्य, इतर, यद्, तद्, इत्यादि सर्वनाम होते हैं।

२·२·८६ **रानुबन्धे...... भवति**—यह वाक्य थें डेलू (२·२·८६) सूत्रका स्पष्टीकरण करता है।

२·३

२·३·४२ **क्यङन्त**—क्यङ् प्रत्ययसे अन्त होनेवाला शब्द। समान आचार दिखानेके लिए संज्ञाओंमें जोडा जानेवाला क्यङ् (य) प्रत्यय है। उदा – (काक:) श्येनायते। **क्यषन्त**—क्यष् प्रत्ययसे अन्त होनेवाला शब्द। लोहित, इत्यादि शब्दोंको लगाकर नामधातु सिद्ध करनेका क्यष् (य) प्रत्यय है। उदा–लोहितायति, लोहितायते।

२·४

२·४·१ **लट्**—वर्तमानकाल। काल और अर्थकी संज्ञा बतानेके लिए लूसे आरंभ होनेवाली दस संज्ञाएँ पाणिनिने प्रयुक्त की हैं, वे इसी प्रकार होती हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लट्	(वर्तमानकाळ)	लोट्	(आज्ञार्थ)
लिट्	(परोक्ष)	लङ्	(अनद्यतन)
लुट्	(तां – भविष्य)	लिङ्	(विध्यर्थ)
लृट्	(स्य – भविष्य)	लुङ्	(अद्यतन)
लेट्	(वैदिक संस्कृतमें)	लृङ्	(संकेतार्थ)

कोई वैयाकरण आगे दी हुई संज्ञाएँभी प्रयुक्त करते हैं—भवन्ती, वर्तमाना; अद्यतनी; ह्यस्तनी; परोक्षा; श्वस्तनी; भविष्यन्ती; पञ्चमी; सप्तमी; क्रियातिपत्ति; आशीः। **प्रथमपुरुष**-व्याकरणमेंसे पुरुषवाचक संज्ञाएँ इसप्रकार होती हैं–प्रथम पुरुष (आजकी संज्ञा – तृतीय पुरुष। वह, वे)। मध्यम पुरुष (आजकी संज्ञा – द्वितीय पुरुष। तू, तुम।) उत्तम पुरुष– (आजकी संज्ञा – प्रथम पुरुष। मैं, हम)। **एकत्वे वर्तमानौ** एकवचनमें रहनेवाले। **परस्मैपदात्मनेपदत्वेन विहितौ**—परस्मैपद और आत्मनेपदमें विहित। धातुमें लगनेवाले प्रत्ययोंके दो प्रकार–परस्मैपद तथा आत्मनेपद–संस्कृतमें हैं। **तिप्, तङ्** – तृ. पु. एकवचनमें परस्मैपदका तिप्, और तङ् आत्मनेपदका है। **हसइ ... रमए** – संस्कृतमें हस् धातु परस्मैपदमें और रम् धातु आत्मनेपदमें है।

२·४·१० वर्तमानकालमें सर्व पुरुष और वचनोंमें अस् धातुको अत्थि आदेश हो जाता है।

२·४·१४ **भावकर्मविहिते प्रत्यये**—धातुसे कर्मणि अंग बनानेका य प्रत्यय है (धातोः यक् प्रत्ययः स्यात् भावकर्मवाचिनि सार्वधातुके परे। पा. ३·१·६७ ऊपर सि. कौ.)।

२·४·१९ **क्त्वातुंतव्येषु**—क्त्वा, तुम् और तव्य प्रत्यय। पूर्वकालवाचक धातु. अव्यय सिद्ध करनेका क्त्वा प्रत्यय है। उदा–स्नात्वा। धातुसे हेत्वर्थक अव्यय सिद्ध करनेका तुम् प्रत्यय है। उदा– कर्तुम्। विध्यर्थ कर्मणि धातु. विशेषण सिद्ध करनेका तव्य प्रत्यय है। उदा – कर्तव्य। **भविष्यत्कालविहित** (प्रत्यय)—धातुमें भविष्यकाल सिद्ध करनेके लिए लगनेवाले प्रत्यय; उनके लिए २·४·२५–२७ देखिए।

२·४·२० **लोट्**—पंचमी, आज्ञार्थ। **शतृप्रत्यय**—वर्तमानकालवाचक कर्तरि धातु. विशेषण सिद्ध करनेका प्रत्यय।

२·४·२२ **अनद्यतनादि**—अद्यतन (आजका काल) छोडकर, बीत काल। **लुङ् लङ् लिट्**–२·४·१ ऊपरकी टिप्पणी देखिए।

२·४·४२ **शतृशानच्**—ये दो कृत् प्रत्यय हैं। ये प्रत्यय धातुओंमें लगकर वर्तमान कर्तरि धातु. विशेषण सिद्ध होते हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२·४·५५ **कृतगुणस्य**—जिसमें गुण किया है उसका। अ, इ–ई, उ–ऊ, ऋ–ॠ और ऌ इनका क्रमसे अ, ए, ओ, अर् तथा अल् होना यानी गुण होना। **वर्धः**—वर्ध् में (√ वृध्) गुण हुआ है।

२·४·७३ **यक्–प्रत्यय**—धातुसे कर्मणि रूप सिद्ध करनेका यक् (य) प्रत्यय है।

२·४·८१ यहाँसे सूत्रोंकी वृत्तिमें कभी कभी अनुबंधके साथ धातु निर्दिष्ट किये गए हैं। उदा – हृञ्, इत्यादि।

३ · १

३·१·५ **चिद्वर्जिते प्रत्यये**—२·४·१ और ५ में कहे गए इच्, एच् और हच् ये चित् प्रत्यय हैं; उन्हें छोडकर अन्य प्रत्यय यानी चिद्वर्जित प्रत्यय।

३·१·७८ **आचारे क्विबन्तस्य**—आचार अर्थमें संज्ञासे धातु सिद्ध करनेका क्विप् प्रत्यय है; उससे अन्त होनेवाला शब्द यानी क्विबन्त।

३·१·८८ **संतपां झङ्खः** ....**झङ्खइ**– संतपां झङ्खः (३·१·७६) सूत्रके नीचे कहा था कि निःश्वसिति, विलपति, उपालभते धातुओंको झंख आदेश होता है। उसका उल्लेख यहाँ विलपति धातुका दूसरा आदेश बताते समय किया गया है।

३·१·९७ **हम्म गतौ**—पाणिनिके धातुपाठमें 'द्रम्म हम्म मीमृ गतौ' ऐसा निर्देश है।

३ · २

३·२·२१ **इनो नकारस्य**—इन्नन्त शब्दोंमेंसे नकारको। उदा – कंचुकिन् शब्दमेंसे न्।

३·२·३२ **शकाराक्रान्तश्चकारः**—शकारसे आक्रान्त चकार यानी श्च।

३·२·६५ **चूलिकापैशाचिक**—चूलिकापैशाची।

३ · ३

३·३·२ **अग्गिए ... अण्णानु ॥ २ ॥**—डॉ. वैद्यसंपादित हेमचंद्र प्राकृत-व्याकरणमें इस श्लोकमेंसे हल्लोहलेण शब्दकी संस्कृतछाया व्याकुलत्वेन ऐसी दी गई है।

३·३·३ **लाक्षणिकस्य**—व्याकरणके नियमानुसार आया हुआ, उसका। उदा-यथा – जिम (३·३·८ सूत्रानुसार)—जिवँ।

३·३·८ **पिंवाहरि ... मुद्द ॥ ९ ॥** — डॉ. वैद्यसंपादित हेमचंद्र प्राकृत व्याकरणमें तणु शब्दकी संस्कृत छाया तन्व्याः दी गई है। **जिध तिध** के उदाहरण— जिध तिध तोडहि कम्मु (कुमारपालचरित ८·४९)।

३·३·१६ **भावेऽर्थे विहितौ त्वतल्प्रत्ययौ**—भाव अर्थ दिखानेके लिए त्व और तल् (ता) तद्धित प्रत्यय विहित हैं (पा. ५·१·११९)।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३·३·१७ **एउँ गृण्हेप्पिणु ... ॥ २२ ॥** — टीकाकारके मतानुसार कोई सिद्ध पुरुष विद्यासिद्धिके लिए धन, इत्यादि देकर नायिकाको उसके पतिसे माँगता है; उस समयके नायिकाके शब्द इस श्लोकमें हैं।

३·३·१८ **रक्खइ सा ... ॥ २७ ॥** इस श्लोकमें तथा अगले २८ वें श्लोकमें मुंज शब्दसे मुंज नाम होनेवाला मालवदेशका राजा अथवा चालुक्य राजाका उस नामका एक मंत्री अभिप्रेत है, ऐसा कोई कहते हैं।

३·३·१९ **कसाअ** (॥ २९ ॥)—जैनधर्ममें क्रोध, मान, माया और लोभ इनको कसाअ (कषाय कहते हैं।

३·३·२० **तुमुन्प्रत्ययस्य**—तुमुन्प्रत्ययका। तुमुन् यानी तुम् प्रत्ययके लिए २·४·१९ ऊपरकी टिप्पणी देखिए।

३·३·२५ **तेहिं रेसिं** के उदाहरण—कहि कसु रेसिं तुहुँ अवर कम्मारंभ करेसि। कसु तेसिं परिगहु (कुमारपालचरित ८·७०–७१)।

३ · ४

३·४·२० **वायसु ... ॥ ११९ ॥** — हमारे देशमें एक धारणा ऐसी है कि घरपे बैठकर कौआ यदि काव काव करता हो तो घरमें मेहमान आयेगा। इस श्लोकमें विरहिणीका वर्णन है। वह कौवेकी आवाज सुनती है पर आता हुआ प्रियकर उसे दिखाई नहीं देता। इसलिए वह निराश होकर कौवेको हकालती थी। पर इतनेमें प्रियकर उसके दृष्टिपथमें आया। परिणाम यह हुआ — कौवेको हकालनेकी क्रियामें, विरहावस्थामें कृशताके कारण ढीली हुई उसकी आधी चूडियाँ जमिनपर गिर पडीं; परंतु प्रियकरको देखनेसे उसे जो आनंद प्राप्त हुआ उससे उसका शरीर—अर्थात् हाथभी —बढ गया; उस कारणसे उसकी शेष आधी चूडियाँ तडतड टूट गईं।

३·४·२५ **क्कार**—अन्तमें आनेवाला यह क्कार स्वार्थे क प्रत्यय है।

३·४·२८–२९ **किंशब्दादकारान्तात्, यत् ... अकारान्तेभ्यः**—अकारान्त यद् तद्, किम् यानी उनके ज, त और क ये अकारान्त रूप।

३·४·५१ **वर्तमानायाः**—वर्तमानाका। वर्तमानाके लिए २·४·१ ऊपरकी टिप्पणी देखिए।

३·४·५२ **बप्पीहा ... ॥ १४४ ॥**—इस श्लोकमें पिउपिउ शब्दपर श्लेष है।

३·४·५३ **सप्तमी**—विध्यर्थ।

३·४·७२ इस सूत्रके वृत्तिमें त्रिविक्रम देश्य शब्दोंकी सूची देता है। **तत्समतद्भव**—संस्कृतसम और संस्कृतभव।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Jaina Saṁskṛti Saṁrakṣaka Saṁgha
Phaltana Galli, Sholapur 2 (India).

Jīvarāja Jaina Granthamālā

General Editors :

Dr. A. N. Upadhye & Late Dr. H. L. Jain

1. *Tiloyapaṇṇatti* of Yativṛṣabha (Part I. Chapters 1–4): An Ancient Prākrit Text dealing with Jaina Cosmography, Dogmatics etc. Prākrit Text authentically edited for the first time with the Various Readings, Preface & Hindi Paraphrase of Pt. Balachandra, by Drs. A. N. Upadhye & H. L. Jain. Published by Jaina Saṁskṛti Saṁrakṣaka Saṁgha, Sholapur (India). Double Crown pp. 6–38–532. Sholapur 1943. Price Rs. 12–00. Second Edition, Sholapur 1956 Price Rs. 16–00.

1. *Tiloyapaṇṇatti* of Yativṛṣabha (Part II, Chapters 5–9). As above. With Introductions in English and Hindi, with an alphabetical Index of Gāthās, with other Indices (of Names of works mentioned, of Geographical Terms, of Proper Names of Technical Terms, of Differences in Tradition of Karaṇasūtras and of Technical Terms, compared) and Tables (of Nāraka-Jīva, Bhavana-vāsī Deva, Kulakaras, Bhāvana Indras, Six Kulaparvatas, Seven Kṣetras, Twentyfour Tīrthakaras; Age of the Śalākāpuruṣas, Twelve Cakravartins, Nine Nārāyaṇas, Nine Pratiśatrus, Nine Baladevas. Eleven Rudras, Twentyeight Nakṣatras. Eleven Kalpātīta, Twelve Indras, Twelve Kalpas and Twenty Prarūpaṇās). Double Crown pp. 6–14–108–533 to 1032, Sholapur 1951. Price Rs. 16–00.

2. *Yaśastilaka and Indian Culture*, or Somadeva's Yaśastilaka and Aspects of Jainism and Indian Thought and Culture in the Tenth Century, by Professor K. K. Handiqui, Vice-Chancellor, Gauhati University, Assam, with Four Appendices, Index of Geographical Names and General Index. Published by J. S. S. Sangha, Sholapur. Double Crown pp. 8–540. Sholapur 1949. Price Rs. 16–00.

3. *Pāṇḍavapurāṇam* of Subhacandra. A Sanskrit Text dealing with the Pāṇḍava Tale. Authentically edited with Various Readings, Hindi paraphrase, Introduction in Hindi etc.

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

by Pt. JINADAS. Published by J. S. S. Sangha, Sholapur. Double Crown pp. 4–40–8–520. Sholapur 1954. price Rs. 12–00.

4. *Prākṛta-śabdānuśāsanam* of Trivikrama with his own commentary : Critically Edited with Various Readings, an Introduction and Seven ppendices (1. Trivikrama's Sūtras; 2. Alphabetical Index of the Sūtras; 3. Metrical Version of the Sūtrapāṭha; 4. Index of Apabh aṁśa Stanzas; 5. Index of Deśya words; 6, Index of Dhātvādeśas, Sanskrit to Prākrit and vice versa; 7. Bharata's Verses on Prakrit by Dr, P. L. VAIDYA, Director, Mithilā Institute, Darbhanga. Published by the J. S. S. Sangha, Sholapur, Demy pp. 44-178, Sholapur 1954. Price Rs. 10-00.

5. *Siddhānta-sārasaṁgraha* of Narendrasena : A Sanskrit Text dealing with Seven Tattvas of Jainism. Authentically Editea for the first time with Various Readings and Hindi Translation by Pt. JINADAS P. PHADKULE. Publisded by the J. S. S. Sangha, Sholapur. Double Crown, pp. about 300, Sholapur 1957, Price Rs. 10–00. Second Edition 1973. Price Rs. 12–00.

6, *Jainism in South India and Hyderabad Epigraphs* : A learned and well-documented Dissertation on the career of Jainism in the South, especially in the areas in which Kannada Tamil, and Telugu Languages are spoken, by P. B. DESAI. M. A.. Assistant Superintendent for Epigraphy, Ootacamund. Some Kannaḍa Inscriptions from the areas of the former Hyderabad Sṭate and round about are edited here for the first time both in Roman and Devanāgarī characters, along with their criṭical study in English and Sārānuvāda in Hindi. Equipped with a List of inscriptions edited, a General Index and a ṇumber of illustrations. Published by the J. S. S. Sangha Sholapur. Sholapur 1957. Double Crown pp. 16-456. Price Rs. 16–00.

7. *Jambūdīvapaṇṇatti Saṁgraha* of Padmanandi : A Prākrit Text dealing with Jaina Geography. Authentically edited for the first time by Drs. A. N. UPADHAYE and H. L. JAINA, with the Hindi Anuvāda of Pt. BALACHANDRA. The Introduction institutes a careful study of the Text and its allied works. There is an Essay in Hindi on the Mathematics of the Tiloyapaṇṇatti by Prof. LAKSHMICHAND JAIN, Jabalpur. Equipped with an Index of Gāthās, of Geographical Terms and of Technical Terms, and with

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

additional Variants of Amera Ms. published by the J. S. S. Sangha, Sholapur. Double Crown pp. about 500. Sholapur 1957. Price Rs. 16/-.

8. *Bhaṭṭārakar Saṁpradāya* : A History of the Bhattāraka Piṭhas especially of Western India, Gujarat, Rajasthan and Madhya Pradesh, based on Epigraphical, Literary and Traditional sources, extensively reproduced and suitably Interpreted, by Prof. V. JOHARPURKAR, M. A., Nagpur. Published by the J. S.S. Sangha Sholapur. Demy pp. 14-29-326. Sholapur 1960. Price Rs. 8-00.

9. *Prābhṛtādisaṁgraha* : This is a presentation of topic-wise discussions compiled from the works of Kundakunda, the *Samayasāra* being fully given. Edited with Introduction and Tranaslation in Hindi by Pt. KAILASHCHANDRA SHASTRI, Varanasi. Published by the J. S. S. Sangha, Sholapur. Demy pp. 10-106-10-288. Sholapur 1960. price Rs. 6–00.

10. *Pañcaviṁśati* of Padmanandi :(c. 1136 A.D.). This is a collection of 26 Prakaraṇas (24 in Sanskrit and 2 in Prākrit) small and big, dealing with various religious topics : religious, spiritual, ethical, didactic, hymnal and ritualistic. The text along with an anonymous commentary critically edited by Dr. A. N. UPADHYE and Dr. H. L. JAIN with the Hindi Anuvāda of Pt. BALACHAND SHASTRI. The edition is equipped with a detailed Introduction shedding light on the various aspects of the work and personality of the author both in English and Hindi. There are useful Indices. Printed in the N. S. Press, Bombay. Double Crown pp. 8-64–284 Sholapur 1962. price Rs. 10–00.

11. *Ātmānuśāsana* of Guṇabhadra (middle of the 9th century A. D.). This is a religio-didactic anthology in elegant Sanskrit verses composed by Guṇabhadra, the pupil of Jinasena, tha teacher of Rāṣṭrakūṭa Amoghavarṣa. The Text is critically edited along with the Sanskrit commentary of Prabhācandra and a new Hindi Anuvāda by Dr. A. N. UPADHYE, Dr. H. L. JAIN and Pt. BALACHANDRA SHASTRI. The edition is equipped with Introductions in English and Hindi and some useful Indices. Demy pp. 8–112–260, Sholapur 1961. Second Edition 1973. Price Rs. 7-00.

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

12. *Gaṇitasārasaṃgraha* of Mahāvīrācārya (c. 9th century A. D.) : This is an important treatise in Sanskrit on early Indian mathematics, composed in an elegant style with a practical approach. Edited with Hindi Translation by Prof L C JAIN, M.SC., Jabalpur. Double Crown pp. 16 + 34 + 282 + 86, Sholapur 1963. Price Rs. 12-00.

13. *Lokavibhāga* of Siṃhasūri : A Sanskrit digest of a missing ancient Prākrit text dealing with Jaina cosmography. Edited for the first time with Hindi Translation by Pt. BALCHANDRA SHASTRI. Double Crown pp. 8–52–256. Sholapur 1962. Price Rs. 10-00.

14 *Puṇyāsrava-kathākośa* of Rāmacandra : It is a collection of religious stories in simple and popular Sanskrit. The text authentically edited by Dr. A. N. UPADHYE and Dr. H. L. JAIN with the Hindi Anuvāda of Pt BALACHANDRA SHASTRI Double Crown pp. 46-367. Sholapur 1964. Price Rs. 10–00.

15. *Jainism in Rājasthan* : This is a dissertation on Jainas and Jainism in Rājasthan and round about area from early times to the present day, based on epigraphical, literary and traditional sources by Dr. KAILASHCHANDRA JAIN, Ajmer, Double Crown pp. 8 + 284, Sholapur 1963. Price Rs. 11-00.

16. *Viśvatattva-Prakāśa* of Bhāvasena (14th century A D.): It is a treatise on Nyāya. Edited with Hindi Summary and Introduction in which is given an authentic Review of Jaina Nyāya literature by Dr. V. P. JOHARAPURKAR. Nagpur. Demy pp. 16 + 112 + 312, Sholapur 1964. Price Rs. 12-00.

17. *Tīrthavandana Saṃgraha* : A Compilation and Study of Extracts from an Ancient and Medieval Works of Forty Authors about Digambara (Jain) Holy places. By Dr. V. P. JOHARAPURKAR, M.A., Ph.D. Demy Octavo pp. 12–216, Sholapur 1965. Price Rs. 5.

18. *Pramā-prameya of Bhāvasen* : A treatise on Logical Topics: Edited Authentically for the First time with Hindi Translation, notes, by Dr. V. P. JOHARAPURKAR, M. A., Ph.D. Demy Octavo pp. 6-4-158. Sholapur, 1966 Price Rs. 5-00.

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

19. *Ethical Doctrines in Jainism* : Exhaustive Survey of the Ethical Doctrines propounded in Jainism. : Rules and Conduct for Monks as well as for Householders. By K. C. SOGANI, M.A., Ph.D., Crown pp. 5-16-302, Sholapur 1967, Price Rs. 12-00.

20. *Jain View of Life* : Synoptic Philosophy, Jaina Theory of the Soul, Karma in Jaina Philosophy. By Dr. T. G. KALGHATGI, M.A. Ph.D., Demy pp. 12–200, Sholapur 1969, Price Rs. 6–00.

21. *Candraprabha-caritam of Vranandi* : Along with Sanskrit Commentary Vidvān-mano-vallabhā of Municandra and Pañjikā of Guṇanandi. Edited by Pt AMRITLAL SHASTRI, Varanasi, Double Crown pp. 41-556, Sholapur 1271, Price Rs. 16-00.

WORKS IN PREPARATION

Subhāsita–saṁdoha, Dharma–parīkṣā, Jñānārṣava, Kathākośa of Śrīcandra, Dharmaratnākara, etc.

For copies write to :

Jaina Saṁskṛti Saṁrakshaka Sangha
SANTOSH BHAVAN, Phaltan Gally,
Sholapur (C. Rly.) : India

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi